मनुष्य होने की कला

झेन बोध कथाओं पर ओशो द्वारा दिए गये ग्यारह अमृत प्रवचन (10-06-74 -- 20-06-74) अंग्रेजी से हिन्दी में रूपांतरित (A Bird on the Wing, Roots and Wings).

अनुक्रम

1. पहले अपना प्याला खाली करो 2
2. न मन न सत्य 18
3. स्वर्ग और नर्क के द्वार 33
4. एक प्याला चाय पीजिए 51
5. नए मठ के लिए सदगुरु कौन? 68
6. साधारण होने का चमत्कार 84
7. सद्गुरु बेरहम हो सकता है? 102
8. झेन का शास्त्र है कोरी किताब 118
9. बिल्ली को बचाओ 134
10. सदगुरु का मौन 150
11. सजग, शांत और संतुलित बने रहो 169

पहला प्रवचन

पहले अपना प्याला खाली करो

कथा:

जपानी सदगुरु 'नानहन ने श्रौताओ से दर्शन शस्त्र के एक प्रोफेसर का परिचय कराया और तब अतिथि गृह के प्याले में वह उनके लिए चाय उड़ेलते ही गए।

भरे प्याले में छलकती चाय को देख कर प्रोफेसर अधिक देर अपने करे रोक न सके। उन्होंने कहा- " कृपया रुकिए प्याला पूरा भर चुका है। उसमें अब और चाय नहीं आ सकती।"

नानइन ने कहा- "इस प्याले की तरह आप भी अपने अनुमानों और निर्णयों से भरे हुए हैं जब तक पहले आप अपने प्याले को खाली न कर लें, मैं झेन की ओर संकेत कैसे कर सकता हूं?"

तुम नानइन से भी अधिक खतरनाक व्यक्ति के पास आ गए हो, क्योंकि प्याले को खाली करने से ही काम चलने वाला नहीं, प्याले को पूरी तरह तोड़ ही देना होगा। खाली होकर भी, यदि तुम उपस्थित हो, तब भी भरे हुए ही हो। यहां तक कि खाली पन भी तुम्हें भर देता है। यदि तुम अनुभव करते हो कि तुम खाली हो तो भी तुम पूरी तरह खाली हो कहां? तुम तो वहां हो ही। सिर्फ तुम्हारा नाम बदल गया है, अब तुम अपने को ' खालीपन ' पुकारते हो। प्याले को खाली करने से कुछ नहीं होने वाला, इसे तो पूरी तरह तोड़ ही देना है। जब तुम हो ही नहीं, क्या तब भी चाय तुममें उडेली जा सकती है? और जब तुम यहां हो ही नहीं तो वास्तव में तुममें चाय उड़ेलने की जरूरत ही क्या?

जब तुम खाली होते हो, तो तुममें पूरा अस्तित्व उड़ेलना शुरू कर देता है, पूरा अस्तित्व प्रत्येक दिशा और आयाम से ऊर्जा की फुहार की तरह बरस उठता है। जब ' तुम ' नहीं होते तब परमात्मा ही होता है।

यह छोटी-सी कहानी बहुत सुन्दर है। दर्शनशास्त्र के प्रोफेसर के साथ ऐसी घटना घटी ही थी। कहानी कहती है-कि एक दर्शनशास्त्र का प्रोफेसर नानइन के पास आया। वह अवश्य ही किसी गलत कारण से ही आया होगा, क्योंकि दर्शन शास्त्र का प्रोफेसर, जैसा कि वह होता है, हमेशा गलत ही होता है।

दर्शनशास्त्र का अर्थ है, बुद्धि, तर्क, विचार और वाद-विवाद। यह गलत होने का मार्ग ही है, क्योंकि यदि तुम तर्क-वितर्क करते हो तो अस्तित्व के साथ प्रेमपूर्ण हो ही नहीं सकते। तर्क ही बाधा है। यदि तुम तर्क करते हो, तो तुम बंद हो जाते हो। तुम्हारा पूरा अस्तित्व ही अपने में तुम्हें कैद कर देता है। तब तुम्हारे दरवाजे खुले नहीं होते और न अस्तित्व ही तुम्हारे लिए खुला होता है।

जब तुम तर्क करते हो तो दृढ़ता से अपनी बात पर अड़ जाते हो। यह दृढ़ता से अड़ना ही हिंसा है, आक्रामकता है और आक्रामक मन के द्वारा सत्य नहीं जाना जा सकता और न हिंसा के द्वारा सत्य की खोज हो सकती है। जब तुम प्रेम में होते हो, केवल तभी तुम सत्य जानने के लिए आ सकते हो, क्योंकि प्रेम कभी तर्क नहीं करता। प्रेम में तर्क होता ही नहीं, क्योंकि उसमें आक्रामकता नहीं होती। स्मरण रहे, केवल वह व्यक्ति ही दर्शनशास्त्र का प्रोफेसर नहीं था, तुम भी ठीक उसी जैसे हो। प्रत्येक व्यक्ति अपना तत्वज्ञान अपने साथ लिए चलता है और प्रत्येक व्यक्ति अपने ढंग से एक प्रोफेसर ही है, क्योंकि तुम भी अपने उन विचारों की घोषणा करते हो, जिन पर तुम विश्वास करते हो। तुम्हारे भी निर्णय हैं, धारणाएं हैं और इन्हीं निर्णयों और धारणाओं के कारण तुम्हारी आंखें धुंधला गईं हैं और वे ठीक से देख नहीं पातीं। तुम्हारा मन छू है, वह जान नहीं सकता।

विचार, सुस्ती उत्पन्न करते हैं क्योंकि जितने अधिक विचार होते हैं, मन पर उतना ही बोझ पड़ता है। एक भारयुक्त मन कैसे जान सकता है? जितने अधिक विचार होते हैं, वह ठीक दर्पण पर इकट्ठी हुई धूल की

तरह होते हैं। ऐसे दर्पण में वास्तविकता कैसे प्रतिबिम्बित हो सकती है? तुम्हारी बुद्धि बस केवल स्वयं लिए हुए निर्णयों से ढकी है-उस पर धूल-ही- धूल है और प्रत्येक इस स्थिति में जो भी मत प्रकट करता है, वह मूर्ख और मंद है। वे जानने को तो बहुत कुछ जानते हैं। वे जानकारी के बोझ से दबे होते हैं। वे आकाश में उड़ नहीं सकते, उनके पंख नहीं होते और वे इतने अधिक मन में उलझे रहते हैं कि पृथ्वी में उनकी कोई जड़ें होती ही नहीं। वे पृथ्वी से गहरे जुड़े नहीं होते और वे आकाश में उड़ने के लिए स्वतंत्र नहीं होते।

और स्मरण रहे-तुम सभी उन्हीं जैसे हो। केवल मात्रा का अंतर हो सकता है, लेकिन प्रत्येक मन गुणात्मक रूप से समान है, क्योंकि मन विचार करता है, तर्क करता है, बटोरता है और जानकारियां इकट्ठी करते हुए ठस्ल हो जाता है। केवल बच्चे बुद्धिमान होते हैं। यदि तुम अपना बचपन याद रख सकी, अपने व्यवसाय को वापस मांग सकी तो तुम निर्दोष और बुद्धिमान हो जाओगे। यदि बचपन खो जाए और तुम धूल ही इकट्ठी करते रहो तो निर्दोषता रहेगी ही नहीं और मन भी मूढ़ और धुंधला हो जाएगा। अब तुम्हारे पास तत्व ज्ञान हो सकता है पुस्तकों का, पर तुम्हारे पास जितना अधिक उधार ज्ञान होगा, तुम परमात्मा से उतने ही दूर हो जाओगे।

एक धार्मिक चित्त, दार्शनिक मन नहीं होता। एक धार्मिक चित्त तो निर्दोष और प्रज्ञावान होता है। उसका दर्पण स्पष्ट होता है, उस पर धूल- धमास नहीं होती है और प्रतिदिन निरन्तर वह साफ होता रहता है। इसी को मैं ध्यान कहता हूं।

दर्शनशास्त्र का प्रोफेसर नानइन के पास आया। वह अवश्य ही किसी गलत कारण से ही आया होगा; वह अवश्य ही कुछ प्रश्नों के उत्तर जानने के लिए आया होगा। ऐसे लोग जो प्रश्नों से भरे होते हैं हमेशा उत्तरों की खोज में होते हैं और नानइन उत्तर नहीं दे सकता। ऐसे प्रश्नों और उत्तरों से सम्बन्ध रखना ही मूर्खता है। नानइन तो तुम्हें एक नया मन दे सकता है। नानइन तो तुम्हें एक नई तरह का जीवन दे सकता है; नानइन तो तुम्हें एक नया अस्तित्व दे सकता है, जिसमें प्रश्न उठते ही नहीं, लेकिन नानइन की किसी विशिष्ट प्रश्न का उत्तर देने में कोई दिलचस्पी नहीं। वह ऐसे प्रश्नों का उत्तर देने में रुचि रखता ही नहीं और न ही मैं।

तुम मेरे पास अवश्य ही बहुत से प्रश्न लेकर आए हो। ऐसा होने के लिए तुम बाध्य हो क्योंकि मन प्रश्नों का जन्मदाता है। मन प्रश्न निर्मित करने वाली यांत्रिक- व्यवस्था है। उसमें कोई भी चीज डालो, एक प्रश्न बाहर निकल आएगा और फिर अनेक-प्रश्न उसका अनुसरण करेंगे। उसे कोई भी उत्तर दो, वह तुरन्त उसे अनेक प्रश्नों में बदल देगा। तुम बहुत से प्रश्नों से भरे हुए ही यहां आये हो, तुम्हारा प्याला पहले से ही भरा हुए हो। तुम्हारा भरा प्याला पहले से ही छलक रहा है, नानइन को उसमें चाय डालने की आवश्यकता ही नहीं।

मैं तुम्हें एक नया अस्तित्व दे सकता हूं इसी कारण मैंने तुम्हें यहां आमंत्रित किया है-मैं तुम्हें कोई उत्तर नहीं दूंगा। सभी प्रश्न और सभी उत्तर व्यर्थ हैं, बस केवल ऊर्जा का अपव्यय है, लेकिन मैं तुम्हारा रूपान्तरण कर सकता हूं। मेरे पास केवल यही उत्तर है और यह एक उत्तर ही सभी प्रश्नों को हल कर देता है।

दर्शनशास्त्र के पास अनेक प्रश्न हैं और अनेक उत्तर हैं-करोड़ों। धर्म के पास केवल एक उत्तर है, प्रश्न कोई भी हो, उत्तर सदा वही एक होता है। बुद्ध कहा करते थे-तुम समुद्र का पानी कहीं से भी चखो, उसका स्वाद सदा वही खारा ही होता है। तुम जो कुछ भी पूछते हो, वह वास्तव में असंगत है। मैं वही उत्तर दूंगा क्योंकि मेरे पास एक ही उत्तर है। एक वही उत्तर हर ताले की चाभी की तरह होगा जिससे सभी बंद दरवाजे खुल जाते हैं। यह चाभी किसी खास ताले की नहीं है-कोई भी ताला हो, यह चाभी उसे ही खोल देती है। धर्म के पास केवल एक उत्तर है और वह है ध्यान। ध्यान का अर्थ है- अपने को तुम खाली कैसे करो?

प्रोफेसर नानइन की झोपड़ी तक पहुंचने में बहुत अधिक चलकर आया होगा और वह अवश्य ही थक गया होगा, तब नानइन ने कहा होगा-‘ थोड़ी प्रतीक्षा करें। ‘ वह जरूर ही बहुत जल्दी में होगा। मन हमेशा जल्दी में ही होता है और मन हमेशा तुरन्त होने वाले अनुभव की ही खोज में होता है। मन के लिए प्रतीक्षा करना बहुत कठिन है, लगभग असम्भव है।

नानइन ने कहा-'' मैं आपके लिए चाय तैयार कर दूंगा। आप थके हुए लग रहे हैं। जरा आराम कर लें। थोड़ी प्रतीक्षा करें और एक प्याला चाय पी लें, तब हम लोग बात शुरू कर सकते हैं। ''

नानइन ने पानी खौलाया और प्याले में चाय उड़ेलना शुरू किया, लेकिन वह जरूर प्रोफेसर की ओर देख रहा था। न केवल चाय का पानी खौल रहा था, प्रोफेसर भी अन्दर-ही- अन्दर उबल रहा था। न केवल चाय की केतली आवाज कर रही थी, प्रोफेसर के अंदर निरन्तर चल रही चपड़-चपड़ बातचीत उससे भी अधिक शोर से भरी थी। प्रोफेसर अवश्य ही तैयारी किए बैठा होगा-क्या पूछा जाए कैसे पूछा जाए और कहां से शुरू किया जाए? वह अवश्य ही गहराई से आत्मप्रलाप कर रहा होगा, यह आदमी अंदर से इतना अधिक भरा हुआ है कि कुछ भी उसके हृदय में उतर ही नहीं सकता। उत्तर दिया ही नहीं जा सकता क्योंकि वहां कोई लेने वाला है ही नहीं। मेहमान अंदर प्रवेश कर ही नहीं सकता-वहां कोई कक्ष खाली है ही नहीं। नानइन ने प्रोफेसर के मन के मकान का अवश्य ही मेहमान बनना चाहा होगा।

करुणावश एक बुद्ध हमेशा तुम्हारे अन्दर मेहमान बनकर रहना चाहता है। वह हर कहीं खट-खटाकर देखता है, क्योंकि उसमें कोई दरवाजा है ही नहीं और यदि वह दरवाजा तोड़ता भी है, जो बहुत कठिन है तो अंदर कोई कमरा खाली ही नहीं। तुम स्वयं अपने आप से और सभी तरह के फर्नीचर तथा फालतू सामान से जो तुमने जन्म- जन्म में जोड़ा है, इतने अधिक भरे हुए हो कि तुम स्वयं भी उसमें प्रवेश नहीं कर सकते। वहां कमरा क्या, कोई स्थान तक कहीं खाली नहीं है। तुम स्वयं अपने अंदर प्रविष्ट नहीं हो सकते, क्योंकि हर तरह की चीजों से पूरा स्थान घिरा हुआ है।

तब नानइन ने प्याले में चाय उडेली। प्रोफेसर बेचैन हो उठा, क्योंकि नानइन निरन्तर चाय उडेलता गया। प्याला भरते ही चाय बाहर छलकने लगी और बहुत जल्द वह फर्श पर फैल जाने वाली थी। तभी प्रोफेसर ने कहा-'' रुकिए! आप कर क्या रहे हैं? अब इस प्याले में और चाय आ ही नहीं सकती, यहां तक कि एक बूंद पुगई नहीं। क्या आप पागल हो गए हैं? आप कर क्या रहे हैं? ''

नानइन ने कहा-'' आपके साथ भी यही मामला है। आप यह देखने में तो इतने सजग हैं और प्याले के भर जाने के बारे में भी सजग हैं कि अब इसमें एक बूंद भी नहीं आ सकती, लेकिन आप स्वयं अपने बारे में इतने सजग क्यों नहीं हैं? आप अन्दर के तत्व ज्ञान, सिद्धान्त, शास्त्र और स्वयं के निर्णयों से ऊपर तक लबालब भरे हुए हैं। आप पहले ही बहुत अधिक जानते हैं, मैं आपको कुछ भी नहीं दे सकता। आपने व्यर्थ ही यहां तक की यात्रा की। मेरे पास आने से पहले आपको अपने प्याले को खाली करके आना चाहिए था, तभी मैं इसमें कुछ उड़ेल पाता।''

लेकिन मैं तुमसे कहता हूं कि तुम कहीं अधिक खतरनाक व्यक्ति के पास आ गए हो। नहीं, मैं प्याले के खाली करने से ही राजी नहीं हूं क्योंकि यदि वहां प्याला होगा तो तुम उसे फिर से भर लोगे। तुम इतने अधिक आदी और अभ्यस्त हो गए हो कि तुम एक क्षण के लिए भी प्याले को खाली होने की इजाजत दोगे ही नहीं। जिस क्षण तुम उसे जरा भी खाली होते देखोगे, तुम उसे भरना शुरू कर दोगे। तुम खालीपन से इतने अधिक डरे हुए हो कि खालीपन तुम्हें मृत्यु की तरह दिखाई देता है। तुम उसे किसी भी चीज से भर दोगे, लेकिन तुम इसे भरोगे जरूर। नहीं, मैंने तुम्हें यहां प्याले को पूरी तरह तोड़ देने के लिए ही आमंत्रित किया है, जिससे कि तुम चाहने पर भी उसे फिर से भर न सको।

खाली होने का अर्थ है- अब प्याला रहा ही नहीं। उसकी सभी दीवारें गिर गईं, तली भी टूट गई और तुम एक गहरी खाई बन गए। .तभी मैं अपने को तुममें उड़ेल सकता हूं। बहुत कुछ सम्भव है, यदि तुम राजी हो जाओ, लेकिन तुम्हारा राजी होना बहुत श्रमसाध्य है क्योंकि तुम्हारा राजी होना तुम्हारा समर्पण होगा। खाली होने का अर्थ है-समर्पण करना।

नानइन प्रोफेसर से कह रहा है-'' नीचे झुक जाओ, समर्पण करो और अपने सिर को खाली करो। मैं उड़ेलने को तैयार हूं।''

प्रोफेसर ने यद्यपि कोई प्रश्न पूछा नहीं था., लेकिन नानइन ने उत्तर दे दिया, क्योंकि वास्तव में प्रश्न पूछे जाने की आवश्यकता थी ही नहीं। प्रश्न वहीं-का-वहीं रहता है।

तुम मुझसे पूछो या मत पूछो, मैं जानता हूं कि प्रश्न है क्या। तुममें से बहुत से लोग यहां हैं, लेकिन मैं उनका प्रश्न जानता हूं क्योंकि गहराई में प्रश्न एक ही है- उत्कंठा, वेदना, अर्थहीनता, इस पूरे जीवन की व्यर्थता और यह न जानना कि तुम कौन हो, लेकिन तुम भरे हुए हो। मुझे अपने प्याले को तोड़ने की इजाजत दो। यह प्याला अब नष्ट होने ही जा रहा है और उसकी मृत्यु होने ही वाली है। यदि तुम इसके नष्ट हो जाने देने के लिए तैयार हो तो इससे किसी नई चीज का जन्म होगा। प्रत्येक विध्वंस एक नए सृजन को जन्म देता है। यदि तुम मरने के लिए तैयार हो तो तुम एक नया जीवन पाओगे, तुम्हारा पुनर्जन्म होगा।

मैं तो यहां बस एक दाई की तरह हूं। यही बात हमेशा सुकरात कहा करता था! पात्र सद्गुरु ठीक एक दाई की भांति होता है। मैं तुम्हारी सहायता कर सकता हूं मैं तुम्हें रक्षित रख सकता हूं मैं तुम्हारा पथ प्रदर्शन कर सकता हूं। वास्तविक रूपान्तरण भौर घटना तो तुम्हारे ही अंदर घटने जा रही है। वहां कष्ट होंगे ही, क्योंकि बिना कष्ट के जन्म होना सम्भव ही नहीं है। काफी वेदना हो? ही, क्योंकि तुमने ही वह इकट्ठी की है, तुम्हें ही उसे फेंकना है। काफी गहराई तक सफाई और रेचन की आवश्यकता होगी।

जन्म भी ठीक मृत्यु जैसा है, लेकिन वेदना का भी अपना अलग मूल्य है। अंधकार की 'व्यथा से ही, नई सुबह का जन्म होता है, एक नया सूरज उगता है। जब तुम बहुत अधिक अंधेरे का अनुभव करो तो समझना-भोर अधिक दूर नहीं है। जब वेदना असहनीय हो जाए तो समझना परमानंद बहुत अधिक निकट है। इसलिए वेदनाओं से भागने की कोशिश मत करो-यही वह बिंदु है, जहां तुम चूक जाते हो। उससे बचने की कोशिश मत करो, उससे होकर गुजरो। सारे दु:ख और कष्ट तुम्हें जला देंगे, नष्ट कर देंगे, लेकिन वास्तव में तुम्हें नष्ट नहीं किया जा सकता। जो कुछ भी नष्ट हो सकता है, वह तुम्हारे अंदर का कूड़ा करकट ही है, जो तुमने इकट्ठा कर लिया है। वह सब कुछ जो नष्ट किया जा सकता है वह कुछ ऐसी चीज है, जो तुम नहीं हो। जब वह सब कुछ नष्ट हो जाएगा, तब तुम अनुभव करोगे कि तुम नष्ट किए ही नहीं जा सकते। तुम मृत्यु के पार हो। मृत्यु से गुजरते हुए होशपूर्वक मृत्यु से गुजरते हुए ही, कोई शाश्वत जीवन के प्रति सजग बनता है।

कुछ दिनों तक तुम मेरे सान्निध्य में रहोगे तो बहुत-सी चीजें घटना सम्भव हैं, पर पहला कदम तो कष्ट और वेदनाओं के द्वारा गुजरने का ही याद रखना है। बहुत बार तो मैं ही तुम्हारे लिए यह दु:ख उत्पन्न करता हूं जिससे जो कुछ तुम्हारे अंदर,' दबा हुआ है वह उभर कर बाहर निकले। उसे नीचे की ओर धकेलो मत, न दबाओ। उसे मुक्त करो। उसे बाहर आने दो। यदि तुम अपने दमित दु:खों को स्वतंत्र कर सके तो तुम उनसे मुक्त हो जाओगे। तुम परमानंद की स्थिति में केवल तभी आ सकते हो, जब तुम सभी दु:खों में से गुजर सको, उन्हें फेंक सको और पूरी तरह उनसे मुक्त हो सको।

मैं तुम्हारे अंदर परम आनन्द की वह ज्योति देख सकता हूं जो ठीक तुम्हारे मन के एक कोने में है। एक बार तुम्हें बस उसकी झलक मिल जाए फिर वह ज्योति तुम्हारी बन जाएगी। मैं तुम्हें कई तरीकों से उस ओर धक्का दूंगा जिससे तुम्हें उसकी झलक मिल जाए। यदि तुम उसे चूक गए तो तुम्हीं उसके लिए जिम्मेदार होंगे, कोई दूसरा नहीं। नदी बह रही है, लेकिन यदि तुम झुक नहीं सकते, यदि तुम अपने अहंकार से भरी चित्त-दशा को छोड़ नहीं सकते तो तुम प्यासे वापस जा सकते हो। तब नदी को दोष मत देना। नदी तो वहां थी, लेकिन तुम्हीं अपने अहंकार के कारण जैसे लकवा ग्रस्त हो गए थे।

यही है वह-जिसकी बाबत नानइन कहता है-'' प्याले को खाली करो। इसका अर्थ है-मन को खाली करो। वहां अहंकार है, वह उफन रहा है और जब अहंकार अतिरेक से बह रहा है तो कुछ भी नहीं किया जा सकता। पूरा अस्तित्व तुम्हारे चारों ओर है, लेकिन कुछ भी नहीं किया जा सकता। चारों ओर परमात्मा ही है-तुम उसी

से घिरे हुए हो, लेकिन कुछ भी नहीं किया जा सकता। कहीं से भी परमात्मा तुममें प्रविष्ट नहीं हो सकता क्योंकि तुमने अपने को अभेद्य किले जैसा बना लिया है। प्याले को खाली करो। वस्तुत: प्याले को फेंक ही दो।

जब मैं कहता हूं-पूरी तरह प्याले को फेंक दो तो मेरे कहने का अर्थ है कि इतने अधिक खाली हो जाओ-यहां तक कि तुम्हें इस बात का भी अनुभव न हो कि ' मैं खाली हूं '। "

एक बार ऐसा हुआ-बोधिधर्म के पास एक शिष्य आया और उसने कहा- " प्यारे सद्गुरु! आपने मुझसे खाली होने को कहा था। अब मैं खाली हो गया हूं। अब आप और क्या करने के लिए कहते हो? "

बोधिधर्म ने अपने डंडे से उस पर जोर की चोट करते हुए कहा-" जा और अपने इस खालीपन को बाहर फेंक दे। "

यदि तुम कहते हो-" मैं खाली हूं तो मैं हूं तो अभी भी है और मैं कभी भी खाली नहीं हो सकता। इसलिए खालीपन का दावा नहीं किया जा सकता। कोई भी यह नहीं कह सकता-मैं खाली हूं? ठीक वैसे ही जैसे कोई यह नहीं कह सकता- मैं विनम्र हूं। यदि तुम यह कहते हो कि मैं विनम्र हूं तो तुम नहीं हो। कौन दावा कर रहा है इस विनम्रता का? विनम्र होने का दावा नहीं किया जा सकता। यदि तुम विनम्र हो तो हो विनम्र, लेकिन तुम उसे कह नहीं सकते। न केवल तुम उसे कह ही नहीं सकते, तुम उसे अनुभव भी नहीं कर सकते कि तुम विनम्र हो, क्योंकि इसका अनुभव होना ही फिर अहंकार को जन्म दे देगा। खाली बनो, लेकिन यह सोचो ही मत कि तुम खाली हो, अन्यथा तुम स्वयं को ही धोखा दे रहे हो। "

तुम अपने साथ बहुत-सा तत्वज्ञान लेकर आए हो। उसे गिरा दो। उसने तुम्हारी कोई भी सहायता नहीं की है और न तुम्हारे लिए कुछ भी किया है। काफी समय हो चुका। यही ठीक समय है जब इसे पूरी तरह, भागों-खण्डों में नहीं, पूरा-का-पूरा गिरा दो। इन थोड़े-से दिनों में जब तुम मेरे सान्निध्य में रही, बस बिना सोच-विचार के रहो। मैं जानता हूं कि यह कठिन है, पर फिर भी मैं कहता हूं-यह सम्भव है और एक बार तुम यह निर्दोष विधि जान गए तो तुम मन की पूरी व्यर्थता पर, जिसे तुम इतने लम्बे समय से ढ़ोते रहे हो, हंसोगे।

मैंने उस एक देहाती आदमी के बारे में सुना है, जो कि जब वह पहली बार रेल से यात्रा कर रहा था तो वह अपनी गठरी अपने सिर पर यह सोचकर रखे हुआ था कि उसे नीचे रखने पर रेल को और अधिक वजन ढ़ोना होगा और मैंने किराया तो सिर्फ -अपने लिए- ही अदा किया है। मैंने टिकट तो खरीदा है पर सामान ले जाने के लिए तो कछ भी नहीं किया है। इसलिए उसने अपनी गठरी अपने सिर पर रख ली थी। रेलगाड़ी तो उसे और उसके सामान को, भले ही वह उसे सिर पर रखे या नीचे, ढ़ोए जा रही थी और इससे कोई भी फर्क नहीं पड़ता था।

तुम्हारा मन एक फालतू सामान की तरह है। इस अस्तित्व के लिए कोई फर्क नहीं पड़ता कि तुम इस अनावश्यक बोझ को सिर पर ढ़ो रहे हो। मैं कहता हूं-इसे गिरा दो। वृक्ष बिना मन के जीए जा रहे हैं और मनुष्यों की अपेक्षा कहीं अधिक खूबसूरती से रह रहे हैं, पक्षी बिना मन के रह रहे हैं और मनुष्य की अपेक्षा कहीं आनन्द से जी रहे हैं। जरा बच्चों को देखो! जो अभी तक सभ्य नहीं हुए हैं जो अभी तक जंगली ऐं वे भी बिना किसी मन के निर्दोष बने जी रहे हैं। उनकी इस निर्दोषता पर जीसस और बुद्ध भी ईर्ष्या का अनुभव करते होंगे। इस मन की कोई .आवश्यकता ही नहीं है। पूरा संसार बिना मन के बड़े मजे से जी रहा है। तुम उसे क्यों ढ़ोए जा रहे हो? क्या केवल तुम यह सोच रहे हो कि यह परमात्मा और अस्तित्व के लिए बहुत अधिक होगा। एक बार तुम भले ही एक मिनट के लिए सही, तुम उसे उतार कर नीचे रख दो, तुम्हारा पूरा अस्तित्व बदल जाएगा। तुम एक नई दिशा में प्रवेश करोगे, और वह दिशा है भारहीनता की।

मैं तुम्हें आकाश और स्वर्ग में उड़कर जाने के लिए जो कुछ देने जा रहा हूं- वह हैं पंख। यह भारहीनता ही तुम्हें यह पंख देती है, जिसकी जड़ें पृथ्वी के नीचे भूमि पकड़ चुकी हैं और वही तुम्हारा केन्द्र है। यह पृथ्वी और स्वर्ग, अखण्ड अस्तित्व के दो भाग हैं। इस जीवन में, अपने तथाकथित साधारण जीवन में तुम्हें अपनी जड़ें जमानी चाहिए और अपने आध्यात्मिक जीवन के अंतर आकाश में भारहीन होकर तुम्हें उड़ना, बहना और तैरना है।

यदि तुम राजी हो सको तो मैं तुम्हें जड़ें और पंख दे सकता हूं क्योंकि मैं केवल एक दाई हूं। मैं बच्चे को गर्भ से बाहर आने के लिए विवश नहीं कर सकता। बलपूर्वक बाहर लाया बच्चा कुरूप होता है और वह मर भी सकता है। बस मुझे इजाजत दो। बच्चा तुम्हारे अंदर है और तुम पहले ही से उसे गर्भ में लेकर आए हो। प्रत्येक गर्भ परमात्मा को लेकर ही जन्मता है। बच्चा वहां है और तुम उसे नौ महीने से भी काफी अधिक लम्बी अवधि से, पहले से ही लिए ढ़ो रहे हो। यही तुम्हारे दुखों का मूल कारण है कि तुम गर्भ में कुछ ऐसा लिए हुए जी रहे हो जिसकी प्रसव की तुरन्त आवश्यकता है और आवश्यकता है कि वह बाहर निकले उसका जन्म हो। जरा उस औरत, उस मां के बारे में सोचो, जो नौ महीने गुजर जाने पर भी गर्भ में बच्चे को लिए हुए उसे ढ़ो रही है। यदि शीघ्र प्रसव न हुआ तो उसके लिए यह बहुत बड़ा बोझ बन जाएगा, मां मर जाएगी क्योंकि और अधिक सहना उसके लिए कठिन होगा। यही वजह हो सकती है कि तुम इतने अधिक व्यग्र, दुःखी और तनाव ग्रस्त हो। तुम्हारे अंदर से कोई चीज जन्म लेने वाली है, कुछ ऐसा है जो तुम्हारे गर्भ से बाहर आना चाहता है और मैं इसमें तुम्हारी सहायता कर सकता हूं।

यह समाधि-साधना-शिविर, यह शिविर जो अंतर आनंद और कुरुल के लिए है वह केवल तुम्हारी सहायता करने के लिए हो रहा है जिससे तुम अपने अंदर जो पोज लिए हुए हो, वह गर्भ रूपी पृथ्वी से बाहर आकर और अंकुरित होकर एक केवल वृक्ष बन सके, लेकिन आधारभूत बात यही होगी कि यदि तुम मेरे साथ रहना चाहते हो तो अपने मन के साथ न रह सकोगे। दोनों चीजें साथ-साथ नहीं हो सकतीं। जब तुम अपने मन के साथ होते हो तो मेरे साथ नहीं होते, जब मन नहीं होता, तुम तभी मेरे साथ होते हो। मैं तुम पर तभी कुछ कार्य कर सकता हूं यदि तुम मेरे साथ हो। अपने पाले को खाली करो। इसे पूरी तरह फेंक ही दो, नष्ट कर दो उसे।

यह शिविर बहुत से तरीकों से अलग तरह का होने जा रहा है। इस रात से मैं अपने काम को पूरी तरह से नई बदली हुई स्थिति में शुरू करने जा रहा हूं। तुम लोग काफी भाग्यशाली हो, जो यहां हो, क्योंकि इस नई तरह के आत्मिक कार्य के तुम साक्षी बनोगे। मुझे चाहिए कि मैं इसे स्पष्ट कर दूं क्योंकि कल सुबह से यह शुरू होने जा रहा है।

तुम लोग तीन बार ध्यान करोगे। सुबह सक्रिय ध्यान, दोपहर बाद कीर्तन ध्यान और रात में एक नया ध्यान प्रयोग शुरू किया जा रहा है-सूफी दरवेश नृत्य। ये तीनों 'मान प्रयोग एक ही पूर्ण ध्यान के तीन खण्ड हैं।

पहला ध्यान प्रयोग जिसे तुम सुबह करोगे, उगते सूर्य से संबंधित है। यह सुबह का ध्यान प्रयोग है। जब नींद टूटती है और पूरी प्रकृति जीवन्त बनती है। रात जा चुकी है अंधेरा अब रहा नहीं, सूर्य उगने वाला है और हर चीज चेतन और सजग होने जा रही है। इसलिए यह पहला ध्यान ऐसा ध्यान प्रयोग है जिसमें तुम जो भी करो, तुम्हें निरन्तर सजग, सचेतन और होशपूर्वक रहना है। पहला चरण है-श्वास का, दूसरा चरण रेचन का और तीसरा महामंत्र 'हूं' का।

साक्षी बने रहना है। खो नहीं जाना है। खो जाना या अपने को भुला देना आसान है। जब तुम सांस छोड़ रहे हो, तुम भूल सकते हो अपने को, तुम सांस के साथ इतने एक हो सकते हो कि तुम साक्षी को भूल जाओ, लेकिन तब तुम असली मुद्दे से ही चूक जाओगे। सांस जितनी गहरी और तेज सम्भव हो सके, उसमें अपनी पूरी ऊर्जा लगा दो लेकिन फिर भी साक्षी बने रहो। एक तटस्थ दर्शक की तरह, जो कुछ हो रहा है- उसे देखते रहो, जैसे किसी और के करने द्वारा पूरी चीज घट रही है, जैसे पूरी चीज शरीर में घट रही है और ठीक केन्द्र में बैठी चेतना उसे देख रही है। यह साक्षी भाव तीनों चरणों में बनाए रखना है। जब हर चीज रुक जाए और चौथे चरण में तुम पूरी तरह निष्क्रिय हो जाओ, जम जाओ, तब यह सजगता अपने चरम शिखर पर होगी। दोपहर बाद के ध्यान में-कीर्तन, नृत्य और गान-इस बीच अंदर के दूसरे कार्यों को करना है। सुबह तुम पूर्ण सचेतन रहो, दोपहर बाद के ध्यान में तुम्हें आधा चेतन और आधा अचेतन रहना है। दोपहर बाद के ध्यान में-जब तुम सजग हो लेकिन तुम्हें नींद आ रही है। यह दशा ठीक उस मनुष्य की तरह है जो किसी नशे के प्रभाव में है। वह चलता

है, लेकिन ठीक से चल नहीं पाता, वह यह तो जानता है कि कहां जा रहा है, लेकिन हर चीज धुंधली– धुंधली होती है। वह चेतन है भी और नहीं भी है। वह जानता है कि उसने शराब ली है, वह जानता है कि यह आधी सोई और आधी जागी दशा है। इसलिए दोपहर बाद के ध्यान में याद रहे, इस तरह अभिनय करना है जैसे तुमने शराब पी ली है और आनन्द में हो। कभी तुम अपने को पूरी तरह भूल जाओगे, ठीक एक शराबी की तरह, कभी तुम्हें सब कुछ याद होगा, लेकिन सुबह की तरह पूरी तरह सचेतन नहीं होना है। नहीं, दिन के साथ-साथ गति करो, दोपहर में आधा- आधा। तब तुम प्रकृति के साथ लयबद्ध हो रहे हो।

रात में सुबह से ठीक उल्टा-पूरी तरह अचेतन बने रहना है और कोई चिंता नहीं लेनी है। रात आ गई है, सूर्य अस्त हो चुका है और प्रत्येक चीज अचेतन की ओर गतिशील हो रही है। अचेतन की ओर गति करो। यह गोल-गोल घूमने की सूफी दरवेश ध्यान की विधि बहुत पुरानी और प्रभावी है। यह इतनी गहरी विधि है कि केवल एक छोटा अनुभव तुम्हें पूरी तरह से भिन्न बना सकता है। तुम्हें आंखें खुली रखकर इस तरह गोल-गोल घूमना है, जैसे छोटे बच्चे गोल-गोल घूमते हैं, जैसे तुम्हारे अंदर का अस्तित्व एक केन्द्र बन गया है और तुम्हारा शरीर एक घूमता हुआ पहिया बन गया है-जैसे एक कुम्हार का चाकघूम रहा है। तुम्हीं केन्द्र हो, लेकिन पूरा शरीर घूम रहा है।

धीमे– धीमे क्लाक वाइज घूमना शुरू करो। यदि कोई अनुभव करे कि क्लाक वाइज घूमना कठिन है, तब एग्टी क्लाक वाइज घूमे, लेकिन नियम क्लाक वाइज घूमने का ही है। यदि कुछ लोग जो बाएं हाथ से काम करते हैं, तब उन्हें कठिनाई का अनुभव हो सकता है और वे एण्टी वलाक वाइज घूम सकते हैं। लगभग दस प्रतिशत लोग ही बाएं हाथ से काम करने वाले हैं, इसलिए यदि उन्हें वलाक वाइज घूमने में असुविधा का अनुभव हो, वे एण्टी क्लाक वाइज घूमें, लेकिन शुरुआत क्लाक वाइज घूमने से ही करें। जब घूमना शुरू करें तो आंखें खुली रहें।

संगीत भी होगा वहां। धीमा, बस सहायता भर करने को। प्रारम्भ में बहुत धीमे– धीमे घूमें, तेज नहीं, बहुत धीमे- धीमे, आनन्द लेते हुए। तब धीरे- धीरे गति बढ़ाए। शुरू के पन्द्रह मिनट गति धीमी रहे और अगले पन्द्रह मिनट गति तेज, तीसरे पन्द्रह मिनट गति और तेज और चौथे पन्द्रह मिनट तक तो पागल होकर नृत्य करें। तब उसमें अपनी पूरी ऊर्जा लगा दें। पनचक्की बन जाएं ऊर्जा पैदा करने वाले वर्लपूल की तरह, उसमें पूरी तरह खो जाएं देखने का कोई प्रयास नहीं, कोई साक्षी भाव भी नहीं। वर्लपूल बन जाएं पूरी तरह। एक घंटे।

प्रारम्भ में तुम अधिक देर खडे रहने में समर्थ न हो सकोगे, लेकिन एक चीज याद रहे अपनी ओर से घूमना बंद न करें। पनचक्की की तरह घूमने को बंद न करें। यदि तुम्हें लगे कि अब घूमना असम्भव है तो शरीर को अपने आप भूमि पर गिर जाने दें लेकिन उसे रोकें मत। यदि तुम एक घंटे के मध्य में नीचे गिरते हो तो कोई समस्या नहीं विधि पूरी हो गई लेकिन अपने ही साथ चालबाजी मत करें धोखा न दें र यह न सोचें कि अब तुम थक गए हो इसलिए बेहतर है रुक जाएं। नहीं अपनी ओर से कोई निर्णय लेना ही नहीं है। यदि तुम थक गए हो तो फिर कैसे घूमे जा रहे हो? तुम स्वयं अपने .आप गिर पड़ोगे। घूमने को उस बिंदु तक पहुंचने दो, जहां तुम स्वयं गिर पड़ो। जब तुम नीचे सीसे तो पेट के बल और यह अच्छा होगा, यदि .तुम्हारे पेट का स्पर्श सीधे भूमि से होता रहे। अब आंखें बंद कर लो। पृथ्वी पर यों लेटे रहो। जैसे अपनी मां की छाती पर एक छोटे बच्चे की तरह लेटे हो। पूरी तरह अचेतन हो जाने में यह घूमना सहायक हो।

घूमना शरीर को नशा देता है। यह रासायनिक चीज है यह तुम्हें मतवाला बनाती है जैसे शराब पी लो हो। इसीलिए कभी-कभी शराबी की तरह चक्कर आने लगते हैं। एक शराबी के साथ होता क्या है? तुम्हारे कानों के पीछे एक छठी इन्द्रिय होती है जिसमें संतुलन की संवेदना है। जब तुम कोई नशा लेते हो कोई एल्कोहोलिक चीज या ड्रग तो वह कान के पीछे सीधे संतुलन साहरने वाली छठी इन्द्रिय तक जाकर उसके कार्य में बाधा डालता है। यही कारण है कि शराबी ठीक से चल नहीं पाता। उसका संतुलन गड़बड़ा जाता है। वह लड़खड़ाता हुआ चलता है।

ऐसे गोल-गोल घूमने में भी होता है। घूमते हुए वास्तव में प्रभाव शराब के नशे जैसा ही होता है लेकिन इसका आनन्द लो। इस नशे में कुछ चीज कीमती है। शराबी जैसी स्थिति में अपने होने की स्थिति को सूफी मस्ती कहते हैं। शुरू-शुरू में तुम्हें चक्कर आने जैसा अनु भव होगा, कभी- कभी जी मिचलाने की भी शिकायत हो सकती है लेकिन दो या तीन दिनों में यह अनु भव गायब हो जाते हैं और चौथे दिन से तुम एक नई ऊर्जा का अनुभव करने लगोगे, जिसे तुमने पहले कभी नहीं जाना था। जी मिचलाना बंद हो जाता है और ठीक नशे जैसी मस्ती की खुमारी बनी रहती है। इसलिए जो कुछ घट रहा है उसके प्रति सचेत होने की कोशिश मत करना। उसे होने देना और उस होने के साथ सच हो जाना।

सुबह के समय सचेत और सजग, दोपहर बाद आधे सावधान और आधे असावधान और रात में पूरी तरह असावधान, चक्र पूरा हो जाता है।

और तब पेट के बल जमीन .पर गिर जाना है। यदि कोई पृथ्वी पर लेटते समय नाभि केन्द्र पर किसी तरह के दर्द का अनुभव करे तो उलट कर पीठ के बल लेट जाए अन्यथा नहीं। नाभि का पृथ्वी से सम्पर्क तुम्हें ऐसा आनन्द दायक अनुभव देता है जैसे तुम मां के वक्ष से चिपके हुए सभी चिंताओं और दु:खो से मुक्त लेटे हो, तुम्हारे हृदय की धड़कनें मां की धड़कनों से मिलकर एक हो रही हैं और तुम्हारी सांस उसकी सांसों से लयबद्ध होकर चल रही है, लेकिन अब तुम यह अनुभव भूल चुके हो। ऐसा ही अनुभव पृथ्वी पर लेटकर होता है क्योंकि पृथ्वी मां है। इसी वजह से हिन्दू पृथ्वी को माता और आकाश को पिता कहते हैं। पृथ्वी में अपनी जड़ें जमा लो। उसके साथ मिलकर-घुलकर एक हो जाओ। शरीर घुलकर पृथ्वी में जैसे समा जाए। शरीर रहे ही न, तुम भी मिट जाओ, केवल पृथ्वी का ही अस्तित्व रहे।

यह वही है जिसकी बाबत मैं कहता हूं कि अपने प्याले को पूरी तरह तोड़कर तुम अपने होने को ही भूल जाओ। पृथ्वी है, उसी में घुलकर एक हो जाओ।

घंटे के घूमने में संगीत बजता रहेगा। एक घंटा पूरा होने से पहले ही कुछ लोग नीचे गिर पड़ेंगे, लेकिन एक घंटे का संगीत पूरा होने पर प्रत्येक को भूमि पर पेट के बल लेट जाना है। यदि तुम्हें ऐसा अनुभव हो कि तुम अभी भी गिरने की स्थिति में नहीं हो तो गति को तेज और तेज कर देना। चालीस-पैंतालीस मिनट के बाद ही तुम पूरी तरह पागल जैसे हो जाओगे और एक घंटा समाप्त होते-होते गिर ही पड़ोगे। यह नीचे अपने आप गिर जाने का अनुभव बहुत सुंदर है, इसलिए इसमें हेर-फेर मत करना, चतुराई दिखाते हुए कोई प्रक्षेपण मत करना। गिरते समय पेट के बल लेट जाना और आंखें बंद कर पृथ्वी के साथ एक हो जाना। यह एकत्व की अनुभूति एक घंटे तक करना।

इसलिए रात्रि ध्यान दो घंटे का होगा। सात बजे से नौ बजे तक। इससे पहले कोई चीज खाना नहीं है। नौ बजे इस गहरे आनंदमय नशे से बाहर आने के लिए सुझाव दिए जाएंगे। इससे बाहर आने पर तुम ठीक से चलने में समर्थ न हो सकोगे लेकिन परेशान मत होना। उसका मजा लेना। तब भोजन करके सो जाना।

दूसरी नई चीज यह, मैं वहां नहीं रहूंगा, केवल मेरी खाली कुर्सी ही वहां होगी, लेकिन चूक मत जाना क्योंकि एक अर्थों में मैं वहां हूंगा भी और दूसरे अर्थों में हमेशा मेरी खाली कुर्सी ही तुम्हारे सामने होगी। ठीक अभी भी कुर्सी खाली ही है, क्योंकि यहां कोई है ही नहीं, जो उस पर बैठे। मैं तुमसे बात कर रहा है- लेकिन यहां कोई है ही नही, जो तुमसे बात कर सके। यह समझना जरा मुश्किल है, लेकिन जब अहंकार विसर्जित हो जाता है तो ऐसा होना हो सकता है। बातचीत जारी हो सकती है, बैठना, चलना और भोजन करना भी चलता रहता है, लेकिन केंद्र गायब हो जाता है। अभी भी यह कुर्सी खाली है, लेकिन मैं हमेशा अभी तक के सभी शिविरों में तुम्हारे साथ रहा, क्योंकि तब तुम तैयार न थे। अब मैं अनुभव करता हूं कि तुम तैयार हो। मेरी अनुपस्थिति में कार्य करने के लिए तुम्हें पहले से तैयार होने में मदद जरूर मिलेगी, लेकिन यह अनुभव कि ' मैं हूं ' तुम्हारे अंदर एक खास उत्साह का संचार करता रहता है, जो नकली है। बस यह अनुभव करते हुए कि मैं मौजूद हूं तुम वह काम भी कर डालते हो, जिन्हें तुम कभी करना नहीं चाहते थे, और केवल मेरे प्रभाव के कारण तुम अधिक श्रम कर सकते हो, लेकिन इससे अधिक सहायता मिलेगी नहीं, क्योंकि केवल वही चीज सहायक हो सकती है, जो

तुम्हारे अस्तित्व से स्वत: आए। मेरी कुर्सी वहां होगी, मैं तुम्हें देखता रहूंगा, लेकिन तुम्हें पूरी तरह स्वतंत्रता का अनुभव होगा। यह मत सोचना कि मैं वहां नहीं हूं क्योंकि इससे तुम निराश हो सकते हो और यह हताशा तुम्हारे ध्यान में बाधा बनेगी। मैं वहां हूंगा और यदि तुम ठीक से ध्यान कर रहे हो तो जब तुम्हारा ध्यान पूरी तरह मेरे साथ लयबद्ध जाएगा, तुम मुझे वहां देख सकोगे इसलिए वही कसौटी होगी कि तुम वास्तव में ध्यान कर रहे हो या नहीं। तुममें से बहुत से मुझे और अधिक सघनता से देख सकने में सक्षम होंगे जितना कि ठीक अभी तुम मुझे देख सकते हो।

जब कभी तुम मुझे देखते हो, तुम निश्चित हो सकते हो कि सभी चीजें ठीक दिशा में हो रही हैं इसलिए यही कसौटी होगी। इस शिविर के अंत में मैं आशा करता हुं कि तुममें से नब्बे मतिशत मुझे खाली कुर्सी पर भी देख सकेंगे। दस प्रतिशत लोग अपने मन के कारण चूक भी सकते हैं, इसलिए यदि तुम मुझे देखो तो उस बारे में सोचना शुरू मत कर देना कि यह क्या घट रहा है। यह मत सोचना कि यह कल्पना है या प्रक्षेपण या मैं वास्तव में वहां -हूं। कभी कुछ सोचना ही मत, क्योंकि यदि तुम सोचने लगे तो मैं तुरन्त विलुप्त हो जाऊंगा, सोचना ही अवरोध बन जाएगा। दर्पण पर धूल आ. जाएगी और तब फिर प्रतिबिम्ब नहीं बनेगा। जब वहां धूल नहीं होगी, तुम अभी यहां मेरे बारे में जितना सजग हो सकते हो, अचानक तब उससे कहीं अधिक सजग हो जाओगे। भौतिक शरीर के प्रति सजग होना अधिक सजगता नहीं है। सूक्ष्म शरीर के प्रति सजगता ही सच्ची सजगता है।

तुम्हें बिना मेरे काम करना सीखना चाहिए। तुम हमेशा यहां नहीं रह सकते, तुम्हें यहां से दूर जाना ही होगा। तुम हमेशा ही मेरे चारों ओर घूमते नहीं रह सकते, तुम्हें करने के लिए और भी काम हैं। तुम विश्व- भर के कई देशों से यहां आए हो, तुम्हें कर लौटना ही होगा। कुछ दिनों के लिए ही तुम मेरे साथ यहां हो, लेकिन यदि तुम मेरी शारीरिक उपस्थिति के आदी बन गए तो बजाय एक सहायता बनने के वह तो एक व्यवधान बन जाएगा, क्योंकि जब तुम दूर चले जाओगे तब मुझसे चूकते रहोगे। यहां तुम्हारा ध्यान बिना मेरी उपस्थिति के ऐसा होना चाहिए जिससे तुम कहीं भी जाओ, फिर भी किसी तरह ध्यान प्रभावित न हो।

यह भी याद रखना है कि मैं हमेशा ही तुम्हारे साथ इस भौतिक शरीर में नहीं रह सकता। एक-न-एक दिन यह शरीर का वाहन तो छूटना ही है। जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मेरा काम पूरा हो चुका है। यदि मैं इस शरीर के वाहन को चलाए जा रहा हूं तो केवल तुम्हारे लिए ही और किसी दिन इसे छोड़ना ही है। इससे पहले कि ऐसा हो, तुम्हें मेरी अनुपस्थिति में काम करने के लिए तैयार हो जाना चाहिए। और एक बार मेरी अनुपस्थिति में भी यदि तुम मुझे अनुभव कर सके तो तुम मुझसे मुक्त हो जाओगे और तब मैं भले ही यहां इस शरीर में न रहूं सम्पर्क टूटेगा नहीं।

ऐसा हमेशा होता है कि जब बुद्ध वहां होता है, उसकी शारीरिक उपस्थिति इतनी अर्थपूर्ण बन जाती है कि जब वह शरीर छोड़ देता है तो हर चीज नष्ट हो जाती है। यहां तक कि आनन्द जैसा शिष्य, जो गौतम बुद्ध का सबसे निकट अंतरंग शिष्य था, जब उससे बुद्ध ने कहा- 'अब मुझे इस शरीर को छोड़ना होगा, 'वह रोने और चीखने लगा।

पिछले चालीस वर्षों से आनन्द बुद्ध के साथ चौबीस घंटे ठीक उनकी छाया की तरह रहता था। वह एक बच्चे की तरह रोने और चीखने लगा, जैसे अचानक वह अनाथ हो गया हो।

बुद्ध ने पूछा-'' यह तुम क्या कर रहे हो? ''

आनन्द ने कहा-'' अब मेरे लिए विकसित हो पाना असम्भव होगा। जब आप थे, मैं तब ही विकसित न हो सका, अब मैं कैसे विकसित हो पाऊंगा? अब फिर करोड़ों जन्म लेने पड़ेंगे, जब मैं फिर किसी बुद्ध के सान्निध्य में हूंगा, इसलिए मैं तो बरबाद हो गया! ''

बुद्ध ने कहा- '' मेरा ख्याल दूसरा है आनन्द। जब मैं नहीं रहूंगा, तब तुम तुरन्त बुद्धत्व को प्राप्त हो सकोगे क्योंकि मैं अपने अनुभव से समझ रहा हूं-तुम मेरे साथ बहुत अधिक आसक्ति में पड़ गए और यही आसक्ति एक अवरोध बन गई है। '' जैसा बुद्ध ने कहा था, वही हुआ। जिस दिन बुद्ध ने शरीर छोड़ा, आनन्द बुद्धत्व को प्राप्त

हो गया। तब उसके लिए कुछ भी ऐसा न रहा, जो उसे बांध सके, लेकिन फिर प्रतीक्षा क्या करना? जब मैं शरीर छोड़े, क्या तुम तभी बुद्धत्व को प्राप्त करोगे? इतनी प्रतीक्षा क्यों?

मेरी कुर्सी खाली रह सकती है, तुम मेरी अनुपस्थिति का अनुभव कर सकते हो और स्मरण रहे-तुम मेरी उपस्थिति तभी अनुभव कर सकते हो, जब तुम मेरी अनुपस्थिति को भी महसूस कर सको। यदि मेरे शरीर के वाहन के वहां न होते हुए तुम मुझे नहीं देख सकते तो तुमने मुझे देखा ही नहीं। यह मेरा वायदा है कि मेरी खाली कुर्सी वास्तव में खाली नहीं रहेगी। मैं अपनी खाली कुर्सी पर भी रहूंगा। इसलिए ऐसा व्यवहार करो और कुर्सी कभी खाली नहीं दिखेगी, लेकिन अच्छा यही है कि तुम मेरे अशरीरी अस्तित्व के सम्पर्क में रहने की कला सीखो। यह अधिक गहरा, अधिक अंतरंग को स्पर्श करने वाला सम्बन्ध है।

इसी वजह से मैं कहता हूं कि इस शिविर से मेरे कार्य करने का एक नया अध्याय प्रारम्भ होने जा रहा है और मैं इसे समाधि-साधना शिविर कहता हूं। जो मैं तुम्हें सिखाने जा रहा हूं वह मात्र ध्यान नहीं है, वह पूर्ण परमानन्द है। यह मात्र पहला कदम नहीं है। यह आखिरी कदम भी है। तुम्हारे लिए बस अमल की ही जरूरत है, सब कुछ पहले से ही तैयार है। बस केवल सजग हो जाओ, अधिक सोचो ही मत। इन तीनों ध्यान प्रयोगों के बीच बचे समय में बातचीत न करते हुए अधिक-से- अधिक शांत रहो। यदि कुछ करना ही चाहते हो तो हंसो, नाचो या कुछ ऐसा शारीरिक काम सघन रूप से करो, लेकिन- मानसिक काम नहीं। टहलने के लिए लम्बे निकल जाओ, जोगिंग करो, धूप में उछलो या जमीन पर लेटकर आकाश को देखते हुए हर बात का मजा लो, लेकिन मन को कार्य करने की इजाजत मत दो। हसों, रोओ, चीखो, चिल्लाओ, पर सोचो मत।

यदि तुम तीनों ध्यान प्रयोगों और उनके मध्य के समय में बिना सोच-विचार के रहो तो तीन-चार दिनों के बाद तुम्हें अचानक लगेगा कि अंदर का सारा बोझ विसर्जित हो गया। हृदय हल्का और शरीर भारहीन हो गया और अब तुम अज्ञात में छलांग लगाने के लिए तैयार हो.... क्या कुछ और....?

पहला प्रश्न: प्यारे ओशो? आपने प्रवचन के अंतिम भाग में जो कुछ कहा वह बहुत सुदंर और आनन्द पूर्ण है? लेकिन पहला भाग बहुत अधिक डर? देना वाला है- प्याले को तोड़ना, उसको जमीन पर फेंक देना, दुःख और वेदनाएँ और तुम्हारा न होना तब हम लोगों के मन आ जाते है और हम लोग अपने शरीर के साथ चाल बाजियां खेलने लग जाते हैं हम कहते हैं- मेरे यहां वह दर्द हो रहा है? मरे-हां फफोला पड़ गया है.....

कृपया क्या आप हमें कुछ ऐसा संकेत दे सकते है कि हम उन अवरोध को कैसे दूर कर सकते है? जिन्हें अपने लिए हम स्वयं सर्जित करने है? खास तौर से तब, जब हम भय के विरुद्ध खड़े होते है

कोई भी संघर्ष अधिक अवरोध उत्पन्न करेगा ही। यदि कोई भय है और तुम उसके बारे में कुछ भी शुरू करते हो तो एक नया भय प्रविष्ट हो जाता है- भय का भय। यह अधिक जटिल बन जाता है इसलिए एक ही चीज की जा सकती है कि यदि वहां भय है तो उसे स्वीकार करो। उसके बारे में कुछ भी करो ही मत। कुछ करने से कोई सहायता नहीं मिलेगी। भय को दूर करने के लिए तुम जो कुछ भी करोगे, उससे और अधिक भय उत्पन्न होगा, उलझन दूर करने के लिए तुम जो कुछ भी करोगे, उससे उलझन बढ़ेगी ही। कुछ करो ही मत।

यदि वहां भय है तो उसे बस कहीं लिख लो। उस भय को स्वीकार करो। और तुम कर क्या सकते हो? भय वहां है, उस बारे में कुछ भी नहीं किया जा सकता। उसे देखो, यदि तुम उस तथ्य को कि भय कहां है, उसे बस लिख लो, तब भय होगा कहां? तुमने उसे स्वीकार कर लिया और वह घुलकर बह गया। स्वीकारने से वह घुल जाता है-केवल स्वीकार भाव, और कुछ भी नहीं। यदि तुम उससे लड़ोगे तुम दूसरे झंझट खड़े करोगे और यह चलता ही रहेगा, तब इसका कहीं अंत होगा ही नहीं।

लोग मेरे पास आते हैं और कहते हैं-हम बहुत भयभीत हैं, हमें क्या करना चाहिए? यदि मैं कुछ करने के लिए कहता हूं तो वे उसे भयभीत अस्तित्व के साथ करेंगे, इसलिए वह कृत्य उनके भय से ही आएगा और जो कृत्य भय से आता है, वह भय के सिवा और कुछ हो ही नहीं सकता।

मैंने सुना है कि एडोल्फ हिटलर गहरे अवसाद अथवा डिप्रेशन से पीड़ित था और मनोवैज्ञानिकों का कहना था कि यह अंदर छिपी हुई हीनता को ग्रंथि के कारण हैं। इसलिए आर्य रक्त के सभी जर्मन मनोवैज्ञानिक बुलाए गए। उन्होंने प्रयास किया, लेकिन वे उसकी कोई सहायता न कर सके। उनके विश्लेषण से कुछ भी नहीं निकला। इसलिए उन्होंने एक यहूदी मनोवैज्ञानिक को बुलाने का सुझाव दिया। प्रारम्भ में हिटलर एक- यहूदी को बुलाने के लिए तैयार न था, लेकिन और कोई रास्ता न देखकर उसे समर्पण करना ही पड़ा। वह महान यहूदी मनोवैज्ञानिक बुलाया गया।

वह हिटलर के मन में गहराई तक गया, उसने उसके मन और सपनों का विश्लेषण किया और तब सुझाव दिया, समस्या कुछ खास है नहीं, केवल एक बात दोहराते रहने से, ' मैं महत्वपूर्ण हूं ' मैं महत्वपूर्ण हूं '' मैं परम आवश्यक हूं ' और मेरे बिना कोई काम हो ही नहीं सकता, इसे दिन-रात जब भी याद आ जाए मंत्र की तरह जपते रहने से सब ठीक हो जाएगा।

हिटलर ने कहा-'' रुको! तुम मुझे गलत परामर्श दे रहे हो।

वह मनोवैज्ञानिक कुछ समझ ही न सका। उसने पूछा, '' आपके कहने का आखिर क्या अर्थ है? आप इसे गलत परामर्श क्यों कह रहे हैं? ''

हिटलर ने कहा-'' क्योंकि मैं जो कुछ भी कहता हूं मैं उस पर कभी विश्वास नहीं करता। मैं इतना बड़ा झूठा हूं कि मैं जो कुछ भी कहता हूं उस पर कभी विश्वास कर ही नहीं सकता। तुम कहते हो दोहरा-मैं महत्वपूर्ण हूं। मेरे बिना कुछ भी काम हो ही नहीं सकता। मैं जानता हूं-यह बात झूठ है। इसका मतलब है-मैं यही कह रहा हूं कि मैं एक झूठा हूं। ''

झूठ के बीच, यदि तुम कुछ भी दोहराओगे, वह झूठ ही बन जाएगा। भय से भरे हुए तुम उससे बचने को जो कुछ भी करोगे वह कृत्य भी फिर भय ही बन जाएगा। घृणा से भरे, यदि तुम किसी दूसरे को प्रेम करने की कोशिश भी करो तो उस प्रेम में भी अंतत: घृणा प्रकट हो जाएगी, इसके सिवा वह कुछ और हो ही नहीं सकती, क्योंकि तुम घृणा से भरे हुए हो।

जाओ उपदेशकों के पास और वे कहेंगे-' प्रेम करने का प्रयास करो। ' वे लोग व्यर्थ की बकवास कर रहे हैं, क्योंकि जो व्यक्ति घृणा से भरा हुआ है, वह प्रेम करने की कोशिश कैसे कर सकता है? यदि वह प्रेम करने की कोशिश भी करता है तो चूंकि यह प्रेम, घृणा से ही आ रहा है, वह पहले ही जहरीला हो जाएगा, क्योंकि उसका स्रोत विषैला है। सारे उपदेशकों की यही वेदना और मुसीबत है।

जो लोग हिंसक थे, गांधीजी उनसे अहिंसक होने को कहते थे। उन लोगों की अहिंसा का जन्म हिंसा से ही हुआ इसलिए उनकी अहिंसा एक ओढ़ा गया मुखौटा है, केवल दिखाने का चेहरा-भर है। गहराई में, वे लोग अंदर हिंसा से उबल रहे थे। यदि तुम्हारा ब्रह्मचर्य बहुत अधिक .कामुकता से ही जन्मा है तो वह विकृत काम-वासना के अतिरिक्त और कुछ हो ही नहीं सकता।

इसलिए कृपया कोई संघर्ष उत्पन्न न करें। यदि तुम्हारे पास एक समस्या है तो दूसरी समस्या उत्पन्न मत करो उस एक ही के साथ रहो, उससे लड़कर तुम दूसरी उत्पन्न कर लोगे।

दूसरी को हल करने से बेहतर एक समस्या को ही हल करना कहीं आसान है और पहली तो स्रोत के निकट है। दूसरी समस्या दूर है और उसको हल करना असम्भव है।

यदि तुम्हारे पास भय है और तुम भयभीत हो तो उसे समस्या क्यों बनाते हो? तब तुम जानते हो कि तुम भय से भरे हुए हो, ठीक वैसे ही जैसे तुम्हारे पास दो हाथ हैं। उन हाथों से नई समस्या क्यों खड़ी करते हो कि तुम्हारे पास एक ही नाक है, दो क्यों नहीं है? उनसे नई समस्या खड़ी करने से लाभ क्या?

भय है, उसे स्वीकार करो। उसे कहीं लिखकर अलग रख दो। स्वीकार कर उस बारे में चिंता करना छोड़ दो। होगा क्या? अचानक तुम्हें अनुभव होगा कि वह विलुप्त हो गया और यही अंदर का रसायन है। यदि तुम स्वीकार कर लो तो समस्या विलुप्त हो जाती है। यदि तुम उसके साथ कोई भी संघर्ष करो तो वह समस्या निरन्तर बढ़ती ही जाती है और जटिल हो जाती है।

हां! वहां दुःख हैं, वेदनाएं हैं और अचानक भय भी आ जाता है। उसे स्वीकार करो। वह वहां हैं .और उस बारे में कुछ भी नहीं किया जा सकता। जब मैं कहता हूं कि उस बारे में कुछ भी नहीं किया जा सकता तो यह मत सोचना कि मैं ऐसा किसी निराशावादी दृष्टि से कह रहा हूं। जब मैं कहता हूं कि इस बारे में कुछ भी नहीं किया जा सकता तो मैं तुम्हें इसे हल करने की कुंजी सौंप रहा हूं।

वहां दुख हैं। यह जीवन के एक भाग हैं और साथ ही विकास के भी, उसमें कुछ भी गलत नहीं है। दुःख अनिष्ट और बरबादी बन जाता है, जब वह सृजनात्मक न होकर विध्वंसात्मक होता है। दुःख तभी बुरे बन जाते हैं, जब तुम कष्ट उठाते हो और उनसे कुछ भी मिलता नहीं, लेकिन मैं तुमसे कह रहा हूं, दुःख के द्वारा परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है, तब वह सृजनात्मक बन जाता है। अंधकार सुन्दर है, यदि उससे निकलकर शीघ्र ही भोर आ रही है। वह अंधेरा खतरनाक है, यदि वह अंतहीन है और सुबह की ओर नहीं ले जाता वह निरन्तर बना ही रहता है और तुम एक दुष्चक्र में फंसकर गाड़ी द्वारा बनाई गई लीक पर चलते ही जाते हो।

वह यही है, जो तुम्हारे साथ हो रहा है। बस एक दुःख से छुटकारा पाने के लिए तुम दूसरा दुःख निर्मित कर लेते हो। दूसरे के बाद फिर कोई और... और यह सिलसिला चलता ही रहता है। वे सभी दुःख, जिनको अभी तुमने जिया नहीं है, वे तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहे हैं। तुम भाग रहे हो... और तुम एक दुःख से पीछा छुड़ाते हुए दूसरे पर आते हो। तुम इस दुःख से बचाव के लिए उस दुख की ओर जा सकते हो, लेकिन दुःख वहां रहेंगे ही क्योंकि तुम्हारे मन के पास सृजनात्मक शक्ति है।

दुःख को स्वीकार करो, उससे पीछा छुड़ाकर भागो मत। उससे होकर गुजरो। यह एक पूरी तरह काम करने का भिन्न आयाम है। दुःख है, उनका सामना करो और उनके द्वारा होकर गुजरो। वहां भय होगा ही, उसे स्वीकार करो। तुम कांप उठोगे इसलिए कांपो। एक धोखा खड़ा क्यों करते हो कि तुम नहीं कप रहे और तुम भयभीत नहीं हो। यदि तुम एक कायर हो तो उसे स्वीकार करो।

प्रत्येक व्यक्ति' कायर है। जिन व्यक्तियों को तुम बहादुर कहते हो, वह उनका मात्र बाहरी मुखौटा है। बहुत गहराई में वे भी दूसरों जैसे ही कायर हैं और वस्तुत : अधिक कायर हैं। बस केवल अपनी कायरता छिपाने के लिए उन्होंने अपने चारों ओर बहादुरी का घेरा निर्मित कर लिया है और कभी-कभी वे इस तरह से कार्य करते हैं कि प्रत्येक यह जानें कि वे कायर नहीं हैं। यह बहादुरी ठीक एक पर्दे की तरह है। आदमी कैसे बहादुर हो सकता है क्योंकि मृत्यु तो है ही वहां? आदमी कैसे बहादुर हो सकता है.. क्योंकि मनुष्य ठीक हवा में उड़ते हुए पत्ते की तरह है? पता कांपने में कैसे सहायक हो सकता है? जब हवा चलती है तो पता कांपेगा ही, लेकिन तुम पत्ते से कभी नहीं कहते कि तुम कायर हो। तुम सिर्फ यही कहते हो कि पता जीवन्त है इसलिए जब तुम कांपते हो और भय तुम्हें अपनी पकड़ में ले लेता है तुम हवा में डोलते एक पत्ते हो। बहुत सुंदर है ऐसा होना। फिर उससे कोई समस्या उत्पन्न क्यों करते हो? लेकिन समाज ने प्रत्येक चीज में समस्याएं उत्पन्न कर दी हैं।

यदि एक बच्चा अंधेरे में डरता है तो हम कहते हैं-डरो मत, बहादुर बनो। क्यों? बच्चा अज्ञानी है-स्वाभाविक रूप से वह अंधेरे में भय का अनुभव करता है। तुम उसे विवश करते हो, बहादुर बनो। इसलिए वह अपने को विवश बनाता है और तनाव से भर जाता है। तब वह अंधकार की मुसीबत को झेलता है, लेकिन वह तनाव से भरा है अब उसका पूरा अस्तित्व कांपने को तैयार है, लेकिन वह उसे दबाता है। यह दबाया हुआ कम्पन पूरी जिन्दगी उसका पीछा करेगा। यह अच्छा था कि वह अंधेरे में कांप लेता, इसमें कुछ भी गलत न था। यह अच्छा था कि वह चिल्लाता और भाग खड़ा होता, इसमें कुछ भी गलत न था। तब बच्चा अंधेरे के बारे में जानकर और उसका अनुभव करने के बाद उसके बाहर आया होता। उसने महसूस किया होता कि यदि वह

अंधेरे में से कांपता, रोता और चीखता हुआ बाहर आया है, वहां डरने जैसा कुछ था नहीं। जब तुमने उसे दबा दिया तो तुम कभी भी उस चीज का समग्रता से अनुभव ही नहीं कर पाते और तुम कभी भी उससे कुछ प्राप्त भी नहीं करते।

दु:ख के द्वारा गुजरते हुए ही प्रज्ञा आती है और यह आती है स्वीकार भाव से। जैसी भी स्थिति हो, उसके साथ सहज बने रहो।

समाज और उसके द्वारा की निंदा की ओर देखो ही मत। यहां कोई भी जज का बहाना किए नहीं बैठा है और न कोई यहां तुम्हारे कृत्यों पर निर्णय दे रहा है। न दूसरों पर कोई निर्णय लो तुम और न दूसरों के निर्णयों से परेशान या व्यग्र हो। तुम अकेले और अनूठे हो। तुम पहले कभी नहीं थे और न कभी अब आगे होंगे। तुम सुन्दर हो, उसे स्वीकारो और जो कुछ भी घटता है, उसे घटने दो और उस अनुभव में से होकर गुजरी, दु:खों से गुजरना एक सीख बन जाएगा और तभी वह सृजनात्मक होगा। भय तुम्हें निर्भयता देता है। क्रोध के द्वारा करुणा आएगी। घृणा की समझ से प्रेम का जन्म होगा, लेकिन यह सब कुछ संघर्ष करते हुए नहीं, बल्कि उसमें से सजग चेतना के साथ गुजरते हुए ही घटता है। उसे स्वीकार करो और उसमें से होकर गुजरो। यदि तुम यह आवश्यक बना लो कि प्रत्येक अनुभव से होकर गुजरना ही हैं तो वहां मृत्यु भी होगी जिसका सबसे प्रबल अनुभव है। जीवन का अनुभव उस अनुभव के सामने कुछ भी नहीं क्योंकि जीवन, मृत्यु जितना सघन नहीं है।

जीवन एक लम्बे समय में फैला हुआ है। सत्तर या सौ वर्ष। मृत्यु बहुत तीव्र है, क्योंकि वह फैली हुई नहीं है-वह एक क्षण में होती है। जीवन को सौ या सत्तर वर्ष तक उसमें से गुजरना होता है, इसलिए वह इतना प्रबल नहीं हो सकता। मृत्यु एक क्षण में आती है, वह टुकड़ों में नहीं, पूर्णता में आती है। वह इतनी तीव्र होगी कि तुम उससे अधिक तीव्र या प्रबल कुछ और जान ही नहीं सकते, लेकिन यदि तुम डरे हुए हो, यदि मृत्यु आने से पूर्व तुम उससे बचाव चाहते हो इसीलिए भय के कारण तुम अचेत हो जाते हो तो एक महान स्वर्णावसर से चूक जाते हो। वही स्वर्णिम द्वार है। यदि तुम पूरे जीवन सभी चीजों को स्वीकार करते रहे हो तो जब मृत्यु आती है तो शांति और निष्क्रिय सजगता से तुम उसे स्वीकार करोगे, उससे बचाव करने के प्रयास के बिनाउसमें प्रवेश करोगे। यदि तुम मृत्यु में शांति और सजग निष्क्रियता से, बिना किसी प्रयास प्रवेश कर सके तो मृत्यु तिरोहित हो जाती है। जब कृष्ण, जीसस, बुद्ध और महावीर: कहते हैं कि तुम अमर हो, शाश्वत हो तो वे किसी सिद्धांत की बात नहीं कर रहे, वे स्वयं अपने अनुभव की बात कह रहे हैं।

ऐसी घटना इस शिविर में भी घट सकती है क्योंकि समाधि भी मृत्यु है, ध्यान भी मृत्यु है। कई बार ऐसे भी क्षण होंगे, जब तुम्हें अचानक यह अनुभव होगा कि तुम मर रहे हो। उससे भागने की कोशिश मत करो, उसे घटने के लिए राजी हो जाओ। यदि तुमने उसे घटने की इजाजत दी तो मृत्यु तो चली ही गई है, मृत्यु तो अब वहां है ही नहीं और अब अस्तित्व में एक अंतर्ज्योति, जिसका न कोई प्रारम्भ है और न अंत, आ चुकी है। वह वहां हमेशा ही से थी लेकिन तुम अब उसे महसूस कर पा रहे हो।

इसलिए सूत्र यह होना चाहिए- भय, घृणा, ईर्ष्या या दु:ख जो भी चीज हो, उसे लेकर कोई समस्या सृजित मत करो। उसे स्वीकार करो, उसमें से होकर गुजरो, तब तुम सभी दु:खों को पराजित कर दोगे, यहां तक कि मृत्यु को भी और तुम एकविजयी जिन्न बन जाओगे।

क्या कुछ और...?

दूसरा प्रश्न : प्यारे ओशो? जब आप हमसे दु:खो को सहन करने के बारे में बात करते है? आप हमें उसके ही साथ- साथ प्रसन्न बने रहने के लिए भी कहते हैं इन दोनों चीजों से समझौता करने की कोशिश कठिन लगती है

जब मैं कहता हूं कि दु खो को प्रसन्नता से सहन करो तो यह विरोधाभासी दिखाई देता है और तुम्हारा मन सोचता है कि दोनों के साथ कैसे समझौता किया जाए क्योंकि तुम्हारे लिए दोनों परस्पर विरोधी हैं। वे हैं नहीं, वरन वे परस्पर विरोधी दिखाई देते हैं। तुम दु:खों का भी मजा ले सकते हो।

आखिर रहस्य क्या है-दु खो का कैसे मजा लिया जाए? पहली चीज तो यह है कि यदि तुम पलायन न करो, यदि दु:ख के वहां होने को तुम स्वीकार कर लो, यदि तुम उनका सामना करने को तैयार हो, यदि तुम उन्हें किसी तरह भुलाने की कोशिश नहीं कर रहे हो, तब तुम उनसे अलग हो जाते हो। दु:ख वहां होते हैं लेकिन तुम्हारे चारों ओर, वे केन्द्र पर न होकर परिधि पर होते हैं। फिर दु:ख का केन्द्र पर होना असम्भव है क्योंकि ऐसा वस्तुओं का स्वभाव नहीं है। वे हमेशा परिधि पर होते हैं और तुम होते हो केन्द्र पर।

इसलिए जब तुम उनका होना स्वीकार कर लेते हो, तुम पलायन नहीं करते, तुम पीछा छुड़ाकर भागते नहीं, तुम दहशत में नहीं होते, तब अचानक तुम सजग हो जाते हो कि दु:ख वहां परिधि पर हैं और उनकी वेदना किसी और को हो रही है, तुम्हें नहीं, ओर तुम उन्हें बस देख रहे हो। एक सूक्ष्म प्रसन्नता का भाव तुम्हारे अस्तित्व के चारों ओर फैल जाता है क्योंकि तुम जीवन के आधारभूत सत्यों में से एक का अनुभव कर रहे हो।

इसलिए जब मैं कहता हूं उनका आनन्द लो तो मेरे कहने का यह अर्थ नहीं है कि आत्म पीड़क बन जाओ। मेरे कहने का यह अर्थ नहीं कि अपने लिए दु:ख निर्मित करो और फिर उनका आनन्द लो। मेरे कहने का यह अर्थ नहीं कि किसी पहाड़ी से नीचे गिर पड़ी और फिर हड्डियां तोड़कर उस पीड़ा का आनन्द लो-नहीं। वहां इस तरह के बहुत से लोग हैं, जो संन्यासी या तपस्वी बन गए हैं और अपने शरीर को सताने के लिए दु:खों का सृजन कर रहे हैं। ये लोग स्वपीड्क और बीमार हैं। ऐसे लोग बहुत खतरनाक हैं। वे चाहते है कि दूसरों को भी दु:खी बना दें लेकिन वे इतने साहसी नहीं हैं। वे दूसरों के प्रति हिंसक होकर उन्हें मार देना चाहते हैं, उन्हें अपंग कर देना चाहते हैं लेकिन वे इतने साहसी नहीं है इसलिए उनकी पूरी हिंसा अपने ही अंदर उतरकर आत्महिंसा बन गई है। अब वे स्वयं को ही अपंग बनाकर स्वयं को ही सता रहे हैं और उसका मजा ले रहे हैं।

मैं यह नहीं कह रहा हूं कि स्वपीडक बनो। मैं तो सिर्फ यह कह रहा हूं कि वहां दु:ख है, तुम्हें उन्हें कहीं खोजने की जरूरत नहीं। वहां पहले से ही बहुत से दु:ख है, तुम्हें उन्हें कहीं और छूने के लिए नहीं जाना है। दु:ख पहले ही से वहां हैं, जीवन का जैसा स्वभाव है, उसमें दु:ख उत्पन्न होते ही हैं। वहां बीमारी है, वहां मृत्यु है, वहां शरीर है, जिसकी प्रकृति से ही दु:ख उत्पन्न होते हैं। उन्हें देखो, बहुत ही तटस्थ दृष्टि से। उन्हें देखो-वे हैं क्या और क्या घट रहा है। उनसे भागो मत। मन तुरन्त कहता है-इनकी ओर देखो मत। उनसे पीछा छुड़ाकर भाग जाओ, लेकिन यदि तुम पलायन कर गए तो तुम आनन्दित नहीं हो सकते।

अगली बार जब तुम बीमार पड़ी और डॉक्टर तुम्हें बिस्तर पर लेटे रहने का सुझाव दे तो इसे एक वरदान की तरह लो। अपनी आंखें बंद कर बिस्तरे पर विश्राम करते हुए बस अपनी बीमारी को देखो। उसका निरीक्षण करो कि वह है क्या? उसका विश्लेषण करने की कोशिश मत करो, उसके सिद्धान्तों में मत जाओ, बस उसे देखो कि वह है क्या? पूरा शरीर थका हुआ, बुखार से तप रहा है-उसे देखो। अचानक तुम अनुभव करोगे कि तुम तेज ज्वर से चारों ओर से घिरे हो, लेकिन तुम्हारे अंदर एक ऐसा ठंडा बिन्दु है, जिसे बुखार तो छू नहीं सकता, उसे प्रभावित नहीं कर सकता। पूरा शरीर बुखार से जल रहा है, लेकिन वह उस शीतल बिंदु को स्पर्श नहीं कर सकता।

मैंने एक झेन भिक्षुणी के बारे में सुना है, जिसकी अब मृत्यु हो चुकी है, लेकिन मरने से पूर्व उसने अपने शिष्यों से पूछा-' तुम लोगों का क्या सुझाव है? मुझे किस तरह मृत्यु का आलिंगन करना चाहिए? '

झेन में यह एक पुरानी परम्परा है कि सद्गुरु शिष्यों से पूछते हैं। वे इसलिए पूछते हैं जिससे वे होशपूर्वक मर सकें। और भले ही वह मौत हो, वे उसके बारे में इतने खेलपूर्ण हैं कि वे उसकी चर्चा करते हुए हंसते हैं, मजाक करते हैं और किस तरह मौत का होशपूर्वक स्वागत किया जाए उसकी विधियां खोजने में आनन्द मानते हैं।

इसलिए शिष्यों ने सुझाव दिया-‘ प्यारे सद्गुरु! अच्छा हो यदि, आप सिर के बल खड़े होकर मरें अथवा किसी ने सुझाव दिया-टहलते हुए... क्योंकि हमने किसी की भी टहलते हुए मृत्यु की बाबत नहीं सुना।

इसलिए इस झेन भिक्षुणी ने पूछा-‘ तुम लोगों का क्या सुझाव है? ‘

उन लोगों ने कहा-‘ अच्छा यह होगा कि हम लोग बड़ी आग प्रज्वलित करें और आप उसके बीच बैठकर ध्यान करते हुए प्राण छोड़े। ‘

उसने कहा-‘ यह विधि सुन्दर है और पहले कभी इसके बारे में सुना भी नहीं गया।

इसलिए एक चिता तैयार की गई और वह भिक्षुणी बुद्ध की मुद्रा में बडे आराम से उसके बीच बैठ गई और तब उन लोगों ने आग प्रज्वलित कर दी। भीड़ में से एक व्यक्ति ने पूछा-‘ वहां आपको कैसा लग रहा है? यहां इतनी अधिक गर्मी है कि मैं और अधिकनिकट आकर आपसे पूछ नहीं सकता, इसीलिए मैं चिल्लाते हुए पूछ रहा हूं-वहां आपको कैसा लग रहा है? ‘

उस भिक्षुणी ने हंसते हुए उत्तर दिया-‘ सिर्फ एक बेवकूफ ही ऐसे प्रश्न पूछ सकता है। वहां कैसा महसूस हो रहा है? वहां तो सदा शीतलता का ही अनुभव होता है। पूरी तरह शीतल। ‘

वह अपने आंतरिक केन्द्र की बात कह रही है। वहां शाश्वत शीतलता ही होती है और केवल एक बेवकूफ व्यक्ति ही ऐसा प्रश्न पूछ सकता है। वह यह बात क्यों कह रही है कि एक बेवकूफ व्यक्ति ही ऐसे प्रश्न पूछ सकता है। यह स्पष्ट है। जब एक व्यक्ति ध्यान करते हुए आग में बैठने को तैयार है और तब आग जला दी जाती है और वह शांत बैठी रहती है, स्पष्ट रूप से इस बात से प्रदर्शित होता है कि इस व्यक्ति ने अपने अस्तित्व के अंदर सबसे गहराई में वह शीतल बिन्दु पा लिया है, जो किसी भी आग से प्रभावित नहीं होता, अन्यथा ऐसा होना सम्भव ही नहीं था।

इसलिए जब तुम ज्वर से जलते हुए बिस्तरे पर लेटे हो और तुम्हारा पूरा शरीर जैसे आग में जला जा रहा है-तो बस उसे देखना, निरीक्षण करना। देखते-देखते तुम चारों कोनों से खिसकते हुए उस स्रोत तक पहुंच जाओगे, एक संतुलन या कहें एक लय प्राप्त कर लोगे। बस देखना, कुछ भी नहीं करना और तुम कर ही क्या सकते हो? ज्वर वहां है, तुम्हें उससे होकर गुजरना है और अनावश्यक रूप से उससे संघर्ष करने में कोई लाभ नहीं। तुम विश्राम कर रहे हो और यदि तुम ज्वर से संघर्ष करोगे तो तुम और अधिक जवरग्रस्त हो जाओगे इसलिए बस उसका निरीक्षण करो। ज्वर को देखते और उसका निरीक्षण करते हुए तुम शीतल होते जाओगे, जितना अधिक देखोगे उतने और शीतल हो जाओगे। बस निरीक्षण करते-करते तुम एक शिखर, शीतल शिखर पर पहुंच जाते हो, इतना अधिक शीतल कि हिमालय भी उससे ईर्ष्या करे क्योंकि उसके शिखर इतने अधिक शीतल नहीं होते। यह शरीर अपने ही अंदर गौरीशंकर शिखर छिपाए हुए हैं। तब तुम महसूस करते हो कि ज्वर विलुप्त हो गया.. .जैसे वह कभी था ही नहीं, वह केवल दूर? बहुत दूर किसी और के शरीर में था।

तुम और तुम्हारे शरीर के मध्य अनन्त स्थान है- अनन्त शून्यता और मैं कहता हूं कि तुम और तुम्हारे शरीर के बीच इतने बड़े अंतराल का अस्तित्व है कि उनके मध्य कोई पुल बनाया ही नहीं जा सकता और सभी दुःख केवल परिधि पर होते हैं। हिन्दू कहते हैं कि यह एक स्वप्न है क्योंकि यह अंतराल इतना बड़ा और न पाटे जाने वाले पुल जैसा है। यह ठीक उस सपने जैसा है, जो कहीं और चल रहा है, उसे तुम नहीं देख रहे, वह तुम्हारे साथ नहीं घट रहा-वह किसी और दूसरे नक्षत्र और किसी अन्य संसार में घट रहा है।

जब तुम अपने दुःखों का निरीक्षण करते हो, अचानक तुम दुःख भोगने वाले नहीं रह जाते, तब तुम उसका आनन्द लेने लगते हो।

दुःखों के द्वारा तुम उसके विपरीत ध्रुव के प्रति सजग हो जाते हो, आनन्दपूर्ण होना, तुम्हारा आंतरिक अस्तित्व है। इसलिए जब मैं कहता खदुःखों का आनन्द लो तो मैं कह रहा हूं-उनका निरीक्षण करो, उन्हें देखो, अपने आंतरिक स्रोत पर, अपने केन्द्र पर लौटकर आओ। तब अचानक वेदनाएं और दुःख रहते हीन हीं, केवल परमानन्द रहे जाता है। वे लोग जो केवल परिधि पर रहते हैं, दुःखों में ही जीते हैं। उनके लिए कोई परमानन्द है

ही नहीं। उनके लिए जो अपने केन्द्र पर लौट आए हैं, कोई दुःख रहता ही नहीं। उनके लिए मात्र परमानन्द रह जाता है।

जब मैं कहता हूं-प्याला तोड़ दो तो यह तोड़ना परिधि का है और जब मैं कहता हूं-पूरी तरह खाली हो जाओ तो यह मूल स्रोत पर वापस लौट आना है, क्योंकि शून्यता के द्वारा ही हम जन्मे हैं और हमें शून्यता में ही वापस लौट जाना है। खालीपन या शून्यता एक शब्द है, जिसका वास्तव में परमात्मा के शब्द के स्थान पर प्रयोग करना कहीं अधिक बेहतर और उपयोगी है, क्योंकि परमात्मा के साथ हमें यह अनुभव होना शुरू हो जाता है कि वहां कोई व्यक्ति जैसा विद्यमान है। इसलिए बुद्ध ने कभी परमात्मा शब्द का उपयोग नहीं कहा, उन्होंने सदा शून्यता, खालीपन, अस्तित्वहीनता का प्रयोग किया।

अपने केन्द्र पर तुम अस्तित्वहीन हो, जैसे हो ही नहीं। बस एक रिक्त स्थान है, एक शाश्वत शीतलता है, तुम मौन हो और आनंदपूर्ण हो। इसलिए जब मैं कहता हूं उसका आनन्द लो, तो मेरा अर्थ है, सावधानी और ध्यान से निरीक्षण करो, तब तुम आनंदित होंगे ही।

जब मैं कहता हूं- आनन्द लो तो मेरा अर्थ दुःखों से पलायन कर जाना नहीं है।

बस... आज इतना ही!

दूसरा प्रवचन

न मन न सत्य

कथा:

डोको नाम के नए साधक ने सदगुरु के निकट आकर पूछा-

"किस चित्त-दशा में मुझे सत्य की खोज करनी चाहिए?"

सदगुरू ने उत्तर दिया- " वहां मन है ही नहीं, इसलिए तुम उसे किसी भी दशा में नहीं रख सकते और न वहां कोई सत्य है? इसलिए तुम उसे खोज नहीं सकते "

डोको ने कहा- " यदि वहां न कोई मन है और न कोई सत्य फिर यह सभी शिक्षार्थी रोज आपके सामने क्यों सीखने के लिए आते हैं

सदगुरू ने चारों ओर देखा ओर कहा- " में तो यहां किसी को भी नहीं देख रहा। "

पूछने वाले ने अगला प्रश्न क्रिया- " तब आप कौन है? जो शिक्षा दे रहे है?"

सदगुरू ने उत्तर दिया- " मेरे पास कोई जिह्वा ही नहीं फिर मैं कैसे शिक्षा दे सकता हूं?"

तब डोको ने उदास होकर कहा- " मैं आपका न तो अनुसरण कर सकता हूं और न आप करे समझ सकता हूं "

झेन सदगुरु ने कहा- " मैं स्वयं अपने आपको नहीं समझ पाता। "

जीवन एक ऐसा रहस्य है, जिसे कोई नहीं समझ सकता और जो यह दावा करता है कि वह उसे समझता है तो वह बस एक अज्ञानी है। जो कुछ कह रहा है, वह उसके प्रति सजग नहीं है कि वह कितनी व्यर्थ की बात कर रहा है।

यदि तुम बुद्धिमान हो तो तुम्हारा पहला अनुभव यही होगा कि जीवन को समझा नहीं जा सकता। उसे समझना असम्भव है। केवल इतना ही समझा जा सकता है कि समझना असम्भव है।

जो यह सब कुछ है-इसी को यह बोधमय झेन वृत्तान्त बड़ी खूबसूरती से अभिव्यक्त कर रहा है।

सद्गुरु ने कहा-' मैं स्वयं अपने आपको नहीं समझ पाता। ' यदि तुम किसी भी बोध को उपलब्ध व्यक्ति के पास जाकर पूछो तो वह यही उत्तर देगा, लेकिन यदि तुम बोध को उपलब्ध न होने वाले व्यक्तियों से यही प्रश्न पूछो तो वे इसके बहुत सारे उत्तर देंगे वे बहुत से सिद्धान्त बघारेंगे वे उस रहस्य को सुलझाने की कोशिश करेंगे, जो कभी सुलझ नहीं सकता। यह कोई पहेली नहीं है। पहेली सुलझ भी सकती है, लेकिन रहस्य का हल न होना ही उसकी प्रकृति है-उसको हल करने का कोई उपाय ही नहीं।

सुकरात ने कहा था-' ' जब मैं युवा था, मैं सोचता था कि मैं बहुत ज्यादा जानता हूं। जब मैं आ हुआ और प्रज्ञा का फल पका, तब मैंने समझा कि मैं कुछ भी नहीं जानता हूं। '

सूफी सद्गुरु जुन्नैद के बारे में यह कहा जाता है कि एक बार वह एक नए युवा के साथ कुछ कार्य कर रहा था। वह युवा मनुष्य जुन्नैद की आंतरिक प्रज्ञा के बारे में कुछ भी नहीं जानता था और जुन्नैद इतनी अधिक सादगी से रहता था कि उसे महसूस करने के लिए बहुत अधिक मर्मवेधी और संवेदनशील दृष्टि की जरूरत थी

कि वह लगभग एक बुद्ध ही है। वह एक मामूली मजदूर की तरह काम करता था और जिनके पास आंखें थीं, सिर्फ वे ही उसे पहचान सकते थे।

बुद्ध को पहचानना बहुत सरल है-वे एक बोधि वृक्ष के नीचे बैठे हुए सरलता से पहचाने जा सकते हैं, लेकिन जुन्नैद को पहचानना बहुत कठिन है। वह एक मजदूर की तरह काम कर रहा था और किसी बोधि वृक्ष के -नीचे नहीं बैठा था। हर तरह से वह पूरी तरह बहुत साधारण था। एक युवा मनुष्य भी उसके साथ कार्य कर रहा था और वह युवा निरन्तर अपनी जानकारी का प्रदर्शन करते हुए जुन्नैद जो कुछ भी करता उसके बोरे में टिप्पणी -करता जा रहा था-' यह तो गलत है। इस काम को इस तरीके से ज्यादा अच्छी तरह किया जा सकता है। ' वह हर चीज के बारे में जानता था।

अंत में जुन्नैद ने हंसते हुए कहा-' नौजवान! मैं इतना युवा नहीं हूं कि इतना अधिक जान सकूं। '

वास्तव में यही कुछ चीज है। उसने कहा-' मैं इतना युवा नहीं हूं कि इतना अधिक जान सकूं। ' केवल एक युवा मनुष्य ही इतना कम अनुभवी और मूर्ख हो सकता है।

सुकरात ठीक ही कहता है-' जब मैं युवा था, मैं बहुत अधिक जानता था और जब अनुभवों ने मुझे थका दिया तो मुझे सिर्फ एक ही बात का अनुभव हुआ कि मैं पूरी तरह अज्ञानी हूं। '

जीवन एक रहस्य है, जिसका अर्थ है-इसे सुलझाया नहीं जा सकता और जब उसे हल करने के सभी प्रयास व्यर्थ सिद्ध होते हैं तभी रहस्य, सुबह की तरह आलोकित होने लगता है। तब सारे द्वार स्वयं खुल जाते हैं और तुम्हें आमंत्रित किया जाता है। एक नहीं हो सकती। शांति या मौन आंतरिक स्वास्थ्य है और मन है आंतरिक बीमारी और ज्ञानी की तरह कोई भी परमात्मा के घर में प्रविष्ट नहीं हो सकता और जब तुम अज्ञानी और बच्चे की तरह निर्दोष होते हो, रहस्य तुम्हें आलिंगन में लेता है। जानने वाले मन के साथ तुम निर्दोष न होकर चालाक होते हो। निर्दोषता ही उसका द्वार है।

यह झेन सद्गुरु बिलकुल ठीक ही कह रहे हैं-' मैं स्वयं अपने आपको नहीं समझ सका। यह बहुत गहरा, वास्तव में जितना भी गहरा होना सम्भव है, यह कथन उतना ही गहरा है, लेकिन यह तो उस वृत्तान्त का अंतिम भाग है। इसे प्रारम्भ ही से शुरू किया जाए। '

झेन सद्गुरु के पास एक शिष्य आकर पूछता है-' ' मन की किस दशा में मुझे सत्य की खोज करनी चाहिए? ' '

मन एक भ्रम है-जो है ही नहीं, लेकिन ऐसा लगता है कि वह है और वह अपने होने का इतना अधिक अहसास कराता है कि तुम सोचने लगते हो कि तुम ही मन हो। मन एक माया है, मन ठीक एक सपने जैसा है, मन ठीक एक प्रक्षेपण की तरह है, वह एक साबुन के बुलबुले जैसा है, जिसके अंदर कुछ भी नहीं, लेकिन वह नदी के ऊपर तैरते एक साबुन के बुलबुले जैसा दिखाई देता है। सूर्य बस उदित होने जा रहा है और उसकी पहली किरणें इस बुलबुले को बेधकर एक इन्द्रधनुष निर्मित कर रही हैं और उसके अन्दर है कुछ भी नहीं। जब तुम बुलबुले को छूते हो तो वह टूट जाता है और हर चीज अदृश्य हो जाती है-वह इन्द्रधनुष, वह सौंदर्य, कुछ भी नहीं बचता। सिर्फ एक खालीपन और अनन्त सूक्ष्मता के साथ मिलकर वह एक हो जाता है। जैसे ठीक एक दीवार थी वहां, बुलबुलों की दीवार। तुम्हारा मन बुलबुलों की ठीक एक दीवार जैसा ही है, उसके अंदर तुम्हारा खालीपन है, उसके बाहर मेरा खालीपन है। वह ठीक एकबुलबुले जैसा है, उसमें किसी नुकीली चीज को चुभाओ, वह बुलबुला रूपी मन विलुप्त हो जाएगा।

सद्गुरु कहता है-' ' वहां कोई मन है ही नहीं, इसलिए उसकी किस दशा के बारे में पूछ रहे हो तुम? ' '

इसे समझना जरा कठिन है। लोग मेरे पास आकर पूछते हैं-' ' हम मन की शांत दशा को उपलब्ध होना चाहते हैं।''

वे सोचते हैं कि मन शांत भी हो सकता है। मन कभी शांत होता ही नहीं।

मन का मतलब है-कौलाहल, बीमारी!

मन का मतलब है-तनाव और दुःखपूर्ण स्थिति!!

मन शांत हो ही नहीं सकता। जब वहां शांति है, तभी अमन है। जब शांति आती है, मन. विसर्जित हो जाता है। जब वहां मन होता है तो शांति नहीं होती। इसलिए वहां कोई शांत मन हो ही नहीं सकता, ठीक वैसे ही जैसे कोई स्वस्थ बीमारी नहीं हो सकती। क्या एक स्वस्थ बीमारी होना सम्भव है? जब वहां स्वास्थ्य होता है, बीमारी

इसलिए शांत या मौन मन हो ही नहीं सकता और वह शिष्य पूछ रहा है- '' किस तरह और किस किस्म की मन की दशा में मुझे ' उसे ' प्राप्त कना चाहिए? " सद्गुरु ने दो टूक उत्तर दिया-''वहां कोई मन है ही नहीं इसलिए तुम कोई भी दशा प्राप्त नहीं कर सकते। इसलिए कृपया इस भ्रम को गिरा दें और मन की कोई भी दशा प्राप्त करने की कोशिश न करें। ''

यह ऐसा ही है जैसे यदि तुम इन्द्रधनुष की यात्रा करने की सोच रहे हो और तुम मुझसे पूछते हो-'' इन्द्रधनुष की यात्रा के लिए हमें क्या कदम उठाना चाहिए? में कहता हूं-कोई इन्द्रधनुष है ही नहीं। इन्द्रधनुष तो ठीक एक आकृति है आकाश में, -इसलिए उस तक जाने को कोई कदम उठाया ही नहीं जा सकता। एक इन्द्र धनुष केवल प्रकट होता है, वह वहां होता नहीं। वह वास्तविक नहीं है। वह वास्तविकता की झूठी व्याख्या है। ''

मन तुम्हारी वास्तविकता नहीं है। वह एक झूठी व्याख्या है। तुम मन हो ही नहीं। तुम कभी मन हुए ही नहीं और न कभी हो ही सकते हो। तुम्हारी यही समस्या है-तुमने किसी ऐसी चीज से तादात्मा जोड़ लिया है, जो वास्तव में है ही नहीं। तुम उस भिखारी की तरह हो, जो यह विश्वास करता है कि उसके पास एक साम्राज्य है। वह इस साम्राज्य के लिए इतना चिंतित है कि कैसे उसकी व्यवस्था की जाए कैसे शासन किया जाए और कैसे अराजकता को रोका जाए। वहां कोई साम्राज्य है ही नहीं, लेकिन वह परेशान है।

च्यांग्त्सु ने एक बार स्वप्न देखा कि वह तितली बन गया है। सुबह उठने पर वह बहुत उदास था। उसके मित्रों ने पूछा-'' हुउग क्या? हमने आपको कभी इतना उदास नहीं देखा।''

च्यांग्त्सु ने कहा-' ' मैं एक पहेली में उलझ गया हूं। मैं उसे समझ नहीं पा रहा। रात सोते हुए मैंने सपने में देखा कि मैं एक तितली बन गया हूं।''

उसके मित्रों ने हंसते हुए कहा-' ' सपनों से कोई भी परेशान नहीं होता। अब तुम जाग गए हो, स्वप्न विसर्जित हो गया इसलिए तुम परेशान करों हो? ' '

च्यांग्त्सु ने कहा-' ' जरूरी बात यह नहीं है। अब मेरी उलझन यह है कि यदि सपने में च्यांगत्थू एक तितली बन सकता है तो यह भी सम्भव है कि तितली सोने चली गई हो अगर वह सपना देख रही हो कि वह नाम? है।''

यदि च्यांग्त्सु सपने में तितली बन सकता है तो दूसरा क्यों नहीं? तितली भी तो स्वप्न में च्यांग्त्सु_ बन सकती है। इसलिए वास्तविकता क्या है? प्यार? का देखा स्वप्न कि वह तितली बन गया है अथवा वह तितली, जो च्यांग्त्सु बनने का स्वप्न देख रही है? असली क्या है? वहां इन्द्रधनुष है। तुम सपने में एक तितली बन सकते हो और जिसे तुम जिन्दगी कहते हो उसके बड़े स्वप्न में तुम मन भी बन सकते हो। जब तुम जागते हो तो मन को जागी हुई दशा में नहीं पाते हो, तुम एक अमन की दशा में होते हो, तुम अमन को प्राप्त कर लेते हो।

आखिर अमन का अर्थ क्या है? इसे समझना जरा कठिन है, लेकिन कभी- कभी अनजाने में तुम इस स्थिति में पहुंच जाते हो लेकिन तुम उसे शायद पहचानते नहीं हो। कभी-कभी बस साधारण रूप से बैठे हुए कुछ

भी न करते हुए मन में एक भी विचार नहीं होता। जब वहां कोई विचार नहीं है तो मन कहां है? जब वहां कोई विचार नहीं है तो वहां मन भी नहीं है, क्योंकि मन ठीक एक विचार करने की प्रक्रिया है। वह कोई वस्तु नहीं है, वह ठीक विचारों का एक जुलूस जैसा है। तुम यहां हो, मैं कह सकता हूं कि एक भीड़ यहां है, लेकिन क्या वास्तव में वहां भीड़ जैसी कोई चीज है? क्या एक भीड़ महत्वपूर्ण है अथवा वहां केवल वैयक्तिक इकाइयां हैं? धीरे- धीरे वैयक्तिक लोग चले जाएंगे, क्या तब पीछे वहां भीड़ रह जाएगी? जब एक-एक कर व्यक्ति चले गए तो भीड़ भी नहीं वहां।

मन ठीक एक भीड़ की तरह है और विचार ही वैयक्तिक इकाइयां हैं क्योंकि विचार निरन्तर बने ही रहते हैं। तुम सोचते हो कि यह एक प्रक्रिया है, बहुत महत्वपूर्ण। प्रत्येक वैयक्तिक विचार को तुम गिरा दो और अंत में कुछ भी न बचेगा। वहां मन जैसी कोई चीज है ही नहीं, केवल सोचना- भर है।

विचार इतनी तेजी से चलते हैं कि दो विचारों के मध्य तुम अंतराल नहीं देख सकते, लेकिन यह अंतराल हमेशा होता है। वह अंतराल तुम हो। उस अंतराल में न च्यांग्त्सु होते हैं और न तितली-क्योंकि तितली भी एक तरह का मन है और ज्वार? भी एक तरह का मन है। एक तितली विचारों का एक भिन्न जोड़ है, च्यांग्त्सु फिर दूसरे विचारों का जोड़ है, लेकिन दोनों हैं मन ही। जब मन नहीं होता तो तुम कौन हो, च्यांग्त्सु तितली? कोई भी नहीं। तब क्या दशा होती है? यदि तुम सोचते हो कि तुम बुद्धत्व वाली स्थिति में होते हो? यदि तुम सोचते हो कि तुम बुद्धत्व की चित्त दशा में हो तो यह फिर एक विचार है और जब विचार वहां है, तो तुम नहीं हो। यदि तुम अनुभव करते हो कि तुम बुद्ध हो तो यह एक विचार है। मन प्रविष्ट हो गया है, अब वहां प्रक्रिया भी है, आकाश फिर बादलों से घिर गया है और उसका नीलापन खो गया है। अब तुम अनन्त नीलिमा का विस्तार नहीं देख सकते हो।

दो विचारों के मध्य सजग होने का प्रयास करो, उन दोनों के मध्य रिक्त स्थान और अंतराल में झांको तो तुम उसमें अमन देखोगे, जो तुम्हारा स्वभाव है। विचार आते हैं और चले जाते हैं-उनका आना एक संयोग है, लेकिन आंतरिक स्थान हमेशा ज्यों-का-त्यों अप्रभावित रहता है। बादल इकट्ठे होते हैं और चले जाते हैं, गायब भी हो जाते हैं-वे भी एक संयोग हैं-लेकिन आकाश वही और ज्यों का त्यों रहता है। तुम्हीं वह आकाश हो।

एक बार ऐसा हुआ कि एक शिष्य, सूफी सद्गुरु बायजीद के पास आया और उसने कहा-‘ ‘ प्यारे सद्गुरु! मैं बहुत क्रोधी हूं। मुझे क्रोध बहुत आसानी से आ जाता है और मैं वास्तव में पागल हो जाता हूं तब मैं कुछ ऐसी चीजें कर बैठता हूं जिन पर बाद में मुझे भी विश्वास नहीं होता कि मैं ऐसी चीजें भी कर सकता हूं। मैं अपने होश में नहीं रह पाता। इसलिए कृपया बताएं कि मैं इससे कैसे छुटकारा पाऊं, यह कैसे गिरे और मैं कैसे इसे काबू में करूं? ‘ ‘

बायजीद ने उसका सिर अपने दोनों हाथों में पकड़ा और उसकी आंखों में झांकने लगा। वह शिष्य थोड़ा बेचैन हो गया।

बायजीद ने उससे पूछा-‘ ‘ तेरा क्रोध आखिर है कहां? मैं उसके अंदर जरा झांकना चाहता हूं।’’

वह शिष्य बेचैन होकर भी हंसते हुए बोला-‘ ‘ ठीक इस वक्त तो मैं क्रोध में नहीं हूं। कभी-कभी ही ऐसा होता है।’’

बायजीद ने कहा- ‘ ‘ जो कभी-कभी होता है, वह तेरा स्वभाव नहीं है। यह मात्र संयोग है। यह आता है और चला जाता है। यह ठीक बादलों जैसा है-इसलिए बादलों के बारे में परेशान होने की क्या बात? तू उस आसमान के बारे में सोच, जो हमेशा वहीं रहता है।’’

यह आत्मा की परिभाषा है-जो आकाश वहां सदा रहता है। वह सब जो आता है और चला जाता है, अप्रासंगिक है। उसके बारे में फिक्र क्या करना, वह तो बस धुंआ है। जो आसमान शाश्वत रूप से बना रहता है,

कभी नहीं बदलता, कभी अलग नहीं होता। दो विचारों के बीच उसे (क्रोध को) गिरा दे, दो विचारों के बीच हमेशा खुला आसमान होता है। उसी में देखते हुए तुम्हें अचानक यह अनुभव होगा कि तुम अमन में हो।

सद्गुरु बिलकुल ठीक है, जब वह कहता है-वहां मन है ही नहीं, इसलिए उसकी कोई दशा हो ही नहीं सकती। तुम व्यर्थ की बात क्यों कर रहे हो? लेकिन व्यर्थ की बातों का भी अपना एक तर्क होता है। यदि तुम सोचते हो कि तुम्हारे पास मन है तो तुम उसकी दशाओं के बारे में सोचना शुरू कर दोगे-चित्त की अज्ञानी दशा, चित्त की बोधपूर्ण दशा, चित्त की विक्षिप्त दशा और मन की शांत दशा। एक बार तुम मन को स्वीकार कर लो, भले ही वह भ्रम हो, तुम उसे बांटने के लिए बाध्य हो। एकबार तुमने स्वीकार कर लिया कि मन वहां है, तुम उसके बारे में कुछ न कुछ खोजना शुरू कर दोगे।

मन केवल तभी रह सकता है, जब तुम उसके बारे में निरन्तर कुछ खोजते रहो। मनुष्य होने की कला आखिर क्यों? यह इसलिए क्योंकि खोजना एक कामना है, खोजने का अथ है- भविष्य की ओर गतिशील होना और खोजने से उत्पन्न होते हैं स्वप्न। इसलिए कोई शक्ति खोज रहा है, राजनीति में-जाकर कोई वैभव और साम्राज्य खोज रहा है और तब कोई ऐसा भी है जो सत्य खोज रहा है, लेकिन खोजना वहां चल रहा है और खोजना ही एक समस्या है और सवाल इसका नहीं कि तुम क्या सोच रहे हो। कोई भी वस्तु कभी कोई समस्या नहीं होती, किसी भी वस्तु से काम हो जाएगा। मन किसी भी वस्तु को खूंटी बनाकर लटक सकता है, उसे अपने जीने के लिए कोई भी बहाना काफी है। सद्गुरु ने कहा-‘ ‘ वहां मन की दशा जैसी कोई चीज है ही नहीं, क्योंकि वहां मन ही नहीं है। वहां कोई सत्य भी नहीं है, इसलिए तुम उसके -बारे में सोचते क्या हो? वहां कुछ भी खोजना हो ही नहीं सकता।’’

यह सबसे महान सन्देशों में से एक है, जो अभी तक दिए गए हैं। यह बहुत कठिन है। शिष्य यह कल्पना तक नहीं कर सकते कि कहीं कोई सत्य है ही नहीं। आखिर सद्गुरु के इस कहने का क्या अर्थ है, जब वह कहता है कि वहां कोई सत्य भी नहीं है। क्या इसका यह अर्थ है कि वहां कोई सत्य है ही नहीं। नहीं, वह कह रहा है कि तुम्हारे लिए जो उसे खोज रहे हो, वहां कोई सत्य नहीं हो सकता। खोज हमेशा असत्य की ओर ले जाती है। केवल न खोजने वाला चित्त ही यह अनुभव करता है कि ‘ जो है’ उसे लिए जब तुम खोजते हो तो उससे चूक जाते हो, जो वास्तव में है। खोजना हमेशा भविष्य की ओर ले जाता है। खोज अभी और यहीं नहीं हो सकती। तुम यहां और अभी खोज ही कैसे सकते हो? तुम केवल हो सकते हो। खोजना एक कामना है- भविष्य के प्रविष्ट होते ही उसके साथ समय आता है... और इस क्षण अभी और यहीं से तुम चूक जाते हो। सत्य तो अभी और यहीं है।

यदि तुम एक बुद्ध के पास जाकर पूछो-‘ ‘ क्या वहां परमात्मा है? ‘ ‘ वह तुरन्त उससे इन्कार कर देगा-वहां कोई परमात्मा नहीं है। यदि वह कहता है-‘ हां है तो वह एक खोजी निर्मित करता है, यदि वह कहता है-‘ हां, परमात्मा है तो तुम उसे खोजना शुरू कर दोगे। तुम कैसे शांत बैठ सकते हो, जब वहां होने वाले परमात्मा की खोज करनी है, तुम कहां जाओगे भागकर ए तुमने अब एक दूसरा भ्रम खड़ा कर लिया

इसलिए बुद्ध कहते हैं-‘ ‘ वहां कोई परमात्मा है ही नहीं।’’ उन्हें कोई न समझ सका। लोगों ने सोचा-वह नास्तिक है। वह परमात्मा .से इन्कार नहीं कर रहे हैं। वह केवल खोजने वाले को नकार रहे हैं, लेकिन उन्होंने कहा होता कि वहां परमात्मा है तो वहां खोजी भी उत्पन्न हो गए होते और खोजने वाला ही संसार है और जो वह खोज रहा है, वह सभी कुछ माया है। लाखों जन्मों से तुम खोज ही रहे हो, भाग ही रहे हो- कभी इसके पीछे कभी उसके पीछे, कभी इस वस्तु के लिए तो कभी उस वस्तु के होने की कला लिए इस संसार के लिए या उस संसार के लिए लेकिन तुम खोज रहे हो।

अब तुम सत्य को खोज रहे हो, लेकिन सद्गुरु कहते हैं-वहां कोई भी सत्य नहीं है। वह खोजने का सारा आधार ही मिटा देते हैं। वह नीचे से वह जमीन हटा देते हैं, जिस पर तुम खड़े हुए हो, जिस पर तुम्हारा मन टिका हुआ है। वह बस तुम्हें खाई में धकेल देते हैं।

उस खोजी ने कहा-‘ ‘ तब इतने सारे खोजी आपके चारों ओर क्यों बैठे हुए हैं? यदि न कुछ खोजने के लिए है और न कहीं सत्य है तब यह इतनी भीड़ क्यों? ‘ ‘ सद्गुरु के चारों ओर बैठे लोगों में तुम भी जरूर रहे होंगे। कोई मेरे पास आता है तो मैं कहता हूं-‘ ‘ खोजने को वहां कुछ है ही नहीं। कुछ भी ऐसा नहीं है, जिसे खोजा जाए क्योंकि वहां खोजने को कुछ भी तो नहीं है।‘‘ वह फिर पूछने के लिए बाध्य होगा ही-‘ ‘ तब ये संन्यासी यहां क्यों बैठे हैं। आखिर ये यहां कर क्या रहे हैं? ‘ ‘

लेकिन वह खोजी आवश्यक बात से चूके चला जाता है। सद्गुरु ने चारों ओर देखा और कहा–” मैं तो यहां किसी को भी नहीं देख रहा, यहां कोई है ही नहीं।‘‘ वह खोजी आवश्यक मुद्दे से चूक रहा है, क्योंकि बुद्धि निरन्तर चूके ही चली जाती है। यदि वह वास्तव में देख पाता, यही वास्तविक तथ्य था कि वहां कोई था ही नहीं।

तुम दो तरह से हो सकते हो और यदि तुम खोज रहे हो तो तुम ठीक पहले एक पर हो। यदि तुम नहीं खोज रहे हो तो तुम हो ही नहीं। खोजना तुम्हें अहंकार देता है। ठीक इस क्षण यदि तुम किसी चीज या किसी व्यक्ति को नहीं खोज रहे हो तो तुम यहां हो ही नहीं, यहां कोई भी भीड़ नहीं है। यदि मैं कुछ भी नहीं सिखा रहा हूँ-क्योंकि वहां कुछ भी सीखने जैसा है ही नहीं और जो सिखाया जा सके, वह सत्य नहीं है तो यदि मैं कुछ भी नहीं सिखा रहा हूं और तुम भी कुछ नहीं सीख रहे हो, फिर यहां है कौन? केवल खालीपन या शून्यता है यहां और है शुद्ध शून्यता या परमानन्द। वैयक्तिक रूप से सभी मिट जाते हैं और तब वह गहरे सागर जैसी चेतना बन जाती है।

लोग व्यक्तिगत रूप से वहां हैं, क्योंकि प्रत्येक के पास व्यक्तिगत मन है। तुम्हारी कामना भिन्न है, इसी वजह से तुम अपने पड़ोसी से भिन्न हो, क्योंकि कामना से ही विशिष्टता और भेद उत्पन्न होते हैं। मैं कुछ और खोज रहा हूं तुम कुछ और खोज रहे हो, मेरा मार्ग तुम्हारे मार्ग से भिन्न है, मेरा लक्ष्य तुमसे अलग है। इसी वजह से मैं तुमसे भिन्न हूं। यदि मैं कुछ भी नहीं खोज रहा हूं और न तुम कुछ खोज रहे हो तो लक्ष्य मिट जाते हैं, मार्ग भी नहीं रह जाते, फिर मन कैसे रह सकता है? प्याला ही टूट गया। मेरी चाय बहती हुई तुममें और तुम्हारी चाय बहती हुई मेरे में समा जाती है। वह फिर सागर जैसा अस्तित्व बन जाता है।

सद्गुरु ने चारों ओर देखा और कहा-‘ ‘ मैं तो यहां किसी को भी नहीं देख रहा, यहां कोई है ही नहीं।‘‘

बुद्धि चूके ही चले जाती है और उस खोजी ने कहा-‘ ‘ तब आप किन्हें सिखा रहे हैं? यदि वहां कोई है ही नहीं, तब आप किन लोगों से बात कर रहे हैं? ‘ ‘

और सद्गुरु ने कहा-‘ ‘ मेरे पास कोई जीभ ही नहीं इसलिए मैं कैसे सिखा सकता हूं? ” सद्गुरु उसे देखने तथा उसे सजग बनाने के निरन्तर संकेत देता जा रहा है, लेकिन खोजी अपने ही मन की गहरी खाई में सरिता जा रहा है। सद्गुरु उसे संकेत देता जा रहा है, उसके सिर पर चोट करता जा रहा है और मन से बाहर लाने के लिए उसे बता रहा है कि वह व्यर्थ की बातों में उलझा हुआ है।

यदि तुम वहां रहे होते तो तुम भी उस सद्गुरु से सहमत न होकर उस पूछने वाले से ही सहमत हुए होते। वह पूछने वाला ही तुम्हें बिलकुल ठीक लगा होता। यह सद्गुरु तो तुम्हें पागल और झक्की लगता है। वह बात भी कर रहा है और कह रहा है-वहां कोई जिह्वा ही नहीं इसलिए मैं कैसे बात कर सकता हूं? वह कह रहा है-मेरा कोई शरीर ही नहीं, फिर कैसे मैं चल सकता हूं कैसे मैं बात कर सकता हूं?

वह कह रहा है-मेरी ओर देखो, मैं बिना रूप और आकृति के अरूप हूं। मैं शरीर में आबद्ध नहीं हूं। तुम्हें जो शरीर दिखाई देता है, लेकिन मैं नहीं हूं इसलिए कैसे मैं बात कर सकता हूं?

‘ मन चूके ही चले जाता है। मन के साथ यही मुसीबत है। तुम उसे धक्का दो, वह फिर इकट्ठे कर लेता है विचार तुम उस पर चोट करो, बस एक क्षण के लिए वहां थोड़ा-सा हिलना और कांपना होता है और वह फिर ज्यों का त्यों अपने को स्थापित कर लेता है।

क्या तुमने वह जापानी गुड़िया देखी है, जिसे ‘ दरूमा डल ‘ कहते हैं? तुम उसे उल्टी-सीधी किसी भी स्थिति में फेंक दो, उसका सिर भले ही नीचे और पैर ऊपर कर दो, लेकिन तुम कुछ भी करो उसके साथ, गुड़िया बुद्ध की मुद्रा में ही बैठ जाती है। उसकी तली इतनी भारी होती है कि तुम उसके साथ कुछ कर ही नहीं सकते। उसे किसी भी तरह से फेंक दो, गुड़िया बुद्ध की मुद्रा में ही बैठ जाती है। यह ‘ दरूमा ‘ नाम बोधिधर्म से ही आया है। जापान में बोधिधर्म का नाम दरूमा ही है। दरूमा कहा करता था, अर्थात बोधिधर्म कहा करता था कि तुम्हारा मन ठीक इस दरूमा गुड़िया जैसा ही है। वह अपने पास एक ऐसी ही गुड़िया रखता था जिसे वह कभी फेंक देता था, कभी ठोकर मारता था लेकिन वह कुछ भी करे-गुड़िया की मुद्रा जस-की-तस रहती थी-उसका नीचे का भाग इतना अधिक भारी था कि तुम्हारे ऊपर नीचे फेंकने पर भी वह ज्यों-का-त्यों बना रहता था।

यह सद्गुरु भी उस पूछने वाले को धकेदे रहा है। वह थोड़ा-सा हिलता है औरफिर गुड़िया की तरह ज्यों-का-त्यों बैठ जाता है। वह हर बात से चूके ही जा रहा है। अंत में निराश होकर पूछने वाला कहता है- ‘ ‘ मैं आपकी बात का अनुसरण ही नहीं कर पा रहा हूं। मैं कुछ भी समझ ही नहीं पा रहा हूं।‘‘

और सद्गुरु अंतिम चोट मारता हुआ कहता है- ‘ ‘ मैं स्वयं को नहीं समझ पा रहा हूं।

यह भली- भांति जानते हुए भी कि कुछ भी सिखाया नहीं जा सकता। मैं तुम्हें सीख दिए जा रहा हूं। यही वजह है कि मैं अनन्त तक जा सकता हूं। यदि वहां कुछ भी ऐसा होता, जो सिखाया जा सकता तो उसे मैंने पहले ही सिखा दिया होता। यह एक अंतहीन कहानी है। इसका कभी निष्कर्ष निकलता ही नहीं, इसलिए मैं कहे चला जाता हूं। यह कभी समाप्त होगी ही नहीं। कहानी के समाप्त होने से पहले तुम समाप्त हो सकते हो, लेकिन इसका कोई अंत नहीं।

कोई मुझसे पूछ रहा था-‘ ‘ आप प्रतिदिन क्यों बोले चले जाते हैं? ‘ ‘ मैंने कहा- क्योंकि वहां कुछ भी सिखाने जैसा है ही नहीं।

किसी दिन अचानक तुम्हें अनुभव होगा कि मैं नहीं बोल रहा हूं और न मैं कुछ सिखा रहा हूं। वहां कुछ ऐसा है ही नहीं जो सिखाया जा सके क्योंकि वहां सत्य है ही नहीं।

मैं तुम्हें कौन-सा अनुशासन दे रहा हूं? कोई भी नहीं। एक अनुशासित मन आखिर फिर मन ही है., बल्कि और अधिक दुराग्रही, अधिक हठीला और कहीं अधिक बेवकूफ है। जाओ और पूरे संसार में जाकर जरा अनुशासित भिक्षुओं और साधुओं को देखो-ईसाई हिन्दू जैन सभी धर्मों के संन्यासियों को। जहां कहीं भी तुम ऐसा आदमी देखते हो जो पूरी तरह अनुशासित हो, तुम उसके पीछे एक मूढ़ मन पाओगे। उसका प्रवाह रुक गया है। उसकी कोई भी चीज प्राप्त करने की दिलचस्पी इतनी अधिक है कि उससे जो भी करने को कहो, वह उसके लिए तैयार है। यदि तुम कहो-‘ सिर के बल एक घंटे खड़े रहो तो वह सिर के बल खड़े होने को तैयार है। ऐसा उसकी कामना के कारण है। यदि घंटों सिर के बल खड़ा होने से परमात्मा मिल सकता है तो वह इसके लिए तैयार है, लेकिन उसे प्राप्त जरूर करता है।

मैं तुम्हें कुछ ऐसा नहीं दे रहा हूं जिससे तुम कहीं पहुंचकर अपनी कामना की पूर्ति कर सको क्योंकि वहां न कुछ पहुंचने जैसा है और न कुछ पाने जैसा। यदि तुम इस बात का अनुभव कर लो तो तुम इसी क्षण वहां पहुंच गए। अभी इसी क्षण तुम पूर्ण हो, न इसके लिए कुछ करना है और न कुछ बदलना है। तुम अभी इसी क्षण पूर्ण ब्रह्म हो।

इसी वजह से सद्गुरु ने कहा-‘ ‘ मैं स्वयं अपने आपको नहीं जानता।‘‘ ऐसा सद्गुरु खोजना कठिन है जो कहता हो-मैं स्वयं को ही नहीं समझता। एक सद्गुरु के लिए यह दावा जरूरी है कि वह जानता है, केवल तभी तुम उसका अनुसरण करोगे। एक सद्गुरु के लिए इतना ही जरूरी नहीं है कि वह जानता है, उसके लिए यह

दावा करना भी जरूरी है कि कोई और नहीं जानता और केवल वही जानता है। दूसरे अन्य सभी सद्गुरु गलत हैं और केवल वह अकेला जानता है। तभी तुम उसका अनुसरण करोगे। तुम्हें पूरी तरह निश्चित होना जरूरी है, तुम तभी उसके शिष्य बनोगे,। सुनिश्चित तुम्हें एक अहसास कराती है कि यहाँ है वह आदमी, जिसका अनुसरण कर मैं पहुंच जाऊंगा।

में तुम्हें एक कहानी सुनाना चाहूंगा। एक बार ऐसा हुआ कि एक तथाकथित गुरु सफर पर निकला। वह हर गांव में जाकर यह घोषणा करता-' ' मैंने उसे पा लिया है। मैं जानता हूं परमात्मा को। यदि तुम भी चाहते हो तो आओ और मेरा अनुसरण करो। " लोग उससे कहते-' ' अभी यहां बहुत-सी जिम्मेदारियां निभानी हैं। किसी दिन हमें आशा है कि हम आपका अनुसरण करने में समर्थ हो सकेंगे। " वे लोग उसके पैर छूते, उसे आदर देते, उसकी सेवा करते लेकिन कोई भी अनुसरण नहीं करता, क्योंकि उनके लिए ऐसी बहुत-सी दूसरी चीजें थीं, जिन्हें पहले -करना था। उन्हें करने से पहले वे कैसे परमात्मा को खोजने जा सकते थे। जो चीजें पहले हैं, उन्हें निबटाना है। परमात्मा तो हमेशा आखिर में आता है और आखिरी चीज 'कभी आती नहीं, क्योंकि पहली चीजें ही अनन्त हैं और वे कभी खत्म होने पर आती ही नहीं। लेकिन एक गांव में एक पागल आदमी था-पागल ही था वह, अन्यथा कौन ऐसे गुरु का अनुसरण करता।

उसने गुरु से कहा-' ' बिल्कुल ठीक। क्या आपने पालिया? " गुरु थोडा झिझके- और उस पागल आदमी की ओर देखा-क्योंकि यह आदमी खतरनाक दिखाई दे रहा था, यह शख्स अनुसरण कर सकता है और मुसीबत खड़ी कर सकता है-लेकिन पूरे गांव के सामने वह इन्कार. भी नहीं कर सके। इसलिए उन्होंने कहा-' ' हां, मैंने पा लिया। "

उस पागल आदमी ने कहा-' ' अब आप मुझे दीक्षा दीजिए। मैं आपका आखिर तक अनुसरण करूंगा। मैं परमात्मा को प्राप्त करना -चाहता हूं। "

वह तथाकथित गुरु व्याकुल हो उठा, लेकिन क्या किया जा. सकता था? उस पागल आदमी ने उनका अनुसरण करना शुरू कर दिया। वह उनकी छाया बन गया। एक साल गुजरने पर उस पागल आदमी ने कहा-' ' कितनी दूर, आखिरी कितनी दूर है परमात्मा का मंदिर? मैं किसी जल्दी मैं नहीं हूं लेकिन फिर भी कितने समय की जरूरत होगी?"

अब तक वह गुरुजी बहुत अधिक असुविधा और परेशानी का उसके साथ रहते का अनुभव कर चुके थे। वह पागल आदमी उन्हीं के साथ सोता, उन्हीं के साथ चलता। वह उनकी छाया बन गया था। इस आदमी के कारण उनकी परमात्मा को पाने की सुनिश्चितता की बात मद्धिम होती जा रही थी। वह जिस किसी गांव में घोषणा करते-' मेरा अनुसरण करो तो यह कहते हुए वे डर जाते क्योंकि यह पागल आदमी कभी भी कह सकता था-' ' गुरुजी, मैं आपका इतने दिनों से अनुसरण कर रहा हूं और मैं अभी तक नहीं पहुंचा।''

दूसरा साल भी गुजर गया और फिर तीसरा भी। इसी तरह छ: साल गुजर गए। एक दिन उस पागल आदमी ने कहा-' ' हम लोग तो कहीं भी नहीं पहुंचे। हम लोग सिर्फ गांवों में यात्रा कर रहे हैं और आप लोगों से कहते हैं-मेरा अनुसरण करो, मैं अनुसरण कर भी रहा हूं- आप जो कुछ कहते हैं, मैं वह सब कुछ करता हूं इसलिए आप यह भी नहीं कह सकते कि मैं अनुशासन का पालन नहीं कर रहा हूँ।''

वह पागल आदमी वास्तव में पागल था, इसलिए जो कुछ करने के लिए उससे कहा जाता था, वह उसे करता था। इसलिए गुरुजी यह कहते हुए कि वह आज्ञा का ठीक से पालन नहीं कर रहा है, .उसे न तो धोखा दे सकते थे और न टाल सकते थे। आखिर में एक रात गुरुजी ने उससे कहा-' ' तुम्हारे कारण मैंने अपना मार्ग हो खो दिया। तुमसे मिलने से पहले मुझे निश्चित था कि मैंने उसे पा लिया, लेकिन अब ऐसा नहीं .रहा। अब कृपया आप पीछा छोड़े।''

जहां कहीं कोई कुछ निश्चयात्मकता से कहता है और तुम चूंकि पहले ही से काफी परेशान हो, तुम उसका अनुसरण करना शुरू कर देते हो। क्या तुम ऐसे व्यक्ति का अनुसरण कर सकते हो, जो कहता हो-' ' मैं स्वयं को ही नहीं जानता। मैं स्वयं को ही नहीं समझ सकता।'' यदि तुम ऐसे व्यक्ति का अनुसरण कर सकते हो तो तुम जरूर पहुंचोगे। तुम पहले ही पहुंच चुके हो, यदि तुमने इस आदमी का अनुसरण करना तय कर लिया है और उस मन के लिए जो यकीन मांगता है, उस मन के लिए जो ज्ञान मांगता है और मन के लिए जो अधिकृत दावेदारी मांगता है, उसे गिरा दिया है। इसलिए यदि तुम ऐसे व्यक्ति का अनुसरण करने के लिए तैयार हो सकते हो जो कहता है- 'मैं स्वयं अपने आपको नहीं जानता तो सारी खोज ही समाप्त हो जाती है और अब तुम जानकारी बढ़ाने के लिए नहीं पूछ रहे हो। '

वह व्यक्ति जो जानकारी बढ़ाने के लिए पूछ रहा है, वह अस्तित्व के बारे में पूछ ही नहीं सकता। सारी जानकारियां और ज्ञान कूड़ा करकट है और अस्तित्व ही जीवन है। जब तुमने जानकारी बढ़ाने के लिए पूछना बंद कर दिया, तुमने सत्य के बारे में भी पूछना बंद कर दिया, क्योंकि सत्य पाने के लिए तुम्हारा लक्ष्य ज्ञान ही था। यदि तुम यह नहीं पूछ रहे हो कि ' यह क्या है ' तो वस्तुत: तुम इतने अधिक अमन की स्थिति में होते हुए शांत हो कि ' वह जो है '-वह स्वयं अपने रहस्य खोल देगा।

मैं स्वयं भी यही कहता हूं कि मैं नहीं जानता और तुम मेरे से अधिक अज्ञानी मनुष्य के सम्पर्क में अभी तक आए भी नहीं होगे। वहां न तो कोई सत्य है और न उसे पाने का कोई मार्ग है। मैं अभी तक कहीं नहीं पहुंचा हूं मैं तो बस अभी और यहीं हूं। यदि तुम इस अज्ञानी मनुष्य का अनुसरण कर सकते हो तो तुम्हारा मन गिर जाएगा। मन हमेशा ज्ञान का अनुसरण करता है और जब मन गिर जाता है तो कहीं भी जाने की कोई जरूरत नहीं रह जाती। अब हर चीज उपलब्ध है, वह हमेशा पहले ही से उपलब्ध रही है और तुमने उसे कभी खोया ही नहीं है। बस केवल अपनी खोज के कारण ही तुम उसकी ओर देख ही नहीं सकते थे। तुम्हारा मन भविष्य की ओर, लक्ष्य की ओर केन्द्रित था और तुम उसकी ओर देखते ही नहीं थे। तुम्हें सत्य चारों ओर से घेरे हुए है, तुम उसी में रहते हो। ठीक उस मछली की तरह जो समुद्र ही में रहती है, तुम भी सत्य के मध्य ही रहते हो। परमात्मा कोई लक्ष्य नहीं है। परमात्मा जैसा भी है वह अभी और यहां है। ये वृक्ष, यह डोलती पवन, यह घिरते हुए बादल, यह अनन्त मुक्ताकाश, तुम और मैं-यही है वह, जिसे हम परमात्मा कहते हैं। वह कोई लक्ष्य नहीं है।

मन को गिराओ तो तुम हो गए प्राप्त भगवत्ता को। परमात्मा कोई वस्तु नहीं है, वह तो अस्तित्व के साथ एक हो जाने की लीनता है। मन लीनता के विरुद्ध अवरोध खड़े करता है, वह समर्पण के विरुद्ध है। मन बहुत चालाक और हिसाबी-किताबी है। यह कहानी बहुत सुन्दर है। तुम्हीं खोजी हो। तुम्हीं मेरे पास यह पूछने आए हो कि सत्य को कैसे प्राप्त किया जाए। तुम्हीं मेरे पास यह जानने के लिए आए हो किंचित की उस दशा तक कैसे पहुंचा जाए जो आनन्दपूर्ण है। तुम्हीं मेरे पास आए हो उस रहस्य को हल करने के लिए ज्ञान प्राप्त करने। मैं फिर से दोहरा दूं-वहां मन की कोई दशा होती ही नहीं क्योंकि वहां न कोई मन है और न कोई सत्य, इसलिए खोज करने की इजाजत नहीं है। सभी खोज व्यर्थ है। खोज करना ही एक बेवकूफी है। तुमने खोजा और तुम उसे खो दोगे। उसे खोजो ही मत। वह वहां है ही। तुम दौड़े और तुम उसे खो दोगे। रुक जाओ, वह हमेशा से वहां है ही। उसे जानने या समझने की भी कोशिश मत करो-तुम उसी से घिरे हुए हो। इसके लिए समझ भी थोड़ी है। बोधि वृक्ष के नीचे बुद्ध ने कुछ अधिक नहीं जाना। तुम उससे अधिक जानते हो।

बहुत से ज्ञानी पंडित बुद्ध के पास आए वे बुद्ध से अधिक जानते थे। महाकाश्यप आया। वह एक महान विद्वान था। सारिपुत्र आया। वह भी बहुत बड़ा ज्ञानी था। जब सारिपुत्र आया तो उसके साथ उसके पांच सौ शिष्य भी आए। वह पूरे देश में विख्यात था।

जब सारिपुत्र ने कहा-' ' मैं आपके पास इसलिए आया हूं जिससे आप मुझे वह दें जो ज्ञान से अधिक श्रेष्ठ है, क्योंकि ज्ञान तो मेरे पास काफी है... " और वास्तव में वह बुद्ध से अधिक जानता था। वह महान ब्राह्मण पंडित था और सभी शास्त्रों का ज्ञाता था। वचनों में बहुत गहराई और सूक्ष्मता से अंदर उतरने की उसकी गहरी

पैठ थी। वेद तो उसकी जिह्वा पर थे और वह उनका पाठ कर सकता था, लेकिन उसने बुद्ध से कहा-" मुझे कुछ ऐसा दीजिए जो ज्ञान से बढ़कर हो। ज्ञान तो मेरे पास बहुत अधिक लेकिन मैं उससे ऊब चुका हूं।''

और बुद्ध ने क्या कहा सारिपुत्र से? उन्होंने कहा-' ' सीखे को अनसीखा करो। नान को गिरा दो और जो उससे बढ़कर है वह तुममें स्वयं घटेगा।''

एक सच्चा सद्गुरु तुम्हें सीखे हुए को अनसीखा करना सिखाता है। यह कभी "सीखने जैसा नहीं है। तुम मेरे पास, जो कुछ भी तुम जानते हो उसे अनसीखा बनाने के लिए ही आए हो। कृपया उसे गिरा दो। एक छोटे बच्चे की तरह अज्ञानी बन जाओ। केवल बच्चे जैसा हृदय ही परमात्मा का द्वार खटखटा सकता है और परमात्मा केवल बच्चे के हृदय की धड़कनों की आवाज को ही सुनता है। तुम्हारी प्रार्थनाएं नहीं सुनी जा पकती, वे केवल चालबाजियों से भरी हैं। केवल एक बच्चे का हृदय ही जो कुछ भी नहीं जानता, उस तक पहुंच सकता है।

इस वृत्तान्त का यही अर्थ है और यही तुम्हारे लिए भी उचित है क्योंकि तुम्हारा मामला भी उस पूछने वाले जैसा ही है।

कुछ और...!

प्रश्न: प्यारे ओशो- आपने ठीक अभी हमें बताया कि-आपके पास
हम लोगों को सिखाने जैसा कुछ भी नहीं और पिछली रात हम लोगों
को यह सुनकर गहरा धक्का लगा था जब आपने कहा था कि जहां
तक आपका सम्बन्ध है? आप अपना कार्य पूरा कर चुके है और आय
अपने शरीर में हम लोगों के लिए ही बने हुए हैं युवा जीसस ने कहा
था- मैं पिता द्वारा सौंपे गए गए धंधे के कारण ही यहां हूं
ओशो? आयकर क्या धंधा है अथवा क्या धंधा था?

जब मैं कहता हूं-मेरा कार्य पूरा हो चुका तो इसका अर्थ है कि मेरी कोई भी खोज अब समाप्त हो गई है। मेरा अर्थ है कि यह मैंने अनुभव से जाना है कि कुछ भी प्राप्त करने जैसा है ही नहीं, कुछ भी जानने जैसा है ही नहीं और न कहीं और जाना ही है। यह क्षण ही काफी है और यही क्षण शाश्वत है। जब मैं कहता हूं कि मेरा कार्य पूरा हो चुका तो इसका अर्थ है कि अब मेरी कोई कामना नहीं है।

कामना ही व्यापार का धंधा है। तुम्हें कुछ काम करना है और केवल तुम तभी प्रसन्न होंगे। मैं बस आनन्दित हूं। इसका सम्बन्ध मेरे कुछ करने से नहीं है, अब वह अकारण होता है-तुम्हारा कोई मित्र तुम्हारे पास है, तुम्हारी प्रेमिका तुम्हारे पास लौटकर आई है और तुम प्रसन्न हो, तुमने कोई लॉटरी जीत ली है और तुम प्रसन्न हो। वहां कारण हैं, वे तुम्हारे पार हैं, वे तुमसे बाहर हैं-तुम्हारी प्रसन्नता बाहर से आती है। इनका कोई कारण है और जिनका कोई कारण होता है, वे हमेशा नहीं बनी रह सकतीं। प्रेमिका वापस चली जाएगी, मित्र, शत्रु में परिवर्तित हो सकता है और जो कुछ भी तुमने प्राप्त किया, वह खो भी सकता है। जिसका कारण है वह वहां हमेशा नहीं रह सकता, वह शाश्वत नहीं हो सकता।

जब मैं कहता हूँ कि मेरा कार्य पूरा हो चुका तो इसका अर्थ है कि अब मेरी प्रसन्नता अकारण है। ऐसा कुछ भी नहीं है जो मुझे आनन्दित बनाने में सहायक हो। मैं बस आनन्दित हूं। यह मुझसे छीना नहीं जा सकता। यदि इसका कोई कारण नहीं है तो तुम इसे अनकिया नहीं कर सकते। तुम इसके साथ कुछ भी नहीं कर सकते, यह तुम्हारे बस से बाहर है और इसे नष्ट नहीं किया जा सकता। मेरा कार्य तो समाप्त हो चुका। जब मैं कहता हूं कि मेरा कार्य-व्यापार समाप्त हो चुका तो मैं भी समाप्त हो चुका क्योंकि मैं केवल कार्य-व्यापार के साथ ही जीवित रह सकता हूं। तब मैं क्यों हूं यहां? यह पुराने प्रश्नों में से एक है।

बुद्धत्व प्राप्त होने के बाद बुद्ध चालीस वर्ष जीवित रहे। अपना काम- धंधा समाप्त करने के बाद भी वे चालीस वर्ष और जिए।

कई बार यह पूछा जाता है- ' ' आप क्यों हैं यहां? ' ' जब आपका कार्य-व्यापार समाप्त हो चुका तो आपको तो मिट जाना चाहिए। यह अतर्कपूर्ण लगता है। बुद्ध को एक क्षण भी शरीर में क्यों बने रहना चाहिए? जब कोई कामना ही न रही तो शरीर कैसे जीवित रह सकता है?

कुछ ऐसी चीज है जो बहुत गहराई मैँ समझना आवश्यक है। जब कामना मिट जाती है तो वह ऊर्जा जो कामना के बने रहने में गतिशील थी, वह विसर्जित नहीं हो सकती। कामना भी ठीक एक तरह की ऊर्जा है। यही कारण है तुम एक कामना को दूसरी कामना में बदल सकते हो। क्रोध कामवासना बन सकता है, कामवासना क्रोध बन सकती है। कामवासना लोभ बन सकती है। जब कभी तुम लोभी व्यक्ति पाओगे, वह कम कामुक होगा। यदि वह वास्तव में पूरी तरह लोभी होगा तो उसमें कामवासना होगी ही नहीं। वह ब्रह्मचारी होगा क्योंकि उसकी पूरी ऊर्जा लोभ की ओर गतिशील है। और यदि तुम बहुत अधिक कामुक व्यक्ति पाओगे तो उसमें लोभ नाम मात्र को न होगा। क्योंकि कुछ भी नया ही नहीं उसके पास। यदि तुम एक ऐसे व्यक्ति को देखो जिसने कामवासना का दमन किया हो तो वह क्रोधी होगा। वह क्रोध करने को हमेशा तैयार रहेगा। तुम उसकी आंखों में उसके चेहरे में देख सकते हो कि वह बस क्रोध में ही है, उसकी पूरी काम ऊर्जा क्रोध बन गई है।

यही कारण है कि तुम्हारे तथाकथित साधु-संन्यासी हमेशा क्रोधी होते हैं। जिस तरह से वे चलते हैं, वे अपने क्रोध को प्रकट करते हैं, जिस तरह से वे तुम्हें देखते हैं, उससे उनका क्रोध प्रकट होता है। उनका मौन भी ठीक सतही होता है-उन्हें जरा–सा छू दो तो उनका क्रोध भभक उठेगा। कामवासना क्रोध बन जाती है। जीवन ही एक ऊर्जा है और यह सभी उसके रूप हैं। जब सभी इच्छाएं मिट जाती हैं तो क्या होता है ?' ऊर्जा नहीं मिटती, ऊर्जा नष्ट नहीं होती। मनोविश्लेषक से पूछो, वह भी यही कहते हैं। ऊर्जा मिट नहीं सकती।

गौतम बुद्ध जब बुद्धत्व को प्राप्त हुए तो उनमें एक ऊर्जा कार्यरत थी। वही ऊर्जा, काम, क्रोध, लोभ और लाखों तरीकों से गतिशील थी। वे सभी रूप मिट गए। आखिर राम -ऊर्जा का हुआ क्या? ऊर्जा अस्तित्व के बाहर नहीं जा सकती। और जब कामनाएं रही ही नहीं तो वह अरूप हो गई, लेकिन वह अस्तित्व में रही। अब उसका काम रहा क्या? वह करुणा बन गई।

तुम करुणावान हो ही नहीं सकते क्योंकि तुम्हारे पास वह ऊर्जा ही नही। तुम्हारी पूरी ऊर्जा बंटी हुई है, कभी कामवासना में, कभी क्रोध में और कभी लोभ में। करुणा की ऊर्जा का कोई रूप नहीं होता। जब तुम्हारी सभी कामनाएं विसर्जित हो जाती हैं, केवल तभी वह अरूप ऊर्जा करुणा बनती है। तुम करुणा को विकसित नहीं कर सकते। जब तुम कामनामुक्त होते हो, करुणा घटती है, तुम्हारी पूरी ऊर्जा करुणा की ओर गतिशील हो जाती है, लेकिन यह गति पूरी तरह भिन्न होती है। कामना का एक लक्ष्य होता है जो व्यक्ति को प्रोत्साहित करती है, जब कि करुणा प्रोत्साहित नहीं करती, वह अलक्ष्य, बस अतिरेक से बहने वाली अविरल ऊर्जा होती है।

इसलिए जब मैं कहता हूं कि मैं जीवित तुम्हारे लिए ही हूं तो मेरे कहने का यह अर्थ नहीं है मैं तुम्हारे जीवित रहने के लिए कुछ कर रहा हूं। अब मैं कुछ कर ही नहीं रहा हूं। कामनाओं के सभी रूप विसर्जित हो गए हैं। अब बिना मेरे भी वह ऊर्जा बह रही है। वह ऊर्जा अतिरेक से अधिक छलक रही है। तुम उसमें सहभागी बन सकते हो। तुम उसे भोजन बना सकते हो। जीसस के कहने का यही अर्थ है, जब वे कहते हैं-" मुझे अपना भोजन बना लो। मुझे पचा लो, जिससे मैं तुम्हारा रक्त बन सकूं। यह अतिरेक से बहती हुई ऊर्जा तुम्हारा भोजन बन सकती है, तुम्हारे शाश्वत होने के लिए भोजन।''

मैं कुछ भी काम नहीं कर रहा हूं। जब मैं कहता हूँ कि मैं तुम्हारे लिए ही जीवित हूं तो केवल यह भाषा है, अन्यथा इस स्थिति की अभिव्यक्ति के लिए कोई दूसरी भाषा है ही नहीं।

मैं कुछ भी नहीं कर रहा हूं और यह फिर भी किसी तरह घट रहा है। मेरी सभी आकृतियां विलुप्त हो चुकी है। अब एक अरूप ऊर्जा ही रह गई है और वह अतिरेक से बहे जा रही है। जो लोग बुद्धिमान हैं, वे इसमें सहभागी हो सकते हैं, शीघ्र ही यह भी अशरीरी हो जाएगा। पहले ऊर्जा आकृतिहीन बनती है, कामनामुक्त और तब वह अशरीरी हो जाती है।

शरीर का एक अपना संवेग होता है। जब किसी का जन्म होता है, जब एक बुद्ध का जन्म होता है तो वह दो शरीरों के मिलन से उत्पन्न होता है, माता के और पिता के विशिष्ट क्रोमोसोम और कोष ही उसके शरीर का निर्माण करते हैं। उन कोषों में एक निश्चित अवधि तक जीने का संवेग होता है। -इस बनने वाले संवेग का अर्थ है कि यह शरीर सत्तर या अस्सी वर्ष तक जीवित रहेगा, यह शरीर का क्यू प्रिंट होता है कि वह अस्सी वर्ष तक अस्तित्व में रहेगा। शरीर को यह ज्ञात नहीं होता, वह इसे जान भी नहीं सकता कि जो आत्मा उसमें प्रविष्ट हुई है, वह बुद्धत्व को प्राप्त होने जा रही है। यह मकान जान भी नहीं सकता कि जो व्यक्ति उसके घर में रहने के लिए प्रविष्ट हुआ है, वह बुद्धत्व को प्राप्त हो जाएगा। जब वह व्यक्ति बोध को प्राप्त होता है, तब भी यह मकान उसे जानेगा नहीं। घर वैसा ही चलता रहेगा, उसका अपना जीवन है। शरीर का अपना अलग जीवन है और शरीर को इसका कोई भी बोध नहीं होता कि व्यक्ति बुद्ध हो गया। वह अपने संवेग से, और अपने ईंधन से चले जाता है।

बुद्ध चालीस वर्ष की आयु में बुद्धत्व को प्राप्त हुए। शरीर अप्रासांगिक हो गया, लेकिन वह चलता रहा,। उसने अपने अस्सी वर्ष का चक्र पूरा किया। यह अच्छा हुआ। ये चालीस वर्ष अतिरेक से ऊर्जा के छलकने और बहने की अवधि थी और हम लोग जान सके कि बुद्ध क्या होता है? यदि बुद्ध भी उसी क्षण विलुप्त हो गए होते तो कोई धर्म ही नहीं होता। यदि वे शरीर छोड़ देते और यदि बोध को प्राप्त भी हो जाते तो शरीर को गिरा देने से वह जैसे हुए ही न होते और फिर यह कैसे कहा जा सकता था कि क्या कुछ घटा। यह अच्छा ही हुआ, अस्तित्व बहुत-बहुत करुणावान था। बुद्ध चालीस वर्ष तक और जीवित रहे, किसी उद्देश्य से नहीं, लेकिन शरीर के संवेग या गति के कारण। वे बस अतिरेक से छलकते रहे। संवेग या गति समाप्त हो जाने पर यह शरीर भी गिर जाएगा।

मैं तुम्हारे लिए कुछ भी नहीं कर रहा हूं। यदि कोई यह सोचे कि वह तुम्हारे लिए कुछ कर रहा है तो वह भी उसका अहंकार होगा। कोई भी कुछ नहीं कर रहा है, सब कुछ अपने आप घट रहा है। कामनाएं मिटने पर उनकी आकृतियां विलुप्त हो जाती हैं और वही ऊर्जा करुणा बन जाती है। शरीर को अपनी गति पूरी करनी होती है, उसे अपने क्यू प्रिंट के अनुसार अपने को पूरा करना होता है। यह अंतराल, अतिरेक से ऊर्जा के छलकने और बहने का होगा। यह एक भव्य दावत होती है, जो मेरी ओर से नहीं, तुम्हें अखण्ड अस्तित्व के द्वारा दी जाती है।

भाषा समस्याएं उत्पन्न करती है। भाषा हमेशा द्वंद्वात्मक होती है। भाषा सदा इसी संसार की है। भाषा होती है अज्ञान के लिए वह होती है कामनाओं की अभिव्यक्ति के लिए अपने अर्थ के साथ-साथ वह कुछ और भी अभिव्यक्त करती है, इसलिए उसके बारे में कोई भी बात कहना बहुत कठिन है, जो इस संसार की नहीं है। या तो पूरी तरह मौन ही हो जाओ.. .लेकिन तब मौन को भी गलत समझा जा सकता है अथवा तुम्हें भाषा का प्रयोग करना ही होगा और हर शब्द का अपना वजन होता है।

यदि मैं कहता हूं कि मैं यहां तुम्हारे ही लिए हूं तो तुम इसका इस तरह से भी अर्थ लगा सकते हो कि यह तो इनका व्यापार या धंधे जैसा है, यह तो किसी कार्य- व्यापार जैसा है, जबकि यह ऐसा है नहीं। यह तो मात्र अतिरेक से बहता हुआ प्रेम है और मैं कर्ता हूं ही नहीं। यदि इसके लिए मैं कर्त्ता हूं तो वहां प्रेम हो ही नहीं सकता। बस एक दीपशिखा जल रही है। वहां प्रकाश है, तुम उसमें पथ खोज सकते हो। तुम उसका प्रयोग कर सकते हो, वह तुम्हारे लिए एक ज्योति बन सकती है, तुम्हारे अंदर अग्नि प्रज्वलित कर सकती है, लेकिन सब कुछ तुम्हारे ऊपर निर्भर है। मैं तो बस यहां हूं।

तुम आमंत्रित किए गए हो, पर मेरे द्वारा नहीं बल्कि स्वयं उस ऊर्जा द्वारा ही। जितना खा सको., मुझे खा लो और मुझे अपना भाग बना लो। इस शुभावसर पर उत्सव मनाओ।

जीसस के शब्द पुन : समस्याएं खड़ी करते हैं-शब्द हमेशा समस्याएं ही उत्पन्न करते हैं। यदि जीसस यहां उपनिषदों, बुद्ध और महावीर के देश में जन्मे होते तो उनकी भाषा बिलकुल भिन्न होती। जीसस एक यहूदी के घर जन्मे, अत: उन्हें यहूदियों की भाषा, उनकी लोककथाओं और वाक्यों का प्रयोग करना पड़ा। इसीलिए उन्होंने कहा- " जो कार्य, व्यापार या धंधा, मुझे परमपिता से प्राप्त हुआ, मैं वही कर रहा हूं।"

यदि जीसस यहां जन्मे होते तो उन्होंने कभी पिता की बात ही न की होती। पिता की धारणा यहूदी धारणा है। यह अच्छी और सुंदर है, लेकिन मनुष्य के व्यक्तित्व में परमात्मा का आरोपण करती है। परमात्मा पिता नहीं है। परमात्मा कोई व्यक्ति नहीं है और न परमात्मा किसी तरह का कोई व्यापार या धंधा कर रहा है, लेकिन यहूदी व्यापारी हैं और उनका परमात्मा भी एक व्यापारी है-एक सर्व श्रेष्ठ व्यापारी-जो प्रबन्ध कर रहा है, बहुत चतुराई से सभी कुछ नियंत्रित कर रहा है। ठीक एक व्यापारी की भांति ही तुम उसे रिश्वत देकर फुसला सकते हो। वह बहुत वास्तविक व्यक्ति है, यदि तुम उसे समर्पण नहीं करोगे तो वह क्रोधित होकर तुम्हें नर्क में फेंक देगा और यदि तुम उसका अनुसरण करते हो तो तुम स्वर्ग और उसका आनन्द भोगेगे।

यह पूरी भाषा ही लाभ और व्यापार के संसार की है, लेकिन प्रत्येक भाषा की अपनी समस्याएं होती हैं। यह भाषा साकार है, यह हृदय को स्पर्श करते हुए एक पारिवारिक माहौल निर्मित करती है, जिसमें पिता है, पुत्र है और उनका कार्य-व्यापार है। तुम पुत्र के द्वारा पिता तक पहुंच सकते हो.. .जीसस केवल उस समय की प्रचलित भाषा का उपयोग कर रहे हैं।

इस देश में हम लोगों ने भाषा के कई ढांचों को अपनाने का प्रयास किया। हिन्दुओं ने हजारों-लाखों तरीकों का प्रयोग किया क्योंकि हिन्दुत्व एक धर्म न होकर कई धर्मों का जोड़ है। हिन्दुत्व में सभी तरह के धर्मों का समावेश है, यह एक भीड़ है धर्मों की, यह अपने आप में एक महत्वपूर्ण घटना है। धर्म का हर वह नमूना जो विश्व में कभी भी हो रहा है, हिन्दुत्व में विद्यमान है। यह एक चमत्कार है। एक नास्तिक भी हिन्दू हो सकता है-पर एक नास्तिक ईसाई नहीं हो सकता- और यहां तक कि एक नास्तिक भी बुद्धत्व को प्राप्त .हो सकता है। बुद्ध एक नास्तिक हैं, वे परमात्मा पर विश्वास नहीं करते। वे कहते हैं-कोई आत्मा भी नहीं। वे कहते हैं यहां किसी का अस्तित्व है ही नहीं और वे हिन्दुओं में परमात्मा का अवतार बन गए। यह वास्तव में रहस्यमय है, नास्तिक गौतम बुद्ध हिन्दुओं के दसवें अवतार बन गए। वे कहते हैं वहां कोई परमात्मा है ही नहीं और हिन्दू कहते हैं-यह व्यक्ति परमात्मा का अवतार है, भगवान है।

हिन्दू कहते हैं कि नकार भी एक विधायक वक्तव्य है। हिन्दू कहते हैं कि ' न ' कहना भी ' हां ' के बराबर है। यह बहुत रहस्यमय है। वे कहते हैं कि यह कहना भी कि कहीं कोई परमात्मा नहीं है, परमात्मा के होने का एक नकारात्मक तरीका है। यदि परमात्मा के बारे में विधायक भाषा में वक्तव्य दिया जा सकता है तो नकारात्मक भाषा में क्यों नहीं? ' कुछ नहीं ' भी एक शब्द है और पहला भी ठीक दूसरे की ही तरह संगत है। बुद्ध ने कहा-' नहीं ' तब ' नहीं ' भी परिपूर्ण है, शून्यता, उसका स्वभाव बन जाता है। शंकराचार्य ने कहा-' हां ' तब ' हां ' भी पूर्ण बन जाता है और ' हां ' का होने का स्वभाव, सभी का स्रोत ब्रह्म बन जाता है, लेकिन हिन्दू कहते हैं-दोनों का अर्थ एक ही है। प्रत्येक भाषा के हर ढांचे की अपनी अभिव्यक्ति है, अपने लाभ हैं और गड्ढे में गिरने के अपने खतरे भी हैं।

मेरा स्वयं का झुकाव भी नकार की ओर है, इसीलिए मैं झेन सद्गुरुओं को इतना अधिक महत्व देता। मैं वास्तव में उनके वृत्तान्तों से बहुत प्रेम करता हूं-न मन, न सत्य और न समझ।

तुम्हारी कामना विधायक है। यदि विधायक ढंग से परमात्मा पर जोर दिया जाए तो तुम्हारी कामना कभी मरेगी नहीं, वह परमात्मा की ओर उत्सुख हो जाएगी और तुम परमात्मा को पाने की चाह करने लगोगे।

नकारात्मकता तुम्हारी सभी कामनाओं को और कामना की सभी वस्तुओं को नकारती है। तब सभी कामनाएं और वस्तुएं विलुप्त हो जाती हैं और अपने शुद्धतम रूप में केवल तुम्हीं बचे रह जाते हो।

इसी परिपूर्ण शुद्धता, निर्दोषता और उसके आशीर्वाद को मैं चाहता हूं कि तुम मेरे साथ आनन्द लो। यह कोई सिखावन नहीं है और न मैं कोई शिक्षक हूं। यह कोई सिद्धांत भी नहीं है, यह तो बस वह आनन्द है जिसका तुम मेरे साथ मजा ले रहे हो। मैं यहां उपलब्ध हूं और यदि तुम अपने मन को उठाकर एक ओर अलग रख दो तो हम लोग उत्सव मना सकते हैं। मैं तो एक अंर्तनृत्य हूं जिसमें तुम भी सहभागी हो सकते हो। तुम इसी को मेरा व्यापार या धंधा कह सकते हो।

जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मेरा काम पूरा हो चुका है और मैं थक चुका हूं। अब वही ऊर्जा करुणा बन गई है, जो अतिरेक से बह रही है और वे सभी जो वास्तव में इसका स्वाद लेना चाहते हैं, बेशर्त आमंत्रित हैं। तुम्हें कुछ भी देना नहीं है, तुम्हें तो बस लेना-ही-लेना है। न कोई अनुशासन, न कोई मोल- भाव, तुमसे किसी तरह की कोई अपेक्षा ही नहीं। यह तो एक उपहार है। यह हमेशा से ऐसा ही रहा है और हमेशा रहेगा भी। सर्वोच्च परमानन्द एक उपहार ही होता है। इसी कारण हम इसे अहोभाव प्रसाद कहते हैं जैसे कि परमात्मा ही अपने अतिरेक से बरसाती ऊर्जा को तुम्हें देता है।

मैं तुम्हें एक कहानी सुनाना चाहूंगा जिसे जीसस प्राय: कहा करते थे। उन्होंने इसे कई बार दोहराया है-वे इसे अवश्य ही बहुत प्रेम करते होंगे। वे कहा करते थे- एक बार ऐसा हुआ कि एक धनी व्यक्ति को अपनै बगीचे में कार्य करने के लिए कुछ मजदूरों की जरूरत हुई, इसलिए उन्हें लाने उसने अपने आदमी को बाजार भेजा। वहां जितने भी मजदूर मौजूद थे, उन सभी को बुलाकर उनसे बगीचे में काम शुरू कराया गया। तब कुछ और मजदूरों ने भी यह बात सुनी तो वे दोपहर में आए। तब कुछ और दूसरे मजदूरों ने भी यह बात सुनी तो वे सूरज डूबने से कुछ पहले आए लेकिन सभी को काम पर लगा दिया गया।

और जब सूरज डूब गया तो उस धनी व्यक्ति ने सभी को इकट्ठा कर प्रत्येक को समान धन की मजदूरी चुका दी। स्पष्ट रूप से जो लोग सुबह काम करने आए थे, उन्होंने निराश होकर कहा-‘ ‘ यह कैसा अन्याय है? आपने यह कैसा न्याय किया? हम लोग तो सुबह आए थे और हम लोगों ने दिन- भर काम किया। ये दूसरे लोग जो दोपहर या ठीक दो घंटे पहले ही आए हैं और कुछ लोग तो ठीक अभी- अभी ही आए है उन्होंने काम भी नहीं किया है, फिर भी आपने उन्हें हमारे ही बराबर मजदूरी दे दी। यह तो सरासर अन्याय है।‘‘

उस धनी व्यक्ति ने हंसकर कहा-‘ ‘ तुम दूसरों के बोरे में मत सोचो। जो कुछ मैंने तुम्हें दिया है, क्या वह काफी नहीं है? ‘ ‘

उन लोगों ने कहा-‘ ‘ वह है तो जरूरत से ज्यादा ही, पर फिर भी यह अन्याय है। उन लोगों को मजदूरी क्यों मिल रही हैं जो अभी- अभी आए हैं? ‘ ‘

धनी व्यक्ति ने कहा-‘ ‘ मैं उन्हें इसलिए देता हूं क्योंकि मेरे पास -बहुत अधिक है, मेरी आवश्यकता से भी अधिक है। तुम लोगों को इस बारे में चिंता करने की कोई जरूरत नहीं। तुम लोगों ने अपेक्षा से अधिक पा लिया इसलिए तुलना मत करो। मैं उन्हें उनके कार्य के लिए नहीं दे रहा हूं मैं तुम्हें इसलिए दे रहा हूं क्योंकि मेरे पास आवश्यकता से अधिक है।‘‘

जीसस ने कहा-‘ ‘ कुछ लोगों ने परमात्मा को फैं?ँ??ब्रे के लिए बहुत कठिन श्रम किया, कुछ लोग दोपहर बाद आए जबकि कुछ तो सूरज डूबने के निकट आए और उन सभी ने उसी परमात्मा को पाया। जो लोग सुबह आए थे, उन्हें यह आपत्ति होनी ही चाहिए-यह तो बहुत ज्यादा है।‘‘

तुम जरा देखो-तुम लोग इतना अधिक ध्यान जाने कब से कर रहे हो और अचानक कोई बस शाम को आता है और बुद्धत्व को उपलब्ध हो जाता है। तुम इतने अधिक पुराने संन्यासी हो, जरा देखें, यदि सभी साधु-संन्यासी स्वर्ग यह देखें कि पापी लोग भी परमात्मा के सिंहासन के निकट बैठे हुए हैं तो क्या होगा? वे लोग उदास हो जाएंगे, यह हो क्या रहा है?-इन पापियों ने कभी अपने जीवन को अनुशासित नहीं किया, इन लोगों

ने कभी कुछ साधना वगैरह को ही नहीं और ये फिर भी यहां बैठे हैं जबकि हमारा ख्याल था कि ये लोग नर्क में होंगे।

वहां कोई नर्क है ही नहीं, हो भी नहीं सकता। नर्क हो भी कैसे सकता है। परमात्मा इतना अधिक समृद्ध है कि उसकी करुणा से हर जगह स्वर्ग ही है। ऐसा होना भी चाहिए ऐसा होना जरूरी भी है और ऐसा है भी। उसके ही अतिरेक से बहती करुणा का प्रसाद है-स्वर्ग, वहाँ नर्क हो ही नहीं सकता। नर्क तो इन्हीं साधु-संन्यासियों ने निर्मित किया है जो पापियों की स्वर्ग में होने की कल्पना भी नहीं कर सकते। उन लोगों को सख्ती से विभाजित किया अपना विशिष्ट स्थान चाहिए और वे कल्पना भी नहीं कर सकते कि तुम भी वहां होगे।

ऐसा कहा जाता है कि एक हसीदी फकीर बालशेम के दर्शन करने एक महिला आई। वह लगभग सत्तर वर्ष की थी और उसका पति अस्सी वर्ष का था। अब धीरे- धीरे वह सदाचारी बनता जा रहा था। उसने पूरा जीवन पाप करते हुए ही बिताया था, इसलिए वह धन्यवाद अदा करने आई थी कि आखिर उन्होंने उसके पति को बदल ही दिया, जो लगभग असम्भव था। क्योंकि वह जीवन- भर पाप ही करता रहा था, लेकिन अब चूंकि वह बदल रहा था इसलिए वह बालशेम का शुक्रिया अदा करने आई थी। वह हमेशा एक धार्मिक महिला की तरह रही थी। कभी भी इधर-उधर डिगी नहीं थी, न कभी गलत मार्ग पर चली थी और हमेशा सही रास्ते पर चलते हुए वह हमेशा यही सोचती थी कि स्वर्ग में उसी का स्वागत करने की जैसे प्रतीक्षा की जा रही है। वह यह भली- भांति जानती थी कि उसका पति तो नर्क जाएगा ही।

बालशेम हंसा और उसने कहा-‘ ‘ जितना बड़ा पापी उतना ही बड़ा संत! ” ” वह औरत उदास हो गई और उसने कहा, ‘ ‘ तब आपने मुझे यह पहले क्यों नहीं बताया था? आपको तो चालीस वर्ष पूर्व ही मुझे यह बताना चाहिए था।‘‘

जितना बड़ा पापी, उतना ही बड़ा संत। इस औरत ने यदि अपने पति को स्वर्ग में देख लिया तो उसे नर्क जैसी यंत्रणा ही होगी।

इन तथाकथित सदाचारी लोगों ने ही नर्क निर्मित किए हैं, अन्यथा परमात्मा के अतिरेक से बहती करुणा से नर्क निर्मित हो ही नहीं सकता। जो संत सुबह आएंगे, वे भी वही पाएंगे, जो पापियों को शाम आने पर मिलेगा। प्रत्येक प्राप्त करने ही जा रहा है, वह भेंट, वह प्रसाद, जो निरन्तर बरस रहा है।

मैं यहां हूं किसी व्यापार- धंधे के लिए नहीं, बल्कि उपहारस्वरूप, लेकिन तुम बहुत डरे हुए और भयभीत हो। तुम व्यापार की ही बात समझ सकते हो। तुम बराबर के सब जानते ही नहीं। तुम तभी समझ सकते हो, यदि तुम्हें कुछ शर्तें पूरी करने को कहा जाए। यदि तुमसे कुछ भी नहीं मांगा जाता तो तुम समझते हो कि तुम घाटे में हो। सभी अपेक्षाएं मन की ही हैं, सभी अनुशासन मन के लिए हैं और तथाकथित सभी संत और तथाकथित पापी भी मन से ही संबंध रखते हैं। जब वहां कोई मन है ही नहीं, तब वहां न कोई पापी है और न कोई संत और परमात्मा की करुणा का उपहार सभी पर समान रूप से बरस रहा है।

आज बस इतना ही...!

तीसरा प्रवचन

स्वर्ग और नर्क के द्वार

कथा:

झेन सद्गुरू हाकुई के निकट आकार समुराई योद्धा रे पूछा-

"क्या वहां स्वर्ग और नर्क जैसी कुछ चीज है? "

हाकुई ने पूछा- " तुम कौन हो? "

उस योद्धा ने उत्तर दिया- " मैं सम्राट की सुरक्षा में लगा समुराई

योद्धाओं का प्रधान हूं। "

हाकुई ने कहा- " तुम और समुराई? अपने चेहरे से तो तुम एक

भिखारी अधिक लगते हो? "

यह सुनकर वह योद्धा इतना अधिक क्रोधित हो उठा कि उसने

अपनी तलवार म्यान से बाहर निकाल ली।

उसके सामने शांत खड़े हुए हकुई ने कह?- " यही खुलता है नर्क

का द्वार।"

सदगुरु को शांत मानसिक स्थिरता देखकर और अनुभव कर वह

योद्धा थोड़ा नीचे झूका और उसने अपनी तलवार म्यान में रख ली

तब हाकुई ने कहा-'और यहां खुलता है स्वर्ग का द्वार। "

स्वर्ग और नर्क भौगोलिक स्थान नहीं है। यदि तुम उन्हें खोजने जाओगे तो किसी को भी कहीं पाओगे नहीं, क्योंकि वे तुम्हारे ही अन्दर हैं, वे मनोवैज्ञानिक हैं। मन ही स्वर्ग है और मन ही नर्क। मन में ही इनमें से कोई भी बनने की क्षमता है। लेकिन लोग सोचे चले जाते हैं कि हर चीज कहीं बाहर है। हम हमेशा हर चीज के लिए बाहर की ओर देखते हैं क्योंकि अपने ही अंदर जाना बहुत कठिन है। हम बाहर जाने वाले लोग हैं। यदि कोई कहता है-वहां है परमात्मा, तो हम लोग आकाश की और देखते हैं कि वह वहीं कहीं बैठा होगा।

एक मनोवैज्ञानिक ने जो अमेरिका के एक स्कूल में काम कर रहा था, परमात्मा के बारे में छोटे-छोटे बच्चों से पूछा कि वे परमात्मा के बारे में क्या सोचते हैं? बच्चों की पहचान अधिक स्पष्ट होती है, वे कम चालबाज और अधिक सच्चे होते हैं। वै मनुष्य मन के अधिक अच्छे प्रतिनिधि हैं क्योंकि उनमें कुछ भी विकृत और प्रदूषित नहीं है इसीलिए उसने बच्चों से पूछा और सभी के उत्तर इकट्ठे किए।

परिणाम बहुत हास्यास्पद था। निष्कर्ष के रूप में लगभग सभी बच्चों ने परमात्मा का कुछ इस तरह वर्णन किया-" परमात्मा एक कहा व्यक्ति है, बहुत लम्बी दाढ़ी है उसकी और वह बहुत खतरनाक है। वह भय उत्पन्न करता है। यदि तुम उसका अनुसरण न करो तो वह तुम्हें नर्क में फेंक देगा और यदि तुम उसकी प्रार्थना करते हुए उसका अनुसरण करो तो वह तुम्हें स्वर्ग और उसके सभी आनन्द देगा। वह आसमान में एक सिंहासन पर बैठा हुआ सभी को देखता रहता है। तुम उससे बचकर कहीं भाग नहीं सकते, यहां तक कि वह तुम्हें बाथरूम में भी देख रहा है। "

बाहर जाने वाला मन प्रत्येक चीज का प्रक्षेपण बाहर ही करता है। यही है तुम्हारा परमात्मा। हंसो मत, यह मत सोचो कि यह एक बच्चे की धारणा है-नहीं, यह तुम्हीं हो। तुम भी परमात्मा के बारे में ऐसा ही सोचते हो-जैसे वह ब्रह्माण्ड में घूमने वाला एक जासूस हो, जो हमेशा तुम्हें अपराधी समझकर तुम्हारी खोज कर रहा हो, जिससे तुम्हें नर्क में फेंका जा सके, तुम्हें सजा दी जा सके और वह बहुत भयानक और बदला लेने वाला है।

यही कारण है कि सभी धर्म भय पर आधारित हैं यदि तुम ऐसा करोगे तो तुम्हारी प्रशंसा की जाएगी, तुम्हें पुरस्कार दिया जाएगा और यदि तुम ऐसा नहीं करोगे तो तुम्हें सजा दी जाएगी, लेकिन आधार भय का ही है। परमात्मा जैसे ठीक एक शक्तिशाली सम्राट की भांति है जो स्वर्ग में सिंहासन पर बैठा है। यह पूरी धारणा ही बेवकूफी भरी है पर मनुष्योचित है। मनुष्य का मन ही बेवकूफियों से भरा है। यह पूरा ख्याल ही मनुष्य का स्रोत ढूढना है कि वह कैसे विकसित हुआ?

बाइबिल में इस बात का उल्लेख है कि परमात्मा ने अपनी ही छवि में मनुष्य का निर्माण किया। जबकि वास्तविकता पूरी तरह दूसरी ही दिखाई देती है, मनुष्य ने ही अपनी प्रतिभा के अनुसार परमात्मा का सृजन किया है। हमने ही अपनी कल्पना के अनुसार परमात्मा का प्रक्षेपण किया है, यह मनुष्य के मन का ही विस्फोट है-एक विराट मनुष्य मन और बस और कुछ नहीं। स्मरण रहे, यदि तुम सोचते हो कि परमात्मा तुम्हारे बाहर कहीं बैठा है तो तुमने धार्मिक होने की दिशा में अभी पहला कदम भी नहीं उठाया।

ऐसा ही सभी अन्य धारणाओं के भी साथ होता है। स्वर्ग भी बाहर है, नर्क भी बाहर है। जैसे अंदर सिर्फ कुछ नहीं जैसा ही विद्यमान है। क्या है तुम्हारे अन्दर? जिस क्षण तुम अन्दर के बारे में सोचते हो, ऐसा लगता है वहां सब कुछ खाली ही खाली है। आखिर है क्या अंदर? पूरा संसार बाहर है, सेक्स और कामवासना बाहर है, पाप बाहर है, सदाचार भी बाहर है। परमात्मा, स्वर्ग, नर्क और हर चीज बाहर ही है। फिर भीतर है क्या? तुम आखिर हो कौन? जिस क्षण तुम यह सोचते हो, मन बिलकुल कोरा हो जाता है और उसमें कुछ भी नहीं होता।

वास्तव में प्रत्येक चीज अन्दर ही है, बाहर तो मात्र उसका प्रक्षेपण है। तुम्हारे अन्दर भय है तब वह भय ही नर्क का प्रक्षेपण करता है। नर्क केवल तुम्हारे ही अन्दर भय के पर्दे पर प्रक्षेपित की गई एक छवि है-क्रोध और ईर्ष्या आदि का जो भी विष तुम्हारे अंदर है और सभी कुत्सित और दुष्ट भावनाएं जो भी अंदर हैं-नर्क उसी का प्रक्षेपण है। फिर स्वर्ग भी, तुम्हारे अंदर जो भी सुंदर और शुभ है और जो कुछ भी महत्वपूर्ण है, उसकी ही प्रक्षेपित छवि है।

शैतान है मनुष्यता का पतन और परमात्मा है मनुष्य का उदास स्वरूप। परमात्मा है तुम्हारी सुप्त शक्तियों की सर्वोच्च संभावना और शैतान है तुम्हारा सबसे अधिक पतन। शैतान जैसे किसी व्यक्ति का, कहीं भी कोई अस्तित्व नहीं है। तुम्हारी उससे कभी मुलाकात होगी नहीं, बशर्ते कि तुम स्वयं ही शैतान न बन जाओ। तुम्हारी परमात्मा से भी कभी भेंट होगी नहीं, यदि तुम स्वयं परमात्मा ही न हो जाओ।

पूरब में धर्म, मनुष्य-शरीर तक केन्द्रित रहने वाली धारणा से अतीत में काफी समय पहले ही उसका अतिक्रमण कर गया। इसीलिए पूरब के सभी धर्म शरीर- केन्द्रित नहीं हैं। वे कहते हैं तुम परमात्मा का साक्षात्कार नहीं कर सकते, लेकिन तुम स्वयं परमात्मा हो सकते हो। वे कहते हैं जब तुम अस्तित्व के सर्वोच्च शिखर पर पहुंचते हो तो वहां तुम्हारा स्वागत करने तुम्हें परमात्मा नहीं मिलेगा। केवल अपनी भगवत्ता के साथ तुम ही वहां होगे। इसलिए यह कहा जा सकता है, वहां परमात्मा का अस्तित्व है ही नहीं केवल अस्तित्व ही परमात्मा है और मैं निरन्तर इसी बात पर जोर दिए जाता हूं। वहां व्यक्ति जैसा कोई सर्वश्रेष्ठ व्यक्ति अस्तित्व में है ही नहीं।

परमात्मा अनस्तित्वगत है और भगवत्ता अस्तित्वगत है। जिस क्षण मैं भगवत्ता की बात कहता हूं वह कोई अन्दर की चीज बन जाती है और जिस क्षण तुम भगवान या परमात्मा की बात कहते हो, तुम उसे प्रक्षेपित करते हो।

यह कहानी बहुत सुंदर है। झेन सद्गुरु हाकुई जैसी खिलावट बहुत कम हुई है। एक योद्धा उसके पास आया, एक महान सिपाही समुराई और उसने पूछा-‘ ‘ क्या कोई नर्क है और क्या स्वर्ग भी है? यदि स्वर्ग और नर्क हैं तो उनके द्वार कहां हैं? मैं उसमें कहां से प्रवेश कर सकता हूं? मैं कैसे नर्क की उपेक्षा कर स्वर्ग का चुनाव कर सकता हूं? वे दोनों द्वार हैं कहां? ‘ ‘

वह मात्र एक योद्धा था। योद्धा हमेशा सहज-सरल होते हैं। ऐसा व्यापारी खोजना बहुत कठिन है जो सहज-सरल हो। वह हमेशा चालाक और बेईमान होता है, अन्यथा वह व्यापारी हो ही नहीं सकता। एक योद्धा हमेशा बहुत सरल और साधारण होता है अन्यथा वह योद्धा हो ही नहीं सकता। वह दो ही चीजें जानता है- जीवन और मृत्यु- इससे अधिक वह और कुछ भी नहीं जानता। उसका जीवन हमेशा दांव पर लगा होता है और उसे हमेशा जुआ खेलना होता है। वह एक साधारण व्यक्ति होता है। यही वजह है कि व्यापारी एक भी बुद्ध या महावीर नहीं जन्मा सके। यहां तक कि ब्राह्मण भी राम, कृष्ण, बुद्ध और महावीर को उत्पन्न न कर सके, क्योंकि ब्राह्मण भी एक दूसरी तरह से बहुत चालाक और बेईमान हैं। वे भी व्यापारी हैं-पर दूसरे संसार के। वे इस संसार का नहीं दूसरे संसार का व्यापार करते हैं। उनका पुरोहितवाद ही व्यापार है। उनका धर्म पूरा गणित है। वे व्यापारियों से भी कहीं अधिक चालाक और चालाक ही नहीं बहुत-बहुत चालाक हैं। व्यापारी की चालाकी तो इस संसार तक सीमित है, लेकिन उनकी चालाकी तो इसके भी पार जाती है। वे हमेशा दूसरे संसार के बारे में सोचते हैं, जहां जाकर ग-हें पुरस्कार स्वरूप बहुत कुछ मिलने वाला है, और उनके सारे संस्कार कर्मकाण्ड और पूरा मन इसी में लगा रहता है कि उस दूसरे संसार में कैसे अधिक-से- अधिक सुख प्राप्त किए जाएं। उनका संबंध दूसरे संसार में मिलने वाले सुखों से है और इसीलिए वे व्यापारी हैं इसलिए ब्राह्मण तक एक भी बुद्ध उत्पन्न न कर सके। यह बहुत अजीब बात है। जैनों के सभी चौबीस तीर्थंकर क्षत्रिय हैं, योद्धा हैं। बुद्ध भी एक योद्धा थे। राम और कृष्ण भी योद्धा थे। एक साधारण व्यक्ति इन अर्थों में कि उनके मन में बेईमानी, चालाकी और गणित न था। वे दो ही चीजें जानते थे। जीवन और मृत्यु।

इसलिए यह साधारण योद्धा सद्गुरु हाकुई से यह पूछने आया कि कहां है स्वर्ग और कहां है नर्क? वह कोई सिद्धान्त सीखने नहीं आया, वह तो बस जानना चाहता है कि वह कौन-साद्वार कहां है जिससे वह नर्क का द्वार छोड़कर स्वर्ग के द्वारमें प्रविष्ट हो सके।

हाकुई ने जिस तरह से उत्तर दिया उसे केवल एक योद्धा ही समझ सकता है। यदि उसके स्थान पर कोई ब्राह्मण होता तो उसे शास्त्रों की आवश्यकता होती, वह उनका संदर्भ और प्रमाण देता-वेदों, उपनिषदों, बाईबिल और कुरान से, तब ही ब्राह्मण चित्त उसे समझ पाता।

ब्राह्मण के लिए केवल शास्त्रों का ही अस्तित्व है। शास्त्र ही उसका संसार हैं। एक ब्राह्मण केवल शब्दों के ही संसार में रहता है। यदि वहां कोई व्यापारी होता तो वह हाकुई का उत्तर न समझ पाता वह तरीका, वह प्रत्युत्तर एक योद्धा ही समझ सकता था। एक व्यापारी हमेशा पूछता है-‘ ‘ आपके इस स्वर्ग की क्या कीमत है? क्या दाम है इसका? मैं इसे कैसे प्राप्त कर सकता हूं? मुझे क्या करना चाहिए इसके लिए? मुझे कितना सदाचारी होना चाहिए? मुझे किन सिक्कों में कीमत अदा करनी होगी? मुझे क्या करना चाहिए-जिससे मुझे स्वर्ग मिले?” वह हमेशा कीमत के बारे में ही पूछता है।

मैंने एक बहुत सुंदर कहानी सुनी है-ऐसा हुआ कि प्रारम्भ में जब ईश्वर ने इस संसार का सृजन किया तो वह पृथ्वी पर आया और उसने कई प्रजातियों के मनुष्यों से पूछा। वह दस नियम (टेन कमांडेन्ट्स) जिनका जीवन में पालन करना था, अपने साथ लेकर आया था। यहूदियों ने इन दस नियमों को सर्वाधिक महत्व दिया, ईसाइयों और मुसलमानों ने भी थोड़ा बहुत माना इन्हें क्योंकि सभी धर्मों का स्त्रोत यहूदी ही हैं जो सबसे बड़े व्यापारी होते हैं।

इसलिए सबसे पहले परमात्मा ने पृथ्वी पर आकर हिन्दुओं से पूछा-‘ ‘ क्या तुम इन दस नियमों को लेना चाहोगे? ‘ ‘

हिन्दुओं ने कहा-‘ ‘ पहला नियम क्या है हमें इनका एक नमूना चाहिए क्योंकि हम इन दस नियमों के बारे में कुछ भी नहीं जानते। ‘ ‘

परमात्मा ने कहा-‘ ‘ तुम किसी की हत्या नहीं करोगे। ‘ ‘

हिन्दुओं ने कहा-‘ ‘ यह तो कठिन होगा। यह जीवन बहुत जटिल है और इसमें किसी कठिन स्थिति में मारना भी हो सकता है। इस पूरे ब्रह्माण्ड में ही एक महान लीला हो रही है, जिसमें जीवन, मृत्यु युद्ध और

प्रतियोगिता है। यदि जीवन में प्रतियोगिता ही न रही तो जीवन सपाट और बुझा-बुझा सा हो जाएगा। हम लोग नहीं चाहते ये दस नियम। ये तो जीवन के पूरे खेल को बिगाड़ देंगे। ' '

इसलिए परमात्मा फिर मुसलमानों के पास गया। उन्हें भी दस नियमों में से एक का उदाहरण देते हुए उसने कहा-' ' तुम दूसरी स्त्री के साथ व्यभिचार नहीं करोगे ' ' क्योंकि उन लोगों ने भी दस नियमों में से एक के नमूना की बाबत पूछा था।

मुसलमानों ने कहा-' ' यह करना तो कठिन होगा। जीवन का सारा सौंदर्य ही जाता। कम-से-कम चार पत्नियां तो जरूरी हैं। आप इसे दूसरी स्त्री के साथ व्यभिचार कहते हैं, -लेकिन जीवन हमें यही तो न्यामत के रूप में देता है, जो प्रत्येक धर्मपरायण व्यक्ति को चाहिए। दूसरे संसार के बारे में कौन जानता है? "

आपने यही एक संसार हम लोगों को आनन्द मनाने को दिया है और अब आप दस नियम लेकर आ गए। यह तो विरोधाभासी बात है।

परमात्मा इधर से उधर चारों ओर घूमता रहा। तब वह मोजेज के पास आया, जो सभी यहूदियों का नेता था। मोजेज ने नमूना देने के लिए कहा ही नहीं। जिस क्षण परमात्मा ने कहा-' ' मेरे पास तुम्हें देने के लिए दस नियम है ' ' तो उस क्षण परमात्मा भी यह कहते हुए डर रहा था कि यदि मोजेज ने भी लेने से इन्कार कर दिया तो फिर कोई और बचेगा ही नहीं। उसने प्रत्येक से पूछ लिया था और कोई उन्हें लेने को तैयार न था, इसलिए वही उसकी अंतिम आशा थे।

जब परमात्मा ने मोजेज से पूछा-' ' क्या तुम ये दस नियम लेना चाहोगे? ' ' मोजेज ने क्या उत्तर दया? उसने कहा-' ' उनकी कितनी कीमती होगी? ' ' एक अच्छा और कुशल व्यापारी इसी तरह सोचता है। पहली बात वह यही जानना चाहता है कि उसे क्या देना होगा?

परमात्मा ने कहा-' ' कुछ भी नहीं। ' '

और मोजेज ने तुरन्त कहा-' ' तब में दस के दस ले लूंगा। यदि उनकी कीमत कुछ भी नहीं है और आप उन्हें मुक्त दे रहे- हैं, तो कोई भी समस्या नहीं। ' ' इसी तरह से दस नियमों का जन्म हुआ।

लेकिन वह समुराई कोई यहूदी न था, वह कोई व्यापारी न था। वह एक योद्धा था। वह एक साधारण प्रश्न के साथ आया था। न तो उसकी दिलचस्पी शास्त्रों में थी और न कीमत में। वास्तव में उसकी दिलचस्पी किसी बताए गए शाब्दिक उत्तर में थी ही नहीं। वह तो वास्तविकता जानने में दिलचस्पी रखता था।

और हाकुई -ने किया क्या? उसने पूछा-' ' तुम कौन हो? ' '

उस योद्धा ने उत्तर दिया-' ' मैं एक समुराई हूं। ' '

जापान में समुराई होना बहुत बड़े गौरव को बात समझी जाती है। इसका अर्थ है-एक पूर्ण कुशलतम योद्धा, एक ऐसा व्यक्ति जो एक क्षण में हो अपना जीवन बिना हिचकिचाहट के दे सकता है। उसके लिए जीवन और मृत्यु खेल जैसे हैं।

उसने कहा-' ' मैं एक समुराई हुं। मैं सम्राट के निकट रहने वाले समुराई योद्धाओं का प्रधान हूं और सम्राट भी मेरा सम्मान करते हैं। ' '

हाकुई हंसा और उसने कहा-' ' तुम और समुराई? तुम तो एक भिखारी जैसे दिखाई देते हो।

समुराई के -गर्व को ठेस लगी। उसके अहंकार पर चोट की गई। वह भूल ही गयी कि वह यहां किसलिए आया था। उसने अपनी तलवार म्यान के बाहर, निकाल ली और वह हाकुई को मारने के लिए आगे बढ़ा। वह उस समय यह भूल ही गया कि वह सद्गुरु से यह पूछने के लिए आया था कि कहां है स्वर्ग और नर्क का द्वार?

हाकुई हंसा और उसने कहा-' ' यही है नर्क का द्वार। तलवार के साथ यह क्रोध और यह अहंकार ही उसका द्वार खोल देता है। ' '

यही थी वह बात जिसे एक योद्धा समझ सकता था। वह तुरन्त समझ गया। यही था वह द्वार। उसने तलवार तुरन्त अपने म्यान में रख ली, तब हाकुई ने कहा-' ' यहां खुलता है स्वर्ग का द्वार। ' '

नर्क और स्वर्ग तुम्हारे ही अन्दर है। दोनों के ही द्वार तुम्हारे अन्दर है। जब तुम बेहोश होते हो, बेहोश होने जैसा आचरण करते हो, वही है नर्क का द्वार, जब तुम सजग और सचेत होते हो-वही है स्वर्ग का द्वार।

इस समुराई को हुआ बचा? जब वह बस हाकुई को कत्ल करने ही जा रहा था, क्या वह सचेतन था? क्या वह उस बारे में जो उस समय वह करने जा रहा था, अपने पूरे होश में था? क्या वह उसके प्रति सचेत था, जिसके लिए वह यहां आया था? उसका सारा होश गायब हो गया था।

जब अहंकार तुम्हें अपने कब्जे में ले लेता है, तो तुम सजग हो ही नहीं सकते।

अहंकार वह रसायन है जो अपने नशे में तुम्हें पूरी तरह बेहोश कर देता है। इस दशा में तुम जो कुछ करते हो, वह कृत्य अचेतन से आता है, न कि तुम्हारी चेतना से। जब भी कोई कृत्य अचेतन से आता है तो नर्क का दरवाजा खुल जाता है। तुम जो कुछ भी करते हो, उसे इस तरह से करते हो कि तुम स्वयं उसके प्रति सजग नहीं होते कि तुम क्या कर रहे हो। असजगता ही नर्क का द्वार है। तुरन्त ही समुराई सजग हो गया, जब हाकुई ने कहा-‘ ‘ यही वह द्वार है जिसे तुमने पहले ही खोल रखा है। ‘ ‘ अचानक उसी स्थिति ने उसमें जरूर सजगता उत्पन्न की होगी।

जरा कल्पना करो-तुम्हारे साथ क्या हुआ होता, यदि तुम भी एक योद्धा होते, यदि तुम एक समुराई होते और किसी को मारने के लिए तलवार तुम्हारे हाथ में होती। एक क्षण की देर थी और हाकुई का सिर कटकर शरीर से अलग हो गया होता-केवल एक क्षण मैं। तलवार उसके हाथ में थी और हाकुई कहता है- ‘ ‘ यही है वह नरक का द्वार। ‘ ‘ यह कोई दार्शनिक उत्तर नहीं है कोई भी सद्गुरु दार्शनिक तरीके से उत्तर देता ही नहीं। तत्वज्ञान और व्याख्या तो मध्यम श्रेणी के बोधि को प्राप्त न होने वाले मामूली मनों के लिए है। एक सद्गुरु से प्रत्युत्तर स्वयं आता है। यह उत्तर मात्र मौखिक नहीं होता, यह समग्र होता है। हाकुई ने एक खेल खेला, लेकिन यदि एक क्षण की भी देर हो गई होती तो वह कल्ल कर दिया जाता। ठीक वक्त पर हाकुई ने कहा-‘ यह रहा द्वार।

हो सकता है, तुम लोगों ने समुराई के बारे में न सुना हो। यदि तुम तलवार हाथ में लेकर किसी समुराई को मारने जा रहा हो और बस उसकी गर्दन छूने ही वाले हो और समुराई तुम्हारे सामने निशस्त्र खड़ा हो और अपने को बचा भी न सकता हो तो समुराई के पास एक विशिष्ट ध्वनि का मंत्र होता है।

वह बस एक शब्द इतनी जोर से कहेगा कि तुम्हारी सारी ऊर्जा चली जाएगी और तुम एक पत्थर के बुत की तरह मुर्दा हो जाओगे। वह सिर्फ ‘ हे! ‘ कह सकता है और तुम अपने स्थान पर जड़ हो जाओगे तुम्हारा हाथ उठा-का-उठा रह जाएगा, हिलेगा नहीं। वह ध्वनि हृदय पर चोट करती है जो पूरे शरीर को नियंत्रित करती है और मस्तिष्क को आघात लगेगा, सारी क्रियाशीलता विलुप्त हो जाएगी। यदि एक समुराई बिना हथियार भी है, फिर भी तुम उसे मार नहीं सकते। केवल एक ध्वनि ही उसकी रक्षक बन जाएगी। यदि तुम्हारे हाथों में बंदूक या गन है तो या तो तुम्हारे हाथ गति ही न कर सकेंगे या लक्ष्य चूक जाएगा। वह है केवल एक ध्वनि ही लेकिन वह ध्वनि एक विशिष्ट विधि से इस तरह उत्पन्न हो जाती है कि वह हृदय की गहराई में उतर जाती है और तुम्हारी क्रियाशीलता के ढांचे को पूरी तरह बदल देती है।

जब हाकुई ने कहा-‘ यह रेहा द्वार! ‘ तो समुराई जड़ हो गया होगा और उसी जड़ स्थिति में उसकी सारी क्रियाशीलता पंगु हो गई होगी, वह सजग हो गया होगा।

सारी क्रियाशीलता और मन के कार्य व्यापार में बेहोशी है। तुम निरन्तर व्यस्त बने रहते हो-तुम एक क्षण के लिए भी बिच्छल खाली नहीं होते। व्यस्त बने रहना तुम्हारा नशा है और यही कारण है जब तुम्हारी कोई क्रियाशीलता नहीं होती तो -तुम बेचैन हो जाते हो। तुम पड़े हुए समाचार-पत्र को ही फिर से पढ़ने लगते हो-तुम एक काम या दूसरा काम करना शुरू कर देते हो अथवा तुम खिड़कियां ही फिर से खोलना या बंद करना शुरू कर देते हो। कुछ-न-कुछ काम करना जरूरी है, अन्यथा तुम्हारी अचेतन अवस्था टूट जाएगी और तुम सचेतन हो जाओगे।

इसलिए लेन कहता है कि यदि कोई व्यक्ति बिना कुछ भी काम किए छः घंटे के लिए बैठ सकता है तो वह बुद्धत्व को प्राप्त हो जाएगा। बस सिर्फ छ : घंटे के लिए पर छः घंटे का समय वास्तव में बहुत लम्बा समय है। सिर्फ छः सेकंड ही काफी होंगे। यदि तुम पूरी तरह बिना किसी क्रियाशीलता के छः सेकंड ही स्थिर बैठे रहो तो होगा क्या? जब तुम जरा भी किसी भी काम में नहीं लगे होते हो तो तुम बेहोश नहीं हो सकते जब तुम व्यस्त नहीं होते और कुछ नहीं कर रहे होते हो तो पूरी ऊर्जा चेतना बनकर तीव्रता से मुक्त होती है।

यही ऊर्जा किसी कार्य में व्यस्त होने में लगी थी। मन सोच रहा है, शरीर कार्य कर रहा है और पूरी ऊर्जा जो कार्य करने में लगी है, बाहर संसार में बिखर रही है। यदि तुम सोच हो तो भी तुम अपनी ऊर्जा खर्च कर रहो हो क्योंकि प्रत्येक कार्य ऊर्जा लेता है, उसे ऊर्जा की जरूरत होती है। तुम सोचते हुए निरन्तर अपनी ऊर्जा व्यर्थ बिखेरते रहते हो। क्रियाशीलता को भी ऊर्जा की जरूरत होती है और तुम्हारी अनन्त ऊर्जा का स्रोत निरन्तर खाली होता जा रहा है।

तुम्हारे हर ओर से ऊर्जा रिस रही है। यही कारण है कि तुम अपने आपको इतना निर्बल, निराश और नपुंसक होने का अनुभव करते हो।

यह नपुंसकता का अनुभव असहायता के समान होता है, तुम सर्वशक्तिमान हो और तुम नपुंसकता का अनुभव करते हो। तुम्हारे पास ही अनन्त ऊर्जा के सभी स्रोत हैं और तुम ब्रह्माण्ड के स्रोत से जुड़े हो, लेकिन फिर भी तुम नपुंसकता का अनुभव करते हो, क्योंकि तुम उसे निरन्तर व्यर्थ बिखेर रहे हो।

यदि एक क्षण के लिए भी विचार रुक जाएं और कोई भी क्रियाशीलता न हो, यदि तुम एक मूर्ति की तरह बन जाओ, बाहर और अन्दर दोनों से ही अडोल, अकम्प, कहीं कोई भी गति न हो, न मन में और न शरीर में, तभी तीव्र ऊर्जा मुक्त होती है? अब वह जाएगी कहां? क्योंकि कोई क्रियाशीलता नहीं है, इसलिए वह बाहर जा नहीं सकती। वह ऊर्जा का एक स्तंभ या एक लपट बन जाती है। अन्दर सब कुछ चेतन हो जाता है, हर चीज प्रकाश से नहा जाती है और पूरा अस्तित्व प्रकाशवान हो उठता है। इस योद्धा के साथ ऐसा ही जरूर घटा होगा। हाकुईं जैसे बोध को उपलब्ध सदगुरू के सामने आते ही उसकी तलवार हाथ में ही रुक गई होगी। हाकुई के नेत्र मुस्करा रहे थे, चेहरा मुस्करा रहा था और स्वर्ग का दरवाजा खुल गया था। वह समझ गया। तलवार म्यान के अन्दर चली -गई। तलवार को मगन में वापस रखते हुए वह अवश्य ही पूर्ण मीन और शांत रहा होगा। क्रोध विलुप्त होकर, जो ऊर्जाक्रोध में गतिशील थी, वही शांति बन गई होगी।

यदि तुम क्रोध के बीच में अचानक जाग जाओ तो तुम एक ऐसी शांति का अनुभव करोगे, जैसी तुमने पहले कभी अनुभव न की होगी। जो ऊर्जा गतिशील थी, अचानक वह रुक जाती है। तुम तुरन्त शांत हो जाओगे। तुम अपने आंतरिक अस्तित्वगत कुण्ड में जा गिरोगे और यह गिरना इतना आकस्मिक होगा कि तुम तुरन्त सजग हो जाओगे। यह गिरना, धीरे- धीरे गिरना न होकर इतना तीव्र और आकस्मिक होगा कि तुम अचेत नहीं बने रह सकते। तुम रोज की सामान्य चीजों के प्रति इतनी धीमी गति से गतिशील होते हो कि तुम्हें गति का पता ही नहीं चलता, लेकिन अचानक गति से अगति में, विचार से निर्विचार में और मन से अमन में जाने का इस योद्धा ने अनुभव किया। जैसे ही तलवार म्यान में जा रही थी, उस योद्धा ने वह अपूर्व अनुभव किया और हाकुई ने कहा-‘ ‘ यहां खुलता है स्वर्ग का दरवाजा। ”

मौन ही वह द्वार है।
आंतरिक शांति ही वह द्वार है।
अहिंसा ही वह द्वार है।
प्रेम और करुणा ही वह द्वार है।

स्वर्ग या नर्क की कोई भौगोलिक स्थिति नहीं है, वे मनोवैज्ञानिक हैं और वे तुम्हारा ही मनोविज्ञान हैं। यह ऐसा कोई प्रश्न नहीं है, जो निर्णय के अंतिम दिन तय होने वाला हो। मनुष्य का मन अधिक टालू चालाक और पीछा छुड़ाकर भागने में कुशल है। ईसाइयों, मुसलमानों और यहूदियों ने कयामत के आखिरी दिन का जो

विचार -सृजित किया है, जिस दिन प्रत्येक को कब से बाहर निकालकर निर्णय किया जाएगा। जिन्होंने जीसस का अनुसरण किया है, जिन्होंने अच्छा आचरण किया है, वे तो स्वर्ग भेजे जाएंगे और जिन लोगों का खराब आचरण रहा होगा जिन्होंने जीसस का अनुसरण नहीं किया होगा और न चर्च जाते रहे, वे लोग नर्क में फेंक दिए जाएंगे और यह नर्क शाश्वत होगा।

ईसाइयों का नर्क सबसे अधिक-बेतुकी चीजों में से एक है, क्योंकि उसका कोई अन्त ही नहीं है। यह अन्याय और घोर अन्याय ही प्रतीत होता है कि तुमने चाहे जैसा पाप किया हो, उसकी अन्य कोई सजा नं होकर बस केवल शाश्वत नर्क में डालना ही है। बर्टेन्ड रसेल ने कहीं इसका मजाक उड़ाते हुए कहा है-' ' यदि मैं अपने सभी पापों का हिसाब लगाऊं जो मैंने किए हैं और वे पाप जो मैंने नहीं किए-केवल उनका चिंतन- भर किया है, यदि उन्हें भी शामिल कर लिया जाए तब सख्त-से- सख्त न्यायाधीश भी मुझे चार साल से अधिक के लिए जेल नहीं भेज सकता और ईसाइयत तुम्हें हमेशा के लिए नर्क में धकेल देती है। बर्टेन्ड रसेल ने एक पुस्तक लिखी है-' वाई आई एम नॉट ए क्रिश्चियन ' (मैं एक ईसाई क्यों नहीं हूं?) यह एक तर्क उसी पुस्तक का है। यह एक सुंदर तर्क है क्योंकि पूरी चीज ही हास्यास्पद प्रतीत होती है और ईसाई केवल एक जीवन पर विश्वास करते हैं।

जैसा कि हिन्दू कहते हैं कि तुमने करोड़ों जन्मों में करोड़ों पाप किए हों तो उस व्यक्ति को शाश्वत नर्क में भेजने की बात तर्कसंगत भी लग सकती है। लेकिन ईसाई तो केवल एकजन्म में ही विश्वास करते हैं जो औसतन सत्तर वर्ष की होती है। तुम इस अवधि में कितने अधिक पाप कर सकते हो कि तुम्हें शाश्वत नर्क के योग्य समझा जाए। यदि तुम सत्तर वर्षों में प्रतिक्षण निरन्तर पाप ही करते रहो, तब भी शाश्वत नर्क की सजा न्यायपूर्ण नहीं लगती। पूरी चीज ही बदले की भावना से भरी दिखाई देती है इसलिए परमात्मा तुम्हें तुम्हारे पापों के लिए नर्क में नहीं फेंक रहा था, लेकिन तुम चूंकि अनाज्ञाकार्स रहे हो, तुम चूंकि विद्रोही रहे दो और तुमने उसकी बात सुनी ही नहीं इसलिए। यह तो प्रतिशोध है, लेकिन बदला चुकाना अन्याय है। यह अपराध है। यह हास्यास्पद और बेतुका लगता है।

मनुष्य के मन ने निर्णय का आखिरी दिन सृजित किया। क्यों? आखिरी निर्णय के दिन तक आखिर प्रतीक्षा क्यों? मन हमेशा स्थगित करता है, चीजों को आगे के लिए धकेलता रहता है। उसके लिए अभी और यही निर्णय कर देने की समस्या ठीक नहीं है, उसके लिए तो यह आखिरी निर्णय के दिन की बात है-हम देखेंगे यह समस्या आवश्यक नहीं है। हम देखेंगे कि आगे क्या होता है? वहां उसके कई तरीके हैं और साधन भी आखिरी क्षण में भी तुम जीसस का अनुसरण कर सकते हो, आखिरी क्षण में भी तुम समर्पण करते हुए कह सकते हो-' ' हे परमात्मा! मैं पापी हूं। ' '

अपने पापों को स्वीकार करो और तुम माफ कर दिए जाओगे। परमात्मा की करुणा अनन्त है। प्रेम ही परमात्मा है और वह तुम्हें क्षमा करने को तैयार है।

ईसाइयों ने पापों को स्वीकार करने की एक विधि ईजाद की है। तुम पाप करो और जाकर पादरी केसामने उन्हें स्वीकार कर लो। उन्हें स्वीकार करते ही तुम भारमुक्त हो जाते हो। यदि तुम ईमानदारी से उन्हें स्वीकार करते हो तो तुम पाप करने के लिए फिर तैयार हो जाते हो, क्योंकि पुराने पाप को पहले की माफी मिल चुकी है। एक बार तुमने यह तरकीब जान ली और तुम्हें कुंजी मिल गई- अब तुम पाप कर सकते हो और क्षमा भी किए जा सकते हो- अब तुम्हें और अधिक पाप करने से कौन रोकने जा रहा है? इसलिए वे ही लोग पादरी के पास हर रविवार आते रहते हैं और अपने पापों की स्वीकृति करते रहते हैं। कभी-कभी तो अहंकारवश लोग ऐसे भी पापों को स्वीकार करते हैं जो उन्होंने कभी किए ही नहीं। अहंकार ऐसा है कि यदि एक बार तुमने उन्हें स्वीकार करना शुरू किया तो तुम उनमें इतना अधिक डूब जाते हो कि तुम उन पापों को भी स्वीकार करने लगते हो, जो तुमने कभी किए ही नहीं। क्योंकि महान पापी होना भी इतना अधिक अहकार से भर देता है और तब मन कहता है-तुम जितने बड़े पापी हो, तुम्हें परमात्मा की उतनी ही अधिक अनुकम्पा और क्षमा मिलेगी।

यह कहा जाता है लियो टॉलस्टाय ने अपनी आत्मकथा के कुछ नोट्स लिखे हैं। जिन लोगों ने टॉलस्टाय को पढ़ा है, वे कहते हैं-' ' उन्होंने वे पाप भी स्वीकार किए हैं, जो उन्होंने कभी किए ही नहीं। वह उनका मजा

ले रहें हैं। ‘ ‘ जीन जैक्रिस रूसो ने अपनी स्वीकारोक्तियां लिखी हैं-‘ माई कनपेशन्स ‘ आत्मकथा के रूप में, उनमें वह भी उन पापों को स्वीकार करता है, जो उसने कभी किए ही नहीं। यही महात्मा गांधी के भी साथ सम्भव है। अपनी आत्मकथा में वे स्वयं जिन बातों का उल्लेख करते हैं, उनमें उनकी स्वीकारोक्ति बढ़ा-चढ़ाकर लिखी हो सकती है। इस तरह से भी अहंकार अपना कार्य करता है, तुम जो कुछ भी कहते हो, वह एक अति पर चला जाता है और तब एक मजेदार अनुभव होता है-‘ ‘ मैंने अब स्वीकार कर लिया है। मैं अब निर्भर हो गया और अब मुझे क्षमा कर दिया गया। मैं अतीत में एक पापी जरूर था लेकिन अब मैं एक संत हूं। ‘ ‘

और यदि तुम एक बड़े पापी रहे हो तो अब तुम एक महान संत कैसे हो सकते हो? क्या महान संत होने के लिए बड़ा पापी होना जरूरी है?

आखिरी निर्णय, पापों की स्वीकारोक्ति, ये सभी मन की चालबाजियां हैं। नर्क और स्वर्ग अंत में नहीं, वे अभी और यहीं हैं। प्रतिक्षण द्वार खुलता है और प्रतिक्षण तुम नर्क और नर्क के बीच ही आते-जाते रहते हो। यह क्षण-प्रतिक्षण का प्रश्न है और ये बहुत जरूरी है, एक क्षण में ही तुम नर्क से स्वर्ग में और स्वर्ग से नर्क में चले जाते हो। यही इस कहानी का अर्थ है। एक अकेले क्षण में और यहां तक कि एक क्षण भी पूरा नहीं गुजरा और हाकुई कहता है-यह है नर्क का द्वार। अब नर्क का द्वार खुल गया है और एक क्षण भी नहीं बीता था और वह कहता है-‘ ‘ देखो! यह है स्वर्ग का द्वार। ‘ ‘ स्वर्ग और नर्क दूर-दूर नहीं हैं। वे एक-दूसरे के पड़ोसी हैं। केवल एक छोटी- सी मुंडेर उन्हें विभाजित करती है। तुम बिना द्वार के उस मुंडेर को फलांग सकते हो। तुम इससे छलांग लगाकर उसमें पहुंच सकते हो। सुबह तुम स्वर्ग में हो सकते हो और शाम को नर्क में। इस क्षण स्वर्ग और उस क्षण नर्क। यह ठीक एक दृष्टिकोण है, ठीक मन की एक दशा कि तुम बस कैसा अनुभव कर रहे हो। एक अकेले जीवन में ही तुम कई बार नर्क देख सकते हो और कई बार स्वर्ग की सैर कर सकते हो। एक दिन में ही महावीर के एक शिष्य की एक बहुत सुंदर कहानी है। वह बहुत बड़ा राजा था और सभी का त्याग कर वह महावीर का शिष्य बन गया था। वह बहुत बड़ा योगी था और उसने बहुत कठोर तप किया था। उसने अति पर जाकर, वे सभी साधनाएं की थीं, जो कुछ महावीर ने बताई थीं। उसका नाम देश- भर में विख्यात था। उसका नाम प्रसन्नचन्द्र था। यहां तक कि अन्य राजा भी उसके पास उसे सम्मान और आदर प्रकट करने के लिए आते थे।

एक दूसरा राजा बिम्बसार, जो प्रसन्नचन्द्र का मित्र था, जब वह भी एक राजा था, उस गुफा में उससे भेंट करने आया, जहां आंखें खोले प्रसन्नचन्द्र धूप में नंगा खड़ा हुआ था। बिम्बसार ने प्रसन्नचन्द्र को झुककर प्रणाम किया और सोचा-वह समय कब आएगा, जब मैं भी इतना शांत, मौन और आनन्दपूर्ण बन सकूंगा। इस व्यक्ति ने सब कुछ प्राप्त कर लिया है और वह एक प्रस्तर प्रतिमा की तरह।

तब वह प्रसन्नचन्द्र के सद्गुरु महावीर के निकट गया, जो उसी वन में कहीं निकट ही थे। उसने महावीर से पूछा-‘ ‘ भगवान! आपके पास आने से पूर्व मैं प्रसन्नचन्द्र के पास गया था। वह आंखें मूंदे, स्वर्गीय, प्रसादपूर्ण होकर खड़ा था। वह तो ज्ञान को प्राप्त हो गया। ऐसा क्षण मेरे लिए कब आयेगा? मैं इतना भाग्यशाली नहीं हूं-उससे मुझे ईर्ष्या हो रही है और मेरा दूसरा प्रश्न है-जब मैं प्रसन्नचन्द्र के प्रति सम्मान प्रदर्शित कर रहा था, यदि उसी क्षण प्रसन्नचन्द्र ने शरीर छोड़ दिया होता, तो वह कहां पहुंचता? उसे कौन-सा स्वर्ग मिलता? ‘ ‘

क्योंकि जैन कहते हैं-वहां सात स्वर्ग और सात नर्क है।

महावीर ने उत्तर दिया-‘ ‘ वह गिरकर सातवें नर्क में जाता। ‘ ‘

बिम्बसार कुछ समझ ही न सका, वह घबरा गया और उलझन में पड गया। उसने कहा-‘ ‘ आप क्या कह रहे हैं? सातवां नर्क? प्रसन्नचन्द्र तो इतना शांत, मौन और इतनी ध्यानपूर्ण स्थिति में इतने परमानंद में था और यदि वह सातवें नर्क में गिरता है तो मेरे साथ क्या होगा? क्या सातवें नर्क के पार भी और दूसरे नर्क हैं? नहीं, आप जरूर मेरे साथ मजाक कर रहे हैं, कृपया सत्य बताइए। ‘ ‘

महावीर ने कहा-‘ ‘ यही सत्य है। ठीक तुम्हारे सामने ही, वहीं, से कुछ लोग गुजर रहे थे। वे भी प्रसन्नचन्द्र के प्रति सम्मान प्रकट करने गए थे और उन लोगों में उसके-निकट ही कुछ चर्चा-परिचर्चा होने लगी। उसने उसे सुना और उसके लिए नर्क के दरवाजे खुल गए। वे लोग राजधानी से लौट रहे थे, जहां का वह कभी राजा था। वे कह रहे थे-इस बेवकूफ ने सब कुछ त्याग दिया। इसने जिस प्रधानमंत्री को राज- काज चलाने की पूरी जिम्मेदारी सौंपी है, वह एक चोर है। वह लूट-खसोट करते हुए सब कुछ बरबाद किए दे रहा है। जब तक प्रसन्नचन्द्र का पुत्र युवा होगा और राजा बनेगा, तब उसके लिए कुछ बचेगा ही नहीं और यह बेवकूफ यहां आंखें बंद किए खड़ा है। प्रसन्नचन्द्र ने इसे सुना और अचानक नर्क के दरवाजे उसके लिए खुल गए वह भूल ही गया। ‘ ‘

वह भी एक समुराई, एक योद्धा एक क्षत्रिय था। वह पूरी, तरह भूल ही गया कि वह सब कुछ त्याग चुका है। वह भूल गया कि उसके पास कोई तलवार नहीं है, वह पूरी तरह भूल गया कि अब वह एक मुनि है। वह समुराई जो हाकुई के पास गया था, उसके पास तो एक तलवार भी थी। प्रसन्नचन्द्र के पास तो कुछ भी नहीं था। वह नंगा खड़ा था। लेकिन उसने जैसे तलवार खींच ली-वह तलवार जो वहां थी ही नहीं, वह बस एक भ्रम था और वह पूरी तरह भूल गया कि अब वह एक मुनि है। वहां सभी कुछ इतना भारयुक्त हो गया था, उस खबर को सुनकर वह इतना अधिक व्यग्र हो उठा था कि उसने म्यान से अपनी तलवार खींचकर जैसे सपने में कहा-‘ मैं अभी जीवित हूं। वह प्रधानमंत्री अपने को समझता क्या है? मैं अभी जाकर उसका सिर धड़ से अलग कर दूंगा। में अभी तो यहां जीवित हूं। ‘

ठीक अपनी पुरानी आदत के कारण-पुराने दिनों में वह जब भी क्रोधित हुआ करता था, वह हमेशा अपने मुकुट को छूता था, इसलिए उसने अपने मुकुट को छुआ और वहां कोई मुकुट नहीं था, वहां तो केवल उसका घुटा हुआ सिर था। तभी अचानक उसे याद आया-मैं कर क्या रहा हूं? यहां कोई तलवार भी नहीं है। मैं तो एक मुनि हूं और मैंने सब कु_छ छोड़ दिया है।

महावीर ने कहा-‘ ‘ उसी क्षण उसे अपनी भूल का अहसास हुआ। यदि वह उस क्षण मर गया होता तो वह सातवें स्वर्ग में पहुंचता। प्रसन्नचन्द्र ने अनुभव किया कि वह किस कल्पना जाल में उलझ गया था। केवल कल्पना के द्वारा ही नर्क का द्वार खुल गया और अब वह बंद हो चुका है। यदि उस क्षण उसने शरीर छोड़ दिया होता तो वह सातवें स्वर्ग में पहुंचता। ‘ ‘

स्वर्ग और नर्क- तुम्हारे ही अंदर है। उनके दरवाजे बहुत निकट हैं, अपने सीधे हाथ से तुम एक को और अपने बाएं हाथ से तुम दूसरे को खोल सकते हो। बस मन की वृत्ति बदलते ही तुम्हारा पूरा अस्तित्व बदल जाता है। स्वर्ग से नर्क और नर्क से स्वर्ग। यह निरन्तर चलता रहता है। आखिर इसका रहस्य क्या है? रहस्य यह है कि जब तुम अचेत होते हो, जब तुम कृत्य बेहोशी में करते हो, बिना सजग हुए तुम नर्क में होते हो, और जब तुम सचेतन होते हो, जब तुम कृत्य होशपूर्वक करते हो, तुम स्वर्ग में होते हो यदि इस सजगता का एकीकरण होकर यह संगठित हो जाए तुम्हारे अंदर तुम उसे कभी खो न सकी, तब वहां तुम्हारे लिए कोई नर्क होगा ही नहीं। यदि तुम्हारी बेहोशी इतनी अधिक प्रगाढ़ और एकीकृत हो जाए कि तुम उसे कभी खो ही न सकी, तब तुम्हारे लिए कहीं कोई स्वर्ग होगा ही नहीं।

लेकिन सौभाग्य से बेहोशी कभी इतनी प्रगाढ़ होती ही नहीं, उसका एक भाग हमेशा चेतन रहता है, जब तुम्हें अपना पूरा अस्तित्व अचेतन लगता है, तब भी तुम्हारा साक्षी होने का भाग हमेशा चेतन ही बना रहता है। यहां तक कि जब तुम सोते हो, उसका एक भाग साक्षी बना रहता है। यही कारण है कि सुबह तुम कभी–कभी यह कहते हो कि बड़ी सुंदर प्यारी नींद आई। कभी तुम कहते हो, नींद में डरावने स्वप्न आते रहे, बहुत व्याकुलता रही। कभी कहते हो, मैं इतनी गहरी नींद सोया, इतनी शांति और बहुत आनंदमयी नींद आई कि बस कुछ पूछो मत।

कौन जानता है इसे? क्योंकि तुम तो सोए हुए थे। इसलिए कौन जानता है कि तुम नींद में इतने अधिक आनंदित थे। चेतना का एक भाग साक्षी बना देख रहा था, एक भाग निरन्तर सजग था, जो जान रहा था। कौन जानता है कि नींद में डरावने सपने आए और तुम व्याकुल परेशान और व्यग्र रहे। तुम तो सोए हुए थे। फिर कौन जागता है इसे? एक भाग निरन्तर साक्षी बना रहा। यहां तक कि नींद में भी तुम्हारा एक भाग जानता रहता है। तुम पूरी तरह अचेत नहीं हो सकते।

और एक बार चेतना प्राप्त हो जाए फिर वह कभी खो नहीं सकती। तुम उसे भूल सकते हो, लेकिन वह खो नहीं सकती। तुम इस प्रक्रिया को उलट नहीं सकते। तुम सदा के लिए नर्क में नहीं रह सकते-ईसाइयों का यह सिद्धान्त पूरी तरह गलत और झूठा है, लेकिन तुम सदा के लिए स्वर्ग में रह सकते हो। यह हिन्दुओं की धारणा है। नर्क केवल अस्थायी हो सकता है,, वह कुछ समय के लिए तो हो सकता है। वह कालवाचक है। स्वर्ग हो सकता है शाश्वत। क्षणिक स्वर्ग और शाश्वत स्वर्ग के मध्य भेद करने के लिए हिन्दुओं के पास एक अलग शब्द है-मोक्ष। हिन्दुओं के पास तीन शब्द हैं जबकि ईसाइयों, मुसलमानों और यहूदियों के पास केवल दो शब्द हैं।

स्वर्ग और नर्क दो शब्द हैं, मुसलमानों, ईसाइयों और यहूदियों के लिए और हिन्दू कहते हैं-नर्क, स्वर्ग और मोक्ष-जो दोनों के पार एक तीसरा शब्द है। हिन्दू कहते हैं-स्वर्ग में प्राप्त करने जैसा कुछ है ही नहीं, उसे खोया जा सकता है। जब स्वर्ग की दशा स्थायी बन जाती है, जब उसे खोया नहीं जा सकता तो वही मोक्ष है। परिपूर्ण स्वतंत्रता। तब आनन्द तुम्हारा स्वभाव बन जाता है, तब स्वर्ग और नर्क दोनों मिट ही जाते हैं। तब तुम कहीं भी रहो, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। तुम रहोगे हमेशा स्थायी परमानंद में।

यही तीसरी दशा ही लक्ष्य है हिन्दुओं का, लेकिन तुम यह तीसरी दशा प्राप्त नहीं कर सकते, यदि तुम हिलते-डुलते रहो, यदि तुम स्वर्ग और नर्क के मध्य झूलते रहो, तब कुछ भी एकीकृत और संगठित नहीं हो सकता। तब तुम बातों के कौलाहल में रहते हो, तब अस्तित्व तरल होकर बहता रहता है। वह एक निश्चित, स्थायी और पारदर्शी सघन रूप नहीं ले पाता अर्थात तुम्हारा ' क्रिस्टीलाइजेशन ' नहीं हो पाता। कभी तुम बहकर नर्क में चले जाते हो और कभी स्वर्ग में। क्रिस्टीलाइजेशन का अर्थ है-तुम अधिक-से- अधिक होशपूर्ण बनी, तुम अधिक-से-अधिक केन्द्रित होकर अपनी पूरी चेतना अपने केन्द्र पर एकीकृत कर दो, तुम अधिक-से-अधिक जीवन्त और गहरे बनो, कम-से-कम सोए और अधिक-से- अधिक सचेत बनो। एक क्षण ऐसा आता है जब तुम भले ही नींद में हो तुम पूर्ण सचेत होते हो।

आनन्द, बुद्ध के कक्ष में उन्हीं के साथ सोता था। एक बुद्ध देखने जैसा होता है, जब वह सो रहा हो। इसलिए आनन्द कभी-कभी उन्हें सोते हुए देखता रहता था- बुद्ध को सोए हुए देखना बहुत सुंदर घटना और अवसर होता था। वह एक निर्दोष छोटे बच्चे की तरह दिखाई देते थे, जिसके पास दिन- भर का कोई बोझ नहीं होता था और उनकी नींद स्वप्नरहित होती थी।

तुम स्वप्न केवल इसलिए देखते हो, क्योंकि तुम एक भार लिए चल रहे हो, तुम स्वप्न केवल इसलिए देखते हो क्योंकि दिन अधूरा गुजारा तुमने। बहुत-सी चीजें दिन में अधूरी छूट गईं, जिन्हें तुम्हें सपनों में पूरी करना है। तुमने एक स्त्री को देखा था, तुमने उसकी कामना की थी, पर उसे प्राप्त करना सम्भव न था। समाज, कानून, राज्य, नैतिकता, तुम्हारा विवेक तुमने अपना ध्यान दूसरी ओर मोड़ दिया। तुम उस स्त्री से दूर भाग गए थे, लेकिन वह स्वप्न में तुम्हारा पीछा करेगी और वह अधूरा कार्य पूरा होगा। तुम इस स्त्री से प्रेम करो, यदि वास्तविकता में न सही तो स्वप्न में, केवल तभी तुम्हारी बेचैनी दूर होगी। अधूरा कार्य ही एक भार बन जाता है।

एक बुद्ध की नींद स्वप्नरहित होती है क्योंकि उसके लिए कुछ भी अधूरा नहीं रह गया। वहां न कोई कामना है और न कोई लालसा। क्रोध, वह उठता ही नहीं और न वह बना रहता है। चीजें उसके सामने से यों गुजर जाती हैं जैसे वे एक दर्पण के सामने से गुजर रही हों। एक स्त्री सामने से निकल जाती है, बुद्ध उसे देखते

हैं, लेकिन कोई लालसा नहीं उठती। स्त्री गुजर गई, दर्पण फिर खाली रह गया, उसका कोई चिह्न या छाप पीछे नहीं छूटी। उसकी नींद स्वप्नरहित होती है।

एक बच्चे की भी नींद स्वप्नरहित नहीं होती, यहां तक कि एक बच्चे की भी कामनाएं होती हैं। वह कामना भले ही एक स्त्री के लिए न हो। वह एक खिलौने के लिए या किसी अन्य चीज के लिए हो सकती है, लेकिन एक बच्चा भी स्वप्न देखता है। बिल्ली और कुत्ते भी स्वप्न देखते हैं। एक सोती हुई बिल्ली की ओर देखो और तुम्हें अनुभव होगा कि वह चूहे का स्वप्न देख रही है। वह उछल रही है, पकड़ रही है, कभी निराश तो कभी बहुत खुश है। एक सोते हुए कुत्ते को देखो, तुम अनुभव करोगे कि वह मक्खियों या हड्डियों अथवा लड़ने के बारे में सपने देख रहा है। कभी वह तनावग्रस्त होता है तो कभी विश्रामपूर्ण। उसकी नींद व्यग्रता से गुजरती है।

एक बुद्ध को सोते हुए देखना बहुत सुंदर अनुभव है, इसीलिए आनन्द उन्हें देखा करता था। बुद्ध सो रहे होते और आनन्द बैठा उन्हें देख रहा होता। जैसे वह अस्तित्व के मौन सरोवर हों। उनमें अधूरा कुछ भी नहीं, हर चीज और हर क्षण ठीक और परिपूर्ण, मन जैसे कोरा दर्पण, जिसमें न स्वप्न और न कोई निशान प्रतिबिम्बित होता, चेतना का बिना कीचड़ का स्फटिक जैसा पारदर्शी निर्मल जल।

आनन्द हैरान हो जाता यह देखकर, क्योंकि बुद्ध हमेशा एक ही करवट सोते थे। वे पूरी रात उसी करवट लेटे रहते, कभी करवट बदलते ही नहीं। वे जिस मुद्रा में लेटते थे, वह मुद्रा बहुत प्रसिद्ध हो गई और उसे शयन मुद्रा कहा जाने लगा। तुमने भी बुद्ध की यह मुद्रा देखी होगी। श्रीलंका, चीन, जापान और भारत में उनकी इसी मुद्रा में बहुत-सी मूर्तियां और चित्र हैं। यदि तुम अजन्ता जाओ तो बुद्ध की लेटी हुई मुद्रा में वहां भी उनका एक चित्र और मूर्ति है। यह वही मुद्रा है जिस मुद्रा में बुद्ध लेटते थे और जिसका उल्लेख आनन्द ने किया है। वही मुद्रा जिसमें वे करवट लिए बिना पूरी रात सोते थे।

अत : एक दिन आनन्द ने पूछा-‘ ‘ भगवान। यों तो हर चीज ठीक है लेकिन एक बात मुझे उलझन में डालती है कि आप पूरी रात एक ही मुद्रा में बने रहते है। आप सोते भी हैं या नहीं ? क्योंकि यदि कोई सोता है तो वह कई मुद्राएं बदलेगा। फिर भी जब आप सोते है या सोते हुए जान पड़ते हैं तो ऐसा लगता है जैसे आप पूर्ण सजग हों, ऐसा लगता है, जैसे आप पूर्ण चेतन हों। ऐसा प्रतीत होता है जैसे आप जान रहे हों कि शरीर क्या कर रहा है। आप अचेतावस्था में भी कभी मुद्रा नहीं बदलते। ”

बुद्ध ने कहा-‘ ‘ हां आनन्द! जब चित्त शांत हो जाता है, जब स्वप्न नहीं रहते तब केवल शरीर सोता है। चेतना सदा सजग बनी रहती है। ‘ ‘

गीता में कृष्ण ने अर्जुन से कहा है-‘ ‘ योगी रात में सोता हुआ भी जागता रहता है। वह रात में सोते हुए भी नहीं सोता। उसका केवल शरीर सोता है, उसका शरीर विश्राम करता है, लेकिन उसकी चेतना निरन्तर सजग बनी रहती है। वास्तव में एक योगी की चेतना को विश्राम की आवश्यकता होती ही नहीं, क्योंकि वह सदा वि श्रामपूर्ण ही होती है, उसमें कहीं कोई तनाव होता ही नहीं। विश्राम की आवश्यकता तो तब होती है, जब तनाव हो। तुम पूरे दिन इतने अधिक तनावपूर्ण रहते हो कि तुम्हारी चेतना विश्राम करना चाहती है। एक योगी का शरीर विश्राम करता है क्योंकि शरीर थक जाता है, शरीर एक यात्रिक ढांचा है-लेकिन उसकी चेतना सदा सजग और निरन्तर सावधान रहती है। वह सजगता का एक सतत प्रवाह है। ‘ ‘

जब तुम्हारी चेतना न टूटने वाली सजग अनुभूति बन जाती है, फिर उसमें मूर्च्छा के अंतराल नहीं होते। जब तुम्हारे अंदर वहां कोई अंधकार नहीं होता, तब तुम्हारे अंदर का मंदिर बोध के प्रकाश से आलोकित हो उठता है। प्रकाश की किरणें हर कोने तक पहुंचकर घर के किसी भी भाग में अंधकार रहने ही नहीं देती। तुम मुक्त हो जाते हो, तुम एक स्वतंत्र व्यक्ति होते हो। क्राइस्ट का यही अर्थ है। अपने मन का शासक, मुक्तिदाता, पुनर्जीवन प्राप्त करने वाला मनुष्य। अब तुम्हारे लिए कोई रात होती ही नहीं, केवल दिन होता है। अब तुम्हारे अंदर सूरज कभी डूबता नहीं।

स्वर्ग का अर्थ है-चैतन्य और नर्क का अर्थ है-मूर्च्छा और वहां एक से दूसरे में गतिशील होने की सम्भावना है। जब यह सम्भावना तिरोहित हो -जाती है फिर वहां न स्वर्ग होता है और न नर्क। तब एक तीसरा, सर्वोच्च का द्वार खुलता है तुम स्वतंत्र ही नहीं, स्वतंत्रता ही हो जाते हो। यही लक्ष्य है।

हाकुई ने ठीक ही किया, लेकिन यह केवल एक योद्धा के साथ ही किया जा सकता था। उस योद्धा से तुरन्त उसका प्रत्युत्तर आया-वह पहले क्रोधित हुए, क्रोध का रौद्र अवतार ही बन गया। यदि वह एक व्यापारी होता तो वह मुस्कराया होता, क्रोध उसके अंदर होता। वह हाकुई का सिर तुरन्त धड़ से अलग करने को तत्पर न होता और हाकुई का उत्तर देना व्यर्थ हो जाता।

तुम भी इसे करके देखो-जब तुम क्रोध में हो, तुम मुस्कराओ। तुम इतने झूठे और अप्रामाणिक बन गए हो कि तुम क्रोध में भी झूठ बोलते हो। तुम्हारे प्रेम पर: भी विश्वास नहीं किया जा सकता, क्योंकि तुम्हारा क्रोध भी अविश्वसनीय है। तुम्हारा तु जीवन निरन्तर बोला गया झूठ है। तुम जो कुछ भी करते हो, तुम सच्चे नहीं होते। क्रोध, तुम उसके प्रति भी सच्चे नहीं हो तुम उस पर मुस्कान चिपकाकर उसे छिपाते हो-तुम कुछ और ही दिखाना चाहते हो। तब तुम सजग नहीं बन सकते, और यही है-नर्क का द्वार।

वह योद्धा एक बच्चे की तरह था-वह पूरी तरह समग्र रूप से क्रोधित हो -उठा। वह इतना अधिक क्रोधित हो उठा कि वह उस व्यक्ति की हत्या करने जा रहा था, जिसके पास वह शिष्य होने के लिए आया था। वह सद्गुरु की तलाश में आया था और वह उसी व्यक्ति को मारने जा रहा था। वह समग्र था। उसकी समग्रता ने ही उसकी सहायता की। यदि तुम अपने क्रोध में समग्र हो तो तुम क्रोध के जाने पर समर हो जाओगे और यदि तुम्हारा क्रोध झूठा है तो तुम अपने मौन में भी प्रामाणिक नहीं हो सकते।

इसलिए जब हाकुई ने कहा- ' ' देखो! तुमने खोल दिया नर्क का द्वार। ' ' तुरन्त समुराई ने उसका अनुभव किया। इसका अनुभव केवल तभी किया जा सकता है जब तुम समग्र और सच्चे हो, अन्यथा अनुभव नहीं किया जा सकता। तुम ऐसे धोखेबाज हो कि तुमने हाकुई को भी धोखा दे दिया होता। तुम मुस्कराए होते, इसका अर्थ है कि जो नर्क का दरवाजा खुला होगा, लेकिन तुमने उस पर स्वर्ग का साइनबोर्ड लगा दिया होता। बाहर से देखने पर यह लगता कि यह स्वर्ग है पर अन्दर होता नर्क। तुम विभाजित और खण्डित हो। नहीं, इससे कुछ भी सहायता मिलने वाली नहीं। वह योद्धा अपने क्रोध में इतना अधिक समग्र हो गया कि उसने अपनी सारी चेतना खो दी। वह क्रोधित नहीं हुआ, वह क्रोध ही बन गया। वहां और कोई था ही नहीं जो क्रोध में हो-वह बस क्रोध ही बन गया। उसकी पूरी ऊर्जा क्रोध बन गई। वह पागल हो उठा। ऐसे ही समग्रता के शिखर पर चीजों को अनुभव किया जा सकता है क्योंकि वे गहराई में तुम्हारे अंदर उतर जाती है और तब कोई भी सजग बन सकता है।

हाकुई ने कहा-' ' देखो! ' ' और वह योद्धा देख सका। वह एक सच्चा आदमी था। जब हाकुई ने कहा-' ' यह है नर्क का द्वार। ' ' वह उसका अनुभव कर सका। जब तुम समग्र होते हो, तुम तभी महसूस कर सकते हो। अचानक क्रोध तिरोहित हो गया और क्योंकि वह समग्र था, वह पूरी तरह तुरन्त गायब भी हो गया। यदि वह खण्डित होता तो वह पूरी तरह तिरोहित भी नहीं हो सकता था। वह समग्र था, इसलिए पूरा- का-पूरा ही विलुप्त हो गया। पीछे एक गहरा मौन रह गया। यही मैं निरन्तर तुमसे कहता आ -रहा हूं। समग्र बनो, प्रामाणिक -बनो और सच्चे बनो।

यदि तुम एक पापी हो तो एक सच्चे पापी बनो, संत बनने का दिखावा करने की कोशिश मत करो। एक सच्चा पापी देर–सवेर संत बनेगा ही। बस समय की बात है। एक सच्चा पापी प्रामाणिक है, आवश्यक बात यही है, पाप नहीं है आवश्यक बात। मैंने सुना है, एक फेरीवाला पकड़कर न्यायालय लाया गया। वह बिना लाइसंस के काम कर रहा था। वह शहर में नया आदमी था, लेकिन यह जानता था कि -लाइसेंस लेना जरूरी है। वहां मजिस्ट्रेट के सामने कुछ और लोग भी खड़े हुए थे-तीन औरते भी पकड़ी गई थीं। वे वेश्याएं थीं जो बिना लाइसेंस' के धंधा चला रही थीं। यह वास्तव में एक आश्चर्यजनक संसार है-सरकारें वेश्यावृत्ति के लिए भी

लाइसेंस देती हैं। चूंकि वे बिना लाइसेंस लिए धंधा चलाने के जुर्म में पकड़ी गई थीं, अत: मजिस्ट्रेट ने पहली स्त्री से पूछा-‘ ‘ तुम्हें क्या कहना है तुम कौन हो और क्या कर रही थी? ‘ ‘ स्त्री ने कहा-‘ ‘ मैं एक मॉडल हूं। ‘ ‘

वह झूठ बोल रही थी। मजिस्ट्रेट ने उसे तीस दिनों के सख्त कारावास की सजा सुनाई।

फिर उसने दूसरी स्त्री से वही प्रश्न किया। उसने कहा-‘ ‘ कहीं-न-कहीं कुछ- न-कुछ गलत है। मैं गलत जुर्म में पकड़ी गई हूं। मैं तो एक अभिनेत्री हूं। ‘ ‘

मजिस्ट्रेट ने उसे साठ दिनों के लिए जेल भेजने की सजा सुनाई।

फिर उसने तीसरी स्त्री की ओर देखा। उस तीसरी स्त्री ने कहा-‘ ‘ श्रीमान! मैं एक वेश्या हूं।”

मजिस्ट्रेट विश्वास कर ही न सका कि एक वेश्या भी इतनी सच्ची हो सकती है और कोई भी बात इतनी सत्यता से स्वीकार कर सकती है।

उसने कहा-‘ ‘ प्रामाणिकता और सत्य बोलना इतना दुर्लभ हो गया है कि तुमने मुझे अंदर से हिला दिया। मेरा कभी ऐसे व्यक्ति से आमना-सामना नहीं हुआ जो सच्चा हो। जाओ, मैं तुम्हें माफ करता हूं। मैं तुम्हें कोई सजा दूंगा ही नहीं। ‘ ‘

तब नंबर आया उस फेरीवाले का। मजिस्ट्रेट ने उससे पूछा-‘ ‘ तुम क्या कर रहे हो? ‘ ‘

उसने कहा-‘ ‘ स्पष्ट कहना ही उचित होगा। मैं भी एक वेश्या हूं। ‘ ‘

यही है वह जो सब कुछ चले जा रहा है। चेहरे, सभी ओर नकली चेहरे और धोखा। तुम इसके प्रति सजग भी नहीं हो कि तुम कैसे धोखा देते हो और किसे धोखा देते हो। वहां कोई है ही नहीं जिसे धोखा दिया जाए तुम अपने को ही धोखा दिए जा रहे हो, कभी उससे छिपने की कोशिश करते हो और कभी उससे दूर भाग जाने की। इस तरह का झूठ वहां था ही नहीं, वह योद्धा एक सच्चा इंसान था। हर समय मरने मारने को तैयार। वह तुरन्त इतना प्रज्वलित हो उठा कि आग की लपट बन गया। दरवाजा खुल गया। तुम्हारा दरवाजा पूरी तरह कभी खुला नहीं होता-तुम छेदों के द्वारा चोरी से झांकते हो। तुम्हारे स्वर्ग का दरवाजा भी कभी पूरा खुला नहीं होता, तुम पिछले द्वार से प्रवेश करते हो।

किसी भी माध्यम के लिए जो आधारभूत चीज है-वह है-समग्र होना, तभी वह सत्य और मौन को प्राप्त कर सकता है। जब तुम क्रोधित होते हो तो क्रोध ही हो जाओ। परिणाम के बारे में सोचो ही मत। जो परिणाम होता है, उसे होने दो, उसे बरदाश्त करो, लेकिन स्वयं को धोखा मत दो।

जब नर्क में प्रवेश करो तो समग्रता से प्रविष्ट होकर पूरी पीड़ा से गुजरो। अपने आधे मन को बाहर छोड़कर और आधे को अंदर रखकर कभी उससे होकर मत गुजरी। पूरी तरह बरदाश्त करो। वहां दर्द तो होगा, लेकिन दर्द ही परिकाष्ठा देता है। उस आग से गुजरते हुए पीड़ा तो होती ही है, लेकिन यदि तुम समझ गए तो उसका अतिक्रमण कर जाते हो। केवल समग्र मन ही इसे समझ सकता है। जब क्रोध विलुप्त होता है तो तुम इतने शांत और ध्यानपूर्ण हो जाते हो।

यदि तुम प्रेम करते हो तो प्रेम भी समग्रता से करो। यदि तुम घृणा करते हो तो घृणा भी समग्रता से करो। उसे खण्डित होकर मत करो, जो भी परिणाम हो, उसे बरदाश्त करो। परिणामों के कारण तुम धोखा देने की कोशिश करते हो-तुम हो फेरीवाले और कहते हो– एक वेश्या हूं। केवल परिणामों की चिंता के कारण ही तुम कभी क्रोध नहीं करते, कभी अपनी तृणाप्रकट नहीं करते, तब तुम स्वर्ग से भी जाओगे। जो भी व्यक्ति पूरी तरह नर्क का द्वार खोलने में भी सक्षम नहीं है, वह स्वर्ग का द्वार पूरी तरह खोलने में भी सक्षम न हो सकेगा। नर्क के द्वारा ही जाओ। स्वर्ग का रास्ता नर्क के द्वारा ही गुजरता है और स्वर्ग, नर्क के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। यही अर्थ है इस वृत्तान्त का।

हाकुई ने उस योद्धा के लिए पहले नर्क निर्मित किया, नर्क ही पहले निर्मित होना चाहिए था। नर्क निर्मित करना आसान है-तुम हमेशा तैयार ही हो, हमेशा उसका दरवाजा खटखटा ही रहे हो। तुम डरे हुए हो, लेकिन तैयार हो, इतना साहस नहीं-जुटा पाते पर हमेशा उसके लिए तैयार हो, खतरे का सामना नहीं करते लेकिन

उसके लिए तैयार हो। वहां अंदर, निरन्तर कौलाहल ही हो रहा है। हाकुई ने पहले स्वर्ग निर्मित नहीं किया, जो असम्भव था, क्योंकि किसी की तैयारी नहीं थी। स्वर्ग बहुत दूर है और नर्क बहुत पास, ठीक उस कोने में। तुम जरा चलो और उसमें पहुंच जाओ।

मैं भी तुम्हारे लिए स्वर्ग निर्मित नहीं कर सकता। यही कारण है कि मेरी सभी ध्यान विधियां पहले नर्क निर्मित करने के लिए ही तैयार की गई हैं। लोग मेरे पास आते है और कहते हैं-? ' हमें आप शांत बना दीजिए। आप हमें पागल बनाने पर जोर क्यों देते हैं? ' '

मैं कुछ भी नहीं कर सकता-तुम शांत नहीं हो सकते। पहले पूरी तरह पागल बनो। मैं तुम्हारे लिए नर्क निर्मित करता हूं और तुम्हें उससे होकर गुजरना है। यह सबसे निकटतम चीज है। तुम इसे आसानी से कर सकते हो। स्वर्ग तो बहुत दूर है और जिसने नर्क से गुजरते हुए वहां की यात्रा नहीं की है, वह वहां पहुंच नहीं सकता। सभी विचारने के बाद ही मैं इसके लिए आग्रह कर रहा हूं।

अब तुम इस कहानी को समझ सकते हो। हाकुई ने योद्धा से कहा-' ' तुम और समुराई? तुम्हारा चेहरा तो भिखारी जैसा दिखाई देता है। ' '

एक समुराई इस बात को सहन नहीं कर सकता, यह बहुत अधिक है। एक भिखारी? वह कभी भी अपने जीवन की भीख नहीं मांगेगा। वह मर जाएगा, लेकिन भीख नहीं मांग सकता। तुरन्त ही उसके केन्द्र को छू दिया गया। एक भिखारी, असम्भव! तलवार म्यान से बाहर आ गई।

मैं भी तुम्हें छूकर तुम्हारे तार छेड़ रहा हूं तुम पर प्रहार कर रहा हूं। अपनी सभी ध्यान विधियों में तुम पर चोट कर रहा हूं जिससे तुम्हारा नर्क बाहर आए। लेकिन तुम इतने कायर हो कि यदि तुम्हारा नर्क बाहर भी आ जाता है, पर फिर भी वह पूरा नहीं होता। तुम उसके साथ खेलते हो, तुम उसमें डूबते नहीं, तुम खण्डित हो। तुम सिर्फ कुनकुने होकर रह गए हो। इस कुनकुनेपन से कुछ नहीं होने का। तुम्हें उबलने के बिंदु तक आना होगा, केवल तभी तुम भाप बन सकोगे। अहंकार सौ डिग्री के उबलने के बिंदु पर ही भाप बनकर उड़ता है, उससे पहले नहीं। तुम बस कुनकुने होकर रह गए हो। इसका कोई उपयोग नहीं, यह तो गर्मी की ऊर्जा का व्यर्थ अपव्यय है। तुम फिर ठंडे पड़ जाओगे, ध्यान के बाद ही ठंडे हो जाओगे। अपने रेचन में अति पर जाकर ही नर्क का दरवाजा खुलता है और मैं तुमसे वायदा करता हूं यदि तुम नर्क का द्वार खोल सके तो मैं दूसरा स्वर्ग का द्वार तुरन्त खोल दूंगा। वह हमेशा से खुला हुआ ही है। एक बार तुमने नर्क का द्वार खोल दिया तो वह ठीक उसके निकट ही है। इतना कहना ही काफी है, ' देखो, यह रहा नर्क का द्वार। ' तब वह दरवाजा बंद हो जाता है और स्वर्ग

का दरवाजा खुल जाता है।

क्या कोई बात और?

०० प्रश्न : प्यारे ओशो? जैसा आपने अभी स्वर्ग और नर्क के बारे में

कहा, इसका उससे क्या संबंध है? जरे अभी तक आप जड़ों और
आकाश में पंखों के साथ उड़ान भरने के बारे में कह रहे थे जबआप
कहते है कि इस पृथ्वी में अपनी जड़ें जमाओं और पंखों के साथ स्वर्ग
में उड़ान भरो? मेरे अन्दर यह अहसास बहुत विस्तार से फैल चुका है
कि पृथ्वी तो अत्यंत निकट है और स्वर्ग बहुत– बहुत दूर है। साथ हरई
' यह ' और ' वह ' का महत्व भी समझाने की अनुकम्पा को

हां! यह पृथ्वी निकट है लेकिन वह इस वजह से निकट नहीं है बल्कि तुम्हारे कारण निकट है। वहां स्वर्ग बहुत दूर है इस वजह से वह दूर नहीं है बल्कि तुम्हारे कारण ही वह दूर है।

' यह ' का अर्थ है-यह संसार, ' यह ' का अर्थ है यह शरीर। ' यह ' का अर्थ है ये कामनाएं ये क्रोध और घृणा आदि और ये भौतिक दृश्यमान जगत। ' यह ' का अर्थ है वह सभी कुछ, जिसकी धर्मों द्वारा निंदा की गई है। वे हमेशा ' यह ' के विरुद्ध हैं '। ' वह ' का अर्थ हैं-ब्रह्म। ' वह ' का अर्थ है मोक्ष, ' वह ' का अर्थ है दिव्यता या

भगवत्ता। ' यह ' का अर्थ है-यह भौतिक संसार, यह शैतानी संसार, जो विश्व के सभी धर्मों द्वारा निंदित किया गया है। मैं इसकी निंदा नहीं करता। मैं इसी संसार के लिए तुम्हें जडें देना चाहता हूं। सभी धर्म यही कहते हैं कि जब तक इस जगत से जुडी तुम सारी जड़ों को अलग निकालकर न फेंक दो, तुम ' वह ' में जाने के लिए पंख नहीं पा सकते।

वे सभी ' यह ' अर्थात इस संसार, इस शरीर और सभी दृश्यमान पदार्थों के विरुद्ध हैं। तुम सभी जिसे निकट जैसा महसूस करते हो, वे उसके विरुद्ध हैं। वे सभी उसकी बात करते हैं जो तुमसे बहुत-बहुत दूर हैं जो कुछ चीज वास्तविकता से पृथक है, जिसे वे ब्रह्म, परमात्मा या मोक्ष कहते हैं। उसे कोई नहीं जानता, ' उससे ' किसी का कभी संबंध नहीं जुड़ा, कोई सम्पर्क नहीं हुआ और न किसी ने ' उसका ' स्पर्श तक किया। वह एक सपने जैसा दिखाई देता है, ठीक एक कविता या कल्पना की भांति।

सभी धर्मों ने ' यह ' की निंदा की है। वे कहते हैं-संसार से अपनी जड़ें अलग कर दो और इसी कारण वे संन्यास को संसार का त्याग कहते हैं वे ' यह ' को छोड़ना ही संन्यास कहते हैं, लेकिन मैं नहीं। वे एक द्वैत उत्पन्न करते हैं न केवल द्वैतता, बल्कि ' यह ' और ' वह ' के मध्य, समय और शाश्वता के मध्य, भौतिकता और आध्यात्मिकता के मध्य वे एक विरोध उत्पन्न करते है।

मेरे देखे ' यह ' के अंदर जमी जड़े, तुम्हें ' वह ' तक जाने को पंख मिलने में सहायता -देती हैं। मैं कोई विरोध उत्पन्न नहीं करता और न कोई विरोध है। विरोध का भाव तो उस मन से आता है, जो सदा द्वैतता और संघर्ष में रहता है। संघर्ष करने से सिद्धान्तों का जन्म होता है जिनमें द्वैतता और वाद-विवाद है। मैं अद्वैत हूं मेरा किसी से कोई संघर्ष नहीं। इसलिए मैं ' वह ' को ' यह ' के विरुद्ध नहीं, ' यह ' की ही खिलावट मानता हूं। मैं पंखों को जड़ों के विरुद्ध नहीं, बल्कि- उन्हें जड़ों की खिलावट के रूप में ही देखता हूं। ये वृक्ष, आकाश में अपने पंख फैलाए खडे हैं, उनकी शाखाएं ही उनके पंख हैं। उनकी जड़ें पृथ्वी में हैं और पंख आकाश में। मैं चाहता हूं कि तुम एक मजबूत पेड़ की तरह बनो, जिसकी जल्द ' यह ' में और राख ' वह ' में हों।

मेरा परमात्मा संसार के विरुद्ध नहीं है, मेरा परमात्मा तो संसार या अस्तित्व ही है। यह पृथ्वी भी उस स्वर्ग के विरुद्ध नहीं है, वे दोनों एक वस्तु के ही दो विपरीत ध्रुव है।

' यह ' तुम्हें अपने निकट लगता है क्योंकि तुम्हारा मन अभी इस दशा में नहीं है कि वह अदृश्य को देख सके। तुम्हारा मन इतना परेशान और इतने निम्न स्तर पर है कि तुम केवल असमतल और दृष्टिगोचर ही देख सकते हो, सूक्ष्म वस्तुएं तुमसे के -जाती हैं। यदि तुम्हारा मन शांत व निर्विचार हो जाए तो सूक्ष्म चीजें भी दृश्यमान हो जाएंगी। परमात्मा दृश्यमान नहीं है, पर वह हर जगत् उपस्थित है, लेकिन तुम्हारा मन अभी तक सूक्ष्म चीजों से अदृश्य को देखने में लयबद्ध नहीं हो सका है। अदृश्य को भी -देखा जा सकता है।

अदृश्य का अर्थ होता है, वह जिसे देखा न जा सके, लेकिन नहीं, अदृश्य भी देखा जा सकता है, केवल तुम्हें अधिक परिष्कृत और अधिक सूक्ष्म दृष्टि चाहिए। एक अंधा व्यक्ति नहीं देख सकता, वह उसे भी नहीं देख सकता जो तुम्हें दिखाई देता है, लेकिन आंखों का इलाज कर उसे दृष्टि दी जा सकती है, तब वह धूप, रंग और इन्द्रधनुष सभी कुछ देख सकेगा। वह सभी जो कुछ अदृश्य था, अब उसके लिए दृश्यमान हो जाता है।

परमात्मा दृश्यमान नहीं है। तुम्हारे पास ही सम्यक अंतर्दृष्टि या ठीक आंखें नहीं है, बस इतनी-सी ही बात है। तुम अभी वह लयबद्ध अस्तित्व नहीं हो जिसके लिए सूक्ष्म अपने द्वार खोलता है।

मेरे लिए ' यह ' और ' वह ' विभाजित नहीं है। ' यह ' ' वह ' में पहुंच जाता है और ' वह ' आ जाता है ' यह ' में। तुम्हारे लिए ' वह ' का अर्थ है-जो बहुत दूर है-जो मेरे लिए नहीं है। मेरे लिए ' यह ' है, ' वह ' किसी दिन तुम्हारे लिए भी ऐसी स्थिति होगी जब ' यह ' वह ' बन जाएगा। यह संसार ही परमात्मा है। यह दृश्यमान ही अदृश्य को छिपा लेता है। इसी कारण मेरा संन्यासी त्यागी नहीं है। मेरा संन्यास किसी चीज के विरोध में नहीं है। वह समग्रता के लिए अखण्ड होने के लिए है।

अपने शरीर में जड़ें जमाए रहो, जिससे आत्मा में जाने के लिए तुम पंख पा सकी। जमीन में जड़ें जमाए रहो जिससे तुम आकाश में फैल सको, दृश्यमान में जड़ें बनाए रखो, जिससे तुम अदृश्य में पहुंच सको। न तो द्वैतता उत्पन्न करो और न कोई सक्रिय विरोध। यदि मैं किसी चीज के विरुद्ध हूं तो मैं सक्रिय विरोध के विरुद्ध हूं। मैं किसी चीज के विरुद्ध बनने के विरोध में हूं। मैं जीवन के इस पूरे अखण्ड वर्तुल के लिए हूं। यह संसार और परमात्मा कहीं भी विभाजित नहीं हैं। वहां कोई सरहद नहीं है-संसार ही फैलता हुआ परमात्मा है और परमात्मा जो निरन्तर विस्तार ले रहा है, वही संसार है। वास्तव में दो शब्दों का प्रयोग करना ही ठीक नहीं है, लेकिन भाषा समस्याएं उत्पन्न करती है। जब हम सृष्टि कर्ता और सृष्टि कहते हैं, हम उन्हें दो में विभाजित कर देते हैं, क्योंकि भाषा द्वंद्वात्मक है। वास्तव में, अस्तित्व में वहां न सृष्टिकर्ता है और न सृष्टि, केवल सृजनात्मक है, केवल अनन्त सृजन की एक प्रक्रिया है। यहां कुछ भी विभाजित नहीं है, प्रत्येक चीज एक है- अविभाजित है।

भाषा, ठीक एक राजनीतिक-नक्शे की तरह है। भारत, पाकिस्तान, बांग्लादेश, राजनीतिक नक्शे पर बांटे गए देश हैं। यदि तुम घूमती हुई पृथ्वी से स्वयं पूछो कि भारत कहां समाप्त होता है और कहां पाकिस्तान शुरू होता है तो पृथ्वी हंसेगी और सोचेगी कि तुम पागल हो गए हो। पृथ्वी गोल है, वह एक है, केवल राजनैतिक नक्शे पर नक्शे सभी झूठे हैं और राजनीतिज्ञ, वे पागल आदमी हैं, ऐसे पागल जिन्होंने शक्ति और सत्ता प्राप्त कर ली है। ये लोग पागलखानों में बंद पागलों से कहीं अधिक खतरनाक है, क्योंकि उनके पास शक्ति और सत्ता है।

भाषा भी राजनीतिक नक्शो की भांति है, शब्द विभाजित करते हैं और अस्तित्व एक है। कहां तुम समाप्त करोगे और मैं कहां से शुरू करूंगा कहां है वह बिंदु जिससे जहां मैं समाप्त करूं और तुम शुरू करो और वहां हम एक रेखा खींच सकें? कहां? वहां कोई भेद किया ही नहीं जा सकता और न कोई सीमा रेखा खींची जा सकती है। वायु तुम्हारे अंदर बहे चले जाती है, तुम सांस लेते हो, यदि एक क्षण के लिए भी तुम्हारे अंदर वायु बहना बंद कर दे और श्वास न आए तो तुम मर जाओगे और वह वायु जो मेरे अन्दर क्षण- भर पूर्व थी, उसने मुझे छोड़कर तुममें प्रवेश कर लिया। ठीक एक क्षण पहले वह मेरा जीवन था और अब वह तुम्हारा जीवन है। तुम्हारी श्वास मुझ तक पहुंच गई है, वह तुम्हारा जीवन था और अब यह मेरा जीवन है। हम लोगों को कहां विभाजित किया जा सकता है?

तुम्हारे और मेरे मध्य जीवन शैली जैसी कोई चीज है, जो प्रवाहित हो रही है। वृक्ष ऑक्सीजन उत्पन्न किए जा रहे हैं और तुम श्वास लेते हो। यदि सभी वृक्ष मिट जाएं तो तुम भी मिट जाओगे। वृक्ष निरन्तर ब्रह्माण्डीय किरणों को भोजन में बदल रहे हैं-ये फल और सब्जियां ही वही भोजन हैं। यदि वे मिट जाएं तो तुम भी नहीं रहोगे। वे निरन्तर तुम्हारे लिए भोजन उत्पन्न किए जा रहे हैं और इस तरह तुम जीवित हो। यह सारी हरियाली तुम्हारे लिए भोजन उत्पन्न करने की एकसतत प्रक्रिया है और तुम उस पर निर्भर हो।

बादल विचरण करते हुए तुम्हारे लिए जल ला रहे हैं। सब कुछ एक दूसरे से संबंधित है, जुड़ा है। बहुत दूर से सूरज तुम तक अपनी किरणें भेजता है और वे किरणें ही जीवन हैं। यदि सूरज बुझ जाए तो सारा जीवन मिट जाएगा। यद्यपि सूरज भी यह ऊर्जा किसी अन्य स्रोत से प्राप्त कर रहा है। वैज्ञानिक अभी तक उस स्रोत को खोज पाने में सफल नहीं हुए हैं, लेकिन यदि वह स्रोत मिट जाए तो हर चीज नष्ट हो जाएगी। प्रत्येक चीज एक दूसरे से संबंधित है, एक दूसरे से जुड़ी हुई है। इस संसार का अस्तित्व खण्डों में नहीं इसका अस्तित्व पूर्णता में है, एक अखण्ड की भांति।

मेरे लिए ' यह ' -और- ' वह ' ही परमात्मा है। इसीलिए मैं बहुत परस्पर-विरोधी बातें कहता हूं। मैं तुम्हें दो चीजें देना चाहता हूं-पृथ्वी में जाने के लिए जड़े, जो सभी इसी संसार में हैं और स्वर्ग में जाने के लिए पंख, वह स्वर्ग जो अभी तुम्हारे लिए सभी वास्तविकता से पृथक है और वह सब कुछ जिसे अभी तुम समझ नहीं सकते और जो मन के पार है। सीमित के लिए जडें और असीमित के लिए पंख। तुम्हें ' यह ' छोड़ने की कोई जरूरत नहीं क्योंकि यदि तुम ' यह ' अर्थात संसार छोड़ते हो तो तुम अपनी जड़ें ही छोड़ रहे हो।

ऐसा ही हुआ है, इसी कारण तुम्हारे साधु संन्यासी और भिक्षु इतना मुर्दा दिखाई देते हैं। उन्होंने यह संसार छोड़ दिया है, वे लोग जड़ से उखड़े हुए लोग हैं। एक वृक्ष को जड़ से उखाड़ कर, तुम पृथ्वी में छिपी जड़ों वाले भाग को खुला अरक्षित छोड़ रहे हो, लेकिन शीघ्र ही और शाखाएं मृत हो जाएंगी और पत्ते झरना शुरू हो जाएंगे। यही तुम्हारे पुराने तथाकथित साधुओं संन्यासियों के साथ घट रहा है। उन्होंने अपनी जड़ें ही उखाड़कर नष्ट कर दी हैं क्योंकि वे इस संसार और उसकी पृथ्वी के विरुद्ध हैं और उनकी खिलावट रुक गई है।

क्या तुमने किसी ऐसे पुराने संन्यासी को खिलावट की दशा में देखा है, जब प्रतिदिन उससे फूल झर रहे हो, जो प्रतिक्षण नई ऊर्जा निखरा रहा हो, जो प्रतिदिन अज्ञात में पुष्पित और सुरभित हो रहा हो? नहीं, तुम उसके स्थान पर अपने ढांचे से बंधे, जड़, अनुशासनप्रिय एक मुर्दा अस्तित्व को देखोगे वहां।

महावीर जीवन्त हो सकते हैं लेकिन महावीर का अनुसरण करने वालों को जाकर जरा देखो तो, उनके चेहरे देखो, तुम वहां खिलते हुए पुष्प नहीं पाओगे। उनकी आंखें बुझी-बुझी सी मुर्दा हैं। वे जड से उखड़े वृक्षों जैसे हैं। वे दया और करुणा के पात्र हैं, उन्हें सहायता की आवश्यकता है। वे रुग्ण हैं- क्योंकि बिना जड़ों के वे रुग्ण होने के लिए बाध्य हैं। यह सम्भव है, उन्होंने अपनी कामवासना ही नष्ट कर दी हो लेकिन वे नहीं जानते कि उन्होंने अपने प्रेम को भी नष्ट कर दिया है। सेक्स या कामवासना ' यह ' है और प्रेम है ' वह '। जब तुम सेक्स को मार देते हो तो प्रेम भी मर जाता है।

मैं कहता हूं कि कामवासना में इतने गहरे उतरो कि वह प्रेम बन जाए तुम्हारी वे ही जड़ें फूल खिलाना प्रारम्भ कर देती हैं। प्रारम्भ अंत बन जाता है, बीज ही वृक्ष बन जाता है। उसमें इतने गहरे उतरो कि वहां छिपा दूसरा मिल जाए। वह व हां हमेशा से ही है। तुम अपने क्रोध को नियंत्रित कर सकते हो लेकिन तब वहां करुणा न होगी। अपने क्रोध में इतने गहरे जाठगे कि क्रोध, करुणा बन जाए। तब तुम्हारे साथ कोई चमत्कार जैसी चीज होगी। तब तुम पर आशीर्वाद बरस उठेगा, वरदानों की झड़ी लग जाएगी और होगा केवल परमानन्द।

यह पृथ्वी उन सभी चीजों की प्रतीक है जिन्हें अभी तक निंदित किया गया है और स्वर्ग प्रतीक है उन सभी कामनाओं का -जो की गई हैं, लेकिन में उनमें विभाजन नहीं करता, मेरे लिए दोनों एक ही हैं। ऐसा एक दिन तुम्हारे लिए भी शीघ्र आएगा, जब तुम देख सकोगे कि ' यह ', ' वह ' का गर्भधारण किए हुए है। यह - संसार परमात्मा के लिए ठीक एक गर्भ की भांति है। ' वह ', अलौकिक और रहस्यपूर्ण के लिए ' यह ' एक सुरक्षात्मक आवरण की भांति है। बीज और उसका आवरण या छिलका वृक्ष के विरोध में नहीं है, वह एक सुरक्षात्मक खोल है। पदार्थ, उस दैवी शक्ति, की ठीक सुरक्षा के लिए है। देखो, हमेशा इन दोनों में एकता खोजने का प्रयास करो। यह एकता अथवा इनका योग ही धर्म है, इस योग के टूटते ही धर्म खो जाता है। किसी का भी विरोधी बनना छोड़, क्योंकि यदि तुम किसी के विरुद्ध हो तो तुम जिद्दी, सख्त और अधिक सख्त होकर मुर्दे जैसे बन जाओगे।

मैंने सुना है कि एक बार ऐसा हुआ कि डाकुओं का एक गिरोह गलती से एक मठ में घुस गया। उन्होंने सोचा था कि यह किसी धनी व्यक्ति का घर है क्योंकि मठ बाहर से बहुत भव्य और सम्पन्न दिखाई देता था- इसलिए वे लोग चोरी के लिए उस मठ में रात को घुसे, लेकिन उस मठ के भिक्षुओं ने उनका सख्त प्रतिरोध करते हुए अच्छी-खासी लड़ाई की। वे लोग इसीलिए प्रसन्न थे कि सभी लोग सुरक्षित भागने में सफल हुए।

जब वे लोग शहर के बाहर इकट्ठे हुए तो एक डाकूने दार्शनिक अंदाज में कहा- " कुच्छ बुरा नहीं है, हम लोगों के पास सौ रुपये तो हैं। ' '

उनका सरदार बोला-' ' अरे बेवकूफ! मैंने तुम लोगों से हमेशा कहा है कि इन साधुओं से दूर रहो। हम लोगों के पास पांच सौ रुपए थे, जब हम लोग इस मठ में घुसे थे। ' '

मैं भी तुमसे यही कहता हूं-भिक्षुओं और साधुओं से दूर ही रहो। यदि तुम उनके मठ या आश्रम में पांच सौ रुपए लेकर प्रवेश करते हो तो बाहर आने पर तुम्हारे पास सिर्फ सौ फूल बचेंगे। ये लोग ' यह ' के अर्थात संसार

के दुश्मन हैं और मैं कहता हूं कि जो लोग ' यह ' के शत्रु हैं, वे ' वह ' के भी दुश्मन बनने के लिए बाध्य होंगे, यह जरूरी नहीं है कि वे इस बात को जानते हों या न जानते हों।

' यह ' को प्रेम करो और इतनी गहराई से प्रेम करो कि तुम्हारा प्रेम ' यह ' का अतिक्रमण कर ' वह ' तक पहुंच जाए। मेरे कहने का यही अर्थ है, जड़ें इसी पृथ्वी में, और पंख उस स्वर्ग में।

आज बस इतना ही।

चौथा प्रवचन

एक प्याला चाय पीजिए

कथा:

झेन सदगुरू जोशू मठ में आए।

एक नए भिक्षु से पूछा- " क्या मैंने तुमको पहले कभी देखा है?"

उस नए भिक्षु ने उत्तरदिया- " जी नहीं श्रीमान? "

जोशू ने कहा- " तब आप एक कला चाय पीजिए।"

जोशू ने फिर दूसरे भिक्षु की ओर मुड़कर पूछा- " क्या मैंने तुमको पहले कभी देखा है?"

उस दूसरे भिक्षु ने उत्तर दिया " जी क्या श्रीमान? आपने वास्तव में मुझे देखा है "

जोशू ने कह?- " तब आप एक प्याला चाय पिजिए

कुछ देर बाद मठ में भिक्षुओ के प्रबंधक ने जोशू से पूछा- " आपने कोई भी उत्तर मिलने पर दोनों को ही चाय पीने का समान आमंत्रण क्यों दिया?"

यह सुनकर जाशू चीखते हुए बोला- " मैनेजर? तुम अभी भी यही हरे?"

मैनेजर ने उत्तरदिया " जी श्रीमान? "

जोश ने कह?- " तब आप भी एक प्याला चाय पीजिए।"

यह कहानी बहुत ही साधारण है, लेकिन इसे समझना कठिन है। ऐसा हमेशा से होता रहा है। जो चीज जितनी अधिक साधारण होती है, उसे समझना उतना ही अधिक कठिन होता है। किसी जटिल चीज को समझने के लिए तुम्हें उसे विभाजित कर उसका विश्लेषण करना होता है। एक साधारण चीज को न तो विभाजित किया जा सकता है और न उसका विश्लेषण किया जा सकता। वह चीज इतनी साधारण होती है कि उसमें ऐसा कुछ होता ही नहीं जिसे विभाजित कर उसका विश्लेषण किया जा सके। साधारण चीज समझने से हमेशा छूट जाती है, यही कारण है कि परमात्मा नहीं समझा जा सका। परमात्मा सबसे अधिक साधारण है, पूरी तरह कोई भी चीज जितनी ही अधिक साधारण होना संभव है, उससे भी साधारण। यह संसार समझा जा सकता है क्योंकि यह बहुत जटिल है। जितनी अधिक जटिल चीज होती है, मन उस पर उतना ही अधिक कार्य कर सकता है। जब वह साधारण है तब वहां श्रमपूर्वक अध्ययन करने को होता ही नहीं, मन कार्य कर ही नहीं सकता।

तर्कशास्त्री कहते हैं कि साधारण गुण अव्याख्य हैं। उदाहरण के लिए यदि कोई तुमसे पूछता है- ' ' पीला रंग कैसा है? " यह इतना साधारण गुण है-पीला रंग, पर तुम इसकी व्याख्या कैसे करोगे?

तुम कहोगे-" पीला रंग बस पीला है। ' ' पूछने वाला कहेगा- ' ' यह तो मैं भी जानता हूं लेकिन पीले रंग की परिभाषा क्या है? यदि तुम कहते हो कि पीला रंग पीला है, तो तुम उसकी व्याख्या नहीं कर रहे हो, तुम उसे साधारण रूप से दोहरा रहे हो। यह एक ही बात को दोहराते हुए अलग शब्दों में कहने का शास्त्र टोटोलॉजी है। ' ' इस सदी में बहुत गहरी समझ और असाधारण प्रतिभाशाली विद्वानों में से एक जी.ई.मूर हैं जिन्होंने प्रिंसिपा इथीका नाम की पुस्तक लिखी है। पूरी पुस्तक में निरन्तर प्रयास करते हुए अच्छा या शुभ क्या है, इसी की व्याख्या की गई है। दो या तीन सौ पृष्ठों में सभी आयामों से इसी को परिभाषित करने का प्रयास किया गया

है। जी ई मूर के तीन सौ पृष्ठ किसी अन्य विद्वान द्वारा लिखे गए तीन हजार पृष्ठों से भी अधिक कीमती है। अंत में मूर ने यही निष्कर्ष निकाला कि अच्छा, या शुभ को परिभाषित किया ही नहीं जा सकता। उसकी व्याख्या नहीं की जा सकती क्योंकि वह इतने साधारण गुणों का है। जब कोई चीज जटिल होती है। उसमें बहुत-सी चीजें होती हैं। तुम एक चीज की व्याख्या, दूसरी चीज से जो वहां मौजूद हो, मजे से कर सकते हो। यदि तुम और मैं एक कमरे में है और तुम पूछते हो- ' ' तुम कौन हो? ' ' तो कम से कम मैं यह तो कह ही सकता हूं कि मैं तुम नहीं हूं। यह परिभाषा संकेत बन जाएगी। लेकिन यदि में कमरे में अकेला हूं और मैं स्वयं से यह प्रश्न पूछूं-' ' मैं कौन हूं? ' ' तो प्रश्न गूंजता है लेकिन उसका कोई उत्तर नहीं आता है। उसे कैसे परिभाषित किया जाए?

यही वजह है कि परमात्मा से हम चूके जाते हैं। बुद्धि उससे इनकार करती है। तर्क कहता है-नहीं परमात्मा अस्तित्व के विभाजन का सबसे छोटा अंक है। सबसे अधिक साधारण और सबसे अधिक आधारभूत।

मन रुक जाता है। वहां परमात्मा के सिवाय और कुछ है ही नहीं इसलिए कैसे उसकी व्याख्या की जाए? वह कमरे में अकेला है। इसी कारण धर्म उसे विभाजित करने की कोशिश करते हैं और तब व्याख्या करना संभव हो जाता है। वे कहते हैं, ' वह ' यह संसार नहीं है। परमात्मा ही है संसार नहीं है। परमात्मा पदार्थ नहीं है। परमात्मा शरीर नहीं है। परमात्मा कोई कामना नहीं है। यही तरीके .हैं उसे परिभाषित करने के।

तुम्हें किसी चीज के विरुद्ध कोई चीज रखनी होगी, तब एक सीमा बांधी जा सकती है। यदि कोई पास पड़ोस नहीं है तो तुम सीमा रेखा खींच ले कैसे? .तुम अपने घर की मुंडेर किस जगह रखोगे यदि अगल-बगल कोई है नहीं-नहीं यदि कोई आसपास है ही नहीं तो घर की मुंडेर कैसे बना सकते हो? तुम्हारे घर की चहारदीवारी तुम्हारे पड़ोस की मौजूदगी से बनी है। परमात्मा अकेला है, उसके कोई पड़ोसी नहीं है। वह कहां से शुरू होता है? वह कहां जाकर समाप्त होता है? कहीं भी नहीं। तुम परमात्मा की व्याख्या कर कैसे सकते हो? बस उसकी व्याख्या करने के लिए ही शैतान को पैदा किया गया। परमात्मा शैतान नहीं है, कम-से-कम यह तो कहा ही जा सकता है। तुम यह कहने में तो समर्थ नहीं हो सकते कि परमात्मा क्या है लेकिन तुम यह कह सकते हो वह क्या नहीं है। परमात्मा, संसार नहीं है।

मैं किसी ईसाई धर्मशास्त्र -की पुस्तक पड़ रहा था। वह कहती है-परमात्मा, बुराई और शैतानियत के सिवाय और सब कुछ है, लेकिन इसको भी परिभाषित करने की यथेष्ट जरूरत है। बुराई के सिवा यह एक सीमा रेखा खींच देगी। लेकिन धर्मशास्त्र लिखने वाला सजग नहीं है। यदि परमात्मा सब कुछ है, फिर यह बुराई और शैतानियत कहा से आई? उसे भी हर चीज से आना चाहिए- अन्यथा अस्तित्व का कोई 'अन्य स्त्रोत भी है जो परमात्मा से भिन्न है और अस्तित्व का वह अन्य दूसरा स्त्रोत परमात्मा के समतुल्य बन जाता है। तब शैतान और बुराई कभी नष्ट नहीं किए जा सकते। शैतान और बुराई परमात्मा के आश्रित नहीं है इसलिए परमात्मा उन्हें कैसे नष्ट कर सकता है? और परमात्मा उसे नष्ट करेगा नहीं, क्योंकि एक बार शैतान नष्ट हो' गया तो परमात्मा की व्याख्या न हो सकेगी। उसकी व्याख्या करने के लिए शैतान की जरूरत है। वह हमेशा उसके आस-पास और चारों ओर होना ही चाहिए। संतों को भी पापियों की जरूरत होती है, अन्यथा वे वहां होंगे ही नहीं। तुम जानोगे कैसे कि कौन है संत? हर -संत को अपने चारों और पापियों की जरूरत -होती है, वे पापी ही सीमा रेखा बनाते हैं। एक साधारण चीज का अर्थ है-उसका अकेला होना।

पहली चीज जो समझने जैसी है कि जटिल चीजें ही समझी जा सकती हैं। साधारण चीजें नहीं। जोशू की यह कहानी बहुत -साधारण है। इतनी अधिक साधारण कि वह तुम्हारी समझ से परे फिसल जाती है।

यह कहानी बहुत अधिक साधारण है कि मन इस पर काम नहीं कर सकता। इस कहानी को महसूस और हृदयंगम करने की कोशिश करें। मैं यह नहीं कहूंगा कि इसे समझने की कोशिश करें क्योंकि तुम इसे समझ ही नहीं सकते-इसे महसूस करने की कोशिश करें। यदि तुमने अनुभव करने की कोशिश की तो तुम्हें इसमें छिपी बहुत– सी चीजें मिलेंगी। यदि तुमने समझने का प्रयास किया तो उसमें कुछ भी नहीं है। पूरा वृत्तांत ही व्यर्थ है।

जीशू एक भिक्षु को देखता है और पूछता है, ' ' क्या मैंने तुम्हें पहले भी देखा है? ' '

वह भिक्षु कहता है-‘ ‘ जी नहीं श्रीमान! इसकी कोई संभावना ही नहीं है। मैं तो यहां पहली बार ही आया हूं। मैं एक अजनबी हूं। आपने मुझे पहले कभी नहीं देखा। ‘ ‘

जोश कहता है-‘ ‘ ठीक है, तब आप एक प्याला चाय पीजिए मेरे साथ। ‘ ‘ फिर -उसने दूसरे भिक्षु से पूछा, ‘ ‘ क्या मैंने पहले कभी तुम्हें देखा है? ‘ ‘

वह भिक्षु .कहता है-‘ ‘ जी हां श्रीमान! आपने मुझे जरूर देखा होगा। मैं तो हमेशा यहीं रहता हूं। मैं कोई अजनबी नहीं हूं। ‘ ‘

वह भिक्षु अवश्य ही जोश का शिष्य होना चाहिए और जोश कहता है, ‘ ‘ ठीक है, तब आप एक प्याला चाय पीजिए मेरे साथ। ‘ ‘

उस मठ का प्रबंधक दो भिन्न व्यक्तियों के साथ, भिन्न तरीकों से अनजबी और मित्र के साथ, उसके साथ जो पहली बार मठ में आया और उसके साथ जो हमेशा से यहां रहता ही था, एक ही तरह समान प्रतिक्रिया व्यक्त की। अज्ञात के प्रति और ज्ञात के प्रति जोशू एक ही तरह से उत्तर दे रहा है। वह उनमें कोई भेद करता ही नहीं, बिल्कुल भी नहीं। वह यह नहीं कहता-‘ ‘ तुम अजनबी हो, तुम्हारा स्वागत हो। एक प्याला चाय पीना मेरे साथ। ‘ ‘

और वह दूसरे से यह नहीं कहता-.’ ‘ तुम तो हमेशा से यहां रहते हो, इसलिए तुम्हें -चाय के लिए निमंत्रित करने की कोई जरूरत नहीं। न वह यह कहता है-‘ ‘ तुम तो हमेशा यहां रहते ही हो, इसलिए तुम्हें जवाब देने की भी क्या जरूरत है? ‘ ‘

घनिष्टता या परिचय ऊबाहट उत्पन्न करता है तुम कभी परिचित का अधिक स्वागत नहीं करते। तुम कभी अपनी पत्नी की ओर देखते तक नहीं। वह तुम्हारे साथ बहुत-बहुत वर्षों से रहती आई है। तुम उसे पूरी तरह भूल जाते हो कि वह रहती भी है अथवा नहीं। तुम्हारी पत्नी का कैसा चेहरा है? क्या तुमने अभी हाल में ही उसे देखा है? हो सकता है, तुम उसका चेहरा पूरी तरह भूल गए हो। यदि तुम अपनी आंखें बंद करो और ध्यान में स्मरण करो तो तुम उस चेहरे को चांद कर सकते हो, जब. तुमने उसे पहली बार देखा था। लेकिन तुम्हारी पत्नी अब बातचीत की एक बाढ़ वाली नदी की तरह निरंतर बदल रही है। उसका चेहरा बदल गया है। अब वह पुरानी हो गई है। नदी बहती और निरंतर बहती ही रही है, नए-नए मोडों पर पहुंची है वह। अब शरीर बदल गया है। क्या तुमने अभी हाल ही में उसे देखा है? वह इतनी अधिक परिचित है कि उसे देखने की कोई जरूरत ही नहीं होती है। हम किसी ऐसी चीज को देखते हैं जो अपरिचित हो। हम किसी ऐसी चीज की ओर देखते हैं जो अनजबी हों और ख्यालों में बस जाए। घनिष्टता जन्म देती है अवहेलना और अनादर को, वह जन्म देती है ऊब को।

मैंने एक चुटकुला सुना है। दो बहुत धनी व्यापारी मियामी के समुद्र तट पर विश्राम करते हुए लेटे हुए धूप खान कर रहे थे। एक ने कहा-‘ ‘ मैं यह कभी समझ ही नहीं सका कि फिल्म एक्ट्रेस एलिजाबेथ टेलर में लोग ऐसा क्या देखते हैं? मैं यह समझ ही नहीं पाता कि लोग क्या देखकर उसके-पीछे इतने पागल बन जाते हैं। आखिर उसके पास है क्या? तुम उसकी आंखें निकाल दो, तुम उसके बाल अलग कर दो, तुम उसके होंठ और उसकी आकृति उससे अलग कर दो, फिर बचेगा क्या? तुम उससे क्या पा सकते हो? ‘ ‘

दूसरा आदमी यह सुनकर उदास हो गया, फिर उसने खर खराती आवाज में जवाब दिया-‘ ‘ जो कुछ बच रहेगा, वह मेरी पत्नी है। ‘ ‘

वह जौ कुछ रह गया है, वही तुम्हारी पत्नी है। वही तुम्हारा पति है। कुछ भी नहीं बचा है। क्योंकि घनिष्ठता से हर चीज खो गई है। तुम्हारा पति अब एक भूत है, तुम्हारी पत्नी अब एक चुड़ैल है, जिसकी कोई आकृति नहीं, न कोई होंठ, न आंखें, बस एक बदसूरत बनकर रह गई है वह। हमेशा से ऐसा नहीं था। एक बार

तुम्हीं उसके प्रेम में दीवाने हुए थे, लेकिन अब वहां वह -स्त्री एक अर्से से नहीं है और अब तुम उसकी ओर देखते तक नहीं।

वास्तव में पति और पत्नी एक दूसरे की ओर देखने तक से बचते हैं, दूर रहते हैं। मैं कई परिवारों के साथ रुका हूं और पतियों तथा पत्नियों को एक दूसरे से बचते या दूर रहते हुए देखा है। एक दूसरे से बचने के लिए उन लोगों ने कई तरह के खेल उत्पन्न किए हैं। जब उन्हें अकेला छोड़ दिया जाता है, तब वे हमेशा बहुत बेचैन रहते हैं। एक मेहमान का वे हमेशा स्वागत करते हैं क्योंकि दोनों एक दूसरे को देखने से बचकर मेहमान को देखते हैं।

लेकिन यह सद्गुरु जोशु तो पूरी तरह अलग दिखाई देता है, जो एक अनजबी और निकट परिचित मित्र से एक जैसा ही व्यवहार कर रहा है। वह भिक्षु कह रहा है- ' श्रीमान! मैं तो हमेशा ही यहां रहता हूं। आप मुझे भली- भांति .जानते हैं। और जोश कहता है-' ' तब आप भी एक प्याला चाय पीजिए मेरे बाथ। ' ' मठ का मैनेजर इसे समझ न सका। मैनेजर हमेशा मूर्ख होते हैं। प्रबंध करने के लिए मूर्ख मन की ही जरूरत होती है। ' '

एक मैनेजर या प्रबंध करने वाला कभी ध्यान में गहरे नहीं उतर सकता। यह बहुत कठिन है? उसे हिसाबी-किताबी, नाप-तौल वाला व्यक्ति बनना होता है, उसे संसार को भी देखना होता है और उसी के अनुसार चीजों की व्यवस्था करनी होती है।

इसलिए वह मैनेजर परेशान हो गया, आखिर यह सब है क्या? यह क्या हो रहा है? यह अतर्क पूर्ण लग रहा है। एक अजनबी को तो एक चाय के प्याले के लिए पूछना ठीक भी है, लेकिन इस शिष्य को जो हमेशा यहीं रहता है, क्या चाय के लिए पूछना उचित था?

इसलिए उसने सद्गुरु से पूछा-' ' आप अलग- अलग लोगों को उनके भिन्न- भिन्न प्रश्नों का एक ही तरह से क्यों उत्तर देते हैं? ' '

जोश ने जोर से चीखते हुए कहा-' ' मैनेजर! क्या तुम यहां हो? ' '

मैनेजर ने उत्तर दिया, ' ' जी हां श्रीमान! मैं यहीं हूं। ' '

और जोर कहता है-' ' तब आप भी मेरे साथ एक प्याला चाय पीजिए। ' '

यह जोश से पूछना, " मैनेजर! क्या तुम यहां हो? ' ' यह उसकी चेतना और उसकी उपस्थिति को पुकारना था। चेतना हमेशा नूतन होती है, वह हमेशा अनजान और अनजबी होती है। घनिष्टता शरीर के साथ हो जाती है। वह परिचित बन जाता है, लेकिन आत्मा नहीं, कभी नहीं। तुम अपनी पत्नी के शरीर को जानते हो, लेकिन उसमें छिपे अनजान व्यक्ति को कभी नहीं जानोगे। वह ज्ञात नहीं हो सकता। तुम प्रेम कर सकते हो, यह एक रहस्य है, पर तुम उसे समझ नहीं सकते।

जब जोशू ने जोर से पुकारा-' ' मैनेजर! क्या तुम यहां हो? अचानक मैनेजर सचेत हो गया, वह भूल ही गया, कि वह मठ का मैनेजर है, वह भूल ही गया कि वह शरीर है। प्रत्युत्तर उसके हृदय से आया।

उसने कहा-' ' जी हां श्रीमान! ' '

यह जोर से चीखते हुए पूछना इतना आकस्मिक था, वह ठीक एक चोट करने जैसा था कि तुम्हारा प्रश्न पूछना ही असंगत था। इसी वजह से उसने कहा, ' ' वास्तव में मैं यहीं हूं श्रीमान! " उसने पूछने की जरूरत नहीं थी। उसका प्रश्न ही असंगत था। अचानक उसका अतीत, उसका पुराना मन मिट गया। अब मैनेजर वहां रहा ही नहीं। बस एक चेतना रह गई। प्रत्युत्तर उसी से आया। चेतना हमेशा नवीन होती है। वह हमेशा जन्मती है। वह कभी पुरानी नहीं होती।

और जोड़ कहता है-' ' तब आप भी मेरे साथ एक प्याला चाय पीजिए। ' ' जोश के लिए जो पहली चीज महसूस करने जैसी है, वह है, ' प्रत्येक चीज नूतन, अजनबी और रहस्यमय है। चाहे वह ज्ञात हो या अज्ञात, परिचित हो या अपरिचित, उसे किसी से कोई फर्क नहीं पड़ता। यदि तुम प्रत्येक दिन उसी उद्यान में आते हो तो

धीमे-धीमे तुम वृक्षों की ओर देखना बंद कर देते हो। तुम सोचते हो कि तुमने उन्हें पहले ही देख लिया है और तुम उन्हें जानते हो।

धीरे- धीरे तुम चिड़ियों के चहचहाने को भी सुनना बंद कर देते हो। वे गीत गा रही होंगी, लेकिन तुम उन्हें सुनोगे नहीं। तुम उनसे परिचित हो जाते हो। तुम्हारी आंखें बंद हो जाती हैं। तुम्हारे कान बंद हो जाते हैं लेकिन यदि जोश इस उद्यान में आता है और यह संभव है कि वह हर रोज यहां आता रहा हो, जन्म-जन्म से आता रहा हो- वह पक्षियों के गीत सुनेगा, वह वृक्षों को झूमते हुए देखेगा। प्रत्येक चीज प्रत्येक क्षण उसके लिए नया है।

यही है वह जिसका अर्थ चेतना होता है। चेतना के लिए हर चीज निरंतर नूतन होती है। कोई भी चीज पुरानी नहीं होती। पुरानी हो भी नहीं सकती, क्योंकि प्रत्येक वस्तु प्रत्येक क्षण उत्पन्न हो रही है। यह सृजनात्मकता का निरंतर प्रवाह है। चेतना कभी भी स्मृति का बोझ नहीं ढोती।

इसलिए पहली चीज है एक ध्यानी चित्त सदैव नूतनता और ताजगी में जीता है। यह पूरा अस्तित्व नया-नया जन्मा है-यह उतना ही ताजा है जितनी कि ओस की एक बूंद, यह उतना ही ताजा है जितनी कि पत्ते की एक कोरल, जो बंसत ऋतु में अभी- अभी जन्मी है। यह ठीक नए जन्मे बच्चे की आंखों जैसा है, हर चीज ताजी स्पष्ट और साफ है। उस पर कहीं कोई धूल नहीं। यह है पहली चीज, जो अनुभव करनी है। यदि तुम इस संसार की ओर देखते हुए यह अनुभव करते हो कि हर चीज पुरानी है तो यह दिखाता है कि तुम ध्यानी नहीं हो। वास्तव में जब तुम हर चीज में पुरानेपन का अनुभव करते हो तो यह तुम्हारे पुराने और सड़े मन को प्रदर्शित करता है। यदि तुम्हारा चित ताजा है तो पूरा संसार .ताजगी से भरा है। प्रश्न इस संसार का नहीं है, प्रश्न दर्पण का है। यदि तुम्हारे दर्पण पर धूल जमी है तो यह संसार पुराना है और यदि दर्पण पर कोई धूल नहीं है तो यह संसार पुराना कैसे हो सकता है यदि चीजें पुरानी हो गईं तो तुम बोरियत में जीओगे। प्रत्येक व्यक्ति यहां बोरियत में जिए जा रहा है और प्रत्येक व्यक्ति मृत्यु से भी ऊब चुका है।

जरा लोगों के चेहरे देखो, वे जीवन को बोझ की तरह ढोए जा रहे हैं, जैसे उसका कोई अर्थ ही न हो, एकदम बोर। ऐसा प्रतीत होता है जैसे हर चीज उनके लिए एक दुःस्वप्न हो, एक कूर मजाक हो, कोई उनके साथ -उन्हें कोंचने और दुख देने के लिए जैसे कोई गंदा-खेल रहा हो। जीवन एक उत्सव नहीं है, वह हो भी नहीं सकता। जो मन स्मृतियों से बोझिल हो, उसके लिए जीवन एक उत्सव हो ही नहीं सकता। यदि तुम हंसते हो तो तुम्हारी हंसी में भी बोरियत होती है। देखा लोग हंस रहे हैं, लेकिन वे प्रयास करते हुए हंस रहे हैं। उनकी हंसी मात्र औपचारिक है, उनकी हंसी बस शिष्टाचार वश

मैंने एक पदाधिकारी के बारे में सुना है जो अमेरिका में आदिवासियों के एक बहुत पुराने आदिम समुदाय का निरीक्षण करने के लिए गए। उन्होंने वहां एक लंबा भाषण दिया। उन्होंने एक बहुत लंबी कहानी सुनाई, वह कथा लगभग आधे घंटे तक चलती रही, तब अनुवादक उठकर खड़ा हो गया और उसने केवल चार शब्द कहे और सभी आदिवासी खिलखलाकर हंस पड़े। वह पदाधिकारी उलझन में पड़ गए। जिस वृत्तांत को सुनाने में उन्हें आधा घंटा लग गया था। उसका अनुवाद चार शब्दों में कैसे हो सकता है? यह तो असंभव है और लोग समझ गए हैं। वे हंस भी रहे हैं। जी खोलकर ठहाके लगा रहे हैं। परेशान होकर उन्होंने अनुवादक से पूछा- ‘ ‘ तुमने तो चमत्कार कर दिया। तुमने केवल चार शब्द कहे। मैं तो नहीं जानता कि तुमने उनसे क्या कहा, लेकिन तुम मेरे द्वारा सुनाई इतनी लंबी कहानी का अनुवाद चांद शब्दों में कैसे कर सकते हो? ‘ ‘

उस अनुवादकने कहा-‘ ‘ मैंने उनसे कहा, कहानी बहुत लंबी है और वह एक मजाक है। तुम लोग जी खोलकर हंसो। ‘ ‘

किस तरह की हंसी बाहर आएगी? ठीक औपचारिक शिष्टचार की। और यह आदमी आधे घंटे तक श्रम करता रहा। जरा लोगों की खोखली हंसी देखो। वह एक मानसिक प्रयास कर रहे हैं। उनकी हंसी झूठी है, रंग-रोगन की हुई है, वह केवल होंठों पर है, वह चेहरे का एक व्यायाम- भर है। वह उनके अस्तित्व के गहरे स्त्रोत से

नहीं आ रही है, वह उनके पेट से नहीं निकल रही है, वह एक पैदा की हुई चीज है। यह स्पष्ट है कि हम बोर हो रहे हैं और जो कुछ कृत्य हम करते हैं, वह इस बोरियत से ही उत्पन्न होगा और हममें और अधिक ऊब उत्पन्न करेगा। तुम उत्सव नहीं मना सकते। उत्सव मनाना केवल तभी संभव है, जब अस्तित्व में निरंतर एक नूतनता का अनुभव हो और अस्तित्व तो चिर युवा है ही। जब कुछ भी बुढ़ापा नहीं, जब वास्तव में कुछ नहीं मरता, क्योंकि प्रत्येक वस्तु का निश्चित रूप से पुनर्जन्म हो रहा है, तब वह एक नृत्य बन जाता है। तब वह अंदर बहता हुआ एक संगीत होता है, चाहे तुम कोई वाद्य बजाओ या ना बजाओ, यह जरूरी नहीं है, लेकिन संगीत बहता रहता है।

मैंने एक कहानी सुनी है। यह वाकया अजमेर का है.. .तुमने एक सूफी रहस्यदर्शी ख्वाजा मुईनउद्दीन चिश्ती के बारे में जरूर सुना होगा। जिनकी दरगाह और जिनकी समाधि अजमेर में है। अभी तक जितने महान रहस्यदर्शी जन्मे हैं, उनमें से चिश्ती भी एक महान रहस्यदर्शी थे। एक संगीतकार होना, इस्लाम के विरुद्ध है क्योंकि संगीत का निषेध किया गया है। वे सितार तथा अन्य वाद्य बजाया करते थे। वे एक महान संगीतकार थे और संगीत का आनंद लेते थे। एक मुसलमान के लिए जरूरी है कि वह पांच वक्त नमाज पढ़े, लेकिन वह बस सितार बजाया करते थे। यही उनकी नमाज और प्रार्थना थी। वह बिल्कूल अधार्मिक कृत्य था पर कोई भी उनसे कुछ कह भी नहीं पाता था।

कई बार यह कहने के लिए लोग उनके पास आए भी, पर उनके आते ही वे गाना शुरू कर देते और गीत इतना मधुर और सुंदर होता कि वे यह भूल जाते कि वे क्यों आए थे। वे सितार बजाना शुरू कर देते और वह संगीत इतना प्रार्थना पूर्ण होता कि इस्लाम के तालिबे इल्म और मौलवी भी जो उसका एतराज करने के लिए आए होते, एतराज कर ही न पाते। अपने घर जाकर ही उन्हें याद आता कि वे वहां किसलिए आए थे। चिश्ती की ख्याति विश्व- भर में फैल गई। विश्व के प्रत्येक भाग सें लोगों ने आना शुरू कर दिया। एक व्यक्ति जिलानी जो स्वयं एक महान रहस्यदर्शी थे, बगदाद से सिर्फ चिश्ती से मिलने के लिए ही आए। जब चिश्ती ने यह सुना कि जिलानी मिलने के लिए आए हैं तो उन्होंने अनुभव किया कि जिलानी के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए किसी वाद्य को बजाना उचित न होगा क्योंकि वे बहुत कट्टर मुसलमान हैं और ऐसा कर वे उनका अच्छा स्वागत न कर सकेंगे। इससे उनकी भावनाओं पर चोट लगेगी इसलिए अपने पूरे जीवन में उसी दिन उन्होंने तय किया कि वे उस दिन न तो कोई वाद्य बजाएंगे और न कोई गीत गाएंगे। वे सुबह ही से उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। दोपहर बाद हजरत जिलानी तशरीफ लाए। चिश्ती ने अपने वाद्य पहले ही छिपा दिए थे।

जब जिलानी आए तो वे दोनों मौन में बैठ गए और तभी वाद्यों से संगीत स्वयं बजने लगा। पूरा कक्ष संगीत लहरियों से गूंज उठा। चिश्ती बहुत उलझन में पड़ गए कि क्या किया जाए? उन्होंने तो वाद्य पहले ही छिपा दिए थे और ऐसा संगीत तो उन्होंने पहले कभी सुना भी नहीं था।

जिलानी हंस पड़े। उन्होंने कहा-‘ ‘ कायदे-कानून आपके लिए नहीं है। आपको उन्हें छिपाने की कोई जरूरत थी ही नहीं। आप अपनी रूह को कैसे छिपा सकते हैं? आपके हाथ भले ही उन वाद्यों को न बजा रहे हो, आप भले ही अपने गले से न गा रहे हों, लेकिन आपका पूरा अस्तित्व संगीतमय है और यह पूरा कक्ष संगीत की स्वर लहरियों से इतना अधिक संगीतमय हो गया है कि अब यह पूरे कक्ष से वही संगीत प्रतिध्वनित हो रहा है। ‘ ‘

जब तुम्हारा चित्त ताजगी से भरा होता है तो पूरा अस्तित्व एक रागिनी बन जाता है। जब तुम नए-नए जन्मे बच्चे जैसे नए होते हो तो तुम्हें हर कहीं नूतनता दिखाई देती है और पूरा अस्तित्व प्रत्युत्तर देता है। जब तुम युवा होते हो, स्मृतियों के भार से दबे हुए नहीं होते, हर चीज युवा, ताजी और अजनबी लगती है।

यह जोड़ बहुत अद्‌भुत है, यह बहुत गहराई से महसूस करना है, तभी तुम उसे समझने में समर्थ हो सकोगे। लेकिन वह समझ, समझ से अधिक अनुभव -जैसी ही होगी-मानसिक न होकर वह हृदय से होगी।

इस कहानी में बहुत से अन्य आयाम भी छिपे हुए हैं। दूसरा आयाम यह है कि तुम बुद्धत्व को प्राप्त एक ऐसे व्यक्ति के पास आए हो, जिससे तुम कुछ भी कहो उसे कोई फर्क नहीं पड़ता, उसका उत्तर एक जैसा ही होगा। तुम्हारे प्रश्न और तुम्हारे उत्तर अर्थपूर्ण नहीं है और न संगत है, उसका उत्तर एक ही होगा।

उन तीनों को जोश ने एक ही तरीके से उत्तर दिया, क्योंकि बुद्धत्व को उपलब्ध व्यक्ति वहीं-का-वहीं रहता है। कोई भी स्थिति उसे बदलती नहीं। स्थिति का इससे कोई संबंध नहीं। स्थिति के द्वारा तुम बदल जाते हो, तुम पूरी तरह बदल जाते हो, स्थिति तुम्हें अपने नियंत्रण में ले लेती है। एक ऐसे व्यक्ति से मिलने पर जो अजनबी है, तुम अलग से व्यवहार करते हो। तुम अधिक तनाव पूर्ण होते हो, स्थिति को जांचने की कोशिश करते हो? किस तरह का आदमी है यह? क्या यह खतरनाक है अथवा खतरनाक नहीं है? क्या आगे जाकर यह मित्र सिद्ध होगा अथवा शत्रु? तुम उसे भय से देखते हो। यही वजह है कि अनजबी लोगों के साथ तुम बेचैनी का अनुभव करते हो।

यदि तुम एक रेलगाड़ी में यात्रा कर रहे हो तो पहली चीज तुम देखोगे कि सभी यात्री एक दूसरे से पूछते हैं, वे क्या करते हैं, उनका क्या धर्म है? और वे कहां जा रहे हैं, इन प्रश्नों को पूछने की जरूरत क्या है? यह प्रश्न इसलिए अर्थपूर्ण है क्योंकि वे तभी चैन की सांस ले पाते हैं। यदि तुम हिंदू हो और वे भी हिंदू है, तब वे आराम से सफर कर सकते हैं। यह आदमी अधिक अजनबी नहीं है। लेकिन यदि तुम कहते हो। मैं मुसलमान हूं तो हिंदू तनाव से भर जाता है। तब वहां कुछ खतरा है, कोई अजनबी है वहां। वह तुम्हारे और अपने बीच में थोड़ी-सी जगह छोड़ देगा। वह चैन से नहीं बैठ सकता और न आराम कर सकता है अथवा वह अपनी सीट भी बदल सकता है लेकिन एक मुसलमान और भी अधिक धार्मिक है। यदि तुम कहते हो कि मैं एक नास्तिक हूं। मैं धार्मिक हूं ही नहीं और न मेरा कोई धर्म है, तब तुम और भी अधिक- अजनबी बन जाते हो। एक नास्तिक तब वह अनुभव करेगा कि तुम्हारे साथ बैठना भी उसे नापाक कर देगा। तुम उसके लिए एक बीमारी की तरह हो, वह तुमसे बचकर दूर रहेगा। लोग प्रश्न पूछना इसलिए शुरू नहीं करते, क्योंकि वे तुम्हारे बारे में उत्सुक हैं। नहीं, वे बस स्थिति को आंकना चाहते हैं कि वे अपने परिचित वातावरण में यात्रा कर सकेंगे अथवा वहां कोई अजनबी चीज होगी। वे अपनी सुरक्षा के लिए चिंतित हैं और यह उनकी जाँच-पडताल अपनी सुरक्षा को लेकर है।

तुम्हारा चेहरा निरंतर बदलता रहता है। यदि तुम एक अजनबी को देखते हो तो तुम्हारा चेहरा अलग होता है। यदि तुम एक मित्र को देखते हो, तुरंत ही तुम्हारा चेहरा बदल जाता है। यदि तुम्हारा नौकर वहां मौजूद है तो तुम्हारा भिन्न चेहरा होता है। यदि वहां तुम्हारा सद्गुरु है तो तुम्हारा कुछ दूसरा चेहरा होता है। तुम निरंतर अपने मुखौटे बदलते रहते हो क्योंकि तुम निर्भर होते हो स्थिति पर। तुम्हारे पास न कोई आत्मा है और न तुम्हारी चेतना एकीकृत है, तुम्हारे आस-पास की चीजें ही तुम्हें बदल देती हैं। जोश जैसे सद्गुरु के साथ यह स्थिति नहीं है। जोशू के साथ तो स्थिति बिलकुल भिन्न है। वह अपने आस-पास के वातावरण से नहीं बदलता, वह वातावरण ही बदल देता है, उसके आस-पास क्या कुछ हो रहा है, वह अप्रासंगिक है। उसका चेहरा ज्यों- का-त्यों रहता है। उसे मुखौटे बदलने की जरूरत ही नहीं।

ऐसा कहा जाता है कि एक बार एक गवर्नर जोशू से भेंट करने आया। वास्तव में वह एक शक्ति सम्पन्न बड़ी राजनीतिक हस्ती थी। एक गवर्नर था। उसने एक कागज पर लिखा-‘ ‘ मैं आपके दर्शनों के लिए आया हूं। ‘ ‘ उसके नीचे अपना नाम और किस राज्य का गवर्नर है, उसका उल्लेख किया। वह जाने- अनजाने अवश्य ही जोशू को प्रभावित करना चाहता था।

जोश ने कागज की उस चिट को देखा और उसे फेंकते हुए उस आदमी से कहा, जो यह संदेश लेकर आया था-” इन सज्जन से कहो कि मैं उन्हें देखना तक नहीं चाहता।उन्हें बाहर निकाल दो। ”

उस आदमी ने लौटकर कहा-‘ ‘ उन्होंने आपके कागज की चिट फेंक दी और कहा है, मैंने इन सज्जन को देखना तक नहीं चाहता। उन्हें बाहर निकाल दो। ‘ ‘

गवर्नर समझ गया। उसने फिर एक कागज पर केवल अपना नाम लिखते हुए एक वाक्य लिखा, " मैं आपके दर्शन करना चाहता हूं। ' '

जब जोश के पास वह कागज पहुंचा तो उसने कहा-' ' अच्छा! तो यह है वह सज्जन। उन्हें भेज दो। ' '

गवर्नर अंदर आया और उसने पूछा, ' ' आपने ऐसा अजीब और अप्रत्याशित व्यवहार क्यों किया और कहा, मुझे बाहर निकाल दिया जाए। ' '

जोशु ने कहा-' ' मुखौटे लगे चेहरों को अंदर आने की इजाजत नहीं है। ' ' गवर्नर एक चेहरा है, एक मुखौटा है। मैं तुम्हें भली- भांति पहचाता हूं और यदि तुम अपने मुखौटे के साथ आए हो तो तुम्हें आने की इजाजत नहीं है। अब ठीक है। मैं तुम्हें भली- भांति जानता हूं लेकिन मैं किसी गवर्नर को नहीं जानता। अब आगे से जब तुम आया करो तो अपने गवर्नर को पीछे अपने घर छोड्कर आया करो। उसे साथ लाने की जरूरत नहीं। ' '

हम लगभग अपने चेहरों का प्रयोग करते है और तुरंत हम बदल जाते हैं। यदि हम बदली हुई परिस्थिति देखते हैं तो तुरंत बदल जाते हैं, जैसे हमारे पास कोई स्थायी और निश्चित एकीकृत आत्मा है ही नहीं।

जोशू के लिए हर चीज, हर व्यक्ति एक जैसा है-वह अजनबी हो, मित्र हो, शिष्य हो या इसका अपना मैनेजर हो। उसका उत्तर एक ही है-' ' मेरे साथ एक प्याला चाय पीजिए। ' ' वह अंदर से वही-का-वही रहता है। मेरे साथ एक प्याला चाय पीजिए ही क्यों? झेन सद्गुरुओं के लिए यह एक बहुत प्रतीकात्मक चीज है।

चाय की खोज झेन सदगुरु द्वारा की गई और उनके लिए चाय कोई साधारण चीज नहीं है। प्रत्येक झेन मठ में एक चाय घर होता है। वह बहुत विशिष्ट एक मंदिर की भांति होता है। तुम इसे अभी समझने में समर्थ न हो सकोगे.. .कि झेन सद्गुरु अथवा झेन मठ के लिए चाय कितनी अधिक धार्मिक चीज है। चाय ठीक एक प्रार्थना के समान है। वह उनके द्वारा ही खोजी गई है।

भारत में यदि तुम किसी संन्यासी को चाय पीते हुए देखते हो तो तुम्हें लगेगा कि वह एक भला आदमी नहीं है। गांधीजी अपने आश्रम में किसी को भी चाय पीने की इजाजत नहीं देते थे। चाय पीने की मनाही थी, वह एक पाप करने जैसा था और किसी को भी चाय पीने की इजाजत नहीं थी। यदि गांधीजी ने इस कहानी को पढ़ा होता तो उन्हें चोट लगती, एक बुद्धत्व को उपलब्ध जोश जैसा व्यक्ति लोगों को चाय के लिए आमंत्रित कर रहा है?

लेकिन चाय के प्रति झेन का पृथक दृष्टिकोण है। चाय का नाम पहली बार एक चीनी झेन मठ से आया, ' ' ता! ' ' वहीं पहली बार उन्होंने चाय की खोज की और यह पाया कि चाय ध्यान में सहायता करती है क्योंकि वह तुम्हें अधिक सजग बनाती है और निश्चित रूप' से सचेत करती है। यही वजह है कि जब तुम चाय ले लेते हो तो तुम्हें तुरंत नींद में जाना कठिन हो जाता है। उन्होंने पाया कि चाय होश साधने और सजगता में सहायक है। इसलिए झेन मठों में चाय, ध्यान का ही एक भाग है।

जोशू चैतन्यता से अधिक और किस चीज का आमंत्रण दे सकता है? इसलिए जब वह कहता है-मेरे साथ एक प्याला चाय पीजिए तो वह कह रहा है-एक प्याला होश पीजिए। चाय उनके लिए बहुत प्रतीकात्मक है। वह कह रहा है-मेरे साथ -बैठकर एक प्याला होश से और भर जाइए। उसका आमंत्रण परिचित, अपरिचित मित्र, अनजबी और यही तक कि मठ के मैनेजर के लिए भी है, जो वहां हमेशा रहता हुआ मठ का सारा प्रबंध संभालता है।

एक प्याला चाय पीजिए। यही सब कुछ एक बुद्ध किसी को दे सकता है और इससे अधिक मूल्यवान और कुछ भी नहीं है।

इनेन मठों में उनका एक अलग चाय कक्ष होता है। वह सबसे अधिक पवित्र स्थान ठीक एक मंदिर की भांति होता है। तुम जूते पहने हुए उसमें प्रवेश नहीं कर सकते क्योंकि वह पवित्र सजगता का मंदिर है? तुम बिना स्नान किए हुए उसमें प्रविष्ट नहीं हो सकते, क्योंकि वह चाय कक्ष है, जबकि चाय का अर्थ है-होश उसके

सभी संस्कार प्रार्थना की भांति हैं। जब लोग चायघर में प्रविष्ट होते हैं तो स्नान करने के बाद धुले स्वच्छ वस्त्र पहनते हैं, जूते चाय कक्ष के बाहर उतारते हैं और निरंतर मौन रहते हैं। कक्ष में प्रवेश .करते ही कोई भी बात करना वर्जित है और वे फर्श पर ध्यान की मुद्रा में मौन बैठ जाते हैं। तब मेजबान चाय तैयार करता है। प्रत्येक निरंतर मौन ही बैठा -रहता है। चाय खौलना शुरू हो जाती है और प्रत्येक केतली में चाय के खौलने की सूक्ष्म ध्वनि को सजगता से सुनता है। प्रत्येक वह ध्वनि सुनने हुए ही जैसे चाय पीना शुरू कर देता है? यद्यपि चाय अभी तैयार नहीं हुई है।

यदि तुम किसी झेन भिक्षु से पूछो तो यह कहेगा कि चाय कोई ऐसी चीज नहीं है। जिसे तुम किसी अन्य पेय की भांति उडेलो और बेहोशी से पी जाओ। यह एक पीने की चीज नहीं। यह एक ध्यान और प्रार्थना है इसलिए वे केतली में उबलती चाय का मधुर संगीत सुनते हैं और उसे सुनते हुए ही वे अधिक सजग और मौन हो जाते हैं। तब उनके सामने प्याले रखे जाते हैं जिन्हें वे बहुत सम्मान से स्पर्श करते हैं। ये प्याले सामान्य नहीं होते, प्रत्येक मठ प्यालों को स्वयं बनाता है और यदि वे बाजार से भी खरीदे जाएं तो पहले वे उन्हें तोड़ते हैं और फिर उन्हें क्यू से जोड़ते हैं जिससे वे विशिष्ट हो जाएं, जिससे तुम ठीक उन जैसे ही कहीं और न खोज सको।

तब प्रत्येक व्यक्ति प्याले को स्पर्श करता हुआ उसे महसूस करता है। प्याले का अर्थ है शरीर, यदि चाय का अर्थ है सजगता और यदि तुम्हें सजग होना है तो जड़ों से ही, जो शरीर है, सजग होना होगा। उसे स्पर्श करते हुए वे सजग हैं ध्यान ही कर रहे हैं। तब चाय डाली जाती है और उसकी सोंधी सुवास चारों ओर फैल जाती है। यह एक लंबा समय लेती है। एक घंटा, दो घंटा-इसलिए यह केवल एक मिनट का काम नहीं कि तुमने चाय पी, प्याला फेंका और चल दिए। यह एक धीमी और लंबी प्रक्रिया है, जिससे हर कदम स्वाद और उससे उत्पन्न उष्णता प्रत्येक को होशपूर्ण और सजग रहते हुए अनुभव करनी होती है।

यही वजह है कि एक सद्गुरु स्वयं शिष्यों को चाय देता है। एक सद्गुरु जब स्वयं प्याले में चाय उड़ेल रहा हो, तब तुम अधिक सजग और होशपूर्ण होगे, जब कि नौकर द्वारा प्याले में उडेली चाय को तुम सामान्य रूप से भूल सकते हो। जब जोश जैसा सद्गुरु तुम्हारे प्याले में चाय उड़ेल रहा हो-यदि मैं आकर तुम्हारे प्याले में चाय हा! तो तुम्हारा मन तुरंत विसर्जित हो जाएगा, तुम शांत और मौन हो जाओगे। कोई चीज विशिष्ट पवित्रतम घट रही होती है और चाय पीना एक ध्यान बन जाता है। जोश कहता है-मेरे साथ एक प्याला चाय पीजिए। चाय तो एक बहाना है। जोश तुम्हें अधिक सजगता देगा और सजगता आती है संदेनशीलता से। तुम जो कुछ भी करो। तुम्हें अधिक संवेदनशील होना होगा, जिससे कि चाय जैसी साधारण चीज भी.....

क्या तुम चाय से भी कम महत्व की कोई चीज खोज सकते हो? क्या तुम चाय से भी अधिक साधारण और तुच्छ कोई चीज खोज सकते हो? नहीं, तुम नहीं खोज सकते ओर झेन सद्गुरुओं और बौद्ध भिक्षुओं ने अति साधारण और सामान्य कृत्य को भी असाधारण के शिखर तक पहुंचा दिया है। उन्होंने यह और वह के मध्य एक पुल निर्मित कर दिया है, जैसे चाय और परमात्मा एक हो गए हों। जब तक चाय ही दिव्य न जो जाए तुम दिव्य न हो सकोगे, क्योंकि जो सबसे कम है, उसे ही उठाकर सबसे अधिक करना है, जो अति साधारण है, उसे उठाकर असाधारण बनाना है और पृथ्वी को ही स्वर्ग बनाना है। दो के मध्य एक सेतु निर्मित करना है जिससे उनमें कोई अंतर न रह जाए।

यदि तुम किसी झेन मठ में जाओ और वहां एक सद्गुरु को चाय पीते हुए देखो तो एक भारतीय मन परेशानी में पड़ जाएगा। यह किस तरह का व्यक्ति है, जो चाय पी रहा है? क्या तुम बोधि वृक्ष के नीचे बैठे चाय पीते हुए किसी बुद्ध की कल्पना कर सकते हो? तुम ऐसा सोच भी नहीं सकते, ऐसा सोचने की तुम कल्पना भी नहीं कर सकते। भारतीय मन सदा से अद्वैतता की बात करता रहा .है, लेकिन सबसे अधिक द्वैतता उसने ही उत्पन्न की है। तुम अद्वैत, एवं और एक की बाबत सुनते रहे हो पर तुमने जो कुछ भी किया है उससे द्वैत ही निर्मित हुआ है। तुमने दो के मध्य इतनी अधिक दूरी र्निमित कर दी है कि उसे कोई पुल बनाकर पाटना संभव ही नहीं दिखाई देता। यह सब कुछ शंकराचार्य द्वारा संसार को माया या एक भ्रम बताने के कारण हुआ है। तुमने

इस और उस संसार के बीच इतनी अधिक दूरी निर्मित कर -ली है कि उनके मध्य कोई सेतु बनाया ही नहीं जा, सकता इसलिए किया क्या जाए?

शंकराचार्य ने कहा है-' ' यह संसार एक भ्रम है, माया है, तुम्हें पुल बनाने की जरूरत ही नहीं। यह संसार है ही नहीं। बस यही वह तरीका है जिससे एक पर आ सकते हो तुम, तुम्हें दूसरे को दूसरे से पूरी तरह इनकार करना होगा, लेकिन इनकार करने से कोई सहायता न मिलेगी, भले ही तुम कहो कि संसार एक भ्रम है, लेकिन वहां वह होगा ही। ' ' फिर समस्या क्या है? क्यों शंकराचार्य जीवन- भर 'लोगों को यह सिखाते रहे कि संसार एक भ्रम है, एक छलावा है? यदि वह एक भ्रम है तो किसी को चिंता करने की फिर जरूरत क्या? यदि शंकराचार्य ने उसे एक भ्रम होना जान लिया, तब उसके बारे में उन्हें परेशान होने की जरूरत क्या थी? इससे लगता है कि वहां कोई समस्या है। कोई सेतु नहीं बनाया जा सकता, इसलिए सिर्फ एक ही तरीका रह जाता है कि अपनी चेतना से कहा जाए कि वह है ही नहीं और उसे गिरा दिया जाए जिससे एक ही रह जाए। हमारे पास एक तक जाने एक ही रास्ता है कि दूसरे से इनकार कर दिया जाए।

झेन के पास सेतु बनाने का दूसरा तरीका है और मेरा ख्याल है कि वह अधिक सुंदर है। इसमें दूसरे से इनकार करने की कोई जरूरत नहीं और तुम इनकार कर भी नहीं सकते, यहां तक कि इनकार में भी तुम दावा करते रहोगे। यदि तुम कहते हो कि इस संसार का कोई अस्तित्व है ही नहीं, तुम्हें इस संसार की ओर इशारा करते हुए बताना होगा, जो कहीं है ही नहीं, फिर तुम इशारा किस ओर कर रहे हो, किसके बारे में यह तथ्य बता रहे हो? यदि वहां कुछ है ही नहीं, फिर तुम अपनी उंगली से इशारा किस और कर रहे हो? तब तुम एक बेवकूफ हो। इस संसार का अस्तित्व तो है ही और यदि तुम कहते कि वह एक भ्रम है तो केवल यह तुम्हारी व्याख्या है। यदि यह संसार एक भ्रम है तो वह भी सत्य या वास्तविक नहीं हो सकता। क्योंकि इससे वह को प्राप्त करना है। यदि यह संसार असत्य है तो तुम्हारा ब्रह्म भी सत्य नहीं हो सकता। यदि सृष्टि असत्य है तो सृष्ट भी सत्य कैसे हो सकता है? क्योंकि सृष्टिकर्ता से ही सृष्टि हुई है। यदि गंगा असत्य है या भ्रम है तो गंगोत्री भी कैसे सत्य या वास्तविक हो सकती है। यदि मैं एक भ्रम या झूठ हूं तो मेरे माता- पिता का भी झूठा होना एक बाध्यता है, क्योंकि स्वप्न से ही स्वप्न उत्पन्न होता है। यदि माता-पिता सत्य और वास्तविक है, तभी उनका बच्चा सत्य या वास्तविक होगा।

झेन कहता है- दोनों ही सत्य है, लेकिन दोनों दो नहीं हैं, उनके मध्य पुल बना दो इसलिए चाय पीना प्रार्थना बन जाता है। सबसे अधार्मिक चीज भी पवित्र बन जाती है। यह एक प्रतीक है और झेन कहता है, यदि तुम्हारा साधारण जीवन आसाधारण बन जाता है। केवल तभी तुम एक आध्यात्मिक हो, अन्यथा तुम अध्यात्मिक हो ही नहीं। साधारण में ही असाधारण को पाना है, परिचितों में ही अपरिचिति को, ज्ञात में अज्ञात को, पास में दूर को और यह में वह को पाना है। इसलिए जोश कहता है, आइए मेरे साथ एक प्याला चाय पीजिए।

इस कहानी का एक अन्य आयाम और भी है और वह आयाम है-स्वागत। प्रत्येक का स्वागत है। तुम कौन हो, इससे कोई संबंध नहीं, तुम्हारा स्वागत है। एक बुद्धत्व को प्राप्त सद्गुरु के द्वार पर, जोड़ या एक बुद्ध के द्वार पर प्रत्येक का स्वागत है। एक अर्थ में जो द्वार है, वह खुला है, आओ और एक प्याला चाय पीयो। आखिर इसका क्या अर्थ है? आओ और आकर एक प्याला चाय लो। जोड़ कह रहा है-. अंदर आओ और आकर विश्राम करो।

यदि तुम तथाकथित दूसरे सदगुरुओं, भिक्षुओं और संन्यासियों के पास जाओ तो तुम और अधिक तनाव से भर जाओगे? तुम भयभीत हो जाओगे और वे अपराध- भाव उत्पन्न करते हैं, वह तुम्हें निंदित दृष्टि से देखते हैं और वे इस तरह से तुम्हारी ओर देखते हैं, जैसे तुम एक पापी हो और वे कहना शुरू कर देंगे, यह गलत है, वह गलत है, इसे छोड़ो और उसे छोड़ो।

वास्तव मैं बोध को प्राप्त व्यक्ति का यह तरीका नहीं है, वह तो तुम्हें परम विश्राम का अनुभव कराएगा। एक चीनी कहावत है कि यदि तुम वास्तव मैं एक महान व्यक्ति के पास पहुंच जाते तो उसके सान्निध्य में तुम विश्राम का अनुभव करोगे और यदि तुम किसी नकली महान व्यक्ति के पास जाओ तो वह तुम्हारे अंदर तनाव उत्पन्न करेगा। वह जाने- अनजाने में यह प्रदर्शित करने का हर संभव प्रयास करेगा कि तुम उससे नीचे हो, एक पापी हो, एक अपराधी हो और वह तुमसे उच्च और सर्वश्रेष्ठ है। एक बुद्ध तुम्हारी सहायता करेगा विश्रामपूर्ण होने में, क्योंकि विश्राम में ही तुम एक बुद्ध हो सकते हो। वहां अन्य कोई उपाय है नहीं।

" आइए मेरे साथ एक प्याला चाय पीजिए। " जोश कह रहा है-' ' आइए मेरे साथ विश्रामपूर्ण हो जाइए। चाय तो प्रतीक है-विश्रामपूर्ण होने का। ' ' यदि तुम एक बुद्ध के साथ चाय पी रहे हो तो तुम्हें तुरंत यह अनुभव होगा कि तुम न तो तुम विदेशी हो और न अजनबी। एक बुद्ध तुम्हारे प्याले में चाय उड़ेल रहा है.. बुद्ध ही नीचे उतरकर तुम्हारे पास आ गया है। बुद्ध यहां तक आया है और वह अपने साथ वह लेकर आया है। ईसाई और यहूदी इसकी कल्पना तक नहीं कर सकते। मुसलमान इस बाबत सोच भी नहीं सकते। यदि तुम स्वर्ग का द्वार खटखटा तो क्या ऐसे परमात्मा की तुम कल्पना कर सकते हो तो जो बाहर आकर तुमसे कहे- ' ' आओ और मेरे साथ एक प्याला चाय पीओ। ' ' यह बात ही व्यर्थ या अधार्मिक दिखाई देती है। उनके अनुसार तो परमात्मा अपने सिंहासन पर बैठा हुआ अपनी हजारों आंखों से तुम्हारे अस्तित्व के प्रत्येक निर्जन स्थान और कोने-कोने को देख रहा होगा कि तुमने कहां और कब कितने पाप किए और वहां वह अंतिम दिन निर्णय भी देगा।

जोश कोई निर्णय नहीं सुनाएगा, वह तुम्हें जांचेगा भी नहीं, वह तो बस तुम्हें स्वीकार कर लेता है और कहता है-' ' आओ मेरे साथ विश्राम करो। ' ' विश्राम भी आवश्यक बात नहीं है। यदि तुम बुद्ध मनुष्य के -साथ विश्रामपूर्ण हो सकते हो तो उसका बुद्धत्व तुम्हारे अंदर उतरना शुरू हो जाएगा क्योंकि जब तुम विश्राम में होते हो तो तुम पोरस हो जाते हो, तुम्हारे शरीर के रोम-रोम खुलकर उसकी ऊर्जा पीने लगते देह- -जब तुम तनाव में होते हो तुम बंद होते हो। तुम्हारी विश्रामपूर्ण दशा में ही सद्गुरु तुम्हारे अंदर प्रवेश करता है। जब तुम विश्रामपूर्ण होते हुए बहुत आराम से चाय पी रहे होते हो, तब जोड़ कुछ कर रहा होता है। वह तुम्हारे मन में प्रवेश नहीं कर सकता, लेकिन वह तुम्हारे हृदय के द्वारा अंदर प्रवेश कर सकता है। तुमसे एक प्याला चाय के लिए पूछना, तुम्हें मित्र वत बनाते हुए वे विश्राममय बनाना है, तुम्हें अपने निकट से निकटतम लाना है। स्मरण रहे कि जब भी तुम किसी के साथ कुछ खा-पी रहे होते तो उसके साथ बहुत घनिष्ट हो जाते हो। भोजन और सेक्स केवल दो ही चीजें ऐसी हैं जो घनिष्ट संबंध जोड़ती हैं। सेक्स में तुम निकटतम और घनिष्ट हो जाते हो और साथ में भोजन करते हुए भी यह घनिष्टता बढ़ती है। सेक्स की अपेक्षा भोजन अधिक और आधारभूत से घनिष्टता बढ़ाता है क्योंकि जब बच्चा जन्म लेता है तो अपनी मां से वह जो पहली चीज पाता है, वह भोजन ही होगा। सेक्स तो बाद में आएगा, जब वह सेक्स करने के लिए परि एक बनेगा, चौदह या पंद्रह वर्ष बाद। इस संसार में जो पहली चीज तुम प्राप्त करते हो, वह भोजन है और वह भोजन भी एक पेय पदार्थ था। विश्व में पहली घनिष्टता मां और बच्चे के बीच होती है।

जोशू कह रहा है-' ' आओ, मेरे साथ एक प्याला चाय पियो। मुझे अपनी मां बनने दो। मुझसे लेकर तुम पीयो और एक सद्गुरु एक मां के समान है। मेरा जोर इसी पर है कि सद्गुरु एक मां है, पिता नहीं। "

ईसाई गलत हैं जो अपने पादरी को पिता या फादर कहकर पुकारते हैं क्योंकि पिता एक अस्वाभाविकचीज है, एकसामाजिकघटना मात्र है। सिवाय मनुष्य समाज के प्रकृति में पिता का कोई अस्तित्व है ही नहीं, वह एक पैदा की गई एक विकसित चीज है। माता स्वाभाविक है। बिना किसी सभ्यता, शिक्षा और समाज के भी उसका अस्तित्व है, वह वहां पूरी प्रकृति में है। वृक्षों में भी मातृत्व है। शायद तुमने न सुना हो कि न केवल मां तुम्हें जीवन देती है, लेकिन वृक्ष के पास भी एक मां का हृदय है। वे लोग इंग्लैंड में ऐसे प्रयोग कर रहे हैं। वहां एक विशेष प्रयोगशाला है। जहां वे पौधों के साथ प्रयोग कर रहे हैं और उन्होंने एक बएक हुत रहस्मय घटना की खोज की है। यदि एक बीज मिट्टी में दबाया जाए और उस बीज का मातृ वृक्ष पास न हो तो

उसे अंकुरित होने में काफी समय लगता है। यदि मातृवृक्ष काट दिया गया हो या नष्ट हो गया हो तो बीज को अंकुरित होने में एक लंबा समय लग जाता है। मां की उपस्थिति बीज के भी अंकुरित होने में सहायक है।

एक सद्गुरु मां है, वह पिता नहीं है। पिता के साथ तुम केवल बुद्धि के तल पर जुड़ते हो, जबकि मां के साथ संबंध समग्र अस्तित्व के होते हैं। तुम मां का एक भाग हो, तुम पूरी तरह उसी के हो। यह बात सद्गुरु के साथ भी होती है, लेकिन उल्टे कम में। तुम माँ से आए और अब तुम सद्गुरु के पास जाओगे। यह स्त्रोत को वापस लौटने जैसा है।

इसलिए झेन सद्गुरुहमेशा तुम्हें चाय पीने के लिए आमंत्रित करते हैं। वे प्रतीक रूप में कह रहे हैं आओ, मेरे पास आकर एक शिशु बन जाओ। मुझे तुम अपना दूसरा गर्भ बनने दो। मुझमें प्रवेश करो मैं तुम्हें पुनर्जन्म दूंगा।

साथ भोजन करने से घनिष्टता बढ़ती है और यह तुममें इतनी गहराई से जड़ें जमा चुकी हैं कि तुम्हारा पूरा जीवन उससे प्रभावित है। विश्व- भर के अलग- अलग समाजों और संस्कृतियों में सभी पुरुष स्त्रियों के वक्ष के संबंध में ही सोचे जा रहे हैं। चित्रों, मूर्तियों, फिल्मों और उपन्यासों में और जो कुछ भी हो, उनका केंद्र बिंदु स्त्री के स्तन ही बने रहते हैं। स्तनों के प्रति इतना आकर्षण क्यों? संसार के साथ बच्चे का पहला अंतरंग संबंध उसी के द्वारा जुड़ता है, उसी के द्वारा वह अस्तित्व के बारे में जानता है।

संसार में पहली बार तुम स्तनों का ही स्पर्श करते हो, पहली बार तुम ही तुम अस्तित्व के निकट आते हो और पहली बार स्तनों केद्वारा ही तुम दूसरे को जानते हो। यही वजह है कि पुरुषों का स्तनों के प्रति इतना अधिक आकर्षक है। तुम किसी ऐसी स्त्री की ओर आकर्षित नहीं हो सकते जिसके स्तन न हो और छाती सपाट हो। यह कठिन है क्योंकि वहां तुम मां का अनुभव नहीं कर सकते। इसलिए एक कुरूप स्त्री भी आकर्षक बन जाती है, यदि उसके स्तन सुंदर हों जैसे कि स्तन ही उसके अस्तित्व की मुख्य और और केंद्रीय वस्तु है, और स्तन हैं क्या? स्तन ही भोजन है। सेक्स तो बाद में आता है, भोजन पहले आता है।

जोशू का इन तीनों को अपनने पास चाय पीने के लिए बुलाना, उनसे घनिष्टता बढ़ाने के लिए एक पुकार है। मित्र साथ-साथ भोजन करते हैं। जब तुम भोजन कर रहे हो, तो यदि उसी समय कोई अजनबी आ जाए तो तुम असुविधा का अनुभव करते हो। अजनबी के साथ भोजन करने में असुविधा का अनुभव होता है। इसी वजह से होटल या रेस्तरों में सभी चीजें गलत जैसी हो गई हैं। क्योंकि अजनबियों के साथ भोजन जैसे विषैला हो जाता है और तुम इसलिए थकान और तनाव का अनुभव करते हो। चूंकि वह एक परिवार नहीं है, तुम वि श्रामपूर्ण भी नहीं हो।

जो तुम्हें प्रेम करता है, यदि ऐसे किसी व्यक्ति के द्वारा भोजन बनाया गया हो तो उसके अलग गुण और अलग स्वाद होता है। यहां तक कि उसके रासायनिक गुण भी बदल जाते हैं। मनोवैज्ञानिक कहते हैं कि जब तुम्हारी पत्नी क्रोध में हो, उसे भोजन बनाने की अनुमति मत दो, अन्यथा वह विषैला हो जाएगा। यह बहुत कठिन है क्योंकि पत्नी लगभग हमेशा ही क्रोध में रहती है और मनोवैज्ञानिक यह भी कहते हैं कि जब तुम भोजन कर रहे हो, तभी यदि तुम्हारी पत्नी बातचीत में तर्क वितर्क करते हुए मुसीबत खड़ी करना शुरू करे तो खाना बंद कर दो, लेकिन तब तो तुम मर ही जाओगे। क्योंकि पत्नी लगभग हमेशा तभी मुसीबत खड़ी करती है। जब तुम भोजन कर रहे होते हो। यह संसार बहुत प्रेमशून्य है। यदि पत्नी में थोड़ी-सी भी समझ है तो वह यह जानती है कि झगड़ने का सबसे खराब समय वही होता है जब उसका पति भोजन कर रहा हो, क्योंकि जब वह तनावयुक्त है, विश्रामपूर्ण न होकर थका है तो भोजन विषैला हो जाता है और उसे पचाने में एक लंबा समय लगता है। मनोवैज्ञानिक' कहते हैं कि ऐसा भोजपन पचाने के लिए दुगुना समय लगता है और पूरा शरीर इसे भुगतता है। भोजन घनिष्टता है, वह प्रेम है और झेन सद्गुरु तुम्हें हमेशाचाय केलिए आमंत्रित करते हैं। वे तुम्हें चाय कक्ष में ले जाएंगे और तुम्हें स्वयं चास सर्व करेंगे वे तुम्हें पीने के लिए भोजन ही दे रहे हैं। वे बता रहे हैं, मेरे निकटतम हो जाओ, घनिष्ट हो जाओ, इतनी दूर क्यों खड़े हुए हो? घर जैसा ही अनुभव करो।

इस कहानी के यही सभी आयाम है, -लेकिन ये आयाम अनुभव के हैं। तुम इन्हें समझ नहीं सकते, लेकिन अनुभव कर सकते हो और अनुभव ही सर्वोच्च समझ होती है प्रेम में ही अधिक जानना होता है। यह हृदय है ज्ञान का सर्वोत्कृष्ट केंद्र मस्तिष्क या मन नहीं, वह तो बस दूसरे नंबर पर है, वह काम करने के लिए उपयोगी है। मन के द्वारा तुम परिधि को जान सकते हो, पर केंद्र को नहीं।

लेकिन तुम हृदय के बारे में पूरी तरह भूल ही चुके हो, जैसे कि वह कुछ नहीं है। तुम उसके बारे में कुछ भी नहीं जानते हो। यदि मैं हृदय के बारे में कुछ बात शुरू करता हूं हृदय के केंद्र बारे मैँ तो तुम फेफड़ों के बारे में .सोचोगे, हृदय के बारे में नहीं।

फेफड़ों के बीच छिपा हुआ है, वहीं कहीं नीचे गहराई में। ठीक वैसे ही जैसे तुम्हारे शरीर में आत्मा छिपी हुई है। तुम्हारे फेफड़ों के मध्य तुम्हारा हृदय छिपा हुआ है। वह कोई भौतिक चीज नहीं है इसलिए तुम यदि किसी डॉक्टर के पास जाओ तो कहेगा कि वहां न कोई हृदय है और न हृदय का कोई केंद्र, केवल फेफड़े हैं और जहां तक वह जितना जानता है, उसके अनुसार वह ठीक है। क्योंकि तुम शरीर की चीर-फाड़ करो तो वहां कोई भी हृदय केंद्र नहीं है। केवल फेफड़े हैं। ठीक जैसे कि तुम्हारी आत्मा तुम्हारे शरीर में छिपी है। वैसे ही तुम्हारा हृदय केंद्र भी तुम्हारे फेफड़ों के बीच छिपा हुआ है।

हृदय को जानने के उसके अपने तरीके हैं। जोशू को केवल हृदय के द्वारा ही समझा जा सकता है। यदि तुम उसे बुद्धि के द्वारा समझने का प्रयास करोगे तो वह संभव तो है, पर तुम उसे गलत समझ सकते हो? लेकिन संभव है नहीं, इतना तो निश्चित है।

क्या कुछ और...?

प्रश्न : प्यारे ओशो? में ऐसा अनुभव करता है कि आपके निकट
बने रहना चाहता है लेकिन इसके साथ- साथ ही में जितनी तेजी से
संभव हो सके, आपसे दूर भी भाग जाना चाहता हूं मैं इस भय को
समझ नहीं पात? चूंकि मैं तरह के अनुभव के अलावा किसी अन्य
अनुभव के बारे में होशपूर्ण नहीं है।

यह स्वाभाविक है, यह कोई अपवाद नहीं है। जब कभी तुम्हें मेरे जैसे व्यक्ति के निकट होने का अनुभव होता है, उसी के साथ भय भी होगा, क्योंकि मेरे निकट रहने का अर्थ है-मृत्यु। मेरे निकट रहने का अर्थ है कि तुम्हें अपने को खो देना होगा। यह उसी तरहका भय है जो नदी को भी होता है। जब वह सागर के निकट आती है- उसके किनारे खो जाएंगे और हर नदी वापस लौट जाना चाहती है लेकिन उसका कोई उपाय नहीं है।

यदि तुम्हें मेरे निकट आने की गहरी प्रवृत्ति का अनुभव हो तो उससे छूटकर भाग जाने का कोई उपाय नहीं है। तुम प्रयास कर सकते हो, पर तुम्हें असफलता मिलेगी, दूसरों ने भी प्रयास किया है और वे आगे भी करते रहेंगे। यदि तुम्हें कोई शक्ति मेरे पास आने को प्रवृत्त कर रही है, तो तुम्हें आना ही होगा। तुम वापस आने में देर कर सकते हो, छुटकारा पाने के लिए संघर्ष कर सकते हो अथवा उसे आगे के लिए टाल सकते हो, पर इस सबसे अधिक और कुछ नहीं कर सकते। क्योंकि तुम्हारे अस्तित्व की गहराई में वह तड़प तुम्हें मेरी ओर प्रवृत्त कर रही है।

भय केवल मन में है। मेरे पास आने के लिए तुम्हारे अस्तित्व की गहराई का केंद्र ही -तुम्हें उकसा रहा है, लेकिन मन भयभीत है क्योंकि पास आने का अर्थ है मृत्यु। एक सद्गुरु के निकट बने रहना एक मृत्यु जैसा हैं। तुम्हारे अहंकार को विसर्जित होना ही होगा। तुम्हारा अहंकार सोचना शुरू कर देता है-कोई भी घटना घटे, उससे पहले ही मुझे दूर भाग जाना चाहिए। मैं तो खो जाऊंगा। मुझे भाग ही जाना चाहिए। तुम्हारा अहंकार तुम्हें निरंतर भाग जाने को कहेगा। अहंकार उसके तर्कसंगत कारण भी खोज लेगा। वह तुम्हें भागने में सहायता करने के लिए मेरे अंदर की कमियां खोज लेगा। वह तुम्हें हर तरीके से संतुष्ट करने की कोशिश करेगा कि मैं एक गलत आदमी हूं। प्रेम मृत्यु के समान है और किसी भी प्रेम की अपेक्षा सद्गुरु के प्रति प्रेम सर्वाधिक मृत्यु के निकट है।

यदि तुम किसी स्त्री से प्रेम करते हो. तो तुम उस पर अधिकार जमा सकते हो। यही कारण है कि प्रेमी एक दूसरे पर अधिकार जमाने और मालकियत पाने के लिए -राजनीति का खेल खेलते रहते हैं। वहां यह भय निरंतर रहता है कि यदि तुम अपना प्रभाव जमाकर उसे काबू में न रख सके तो दूसरा अधिकार जमा लेगा, इसलिए वे निरंतर लड़ते -रहते हैं। पति-पत्नी और प्रेमी-प्रेमिका संघर्ष ही करते रहते हैं। यह संघर्ष अपने अस्तित्व को बचाने और जीने का है। भय केवल यही है कि मैं कहीं दूसरे में खो न जाऊं।

लेकिन जब तुम एक सद्गुरु के निकट आते हो, तुम उस पर अधिकार नहीं जमा सकते, तुम उससे संघर्ष नहीं कर सकते। इसलिए और इसी कारण भय इतना गहरा होता है क्योंकि हम उसके साथ राजनीति का खेल नहीं खेल सकते या तो तुमको उससे दूर भागना होगा अथवा अपने को उसमें समाहित कर देना होगा, इसके अतिरिक्त अन्य कोई दूसरा विकल्प नहीं है। यदि तुम उससे बचकर दूर पलायन कर जाते हो तो अपने अस्तित्व के गहरे स्रोत से तुम्हें सुनाई देता है-तुम गलत कर रहे हो, यदि तुम भाग भी गए हो तो तुम्हें वापस लौटना होगा। यदि तुम पास आते हो तो मन कहता है- ‘ ‘ तुम कहां जा रहे हो? यदि तुम उसके और नजदीक गए तो तुम जल सकते हो।

” और यह -ठीक भी है, अहंकार ठीक ही कहता एं। वहां तो ज्योति जल ही रही है। यदि तुम अधिक निकट आए तो तुम जल ही जाओगे। मन संघर्ष उत्पन्न करेगा, आंतरिक तनाव और वेदना को जन्म देगा। तुम बस अधिक-से- अधिक कुछ देर तक रुक सकते हो., पर देर-सवेर तुम्हें उसमें समाहित होना ही होगा। कोई भी नदी अपने को सागर में गिरने से रोक नहीं सकती। एक बार तुम उसके पास आ गए तो बस आ गए और तब वहां पीछे लौटने का कोई रास्ता है ही नहीं।

बाहर जाने का कोई दरवाजा है हीं नहीं। तुम यहां हो। तुमने बहुत लंबा सफर तय किया है न केवल भौतिक रूप से स्थान की दूरी तय की है, बल्कि तुमने लंबी अवधि तक अंतर्यात्रा भी की है। तुम इस बिंदु की ओर आने के लिए कई जन्मों से यात्रा करते आए हो, तुमने ऐसा चाहा भी था और अब जब तुम इस बिंदु के निकट आ गए हो तो तुम भयभीत हो गए हो। तुम्हें अपने खोए जाने के भय की अनुभूति हो रही है। भय होना स्वाभाविक है। इसे समझो, उसके काबू में मत आओ। एक छलांग लगाओ, वह छलांग केवल एक मृत्यु न होगी, वह तुम्हारा पुनर्जन्म भी होगा, लेकिन तुम उसे जान नहीं सकते। तुम्हें तो मौत और केवल मौत दिखाई देती है। उसके पार, मृत्यु के पीछे, जो कुछ छिपा है, तुम उसे देख नहीं सकते। मैं उसे देख सकता हूं। मैं जानता हूं तुम्हारा पुनर्जन्म होगा, लेकिन किसी का भी पुनर्जन्म नहीं हो सकता, जब तक उसकी मृत्यु न हो जाए।

इसलिए मृत्यु न तो लक्ष्य है और न मृत्यु अंत है, वह तो बस शुरुआत है। जब तुम मरने के लिए तैयार हो, तुम पुनर्जन्म के लिए तैयार हो। पुराना मिलेगा और उसके स्थान पर पूरी तरह नए का जन्म होगा। वह नया तुम्हारे अस्तित्व के केंद्र से बाहर आने के लिए संघर्ष कर रहा है। वह पुराना तुम्हारे मन से संघर्ष कर रहा है क्योंकि मन के पास स्मृति है, पुराना अतीत है। पुराना अतीत और आने वाला भविष्य तुम्हारे ही अंदर संघर्ष कर रहे हैं। यही समस्या है। अब यह तुम पर निर्भर है। यदि तुम अतीत के काबू में आ जाते हो, तब तुम स्थगित कर दोगे, देर लगाओगे और इसे तुम कई जन्मों से टालते ‘आ रहे हो। यह कोई पहली बार तुम इसे नहीं टाल रहे हो, पहले भी कई बार तुम इससे चूक गए हो। कई बार तुम ही बुद्ध, महावीर और जीसस के भी पास आए हो और पलायन कर भाग गए हो। तुमने आंखें बंद कर उनसे बचने की कोशिश की है। तुम बार-बार यही खेल खेलते रहे हो, लेकिन खेल तो तटस्थ है। मैं इसलिए तुमसे कहता हूं क्योंकि तुम केवल मृत्यु देख सकते हो। नदी केवल यह देख सकती है कि वह सागर में जाकर खो जाएगी, वह यह नहीं देख पाती कि वह स्वयं सागर ही बन जाएगी। वह देख भी कैसे सकती है? उस सागर जैसा अस्तित्व तो केवल तभी होगा, जब नदी मिट जाएगी इसलिए नदी यह देख नहीं पाती। जब तुम्हारा अहंकार विसर्जित होगा, केवल तभी तुम जान पाओगे कि तुम हो कौन?

भय को यह इजाजत मत दो कि वह तुम्हें अपने काबू में कर ले, आने दो प्रेम को जो तुम पर अपना अधिकार जमा ले। प्रेम आता है केंद्र से और भय आता है बाहर परिधि से। इस परिधि को इजाजत मत दो कि वह इतनी अधिक महत्वपूर्ण हो जाए कि वह तुम पर अपना अधिकार जमा लें। तुम्हारे पास खोने का है ही क्या? यदि पुनर्जन्म नहीं भी होता है जबकि पुनर्जन्म है, लेकिन मैं तुमसे कहता हूं कि मान लो यदि तुम्हारा पुनर्जन्म नहीं हुआ और तुम मर गए तो भी तुम आखिर क्या खो दोगे? खोने को है क्या तुम्हारे पास? नदी को आखिर ऐसा क्या मिला है जो बचाने जैसा हो। पहाड़ों के द्वारा जो जीवन मिला था, वह ठीक एक संघर्ष जैसा था, मैदानों के द्वारा जो जीवन मिला, वह ठीक गंदगी से भरा हुआ एक यात्रा पथ था। सागर में जाकर समाहित होने पर आखिर खोना क्या है? कुछ भी नहीं।

इसलिए इस बारे में जरा सोचो। यदि तुम मेरे निकट आते हो तो तुम्हारे पास खोने के लिए आखिर है क्या? तुम्हारी वेदनाएं और दुख? तुम्हारा पागलपन? तुम्हारे पास खोने को है क्या? तुम्हारे पास कुछ भी तो नहीं खोने के लिए लेकिन हम अपने अंदर कभी झांककर देखते ही नहीं कि हमारे पास खोने के लिए कुछ है ही नहीं, क्योंकि ऐसा भी करने में भय लगता है। तुम यही सोचना पसंद करते हो कि तुम बहुत कुछ खो दोगे और जैसे वहां एक खजाना है जिसे तुम फिर कभी देख न सकोगे। वहां कोई खजाना है ही नहीं। घर बिलकूल खाली है और वहां कभी कोई चीज थी ही नहीं, लेकिन तुम इतने भयभीत हो कि तुम कभी देखते ही नहीं क्योंकि तुम जानते हो कि वहां कुछ भी नहीं है। एक भिखारी भी स्वप्न देखता है कि वह एक सम्राट है और स्वप्न में वह सम्राट बनकर उसका मजा लेता है। और तब वह डर जाता है कि यदि उसका साम्राज्य छिन गया, तब? लेकिन वहां कभी कोई साम्राज्य था ही नहीं।

तुम इसलिए मेरे पाए आए हो क्योंकि वहां कभी कोई साम्राज्य रहा ही नहीं। तुम्हें कुछ भी नहीं खोना है और अब तुम डर गए हो। जरा अपने मन की चालबाजियों और मन के द्वारा दिए धोखों की ओर देखो तो।

एक आदमी ने कुत्तों की दुकान में प्रवेश किया। उसने चारों ओर घूमकर सब कुछ देखा। फिर दुकानदार से पूछा-‘ ‘ उस बड़ी कुत्ते की क्या कीमत है। ‘ ‘ वह एक खूंखार और भयानक अलसेशियन कुत्ता था।

दुकानदार ने उत्तर दिया-‘ ‘ पांच सौ रुपए। ‘ ‘ यह कीमत उसके लिए बहुत अधिक थी, तब मन-ही-मन तर्क करते हुए उसने दूसरे छोटे कुत्ते की ओर संकेत करते हुए पूछा-‘ ‘ इस छोटे कुत्ते की क्या कीमत है? ‘ ‘

दूकानदार ने उत्तर दिया-‘ ‘ एक हजार रुपए। ‘ ‘ यह कीमत उसके लिए बहुत अधिक थी, तब मन-ही-मन तर्क करते हुए उसने दूसरे छोटे कुत्ते की ओर संकेत करते हुए पूछा-‘ ‘ इस छोटे कुत्ते की क्या कीमत है। ‘ ‘

दुकानदार ने उत्तर दिया-‘ ‘ दो हजार रुपए। ‘ ‘

वह व्यक्ति बहुत उलझन में पड़ गया। तब व्यग्र होकर उसने पूछा-‘ ‘ यदि मैं कुछ भी कोई भी चीज न खरीदूं तो उसकी क्या कीमत होगी? ‘ ‘ चूंकि ज्यों-ज्यों कुत्ता छोटा होता जा रहा था, कीमतें बढ़ती जा रही थी। यदि मैं कुछ भी न खरीदूं तो उसकी कीमत क्या होगी। यही तुम्हारा भय है।

यदि तुम मेरे निकट आते हो तो क्या होगा? कुछ भी नहीं होगा, क्योंकि तुम्हारे पास खोने को कुछ है ही नहीं और घटेगा सब कुछ, क्योंकि एक बार यह तुम्हारा कुछ नहीं खो जाए तो हर चीज घटना संभव हो जाएगा। एक बार यह काल्पनिक शरण स्थल, जो तुम्हारे लिए बंधन बन गया है, यदि मिट जाए तो तुम्हारे सामने अनन्त आकाश का खुला वातायन होगा। एक बार तुम्हारी जीवन सरिता के दोनों तट जो तुम्हारे लिए बंदीगृह बन गए हैं मिट जाएं तो तुम सीमाहीन अनन्त सागर बन जाओगे।

नदी को अभय होकर अज्ञात में, दिशाहीन होकर गिर जाने दो। वहां मृत्यु तो होगी, मृत्यु के हमेशा बाद पुनर्जन्म. होता ही है। मरते और मरकर पुन: जन्म लो। अपने को खो दो और उसे पा लो। भय आता है-मन से और प्रेम आता है तुम्हारे हृदय से। अपने हृदय की सुनो।

एक बार ऐसा हुआ कि एक राजा के विशाल महल में एक संगीत वाद्य था। वह उससे बहुत प्रेम करता था, लेकिन एक दिन उसमें कुछ खराबी आ गई और वह वाद्य- यंत्र इतना अनूठा था कि कोई भी नहीं जानता था कि उसे कैसे ठीक किया जाए। किसी ने भी कभी उस जैसा वाद्य-यंत्र देखा ही न था। राजा ने भी उस जैसा

वाद्य- यंत्र को तब सुना था, जब वह एक छोटा-सा बच्चा था। तब उसके पिता जीवित थे और तभी से उस वाद्य यंत्र में कुछ खराबी आ गई थी। लेकिन वह उससे इतना प्रेम करता था कि उस वाद्य यंत्र को अपने ही कमरे में रखता था। वह बहुत सुंदर था। बाहर से भी वह सुंदर दिखाई देता था। उसे ठीक करने के लिए कई विशेषज्ञ बुलाए पर सब कुछ व्यर्थ हुआ। उन लोगों ने -बहुत प्रयास किए पर चीजें बद से बदतर होती गई और वह वाद्य-यंत्र अधिक-से-अधिक क्षति ग्रस्त होने लगा। राजा ने उसके ठीक होने की सभी आशाएं छोड़ दीं क्योंकि वह वाद्य यंत्र ठीक न हो सका।

तब अचानक एक दिन एक भिखारी आया। उसने द्वारपाल से कहा-‘ ‘ मैंने सुना है कि राजा के वाद्य-यंत्र में कुछ खराबी आ गई है। मैं उसे ठीक कर का। द्वारपाल का मन हंसने को हुआ क्योंकि संसार की कई राजधानियों के विशेषज्ञ और संगीतज्ञ भी आकर उसमें उसकी खराबी को न खोज सके। वह इतना जटिल वाद्य-यंत्र था कि लोगों ने ऐसा वाद्य-यंत्र आज तक न देखा था और वे यह भी न जानते थे कि इससे किस तरह का संगीत उत्पन्न होता है, द्वारपाल का मन हंसने को हुआ, लेकिन उसने उस भिखारी को देखने के बाद उसकी आत्मविश्वास से भरी आवाज सुनी, उसकी आंखें देखी जिनमें प्रामाणिकता झलक- रही थी। भिखारी होते हुए भी उसका चेहरा शानदार दिखाई दे रहा था। द्वारपाल का मन कह रहा था कि इसके भी प्रयास व्यर्थ ही होंगे, लेकिन उसका हृदय कह रहा था-‘ ‘ इस आदमी में आत्मविश्वास दिखाई देता है, इसमें आखिर गलत क्या होगा यदि यह भी कोशिश कर ले। ‘ ‘ इसलिए वह उसे राजा के पास ले गया।

उस भिखारी की ओर देखकर राजा हंसा और उसने कहा-‘ ‘ क्या तुम पागल हो गए हो? हर तरह के विशेषज्ञ कोशिश करके हार गए। तुम जरूर पागल हो, जो सोचते हो कि तुम उसे ठीक कर दोगे। ‘ ‘

उस भिखारी ने कहा-‘ ‘ जितना नुकसान होना था हो चुका। अब उससे अधिक नुकसान क्या हो सकता है? वह वाद्य–यंत्र तो पहले ही से पूरी तरह खराब है। मैं उसे और कोई नुकसान क्या पहुंचा सकता हूं इसलिए इसमें क्या एतराज है आपको, यदि आप मुझे भी एक अवसर दें। ‘ ‘

राजा ने सोचा, ‘ ‘ यह कहता तो ठीक है, अब इससे अधिक खराब और क्या हो सकता है। इसलिए उसने कहा-‘ ‘ ठीक, है तुम भी कोशिश करके देख लो। ‘ ‘

कई दिनों तक भिखारी उस वाद्ययंत्र के पीछे जैसे गायब हो गया। वह दिन-रात उस काम करता रहा, करता ही रहा और अचानक आधी रात को एक दिन उसने उस वाद्य-यंत्र को बजाना शुरू किया। पूरा महल अज्ञात मधुर स्वर लहरियों से गज गया। वह संगीत इतना दिव्य था कि प्रत्येक उसे देखने दौड़ पड़ा। राजा ने अपने शयनकक्ष से बाहर आकर उस भिखारी से कहा-‘ ‘ तुमने उसे ठीक कर दिया। तुम्हें काफी कठिनाई जरूर हुई होगी क्योंकि यह लगभग असंभव काम था। तुमने तो चमत्कार कर दिया। ‘ ‘

उस मनुष्य ने कहा-‘ ‘ नहीं, यह काम कठिन नहीं था, क्योंकि पहली बात तो यह है कि मैंने ही इस वाद्य-यंत्र को आपके पिताजी के समय बनाया था। ‘ ‘

यदि तुम तैयार हो तो पहली बात तो यह कि मैं और अधिक क्षति नहीं पहुंचा सकता, क्योंकि तुम पहले ही क्षतिग्रस्त हो। तुम जितना अधिक नुकसान अपना कर चुके- हो, उसकी अपेक्षा मैं तुम्हें और कोई नुकसान पहुंचा भी नहीं सकता, यह बात निश्चित है। मेरी आंखों में झांको और मेरी आवाज का अनुभव करो और मुझे भी एक अवसर दो। यह कठिन नहीं है मैं तुमसे कहता हूं एक बार कोई में घुल जाए तो वह सभी चीजों के स्रोत जहां से तुम भी आए हो, वहीं होता है।

मैं वहाँ नहीं हूं। यदि मैं वहां होता तो यह काम कठिन होता। वहाँ मेरे अंदर कोई विशेषज्ञ नहीं है, जो था, वह बहुत पहले ही मर चुका है। अहंकार ही वह विशेषज्ञ है और मैं कुछ भी नहीं जानता।

मैं वहां हूं ही नहीं। मैं कभी का विसर्जित हो चुका हूं। वहां सागर हैं, परमात्मा भी है, पर मैं नहीं हूं।

पहली बात तो यह कि तुम जिस स्त्रोत से आए हो, तुम उसके निकट ही हो और परमात्मा के लिए कुछ भी असंभव नहीं है क्योंकि पहली बात तो यह है कि उसने तुम्हें बनाया है और मैं वहां हूं नहीं.। यह बहुत कठिन

होता। यदि मैं वहां हूं मैं तभी तुम्हें नुकसान पहुंचाऊंगा। अहंकार ही नुकसान कर सकता है। विशेषज्ञ केवल तुम्हें नुकसान पहुंचा सकते हैं वे तुम्हें ठीक नहीं कर सकते।

तुम बहुत से विशेषज्ञों के साथ रह रहे हो और उन्होंने जितनी भी हानि पहुंचाना संभव है, वह हर तरह की क्षति पहुंचा दी और अब तुम्हारी मरम्मत की जानी असंभव है, लेकिन नदी सागर में गिर सकती है और अकस्मात मधुर रागिनी झंकृत हो सकती है। तुम्हारे अंदर से ही संगीत प्रकट होगा, एक ऐसा संगीत, जैसा तुमने आज तक न सुना होगा यह तुम्हारे ही अंदर छिपा हुआ था, बस अहंकार को इसके रास्ते से अलग हटा देगा।

मैंने सुना है। एक स्कूल का शिक्षक पहली कक्षा के छात्रों से पूछ रहा- ' ' घर पर तुम अपने परिवार की किस तरह की सहायता करते हो? ' '

एक छोटे लड़के ने कहा-' ' मैं अपना बिस्तर खुद बिछाता हूं। ' '

दूसने ने उत्तर दिया-' ' मैं -लेटे धोता हूं और ऐसा वैसा काम कर देता हूं। ' ' लेकिन तब शिक्षक ने देखा कि एक छोटा बच्चा जॉनी चुपचाप बैठा है इसलिए उसने उससे पूछा, ' ' जॉनी! तुम क्या करते हो? ' '

जानी एक क्षण तो हिचकिचाया और तब उसने उत्तर दिया-' ' अधिकतर मैं अपने को रास्ते से अलग रखता हूं। ' '

अपने आपको रास्ते सो बाहर रखो, बस इतना ही सब कुछ है। तुम अपने और मेरे बीच में आओ ही मत। केवल अपने आपको रास्ते से बाहर रखी। यदि तुम एक क्षण के लिए भी अपने को मन या अहंकार के रास्ते से अलग रख सके तो चीजें घटेंगी ही। पुराना मरता है और नए का जन्म होता है।

आज बस इतना ही!

पांचवां प्रवचन

नए मठ के लिए सदगुरु कौन?

कथा:

ह्याकूजो ने अपने सभी भिक्षुओं, को एक साध बुलाया वह उनमें
से एक को नए मठ के संचालन के लिए भेजना चाहता था जमीन पर
पानी से भरा एक जग रखते हुए उसने कहा- " बिना इसका नाम
प्रयोग किए हुए कौन बता सकता है कि यह क्या है?"
प्रधान भिक्षु ने कहा- जिसे उस पद करे प्राप्त करने की आशा थी।
उसने कहा- " कोई भी इसे लकड़ी कर खड़ा के तो नहीं कह सकता।"
दूसरे भिक्षु ने कहा– " यह कोई तालाब नहीं है? क्योंकि इसे कहीं
भी ले जाया सकता है। "
भोजन बनाने वाला भिक्षु जो पास ही खड़ा था, आगे बड़ा, उसने
जग को एक ठोकर मारी और चला गया।
ह्याकूजो मुस्कुराया और उसने कहा, " भोजन बनाने वाला भिक्षु
ही नए मत का सदगुरु होगा।

वास्तविक को विचार-प्रक्रिया द्वारा नहीं जाना जा सकता। बल्कि उसे तो कृत्य द्वारा जाना जा सकता है। सोच-विचार ठीक स्वप्न जैसी एक घटना है। जिस क्षण तुम कोई कृत्य करते हो, तुम वास्तविकता का एक भाग बन जाते हो। वास्तविकता एक सक्रिय कृत्य है। सोच-विचार बस उसका एक खण्ड है। जब तुम कोई काम करते हो तो तुम समग्र होते हो। कोई भी कृत्य हो, तुम्हारा पूरा अस्तित्व उसमें संलग्न होता है। सोच-विचार मन के एक भाग में चलता रहता है, तुम्हारा पूरा अस्तित्व उसमें व्यस्त नहीं होता, तुम्हारे बिना भी सोच-विचार एक स्वचालित प्रक्रिया की तरह निरंतर जारी रह सकता है।

इसे बहुत गहराई से समझना है। यह उन लोगों के लिए आधारभूत चीजों में से एक है जो और किसी चीज की खोज में न होकर सत्य खोज रहे हैं। धर्म और दर्शन शास्त्र इस अर्थ में स्पष्ट रूप से अलग है। धर्म है कृत्य और दर्शनशास्त्र है विचार-प्रक्रिया। इस कहानी में बहुत से फंसाव और उलझनें हैं। सद्गुरु अपने एक शिष्य भिक्षु को नए मठ का प्रधान बनाना चाहता था, जो शीघ्र प्रारंभ होने जा रहा था। वहां किसे भेजा जाए? वहां कैसे व्यक्ति को पथप्रदर्शक बनाकर भेजना चाहिए। क्या ऐसा व्यक्ति जो तत्वज्ञानी और कुशाग्र बुद्धि का हो, क्या ऐसा व्यक्ति जो तर्कों द्वारा अच्छा प्रवचन दे सके, क्या ऐसा व्यक्ति जो शास्त्रों का जानकार हो, ज्ञानी हो अथवा एक ऐसा व्यक्ति जो सरल स्वाभाविक रूप से सभी काम करता हो? वह भले ही अधिक न जानें वह भले ही बहुत अधिक बौद्धिक क्षमता का न हो और बहुत साधारण ही हो, लेकिन ऐसा व्यक्ति समग्रता से काम करने वाला पूर्ण होगा।

मठ के प्रधान शिष्य ने सोचना और स्वप्न देखना शुरू कर दिया कि उसे ही इस पद के लिए चुना जाना है। मन हमेशा महत्वाकांक्षी होता है। उसके लिए यह जरूरी था कि वह योजनाएं बनाएं कि उसे किस तरह का व्यवहार करना चाहिए और ऐसा क्या कुछ करना चाहिए जिससे उसे ही नए मठ का प्र धान चुना जाए। वह निश्चित रूप से कई रातें जागता रहा होगा और उसका मन चारों ओर अवश्य ही भटकता रहा होगा। अहंकार ही योजना बनाता है और तुम जो भी योजना बनाओगे तुम वास्तविकता या सत्य से चूक जाओगे क्योंकि स्वाभाविक होकर ही तुम वास्तविकता का आमना- सामना कर सकते हो। यदि तुम पहले ही से उसके बारे में सोच-विचार करते हुए तैयार रहोगे तो उससे चूक जाओगे। पहले से तैयार व्यक्ति चूकेगा ही यही विरोधाभास

है। वह व्यक्ति जो पहले से तैयार नहीं है जिसने किसी भी चीज के लिए कोई भी -योजना नहीं बनाई है वह ही स्वाभाविक रूप से कार्य करता हुआ वास्तविकता या सत्य के हृदय तक पहुंच जाता है।

प्रधान शिष्य के मन में बहुत से सिद्धांतों और विकल्पों का आना जरूरी था। जब सदगुरु चुनाव करने जा रहा है तो वह किसी तरह की परीक्षा भी लेगा।

उसने अवश्य ही कई शास्त्रों और ग्रंथों को भी पढ़ा होगा क्योंकि पुराने दिनों में भी सद्गुरु शिष्यों का चुनाव कर उन्हें नए मठों मैं भेजा करते थे। वह चुनाव किस तरह किया करते थे? किस तरह की परीक्षा उत्तीर्ण करनी होती थी? वे कैसे सफल होते

पुराने दिनों की वहां बहुत-सी कहानियां थीं। अन्य परीक्षाओं में मूलभूत परीक्षा लगभग हमेशा ही झेन सद्गुरु किसी वस्तु को सामने रखकर बिना भाषण का प्रयोग किए शिष्यों को उसे अभिव्यक्त करने को कहते थे। वे कहते-इस चीज के बारे में बिना इसके नाम का प्रयोग किए हुए कुछ कहो, क्योंकि किसी भी वस्तु का नाम वस्तु नहीं है। यह कुर्सी यहां है और मैं इस पर बैठा हुआ हूं। एक झेन सदगुरु कह सकता है इस कुर्सी के बारे में कुछ कहो लेकिन इसके नाम का बिना प्रयोग किए हुए क्योंकि कुर्सी शब्द कुर्सी नहीं है इसलिए भाषा का प्रयोग मत करो मौखिक अभिव्यक्ति का सहारा मत लो, लेकिन बताओ, वह है क्या?

मन उलझन का अनुभव करता है क्योंकि मन केवल भाषा के सिवाय और कुछ नहीं जानता। यदि भाषा पर प्रतिबंध लगा दिया जाए तो मन रुक जाता है। सिवाय शब्दों की भीड़ के और मन है क्या? उसमें शब्द है, नाम है भाषा है और एक सद्गुरु कहता है-" भाषा और नाम का प्रयोग मत करो। " वह कह रहा है-मन का प्रयोग मत करो और कुछ ऐसा करो जिससे कुर्सी का बोध हो जाए।

'परमात्मा ' शब्द परमात्मा नहीं है, मनुष्य मनुष्य नहीं है। गुलाब शब्द, गुलाब का फूल नहीं है। जब वह भाषा का जन्म भी नहीं हुआ था, वृक्ष तब भी थे-वे भाषा पर आश्रित नहीं थे। उसका तब भी अस्तित्व था।

प्रधान शिष्य ने बार-बार चिंतन पर चिंतन किया होगा। जब अवश्य ही उसने पहले ही से कुछ विकल्प चुना होगा। वह मृत था और ठीक उसी क्षण वह असफल हो गया।

अपने अंदर यदि यह तय कर लो कि तुम क्या करने जा रहे हो, फिर तुम जो भी करोगे वह तय किए हुए निर्णय से ही होगा और तुम वास्तविकता से चूक जाओगे क्योंकि वास्तविकता तो सदा प्रवाहित गतिशीलता है। कोई नहीं जानता कि वह कहा जा रही है और कोई नहीं जानता कि क्या घटने जा रहा है। कोई भी उसकी भविष्यवाणी नहीं कर सकता, पहले से उसके बारे में कुछ भी कहना असंभव है।

एक झेन कहानी कही जाती है : दो झेन मठ अगल-बगल स्थित थे। दोनों मठों के सदगुरु के पास दो छोटे लड़के थे, जो दौड़ते हुए संदेशा ले जाने और लाने के साथ-साथ बाजार का भी काम करते थे। दोनों लड़के अपने-अपने सद्गुरुद्वारा बताया सामान कभी सब्जी और कभी कुछ और चीजें लाने बाजार जाया करते थे। ये दोनों मठ परस्पर विरोधी विचारधाराओं पर आधारित थे, लेकिन बच्चे तो बच्चे ही थे, वे कभी- कभी मठ के उपदेश और सिद्धांत भूलकर जब रास्ते में मिल -जाते थे तो एक दूसरे से बातें करते हुए उसका आनंद लेते थे।

वास्तव में बात करने की मनाही थी और उन लड़कों को भी आपस में बात नहीं करनी चाहिए थी क्योंकि दूसरा मठ, उनके मठ का विरोधी था, शत्रु था।

एक दिन वह लड़का जो पहले मठ का था, सद्गुरु के पास आकर-" मैं तो बहुत उलइन में पड़ गया हूं। जब मैं बाजार जा रहा था तो मैंने दूसरे मठ के लड़के को देखकर उससे पूछा, तुम कहां जा रहे हो? तो उसने उत्तर दिया, जहां मुझे बहती हुई हवा ले जाए। मेरी तो कुछ समझ में ही नहीं आया कि मैं क्या कहू उसने तो मेरे लिए एक -उलझन खड़ी कर दी। "

सद्गुरु ने कहा-" यह बात ठीक नहीं है। हमारे मठ का कोई भी कभी दूसरे मठ से हारा नहीं है। भले ही वह एक नौकर ही क्यों न हो। तुम्हें उस लड़के को ठीक उत्तर देना जरूरी है। कल उससे फिर पूछना, तुम कहां -जा रहे हो? वह कहेगा, जिधर मुझे बहती हुई हवा ले जाए। तब तुम उससे कहना, यदि हवा ही न चल रही तो तब...?

वह लड़का सारी रात ठीक से सो न सका। वह यही कल्पना करने की कोशिश करता रहा कि अगले दिन क्या कैसे होगा। वह कई बार पूर्व अभ्यास करता रहा-वह उससे पूछेगा, फिर वह लड़का क्या कहेगा और वह उसका कैसे उत्तर देगा।

अगले दिन वह सड़क पर खड़ा होकर उसकी प्रतीक्षा करने लगा। जब बगल में बने मठ का लड़का सामने आया तो उसने पूछा-'' तुम कहां जा रहे हो? ''

लड़के ने उत्तर दिया-'' मेरे पैर मुझे जहां भी ले जाएं। ''

इसलिए उसकी फिर कुछ समझ में न आया कि क्या किया जाए? उत्तर तो पूर्व निश्चित था, पर वास्तविकता के बारे में कोई भी भविष्यवाणी नहीं की जा सकती। वह उदास होकर मठ में लौटा और उसने सद्गुरु से कहा-'' वह लड़का विश्वास करने योग्य नहीं है। उसने उत्तर बदल दिया और मेरी समझ में आया ही नहीं कि अब मैं क्या करूं? ''

सद्गुरु ने कहा-'' अगले दिन जब वह जवाब दे, ' मेरे पैर जहां मुझे ले जाएं? ' तो तुम उससे कहना, यदि तुम्हारे दोनों पैर कट जाएं और यदि तुम अपंग हो जाओ, तब...?

उस रात भी वह सो न सका। वह सुबह जल्द ही सड़क पर आकर उसकी प्रतीक्षा करने लगा। जब वह लड़का आया तो उसने पूछा-'' तुम कहां जा रहे हो? ''लड़के ने उत्तर दिया-'' बाजार से सब्जी लेने जा रहा हूं। ''

वह फिर व्याकुल-परेशान वापस आया और उसने सद्गुरु से कहा-'' इस लड़के को समझना तो असंभव है? वह रोज बदलता रहता है। ''

यह जीवन भी उस लड़के जैसा है। यह निरंतर बदलता रहता है। वास्तविकता कोई पूर्व निर्धारित जड़ घटना नहीं है।

तुम्हें स्वेच्छा से उसके लिए स्वयं ही उपस्थित रहना होगा, केवल तभी उत्तर असली होगा। यदि तुम्हारा उत्तर पहले से तैयार किया हुआ है तो तुम पहले ही से मृत हो और तुम पहले ही उससे चूक गए। कल तो आएगा, लेकिन तुम वहां न होगे? तुम तो बीते कल के साथ जमे बैठे हो, जो गुजरा अतीत है।

वे सभी मन जो इसी तरह बहुत अधिक शब्दों के बोझ से दबे बैठे हैं। उनके उत्तर अतीत में ही तैयार हो चुके हैं। किसी पंडित या किसी विद्वान से जाकर पूछो, परमात्मा क्या है?

और तुम्हारे पूछने से पहले ही वह उत्तर देना शुरू कर देगा। उसने तुम्हारे प्रश्न का उत्तर नहीं दिया है क्योंकि तुम्हारे प्रश्न करने से पहले ही उस व्यक्ति के पास उत्तर था। वह उत्तर मुर्दा है, वह पहले ही से वहां है, उसे बस स्मृति से लाया गया है, वह स्वत: स्कूर्त उत्तर नहीं है।

एक तथाकथित ज्ञानी और प्रज्ञावान व्यक्ति में यही अंतर है। जानकारी रखने वाले ज्ञानी के पास पहले से तैयार उत्तर है तुमने पूछा, और उत्तर वहां पहले ही से तैयार है। तुम अप्रासंगिक हो, तुम्हारा प्रश्न असम्बद्ध है। उत्तर का अस्तित्व, प्रश्न करने से पूर्व ही है, तुम्हारा प्रश्न केवल स्मृति रूपी बंदूक के घोड़े को दबाना भर है, लेकिन यदि तुम किसी प्रज्ञावान व्यक्ति के पास जाओ, उसके पास तुम्हारे लिए कोई उत्तर हैं ही नहीं, उसके पास पहले तुम्हारा प्रश्न उसके अंदर जाएगा, तब वह प्रश्न उसके पूरे अस्तित्व में प्रतिध्वनित होगा। उसकी स्मृति से न आकर वह उत्तर उसके अस्तित्व से आता है। उस उत्तर के बारे में कोई भविष्यवाणी नहीं की जा सकती। तुम अगले दिन जाकर उससे वही प्रश्न पूछो तो उत्तर ठीक वैसा ही नहीं होगा।

एक बार ऐसा हुआ कि एक व्यक्ति ने बुद्ध को जांचना चाहा। वह उसके पास प्रत्येक वर्ष जाकर वही प्रश्न पूछता था क्योंकि वह सोचता था कि यदि वे वास्तव में जानते हैं तो उनका उत्तर हमेशा ज्यों-का-त्यों एक ही होना चाहिए। क्योंकि तुम दूसरा उत्तर कैसे बदल सकते हो? यदि मैं आकर पूछता हूं क्या वहां परमात्मा है? यदि वे जानते हैं तो वे कहेंगे–हां या कहेंगे-नहीं और अगले साल आकर मैं फिर से वही प्रश्न पूछूंगा।

इसलिए कई वर्षों तक वह व्यक्ति आता रहा और उसकी उलझन निरंतर बढ़ती ही गई। कभी बुद्ध कहते, हां, और कभी बुद्ध कहते, न कभी-कभी वे मौन ही बने रहते और कभी-कभी वे मुस्कराकर रह जाते और किसी बात का कोई उत्तर देते ही नहीं।

उस व्यक्ति ने परेशान होकर उनसे कहा, " आखिर यह सब है क्या? यदि आप जानते हैं तब आपको निश्चित होना चाहिए और आपका उत्तर तैयार होना चाहिए लेकिन आपका उत्तर निरंतर बदलता रहता है। एक बार आपने कहा, " हां, फिर आपने कहा, न। क्या आप मुझे भूल गए कि मैंने यही प्रश्न पहले भी पूछा था? फिर एक बार आप मौन ही बने रहे और अब आप मुस्करा रहे हैं। यही कारण है कि मैं एक साल के लम्बे अंतराल के बाद आता हूं। केवल यही देखने कि आप जानते हैं या नहीं?

" बुद्ध ने कहा, "जब तुम पहली बार आए थे और पूछा था, "क्या परमात्मा है? "मैंने उसका उत्तर दिया था। लेकिन यह उत्तर तुम्हारे प्रश्न का न होकर तुम्हारे लिए था। अब तुम बदल गए हो, अब वही उत्तर नहीं दिया जा सकता और न केवल तुम बदल गए हो, मैं भी बदल गए हूं। तब से गंगा काफी बह चुकी है और वही उत्तर नहीं दिया जा सकता। मैं कोई शास्त्र नहीं हूं कि तुमने उसे खोला और वह उत्तर पा लिया, जो उसमें पहले ही से लिखा हुआ है।

एक बुद्ध एक बहती हुई नदी की भांति है। वह निरंतर प्रवाहित हो रही है। सुबह वह सबसे पृथक होती है-सूर्य के उदित होते ही जैसे नदी में चारों ओर स्वर्णिम आलोक प्रवाहित हो उठता है, दोपहर और शाम नदी कुछ अलग होती है। जब रात आती है और उसके जल में जब सितारे प्रतिबिंबित होने लगते हैं, वह कुछ और हो जाती है। गर्मियों में वह सिकुड़ जाती है, वर्षा में वह उफन उठती है और उसमें बाढ़ आ जाती है। नदी कोई तस्वीर नहीं है, वह एक जीवन्त ऊर्जा है।

एक तस्वीर या चित्र वही का वही बना रहता है। चाहे बाहर वर्षा हो रही हो या झुलसती हुई गर्मी की दोपहर हो। वर्षा ऋतु में चित्रित तस्वीर में बाढ़ नहीं आएगी। वह मृत है, अन्यथा हर क्षण वहां परिवर्तन हो रहा है। केवल एक ही चीज स्थायी है और वह है-परिवर्तन। केवल एक ही चीज वहां निरंतर है और वह है-क्रांति। सिवाय क्रांति के प्रत्येक वस्तु अस्थायी है। वह होती है... और वह निरंतर होती ही रहती है। इस मठ के प्रधान शिष्य ने पहले ही से सब कुछ तय कर रखा था, निष्कर्ष पहले ही वहां था, वह केवल सदुगुरु के पूछने की प्रतीक्षा कर रहा था। तब सद्गुरु ने पानी से भरा एक बर्तन उन सभी के सामने रखते हुए कहा-" इसके बारे में कुछ कहो, लेकिन बिना इसके नाम का प्रयोग किए हुए। कुछ भी कहो, लेकिन मन का प्रयोग मत करो। कोई भी चीज कहो, लेकिन भाषा का प्रयोग मत करो। "

यह पूरी चीज ही असंगत दिखाई देती है। जब तुम कहते हो- ' कुछ कहो, लेकिन भाषा का प्रयोग मत करो। "

तुम एक असंभव स्थिति निर्मित कर रहे हो। बिना भाषा का प्रयोग किए हुए किसी चीज के बारे में कुछ कैसे कहा जा सकता है? यदि तुम एक साधारण पानी से भरे हुए बर्तन के बारे में बिना भाषा का प्रयोग किए हुए कुछ नहीं कह सकते तो फिर परमात्मा के बार में जिसमें पूरा अस्तित्व ही समाहित है, कुछ भी कह सकने में कैसे समर्थ हो सकते हो यदि तुम बिना भाषा का प्रयोग किए हुए इस पानी से भरे जग की ओर भी संकेतों से कुछ अभिव्यक्त नहीं कर सकते, फिर तुम उस विराट जग अर्थात ब्रह्माण्ड, परमात्मा या सत्य की ओर इंगित करने में कैसे समर्थ हो सकोगे? यदि तुम इसे संकेत से अभिव्यक्त नहीं कर सकते तो फिर तुम कैसे मठ के प्रधान बन सकोगे? लोग तुम्हारे पास आएंगे, शब्दों को जानने के लिए नहीं, वास्तविकता और सत्य को जानने के लिए लोग तुम्हारे पास आएंगे, तत्वज्ञान में प्रशिक्षित होने के लिए नहीं, क्योंकि वह शिक्षण तो विश्वविद्यालयों के द्वारा दिया जा सकता है.. .वहां लाखों ऐसे विश्वविद्यालय हैं जो शब्दों की शिक्षा देते हैं।

इसलिए फिर एक मठ है किसके लिए? एक मठ होता है-शब्द सिखाने के लिए न होकर सत्य सिखाने के लिए दर्शनशास्त्र न सिखाकर धर्म की शिक्षा के लिए वह सिद्धांत और व्याख्याएं न सिखाकर शिक्षा देते हैं पूरे अस्तित्व का।

इसलिए यदि तुम एक मामूली बर्तन के बारे में कुछ नहीं कह सकते, फिर तुम क्या करोगे, जब तुमसे कोई पूछेगा-परमात्मा क्या है? फिर तुम क्या करोगे जब तुमसे कोई पूछता है-'' मैं कौन हूं? ''

मठ के प्रधान शिष्य ने उत्तर दिया-'' जब कभी मन का आमना-सामना ऐसी ही किसी स्थिति से होता है तो केवल एक ही रास्ता. है कि उसकी नकारात्मक व्याख्या करो। यदि कोई 'पूछता है, परमात्मा के बारे में कुछ कहो, बिना उसका नाम लिए हुए तो तुम क्या करोगे तुम केवल नकारात्मक रूप से कह सकते हो-परमात्मा यह संसार नहीं है। परमात्मा पदार्थ नहीं है। ''

जरा भाषा कोषों में झांकी, एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका में देखो-वे कैसे चीजों को परिभाषित कर रहे हैं? तुम आश्चर्य में पड़ जाओगे यदि तुम उसके पन्ने पलटकर देखो, जहां मन को परिभाषित किया गया है। तुम पाओगे वहां परिभाषा दी गई है, मन वह है जौ पदार्थ नहीं होता। तब तुम पन्ने पलटकर पदार्थ की परिभाषा देखो, जहां तुम -यह लिखा देखोगे-पदार्थ है वह जो मन नहीं है। यह किस तरह की परिभाषा है? जब तुम मन के बारे में पूछते हो, वे कहते हैं-'' जो पदार्थ नहीं है और जब तुम पदार्थ के बारे पूछते हो, वे कहते हैं-जो मन नहीं है। कुछ भी परिभाषित नहीं किया जा सकता, यह पूरा एक दुष्चक्र है। यदि मैं ' अ ' के बारे पूछूं तो तुम कहते हो ' ब ' नहीं और यदि मैं ' ब ' के बारे में पूछूं तो तुम कहते हो, ' जो अ नहीं। ' तुम एक चीज की परिभाषा दूसरे अपरिभाषित से करते हो। किसी भी चीज की परिभाषा दूसरे अपरिभाषित के कैसे की जा सकती है? यह एक चालबाजी है। विश्व में भाषा कोष सबसे अधिक फरेबी चीज है, वे कुछ भी नहीं कहते, लेकिन वे बहुत कुछ कहते दिखाई देते हैं। प्रत्येक चीज की परिभाषा दी गई है और प्रत्येक चीज अपरिभाषित है और किसी चीज की व्याख्या की ही नहीं जा सकती।

इसलिए प्रधान शिष्य ने नकारात्मक रूप से व्याख्या की, लेकिन उसने की। जब मन ने बाजी हारते हुए देखी तो वह और करता क्या, उसने नकारात्मक रूप से कहना शुरू कर दिया। भले ही नास्तिकता ठीक एक पलायन हो, फिर भी परमात्मा वहां है, लेकिन उसकी व्याख्या कैसे की जाए जब मन अपनी हार देखता है तो सबसे आसान है। यह कहते हुए कि परमात्मा कहीं है ही नहीं, पलायन कर जाना। सारी समस्या ही समाप्त हो जाती है।

किसी अन्य ने उत्तर दिया, '' यह कोई तालाब नहीं है, क्योंकि उसे हाथ में उठाकर कहीं भी ले जाया जा सकता है। '' लेकिन पानी से भरे हुए बर्तन की तुम सिर्फ यह कहते हुए कि वह एक तालाब नहीं है, कैसे उसे परिभाषित कर सकते हो? तब फिर तालाब क्या है? बिना उसका नाम लिए हुए कुछ कहो उसके बारे में।

तभी मठ का भोजन बनाने वाला भिक्षु रसोइया आया, जिसे निश्चित ही इन पंडितों से कहीं अधिक सच्चा मनुष्य होना चाहिए। एक रसोइया, जिसकी कभी भी शास्त्रों में कोई दिलचस्पी रही ही नहीं, एक रसोइया, जो वास्तविकता और यथार्थ का सामना करते हुए कार्य करता रहा, उसने पानी से भरे जग के बारे में बिना किसी सोच- विचार के उसे देखा, वहां रुका और बर्तन को ठोकर मारते हुए चला गया।

उसने क्या कहा? उसने कोई चीज अधिक वास्तविक रूप से अभिव्यक्त कर दी। ठोकर मारना, सोच-विचार न होकर एक कृत्य है, क्रिया है। उसने पानी के बर्तन को ठोकर मारते हुए जैसे सद्गुरु से कहा, '' यह सब व्यर्थ की बातें हें। '' सारी बात ही असंगत है। आप हम लोगों से किसी चीज के बारे में बिना शब्दों के अभिव्यक्ति करने को कह रहे हैं। बिना शब्दों के कुछ भी अभिव्यक्त किया ही नहीं जा सकता।

उसने जो जरूरी बात थी, उसे पकड़ लिया। बिना शब्दों के कुछ भी किया जा सकता है, लेकिन कुछ भी कहा नहीं जा सकता। इसलिए उसने कुछ किया। उसने पानी भरे बर्तन को ठोकर मार दी।

सद्गुरु ने कहा, " यह रसोइया ही चुन लिया गया है। यही जाएगा नए मठ में और वहां का सद्गुरु होगा। यही जानता है कि बिना मन कैसे क्या किया जाए यही जानता है कि बिना मन का प्रयोग किए क्या उत्तर दिया जाए। इसने ठीक ही कहा कि यह समस्या ही असंगत है। "

एक बात का स्मरण रहे, यदि समस्या ही असंगत या मूर्खतापूर्ण है तो तुम विचारशील होकर उसका उत्तर दे ही नहीं सकते। यदि तुम ऐसा प्रयास करोगे तो तुम मूर्खता करोगे-उसे तुम्हारी छूता प्रकट होगी। यदि समस्या ही बेवकूफी- भरी असंगत है तो उसका विचारशील उत्तर हो ही नहीं सकता। यदि तुम सोच-विचारकर उत्तर देने और उसे सिद्ध करने का प्रयास करोगे तो तुम मूर्ख हो। उस प्रधान शिष्य और उस दूसरे विद्वान शिष्य को मूर्ख होना चाहिए। जिसने नकार में व्याख्या की और कहा, " यह एक तालाब नहीं है...। " पंडित मूर्ख होते ही हैं, अन्यथा वे पोथियों में नहीं उलझते। वे शब्दों और शास्त्रों में अपना जीवन व्यर्थ बरबाद कर रहे हैं। कोई भी अपना जीवन शब्दों में उलझाकर बरबाद नहीं कर सकता, यदि वह पूरी तरह मूर्ख नहीं है।

वह रसोइया कहीं अधिक प्रज्ञावान है जिसने ठोकर मार दी। वह न केवल पानी-भरे बर्तन को ठोकर मारता है। वह पूरी समस्या को ही ठोकर मार देता है और वह उसे अनुभव करता है-" वह असंगत है। "

जरा कल्पना करें कि वह रसोइया भिक्षु अपने समग्र अस्तित्व के साथ, जिसमें समग्रता से वह स्वयं, उसका शरीर, मन और आत्मा भी शामिल है, उस बर्तन को ठोकर मार देता है। वह ठोकर जीवन्त है। उसका ठोकर मारना सहज स्वाभाविक कृत्य है। उसने ऐसा पहले से तय नहीं किया था, वह यह भी नहीं जानता कि वहां कुछ होने जा रहा है।

उसने यह भी नहीं सोचा था कि उसे कोई उत्तर देना है। वह तो बस उसे देख रहा था, जो वहां सब कुछ चल रहा था। अचानक ही वह ठोकर घटित हुई। जब वह रसोइया भिक्षु ठोकर मार रहा होगा, सद्गुरुने उसके पूरे अस्तित्व से निकले उस कृत्य को जरूर देखा होगा जिसमें मन नहीं था और थी बस एक शून्यता। उसी शून्यता और अमन से उस कृत्य का जन्म हुआ था-।

जब अभिनेता के द्वारा कोई कृत्य होता तो वह मुर्दा होता है, जब कोई कृत्य अहंकार से जन्मता है तो पूर्व चिंतन-मनन होता है। जब कोई कार्य बिना अहंकार के, बिना मन के और बिना तुम्हारी वहां उपस्थिति के, तुम्हारी शून्यता से बुलबुले की भांति उठता है, वही कृत्य अज्ञात परमात्मा से आता है और वह समग्र होता है।

वह ठोकर रसोइए भिक्षु ने नहीं मारी, वह तो जैसे पूरे अस्तित्व की ठोकर थी। उसने सारी विद्वता को ठोकर मारी, उसने जैसे सभी शास्त्रों को ठोकर मारी, उसने जैसे सारी बुद्धिमत्ता और उससे उत्पन्न दुष्चक्र को ठुकरा दिया और वह वहां से तुरंत चला गया। यदि वह यह देखने के लिए रुककर प्रतीक्षा करता कि अब सद्गुरु क्या कहते हैं तो वह चूक गया होता, क्योंकि तब उसका अर्थ था कि कृत्य का परिणाम या निष्कर्ष देखने के लिए उसका मन वहां मौजूद है।

मन हमेशा फल या परिणाम चाहता है। वह इसी में उत्सुक होता है कि क्या होने जा रहा है? यदि मैं इस काम को करता हूं तब उसका क्या परिणाम होगा? यदि वहां कारण है तो उसका प्रभाव क्या होगा? मन हमेशा फल की फिक्र करता है। वह फल सोचकर ही काम करता है।

यह रसोइया भिक्षु वहां से तुरंत चला गया। वहां क्या होने जा रहा है, उसने उसकी प्रतीक्षा ही नहीं की। उसने यह सोचा भी नहीं कि उसका चुनाव होने जा रहा है। एक बर्तन को ठोकर मारकर तुम यह कैसे सोच सकते हो कि तुम एक मठ के सद्गुरु के रूप में चुने जाओगे। नहीं, उसने कभी इस बाबत कोई फिक्र की ही नहीं। यह वही है जिसकी बाबत गीता में कृष्ण अर्जुन से कहते हैं-" कर्म करो पर फलाकांक्षा मत करो। ठोकर मारो और चले जाओ। "

अर्जुन परिणाम के बारे में सोचे चला जा रहा है। वह कहता है-" यदि मैं लड़ता हूं यदि मैं युद्ध में जूझता हूं तो होगा क्या? उसका परिणाम क्या होगा? वह परिणाम अच्छा होगा या बुरा? क्या मैं कुछ प्राप्त करूंगा या बहुत कुछ खो दूंगा? इतने अधिक लोगों की हत्या करने के प्रयास का आखिर क्या औचित्य है? "

और कृष्ण कहते हैं-" फल या परिणाम की फिक्र ही मत करो। परिणाम मेरे ऊपर छोड़ो तुम तो बस कर्म करो। "

लेकिन मन उसे कर नहीं सकता। कुछ करने से पहले मन परिणाम के बारे में पूछता है। वह कर्म करता है, फल के ही कारण। यदि कुछ फल मिलेगा, केवल तभी...।

लोग मेरे पास आते हैं और पूछते हैं-यदि हम ध्यान करते हैं तो क्या होगा? उसका पाल क्या मिलेगा?

स्मरण रहे, ध्यान परिणाम प्रेरित नहीं हो सकता। तुम बस ध्यान करते हो, यही सब कुछ है। हर चीज घटती है, लेकिन यह फल नहीं है। यदि तुम कुछ पाने की आकांक्षा कर रहे हो तो कुछ भी नहीं होगा। ध्यान करना ही व्यर्थ होगा। जब तुम परिणाम खोज रहे हो तो वह मन है और जब तुम परिणाम नहीं खोज रहे तो वह ध्यान है। बर्तन को ठोकर मारो और आगे बढ़ जाओ। ध्यान करो और आगे चल पड़ो, परिणाम की बाबत पूछो ही मत। यह मत कहो- आखिर घटेगा क्या? क्योंकि यदि तुम उसके बारे में सोच रहे हो कि क्या घटेगा तो तुम ध्यान नहीं कर सकते। मन परिणाम के बारे में सोचे चला जाता है, वह यहां और अभी हो ही नहीं सकता। वह हमेशा भविष्य में होता है। तुम ध्यान कर रहे हो और तुम सोच रहे हो, आखिर इसका परिणाम कब मिलने जा रहा है? अभी तक कुछ हुआ क्यों नहीं...? यदि तुम प्रेम कर रहे हो और सोचे चले जाओ, कब मिलेगी प्रसन्नता? कब आएगा आनंद? वह अभी तक आ क्यों नहीं रहा? तो क्या यह प्रेम है?

जब तुम परिणाम के बारे में पूरी तरह भू। ही जाते हो, जब वहां मन में परिणाम के लिए जरा-सी भी हलचल नहीं होती, जब वहां भविष्य के लिए एक भी विचार तरंग नहीं उठती। जब तुम यहीं और अभी एक शांत सरोवर बन जाते हो, तो हर चीज स्वत: घटती है। ध्यान में कारण और परिणाम दो नहीं होते, कारण ही परिणाम होता है। कृत्य और परिणाम दो नहीं है, कर्म ही फल है। वे विभाजित नहीं है। ध्यान में बीज और वृक्ष दो नहीं है। बीज ही वृक्ष है।

लेकिन मन के लिए हर चीज विभाजित है: बीज और वृक्ष दो हैं, कर्म और फल दो हैं। फल या परिणाम हमेशा भविष्य में है और कर्म या कृत्य यहीं है। तुम भविष्य के कारण कर्म करते हो। मन हमेशा भविष्य के लिए वर्तमान का बलिदान कर देता है, और भविष्य का कोई अस्तित्व नहीं। वहां कोई भविष्य होता ही नहीं, वहां हमेशा वर्तमान होता है। अभी तो शाश्वत है और तुम इस अभी को, किसी ऐसी चीज के लिए जो कहीं भी है नहीं और न हो सकती है, व्यर्थ बलिदान कर रहे हो।

ध्यान में पूरी प्रक्रिया उल्टी है। वर्तमान के लिए भविष्य का बलिदान कर दिया जाता है। जो है, उसके लिए उसको बलिदान कर दिया जाता है, जो है ही नहीं। वहां कोई परिणाम की बाबत पूछो ही मत।

यही था उसका सौंदर्य। रसोइया भिक्षु सिर्फ यह कहता हुआ चला गया, यह पूरी चीज असंगत और मूर्खता पूर्ण है। आपका प्रश्न और इन लोगों का उत्तर। यह पूरा खेल ही निरर्थक है। मेरा यहां होना ही व्यर्थ है। वह अवश्य ही रसोई में जाकर अपना काम करने लगा होगा। एक ध्यानी मन इसी तरह से काम करेगा और सद्गुरु ने कहा-" मैं उसी व्यक्ति को चुनता हूं वही जाएगा नए मठ में और वही वहां का प्रधान है। वह ही जानता है, कैसे समग्र हुआ जाए वही जानता है कैसे स्वाभाविक रूप से बिना किसी लक्ष्य के कैसे कार्य किया जाए और वही जानता है कि बिना मन के कैसे कार्य किया जाए। "

ऐसा ही व्यक्ति दूसरों का ध्यान में नेतृत्व कर सकता है। यही व्यक्ति पथ प्रदर्शक बन सकता है। इसी व्यक्ति ने सब कुछ पा लिया है और अब वहां उसके पाने के लिए कुछ है ही नहीं।

यह कहानी बहुत दुर्लभ, हृदय वेधी और बहुत सुंदर है, लेकिन तुम इसकी गहराई में तभी उतर सकते हो, जब तुम भी उस रसोइए भिक्षु की भांति कार्य करना शुरू कर देते हो, लेकिन वहां गड्ढे में गिरने की भी संभावना है और तुम पहले ही सोच-विचार में पड़ सकते हो। यदि मैं तुम्हारे सामने पानी भरा बर्तन रख दूं तो तुम उसे ठोकर भी मार दो, फिर भी तुम चूक जाओगे क्योंकि तुम इसका उत्तर पहले से जानते हो। तुम सोचोगे,

ठीक है, अब यह अवसर मेरे सामने है। बर्तन को ठोकर मारो और आगे बढ़ जाओ। उससे कुछ होने का नहीं। तुम धोखा नहीं दे सकते, क्योंकि जब वहां मन होता है, तो तुम्हारा पूरा अस्तित्व कुछ भिन्न कम्पनें उत्पन्न करता है। तुम एक सद्गुरु को धोखा नहीं दे -सकते।

स्मरण रहे, यह घटना कई बार दोहराई जा चुकी है। झेन सद्गुरु वास्तव में अनूठे हैं। वे एक ही समस्या बार-बार दोहराए चले जाते हैं और जिन लोगों ने भी शास्त्र पड़े हैं, वे पुराने तरीके से ही व्यवहार करते हैं। वे सोचते हैं, यह रहा उत्तर! बर्तन को ठोकर मारो और आगे बढ़ जाओ और बन जाओ मठ के प्रधान।

लेकिन तुम एक झेन सद्गुरु को धोखा नहीं दे सकते, क्योंकि उसका संबंध. उससे नहीं है, जो कुछ तुम कर रहे हो, उसका संबंध तुमसे है कि उस कृत्य के क्षण में तुम क्या हो? यह बिल्कुल ही एक अलग चीज है। तुममें एक सुवास होती है, एक अलग तरह की सुवास, जब तुम्हारा कृत्य शुन्यता से जन्मता है और जब मैं एक भिन्न सुवास की बात कहता हूं तो मेरा अर्थ शाब्दिक ही है। मैं किसी अलंकार का प्रयोग नहीं कर रहा हूं। जब तुम्हारी शून्यता से किसी कृत्य का जन्म होता है। तो तुम्हारे चारों ओर पत्ते पर पड़ी ओस जैसी एक ताजगी और नवीनता होती है, जैसे अचानक बीच दोपहर में सुबह हो गई हो। तुम्हारे चारों ओर ताजगी की तरंगें जो स्पर्श करती हैं.. .एक जीवन जो इतना तीव्र होता है, जो चारों ओर से तुम पर जैसे चोट करता है-तुम्हारी आंखों पर, तुम्हारे पूरे अस्तित्व पर, तुम जिस तरह बैठते हो, तुम जिस तरह से खड़े होते हो और जिस तरह से तुम बर्तन को ठोकर मारते हो। जरा ख्याल करें, यदि तुम बर्तन को ठोकर मारते हो तो वहां अहंकार होगा,, अंहाकर ही बर्तन को ठोकर मार रहा है और तुम आक्रामक होगे, लेकिन जब उस रसोइए भिक्षु ने बर्तन को ठोकर मारी तो वह आक्रामक नहीं था। वह बस एक तथ्यात्मक वक्तव्य था, वहां कोई हिंसा न थी।

मैंने एक गरीब भिखारी के बारे में सुना है और मैं गरीब भिखारी इसलिए कह रहा हूं क्योंकि वहां अमीर भिखारी भी होते हैं-जिसने भिक्षा में भोजन मांगा। उस घर की गृहिणी ने उस पर दया प्रदर्शित करते हुए कहा-मैं तुम्हें भोजन दूंगी और यदि तुम कुछ काम भी करना चाहते हो तो कुछ लकड़ियां फाड़ दो। तुम उसे कर भी सकते हो और उसके लिए मैं तुम्हें अलग से धन दूंगी।

इसलिए उस व्यक्ति ने परिश्रम करते हुए लकड़ियां चीरी और शाम को जब वह चलने को हुआ तो उस गृहिणी ने कहा-'' तुम्हारे चोगे में छेद है। मुझे दो, मैं मिनटों में उसकी मरम्मत कर दूंगी। ''

उस व्यक्ति ने कहा-'' जी नहीं, इस लबादे में छेद होने के कारण ही सारा अंतर उत्पन्न होता है और जब यह मरम्मतशुदा चोगा होगा तो वह कुछ अलग होगा। जब तुम्हारे पास मरम्मत किया हुआ लबाद है तो यह सोची-विचारी गरीबी है और जब उसमें छेद है, तो वे ठीक अभी अथवा किसी दुर्घटनावश हुए लगते हैं। लेकिन जब आप इन छेदों को भर देंगी तो यह लबादा पुराना बन जाएगा। यह किसी दुर्घटनावश ठीक अभी क्षतिग्रस्त होता न लगकर ऐसा लगा जैसे काफी पहले यह फटा था और छेद भरकर उसकी मरम्मत कर दी गई हो। यह एक सुविचारित गरीबी बन जाती है। मेरी गरीबी को स्वाभाविक गरीबी ही रहने दीजिए। ''

लेकिन तुम्हारा पूरा मन थिकड़ी लगा मरम्मत किया हुआ है और यह सुविचारित गरीबी ओढ़े हुए है। तुम्हारे पास हर प्रश्न के उत्तर हैं लेकिन प्रतिक्रिया स्वरूप उत्पन्न हुआ एक भी उत्तर नहीं है। तुमने पहले ही से तय कर लिया है कि तुम्हें क्या करना है और इस निर्णय के कारण ही तुमने स्वयं अपने आपका ही कल्ल कर दिया है, स्वयं अपने को मार लिया है, यह आत्मघाती है।

मन एक आत्महत्या है।

स्वयं प्रवर्तित या स्वेच्छा से काम करने की शुरुआत करो। शुरू में यह कठिन लगेगा, तुम्हें असुविधा होगी। सुविचारित उत्तर के साथ कम असुविधा होगी, क्योंकि तुम अधिक निश्चित रहोगे। हम क्यों स्वाभाविक और स्वयं प्रवर्तित नहीं है। इसका कारण है भय। वहां भय यह है कि उत्तर गलत भी हो सकता है, इसलिए अच्छा यही है कि पहले ही से तय कर लिया जाए। तब तुम निश्चित होते हो, लेकिन यह निश्चित होना, मृत्यु से संबंधित है। स्मरण रहे, जीवन सदा अनिश्चित है। प्रत्येक मृत चीज ही निश्चित होती है। जीवन सदा

अविश्वसनीय है। प्रत्येक मृत वस्तु ठोस और स्थिर होती है, उसकी प्रकृति नहीं बदली जा सकती। प्रत्येक जीवन्त वस्तु गतिशील है, परिवर्तित हो रही है, वह तरल द्रव जैसी है, उसमें लचीलापन और प्रवाह है। वह किसी भी दिशा में गतिशील हो सकती है। तुम जितने अधिक निश्चित होते हो, तुम उतने ही अधिक जीवन से चूकते जाते हो। जो जानते हैं, वे जीवन को परमात्मा समझते हैं। यदि तुम जीवन से चूकते हो तो परमात्मा से ही चूक जाते हो।

कृत्य को स्वत: स्फूर्त होने दो। यदि शुरू में असुविधा हो तो उसे होने दो। उसे छिपाओ मत और न उसका दमन करो और नकली मत बनो। बच्चे जैसे बनो। लेकिन बचकानापन न हो। यदि बच्चे जैसे निर्दोष और स्वाभाविक हो गए तो तुम संत बन जाओगे और यदि तुममें बचकानापन है तो तुम एक महान विद्वान या पंडित बन सकते हो।

एक दिन एक व्यक्ति जब अपने घर लौटा तो उसने देखा कि उसके बच्चे, पड़ोसियों के बच्चों के साथ सीढ़ियों पर बैठे हैं, इसलिए उसने पूछा-'' तुम लोग क्या कर रहे हो यहां? ''

उन लोगों ने उत्तर दिया-'' हम लोग चर्च-चर्च का खेल-खेल रहे थे। ''

वह उलझन में पड़ गया, क्योंकि वे लोग तो बस बैठे थे और कुछ भी नहीं कर रहे थे। उसने पूछा-'' किस तरह के चर्च का खेल? ''

उन लोगों ने उत्तर दिया-'' हम लोगों ने गीत गाए उपदेश दिए और प्रार्थना की। जब हर चीज पूरी हो गई, अब हम लोग सीढ़ियों पर बैठे धूम्रपान कर रहे हैं। '' तुम नकल उतार सकते हो-जानकारी. बढ़ा लेना नकल उतारने जैसा ही है। एक बुद्ध जो कुछ कहता है, वह उसकी प्रज्ञा से आता है, जानकारी से नहीं, स्मृति से नहीं, वह आता है उसके अनुभव से। तुम नकल कर सकते हो। तुम चर्च-चर्च का खेल-खेल सकते हो तुम उसे रटकर मन में सुरक्षित रख दोहरा सकते हो। यह बचकानापन है। बच्चे जैसे बनो, बचकाने नहीं। बच्चे जैसे होना स्वयं प्रवर्तित है। एक बच्चा ताजा और नित नूतन होता है, उसके पास उत्तर नहीं होते, कोई इकट्ठा किया हुआ अनुभव नहीं होता। वास्तव में उसकी कोई स्मृति नहीं होती, वह सिर्फ करता है। जो भी कृत्य होता है वह उसके अस्तित्व के द्वारा आता है। वह कामना प्रेरित नहीं होता। वह परिणाम और भविष्य के बारे में सोचता नहीं, वह निर्दोष होता है।

यह भोजन बनाने वाला भिक्षु वास्तव में निर्दोष था। निर्दोष और सहज होना ध्यान है। अपने कृत्यों में ध्यानपूर्ण होना शुरू करो। छोटी-छोटी चीजों से ही शुरुआत करो। जब भोजन कर रहे हो, स्वाभाविक बनो। जब बातचीत कर रहे हो, वह स्वयं प्रवर्तित हो, जब चल रहे हो तो वह स्वत: स्फूर्त हो। जीवन को प्रतिक्रिया व्यक्त करने का अवसर दो, सोचा–समझा उत्तर मत दो। यदि कोई भी कुछ भी कहे, बस निरीक्षण करते रहो। तुम किसी चीज को, जैसा कि हमेशा से आदतन करते रहे हो, क्या सिर्फ दोहरा रहे हो अथवा हर स्थिति में तुम्हारा उत्तर क्या सहज प्रतिक्रिया है? क्या हमेशा की तरह मन पुरानी आदत को दोहरा रहा है अथवा क्या वह उत्तर तुम्हारी स्मृति से आ रहा है या सीधे तुमसे?

यही कारण है कि तुम लोगों को इतना अधिक बोर करते हो। प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को बोर कर रहा है क्योंकि प्रत्येक चीज मृत है, उधार ली हुई और बासी है, जिसमें मृत्यु की बदबू आ रही है, उसमें ताजगी नहीं है। बच्चों को खेलते हुए देखो और तुम उनमें एक ताजगी पाओगे। एक क्षण के लिए तुम यह भी भूल सकते हो कि तुम बूढ़े हो गए हो।

पक्षियों के गीत सुनो, वृक्षों और फूलों को जरा नजर भर देखो और एक क्षण के लिए तुम अपने को भूल जाओगे, क्योंकि वहां मन नहीं है। फूल सहज रूप से खिल रहे हैं जैसे भोजन बनाने वाले भिक्षु ने ठोकर मारी थी, वैसे ही वे भी प्रभावित कर रहे हैं। पक्षी गीत गा रहे हैं, वे एक सुखद अनुभूति करा रहे हैं। जीवन स्वयं अपने आप में एक तरंग और उमंग है, लेकिन वहां कोई सिद्धांत नहीं है।

प्रारंभ में यह असुविधाजनक होगा, लेकिन धैर्य रखो, उस परेशानी से होकर गुजरो। शीघ्र ही तुम्हें ऊर्जा के ऊर्ध्वगमन का अनुभव होगा। यह खतरनाक है। इसी कारण लोग इससे बचते हैं स्वयं प्रवर्तित और स्वाभाविक बनना खतरनाक है। क्योंकि जब क्रोध आता है तो बस आता है। मन कहता है, जरा सोचो। क्रोध मत करो। यह महंगा पड़ेगा इसलिए तुम हमेशा सोचते हो और अपना क्रोध जो तुमसे कमजोर हो, उन पर निकाल देते हो, लेकिन उन पर नहीं जो तुमसे अधिक शक्तिशाली हैं। किसी से प्रेम हो सकता है लेकिन प्रेम करने की अनुमति नहीं है। तुम केवल अपनी पत्नी के प्रति ही प्रेम भरा व्यवहार कर सकते हो।

जीवन यह नहीं जानता कि कौन तुम्हारी पत्नी है और कौन नहीं है? जीवन पूरी तरह अनैतिक है। वह नैतिकता जानता ही नहीं। तुम किसी और की पत्नी के प्रेम में भी पड सकते हो., क्योंकि जीवन कोई रिश्ते-नाते या किसी निश्चित संस्था को नहीं जानता। सभी संस्थाएं मनुष्य निर्मित हैं और यही खतरा है। इसलिए उसकी ओर इतनी प्रेमपूर्ण दृष्टि से मत देखो। यह अनैतिक है। यह है तुम्हारी पत्नी, इसलिए उसकी ओर प्रेम से देखते हुए मुस्कराओ। भले ही तुम प्रेम महसूस करो या नहीं, यह जरूरी नहीं है। यह तो तुम्हारा कर्तव्य है। इसी तरह से हमने प्रत्येक को मार दिया है। प्रत्येक व्यक्ति यहां किसी न किसी संस्था में रहता है और यह जीवन नहीं है।

इन खतरों -के कारण मन पहले ही से सोच लेता है कि क्या कहना है। जब तुम वापस घर लौटते हो तो तुम सोच रहे होते हो कि पत्नी क्या कहेगी और तुम कैसे उसका उत्तर दोगे? पत्नी तुम्हारी प्रतीक्षा करती हुई भली- भांति जानती. है कि तुम जो कुछ भी कहोगे वह गलत है। उसने पहले भी तुम्हारे बहाने सुने है और तुम फिर वही पुराने बहाने बनाओगे तुम्हारे देर से आने -का कारण...।

मैंने सुना है, एक दिन एक व्यक्ति ने दोपहर बाद अपनी पत्नी. से फोन पर कहा- "मेरा एक मित्र आया है और आज -रात मैं उसे अपने साथ रात्रिभोज पर घर ला रहा हूं'।

पत्नी चीखती हुई बोली-" तुम परले सिरे के बेवकूफ हो, तुम अच्छी तरह से जानते हो कि रसोइया नौकरी छोड्कर चला गया है, बेबी अपने दांत किटकिटा रही है और मुझे तीन दिनों से बुखार आ रहा है। "

उस व्यक्ति ने बहुत शांत स्वर में कहा-" मैं सब कुछ अच्छी तरह से जानता हूं। यही, कारण है कि मैं उसे घर लाना चाहता हूं क्योंकि वह बेवकूफ शादी करने की बाबत सोच रहा है। "

पूरा जीवन रीति-रिवाज और संस्कारों के दायरे में बंधकर एक पागल खाना बनकर रह गया है जिसमें कर्तव्यों को निभाना– भर होता है, यहां प्रेम नहीं है।

तुम्हें किससे कैसा व्यवहार करना है, यह सभी पूर्व निश्चित है। स्वयं प्रवर्तित नहीं है एक ढांचा है जिसका तुम्हें अनुसरण करना है जीवन ऊर्जा के अतिरेक से बहते प्रवाह को रोकना है। यही वजह है कि मन हर चीज पहले से सोचकर तैयार रखता है क्योंकि खतरा सामने होता है।

मैं उसी व्यक्ति को संन्यासी कहता हूं जो इन संस्कारों और नियम-कानूनों को तोड़कर स्वाभाविक जीवन जीता है। संन्यासी बनकर जीना सबसे अधिक संभव साहसिक कदम है। संन्यासी बनकर जीने का अर्थ है- अमन में रहना और जिस क्षण तुम बिना मन के रहते हो, तुम बिना समाज के रहते हो। मन ने ही समाज निर्मित किया है और समाज ने निर्मित किया है मन, यह दोनों एक दूसरे के आश्रित हैं। संन्यासी बनने का अर्थ है-वह सभी कुछ छोड़ देना जो नकली है। सँसार नहीं छोड़ना है, छोड़ना है वह सब कुछ जो नकली है, छोड़ना है वह सब कुछ, जो अप्रामाणिक है, छोड़ना है सभी उत्तरों को जो किसी प्रभाव में दिए जाते हैं, बिना परिणाम की चिंता किए सहज स्वाभाविक होकर जो स्वत: प्रतिक्रिया व्यक्त करता है और सचबन कर जीता है। कठिन है... क्योंकि चेहरे पर मुखौटे लगाए हुए तुम जो खेल खेलते हुए नकली जीवन जी रहे हो, उसमें तुमने काफी पूंजी लगा रखी है। संन्यास में दीक्षित होने का अर्थ है- अब तुम प्रामाणिक बनने का प्रयास करोगे, चाहे जो कुछ भी परिणाम हो, तुम उसे स्वीकार करोगे और तुम वर्तमान में जीओगे। तुम वर्तमान के लिए भविष्य को बलिदान कर दोगे और भविष्य के लिए कभी वर्तमान को कुर्बान नहीं करोगे। यह क्षण भी तुम्हारे अस्तित्व की समग्रता का क्षण बन जाएगा और तुम कभी भी पहले से ही सोचा कोई कृत्य न करोगे।

यही है वह जिसे मैं संन्यास कहता हूं। बर्तन को ठोकर मारो और आगे बढ़ जाओ, परिणाम की प्रतीक्षा मत करो। परिणाम अपनी चिंता स्वयं करेंगे, वे तुम्हारा अनुसरण करेंगे।

यह कहानी यह नहीं कहती है, लेकिन मैं इस बात को जानता हूं कि सद्गुरु उस भोजन बनाने वाले भिक्षु के पीछे जरूर भागा होगा और उसने कहा होगा, " रुको! तुम्हें चुन लिया गया है। तुम्हीं नए मठ जाओगे और लोगों के जीवन में ध्यान का पथ प्रशस्त करोगे। "

क्या कुछ और भी...!

०० प्रश्न: करे ओशो? प्रत्येक दिन जब मैं यहां बैठता, अपने मन में बिना किसी प्रश्न के बैठने का प्रयास करता हूं और जो कुछ मैं सुन रह? है उस क्षण के साथ में ठहरा रहता है उस पर कुछ कहता नहीं और न कुछ कहने या पूछने का मन-ही- मन अभ्यास करता हूं। तब आप कहते है- कोई चीज और..? और यह ऐसा है जैसे कोई सुरक्षात्मक कवच मुझे रोक लेत हो ओर मैं आपके निकट नहीं पहुंच पाता। मैं स्वयं से ही बातें करता रहता हूं और मन हमेशा जैसे सभी चीजों से मुझे सुरक्षित बना देता है।

ऐसा ही होता है क्योंकि हम हमेशा डरते रहते हैं कि कहीं कोई चीज गलत न हो जाए लेकिन मेरे सामने डरने की कोई बात नहीं, कुछ भी गलत होने नहीं जा रहा। यदि सहज स्वाभाविक रूप से कुछ गलत हो भी रहा है, तब वह ठीक ही हो रहा है। मन भय के कारण उसे नियंत्रित करना चाहता है। तुम कोई बात पूछो और दूसरे लोग कहीं हंसना शुरू न कर दें और सोचें कि तुम बेवकूफ हो इसलिए कुछ ऐसा पूछा जाए जिससे उस पर कोई हंस न सके। प्रत्येक यही सोचे कि तुमने एक अर्थपूर्ण गंभीर प्रश्न पूछा है। यही कारण है कि मन डरा हुआ है और भय तुम्हें रोक लेता है।

मेरे निकट भयभीत होने की कोई जरूरत नहीं। तुम व्यर्थ की बातें भी पूछ सकते हो, तुम बेवकूफी- भरे प्रश्न भी पूछ सकते हो, क्योंकि मेरे लिए मन ही बेवकूफियों से भरा हुआ है। वह इसके सिवाय और कुछ पूछ ही नहीं सकता इसलिए कोई समस्या ही नहीं वहां। तुम तभी प्रकट हो सकते हो जब कोई चीज गंभीर हो... क्योंकि मन कोई ऐसी चीज पूंछ ही नहीं सकता, जो बेवकूफी से भरी न हो। सभी प्रश्न मूढ़तापूर्ण हैं। पूरा मन ही गिरा देना है, केवल तभी तुम बेवकूफ न बन सकोगे।

लेकिन भय है,....यही कारण है कि प्रकट होने से पूर्व हम अभ्यास करते हैं। अहंकार कुछ महत्वपूर्ण होने का अनुभव करना चाहता है। मेरे निकट भयभीत होने की कोई जरूरत ही नहीं। मैं तुमसे कोई बुद्धिमत्तापूर्ण बात पूछने के लिए नहीं कह रहा हूं। बुद्धिमत्तापूर्ण कोई बात पूछी ही नहीं जा सकती। किसी ने कभी बुद्धिमत्तापूर्ण प्रश्न पूछा ही नहीं। यह असंभव है, क्योंकि जब तुम प्रज्ञापूर्ण बन जाते हो तो प्रश्न ही गिर जाते हैं। जब तुम्हें अक्ल आती है तो कोई प्रश्न रहता ही नहीं।

तुम कुछ-न-कुछ पूछकर बुद्धिमान बनने की नकल कर सकते हो, लेकिन उससे कोई सहायता मिलेगी नहीं। इसलिए जो लोग प्रश्न नहीं पूछ रहे हैं, वे यह न समझें कि वे बुद्धिमान हैं और प्रश्न पूछने वाला यह तीर्थ बेवकूफ है।

वह केवल तुम्हारा ही प्रतिनिधि है इसलिए वह यह अनुभव करने के लिए बाध्य है कि वह तुम लोगों से अधिक बेवकूफ है, क्योंकि वह तुम सभी लोगों की बेवकूफियों को इकट्ठा कर उन सभी का एक साथ प्रतिनिधित्व कर रहा है.. इसलिए वह भयभीत होगा ही यह स्वाभाविक है, लेकिन धीरे- धीरे यह नियंत्रण गिराते जाओ, क्योंकि जब तुम मन के नियंत्रण से मुक्त हो जाते हो, तुम मेरे लिए सहज स्वाभाविक बन जाते हो और तुम्हें इसकी एक झलक मिलेगी। सरल स्वाभाविक बनते ही तुम्हें उसकी पहली झलक मिलेगी और तब तुम

जीवन में स्वाभाविक बनने का साहस जुटा सकते हो। यदि तुम मेरे निकट रहते हुए स्वाभाविक नहीं बन सकते हो तो फिर कहीं भी तुम्हारा सहज स्वाभाविक बनना कैसे संभव हो सकेगा?

यदि तुम दूसरे तथाकथित सद्गुरुओं के पास जाओ तो वे भय उत्पन्न करते हैं। तुम उनके सामने हंस नहीं सकते, वे उसे गलत समझेंगे। तुम्हें उनके सामने बहुत उदास और गंभीर चेहरे के साथ उपस्थित होना होगा। जरा गिरजाघरों और मस्जिदों में इन तथाकथित सद्गुरुओं के लंबे लटके गंभीर चेहरों को देखो.. .ईसाई कहते हैं, जीसस कभी हंसे ही नहीं क्योंकि उनके देखे जीसस कैसे हंस सकते हैं? यदि वे हंसते हैं तो वे साधारण और अधार्मिक बन जाते हैं।

लेकिन मैं तुमसे कहता हूं कि ऐसी गंभीरता एक कवच है जो उन सभी से तुम्हारी रक्षा करती है जिनसे तुम्हारी व्यर्थता प्रकट होती है। उसे बाहर आने की अनुमति दो। उसे बलपूर्वक अपने अंदर रोके मत रहो। किसी भी तरह से उसका दमन मत करो। मेरे निकट स्वाभाविक बनकर रहो और इस स्वाभाविक बने रहने में तुम वह सीखोगे, जो किसी और तरह से तुम सीख नहीं सकते। बस मेरे निकट स्वाभाविक बनकर रहते हुए ही तुम मन को विसर्जित कर दोगे और ध्यानपूर्ण हो जाओगे।

मैं इस कारण तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर नहीं देता क्योंकि तुम्हारे प्रश्नों से कोई लेना-देना है-यह बात ही असंगत है। मैं किसी भी तरह से तुम्हारे प्रश्नों का समाधान नहीं कर रहा हूं। उनका समाधान हो ही नहीं सकता। तब मैं आखिर क्या कर रहा हूं? मैं बस यहां तुम्हारे साथ हूं। मेरा उत्तर देना तो ठीक एक बहाना है, तुम्हारा प्रश्न भी मेरे निकट बने रहने का ठीक एक बहाना है, बस जिससे तुम मेरे और निकट आओ। लेकिन हम मौन में क्यों नहीं बैठ सकते? हम बैठ सकते हैं-मैं बैठ सकता हूं लेकिन यह तुम्हारे लिए कठिन होगा। हम लोग मौन बैठ सकते हैं। न मैं कुछ बात करूं और न तुम कुछ पूछो, लेकिन तुम अपने अंदर बातें किए ही जाओगे, वहां चटर-पटर होती ही रहेगी। भयानक कोलाहल हो रहा होगा वहां, सामान्य से कहीं अधिक क्योंकि जब तुम मन से कहते हो, खामोश बैठ जाओ। मन विद्रोह करता है। तब अधिक शब्द उत्पन्न होते हैं, अधिक प्रश्न उठते हैं, आत्म प्रलाप चलने लगता है और तुम्हें पागल बना देता है। तुम मौन बैठ ही नहीं सकते, इसलिए मैं तुमसे कुछ पूछने को कहता हूं और इसी वजह से मैं उत्तर देता हूं।

यदि मैं तुमसे बातचीत कर रहा हूं तो तुम्हारा मन तो इस बीच बात न करेगा। मेरी बातचीत मेरे लिए हानिप्रद नहीं, लेकिन तुम्हारी बातचीत तुम्हें नष्ट करती है। यदि मैं बातचीत करता हूं तो तुम उसमें डूब जाते हो, तुम्हें मौन की भी कुछ झलकें मिल सकती हैं। यह जीवन कितना विरोधाभासी है, जब मैं बातचीत कर रहा हूं। तुम्हें मौन की कुछ झलकें मिलेंगी, क्योंकि तुम उसमें व्यस्त होकर उलझकर इतना खो जाते हो, तुम्हारा मन सुनते हुए तनाव से भरकर इतना सजग हो जाता है कि तुम किसी बात से चूक न जाओ। इसी सजगता में तुम मौन हो जाते हो, तुम्हारी अंदर की बातचीत रुक जाती हो। तुम्हारे अंदर मौन का जो अंतराल उत्पन्न हो जाता है, वही मेरा उत्तर है। असली चीज मेरे उत्तर नहीं हैं, इसीलिए मेरे उत्तर निरंतर बदलते रहते हैं। लोग सोचते हैं कि मैं अनिश्चित, अनियमित हूं। मैं कुछ भी कहे जाता हूं- आज कुछ कहता हूं तो कल कुछ और उनमें कोई संगति नहीं होती। मेरा संबंध किसी निश्चितता से है ही नहीं। मेरा उत्तर देना तो गिटार पर संगीत की कोई धुन सुनाने जैसा है। तुम नियमितता की बात पूछना ही मत। यह तो ऐसा है जैसे बार-बार एक ही धुन सुने जाओ। संगीतकार तो बुने बदलता रहता है। यदि तुम मेरे संगीत में पूरी तरह डूब गए तो तुम मौन के कुछ अंतराल पाओगे। उन्हीं अंतरालों में तुम पहली बार सजग बनकर जान सकोगे तुम कौन हो? यही सजगता धीरे – धीरे एक केंद्र पर एकीकृत चेतना बन जाएगी।

इसलिए यह फिक्र मत करो कि तुम क्या पूछ रहे हो। तुम जो कुछ भी पूछते हो-वही ठीक है। पर पूछते हुए मन में पूर्व अभ्यास मत करो, उसे अधिक सहज स्वाभाविक होने दो। यह तुम्हारे लिए कठिन होगा क्योंकि स्वाभाविकता और सहजता कठिन है।

मैंने एक उपदेशक के बारे में सुना है। वह गिरजाघर के उपदेश मंच पर पहली बार जा रहा था, इसलिए उसे क्या कहना है, उसका उसने पूरी रात अभ्यास किया। उसने जीसस के जीवन के बारे में एक सुंदर प्रसंग

चुना क्योंकि वह अवसर उसके जीवन का निर्णायक मोड़ था। या तो वह सफल होता है अथवा असफल, और पहली सफलता या पहली असफलता कहीं अधिक अर्थपूर्ण होती है। इसलिए पूरी रात वह यह कल्पना करता हुआ कि वह श्रोताओं के सम्मुख उपदेश दे रहा है, बोलने का निरंतर पूर्व अभ्यास करता रहा। सुबह होने पर वह इतना अधिक थक चुका था और वास्तव में उसकी आंखों में नींद भरी हुई थी कि वह जब उपदेश मंच पर खड़ा हुआ तो उसका मन कोरा हो गया। वह लगभग सब कुछ भूल गया। उसने बाइबिल का एक सुंदर उदाहरण चुना था-'' सावधान हो जाओ। मैं आ रहा हूं। '' इसलिए उसने कहा, '' सावधान हो जाउंगे, मैं आ रहा हूं। '' और उसका मस्तिष्क कोरा हो गया था। इसके बाद के शब्द वह भूल गया, इसलिए उसने सोचा-यदि मैं इसी वाक्य को दोहराऊं तो शायद प्रवाह आ जाए।

वह फिर आगे की ओर झुका और कहा, '' सावधान हो जाओ मैं आ रहा हूं। '' लेकिन कुछ भी नहीं आया। अपने को अविचलित होने का दिखावा करते हुए वह और अधिक आगे की ओर झुका, जैसे कि ऐसा वह किसी संयोगवश नहीं कर रहा था और फिर उसने कहा, '' सावधान हो जाओ, में आ रहा हूं। ''

भारी दबाव के कारण वह उपदेश मंच के नीचे बैठी एक बूढ़ी महिला की गोद में जा गिरा। उसे बहुत शर्मिंगीं हुई और उसने उसकी महिला से कहा-'' मुझे अफसोस है, लेकिन जो हुआ मेरा कभी यह मतलब नहीं था। ''

उस स्त्री ने कहा-'' कुछ भी कहने की जरूरत नहीं, मुझे सावधान होना ही चाहिए था। आपने तो तीन बार कहा था-'' सावधान हो जाओ, मैं आ रहा हूं। इसमें आपकी कोई भी गलती नहीं। ''

पूर्व अभ्यास या रिहर्सल करने की कोई जरूरत नहीं। पहले से सोच-विचार करने की कोई जरूरत नहीं। चीजों को स्वयं घटने दो, लेकिन यही वह रास्ता है जिससे चीजें संसार में स्वयं आती हैं। सभी प्रश्न मृत हैं और उसके उत्तर भी मृत हैं। प्रश्न भी सोच-विचारकर पूछे जाते हैं और उत्तर भी सोच-विचार कर दिए जाते हैं। दोनों ही मृत हैं और जो मुर्दा चीजें मिलती हैं तो उनमें कोई चमक या रोशनी नहीं होती। मैं जानता हूं कि यह तुम्हारे लिए कठिन है, लेकिन कोशिश करो। धीरे-. धीरे ऐसा घटेगा और उसे घटना ही चाहिए। एक बार जब ऐसा घटता है तो तुम मन की कारा से मुक्त हो जाओगे। तब तुम भारहीन बन जाओगे, तब मुक्ताकाश में उड़ने के लिए तुम्हारे पास पख।

तीर्थ! क्या कोई चीज और?

०० प्रश्न : प्यारे ओशो? मेरा मूड मन पहले से ही विरोधाभास में ही उलझा हुआ है और मैं अपने को आपकी कल की और आज की, अभी की वार्ता के बीच उलझा पाता हूं 'आज के प्रवचन में आपने नई स्थितियों में स्वाभाविकता से स्वस्कृर्त उत्तर आने की बात कही? जिसमें ताजगी दिखाई दे। कल जोशू के बारे में आपने जो बोधकथा कही थी, उसका संदेश था कि सभी स्थितियां और सभी मनुष्य एक जैसे

होते हैं इसलिए जोशू ने तीन व्यक्तियों को चाय पीने के लिए आमंत्रित

किया। मेरे-लिए यही विरोधाभास एक पहेली जैसा है।

कल कभी का बीत चुका। जोशू को मरे हुए एक लंबा अर्सा हो गया। केवल आज है यहां और यह भी बीता जा रहा है। सिर्फ यही क्षण है।

मन चीजों को देखता है और उनमें विरोधाभास पाता है क्योंकि मन अतीत, वर्तमान और भविष्य के बारे में सोचता है। केवल है वर्तमान ही। मन इसलिए विरोधाभास देखता है क्योंकि मन हमेशा भूत से वर्तमान की ओर क्षति करता है और तब भविष्य की ओर।

अपनी मां के गर्भ में कभी तुम एक छोटे-से कोष थे। इतने सूक्ष्म कि तुम्हें नंगी आंखों से नहीं देखा जा सकता था। अब तुम पूरी तरह भिन्न हो और युवा हो। देर सवेर तुम बूढे और अपंग भी होंगे। अभी तुम जीवित हो, लेकिन एक दिन आएगा जब तुम मरोगे भी।

मन इन सभी चीजों के बारे में एकसाथ सोचता है और एक बच्चा तथा एक बूढ़ा उसके लिए विरोधाभासी बन जाते हैं। एक बच्चा बूढ़ा कैसे हो सकता है और एक युवा, आ तब जीवन और मृत्यु विरोधाभासी बन जाते हैं,

क्योंकि मन के लिए जीवन और मृत्यु दोनों ही विचार है। अस्तित्व के लिए जब वहां जन्म है, तब मृत्यु नहीं है जब वहां मृत्यु है, तब वहां जीवन नहीं है। अस्तित्व के लिए कुछ भी विरोधाभासी नहीं है, लेकिन मन अतीत, वर्तमान और भविष्य की ओर देख सकता है और ये तीनों विरोधाभासी हैं

कल तुमने मुझे सुना वह बात खत्म हो गई। अब वहां बीता कल है ही नहीं, लेकिन, मन उसे ढोए जा रहा है-यदि तुमने कल वास्तव में मुझे सुना था। तुम उसे साथ लेकर नहीं चलोगे यदि तुम उसे साथ लिए हो तो आज तुम मुझे कैसे सुन सकते हो? कल का धुआं एक व्यवधान बन जाएगा, वहां उसकी धूल उड़ रही होगी और तुम केवल उस कल के द्वारा ही मुझे सुनोगे और तुम चूक जाओगे।

बीते कल को गिरा देना चाहिए जिससे तुम अभी और यहीं हो सको। वहां कोई विरोधाभास नहीं है। यदि तुम बीते हुए कल और आज की तुलना करो, विरोधाभास आता है। कल और आज दोनों साथ-साथ अस्तित्व में नहीं रह सकते, वे केवल स्मृति में ही साथ-साथ रह सकते हैं। अस्तित्व में कोई विरोधाभास है ही नहीं, विरोधाभास केवल मन में है।

बीते कल के बारे में क्या सोचते हो? यदि तुम उसके बारे में सोच रहे हो तो तुम यहां कैसे हो सकते हो? यह कठिन हो जाएगा और इस पूरी मूढ़ता की ओर देखो, तुम बीते कल के कारण ही मुझे आज सुनने में समर्थ न हो सकोगे। क्या तुमने मुझे कल सुना था क्योंकि वहां कल के पीछे भी कई कल हुए हैं। क्या तुम आने वाले कल में भी मुझे सुनने में समर्थ हो सकोगे-क्योंकि यह आज, कल बन जाएगा। सभी बीते कलों की फिल्म होगी वहां और उस फिल्म के द्वारा, वर्तमान में गहरे प्रविष्ट होना कठिन होगा।

इसलिए वह सब कुछ जो मैं कह सकता हूं वह अभी और यही रहना है। जोश तो मर चुका है। जो व्यक्ति यहां तुमसे बात कर रहा है, कल उसके लिए है ही नहीं, वह मर चुका। वहां नियमितता या अनियमितता का कोई प्रश्न ही नहीं। कल मैं यहां नहीं हूंगा, तुम भी नहीं होंगे। कल तो पूरी तरह से नया और ताजा होगा। केवल जब ये दो नवीनताएं मिलती हैं तो वहां जैसे बिजली चमक जाती है, वे प्रकाश किरणें नृत्य करती हैं और वह नृत्य ही हमेशा नियमित होता है।

ढोया हुआ अतीत ही समस्याएं उत्पन्न करता है। वह समस्या यह नहीं है कि कल मैंने क्या कहा था अथवा मैं आज क्या कह रहा हूं। वह समस्या है कि तुम बीते कलों का बोझ ढो रहे हो और तुम आज से चूक जाते हो। जो कुछ भी तुम सोचते हो, तुमने वह सुना है, मैंने ऐसा कहा भी नहीं। तुमने उसे कुछ-का-कुछ और सुन लिया होगा क्योंकि बहुत से बीते कलों के द्वारा जो कुछ मैं कह रहा हूं तुम उसकी व्याख्या करोगे। तुम उसमें वह अर्थ सोच लोगे जो वहां उसके है ही नहीं, तुम उन बातों से चूक जाओगे, जो वहां कही जा रही हैं और वह कोई चीज तुम्हारी अपनी बन जाएगी। तब तुम बहुत से विरोधाभास को उत्पन्न करोगे और तब मन भ्रमित होकर उलझन में पड़ जाएगा। उन्हें गिराते जाओ।

मैं कोई दार्शनिक नहीं हूं न मैं कोई व्यवस्थापक हूं। मैं पूरी तरह अराजकतावादी हूं। उतना ही नियंत्रण विहीन जितना कि जीवन स्वयं है। मैं किन्हीं भी व्यवस्थाओं में विश्वास नहीं रखता। यदि तुम हीगल या कांट के पास जाओ और कहो कि इस चीज में यह विरोधाभास है, वे तुरंत कहेंगे-हरगिज नहीं और वे तुरंत दिखा भी देंगे कि उसमें कुछ भी विरोधाभास नहीं है। यदि तुम यह सिद्ध कर सकते हो कि उसमें विरोधाभास है तो वे उसके एक खण्ड को अलग हटा देंगे जिससे व्यवस्था नियमित हो जाए। एक जुआरी दूसरे जुआरी से कह रहा था-" मैं तुम्हें उस व्यक्ति के बारे में जरूर बताना चाहता हूं जिससे मैं कल मिला था। वह एक अद्‌भुत व्यक्ति है। एक महान गणितज्ञ और एक अर्थशास्त्री उसने एक नई विधि खोजी है जिसके द्वारा एक परिवार बिना धन के जीवित रह सकता है। "

दूसरे जुआरी में दिलचस्पी पैदा हुई और वह तुरंत उस विधि को जानने के लिए उत्सुक हो उठा। उसने पूछा-" क्या वह विधि काम करती है? "

पहले मित्र ने उत्तर दिया-" वह विधि है बहुत आश्चर्यजनक लेकिन कमी केवल यही है कि वह काम नहीं करती। सिर्फ एक ही कमी है उसमें, अन्यथा उसकी विधि कमाल की है। "

सभीव्यवस्थाएं अद्‌भुत हैं। हीगल, कांट, मार्क्स और सभी की व्यवस्थाएं अद्‌भुत हैं। उनमें केवल एक ही कमी है कि वे मुर्दा हैं, मृत हैं।

मेरे पास कोई व्यवस्था नहीं है। एक व्यवस्था केवल मृत हो सकती है, वह जीवन्त नहीं हो सकती। मैं व्यवस्था विरोधी एक अराजक प्रवाह हूं मैं एक व्यक्ति भी नहीं हूं केवल एक प्रगति हूं। मैं नहीं जानता कि मैंने कल क्या कहा था और जिस व्यक्ति ने कहा था, वह अब यहां उत्तर देने को नहीं है, वह तो चला गया। मैं यहां हूं और मैं केवल इसी क्षण के लिए उत्तरदायी हूं। इसलिए कल का इंतजार मत करो क्योंकि मैं कल यहां नहीं रहूंगा।

और कौन बताने जा रहा है नियमितता और कौन खोजने जा रहा है वह रेशा, जिसमें विरोधाभास न हो। वहां ऐसा कोई भी नहीं है। मैं तुम्हें वैसा ही बनाना चाहता

केवल यही क्षण अस्तित्व में है, पूरी तरह से नियमित या पक्का क्योंकि इससे किसी की कोई तुलना नहीं। वहां न कोई अतीत है और न कोई मनुष्य, केवल यही क्षण है। तुम इसकी तुलना कर कैसे सकते हो? यदि तुम इस क्षण को जीयो तो एकनियमितता आएगी जो कोई व्यवस्था न होगी, जो जीवन्त होगी, जो अपने आप में एक ऊर्जा होगी। वह तुम्हारे ही अस्तित्व की एक आंतरिक नियमितता होगी, मन की नहीं।

मेरी दिलचस्पी तुम्हारे अस्तित्व, तुम्हारे होने में है, तुम्हारे मन में नहीं इसलिए मेरे उत्तरों को बहुत गंभीरता से मत लो, वे तो ठीक खेल की तरह हैं, शब्दों से खेलों। उनका मजा लो और उन्हें भूल जाओ। मेरा आनंद लो, लेकिन मुझे व्यवस्थित बनाने की कोशिश मत करो। तुम्हारा पूरा प्रयास ही व्यर्थ होगा और इस प्रयास में जो कुछ 'भी सुंदर है, तुम उससे चूक जाओगे। तुम बहुत कुछ उससे भी चूक जाओगे जो तुम्हारे अंतर की गहराई में रक परमानंद बन सकता है।

मेरी ओर देखो और जो कुछ मैं कहता हूं उसकी फिक्र मत करो। मेरे साथ बने रहो, सिद्धांतों और शब्दों की चिंता मत करो। मेरे साथ कृत्य में उतर जाओ-यह सुनना भी एक मानसिक प्रयास न होकर एक कृत्य बन जाना चाहिए। मुझे सुनो, लेकिन इस बारे में सोचने का प्रयास मत करो। मैं तुम्हें समझाने की कोशिश नहीं कर रहा हूं मैं तुम्हें कोई विश्वास देने का प्रयास नहीं कर रहा हूं मैं कोई पंथ या धर्म पैदा करने कोशिश नहीं कर रहा हूं और न मेरा अर्थ किसी सिद्धांत से है। जब मैं तुमसे कुछ कह रहा हूं मैं वहां हूं बात करना या कहना तो एक बहाना है। में आज किसी एक विचारधारा का प्रयोग कर सकता हूं और कल दूसरी विचारधारा का, यदि तुम मेरी विचारधारा की ओर देखोगे तो कहोगे, में अनियमितता हूं। कल मेरे वह विचार थे और आज यह।

मैं कहता हूं-'' बस मेरी ओर देखो, शब्द तो बस वस्त्र पहनने जैसे हैं। मैं नियमित हूं। मुझसे कोई विरोधाभास नहीं। मेरा अस्तित्व नियमित है। वह अन्यथा कुछ हो भी नहीं सकता, तुम्हारा अस्तित्व विरोधाभासी हो कैसे सकता है? अस्तित्व मैं अंतराल नहीं होते, वह अखण्ड है, लेकिन मन सोचना और तुलना करना शुरू कर देता है और समस्याएं तभी उत्पन्न होती है। ''

एक बार ऐसा हुआ कि एक झेन सद्‌गुरु के पास एक शिष्य आया और उसने पूछा-'' कुछ लोग इतने बुद्धिमान और कुछ लोग इतने अधिक मूर्ख क्यों हैं? कुछ लोग इतने अधिक सुंदर और कुछ लोग इतने अधिक कुरूप क्यों हैं? यह अनियमितता क्यों है? यदि हर जगह परमात्मा ही है और यदि वह सृष्टिकर्ता है, तब उसने एक को कुरूप और दूसरे को सुंदर क्यों बनाया? ''

और उसने कहा-'' मुझे कृपया कर्मों के बारे में मत बताएं। मैंने वे सभी व्यर्थ के उत्तर सुन लिए कि पुराने जन्मों के कर्मों के कारण ही एक व्यक्ति सुंदर है और दूसरा कुरूप। मेरा पिछले जन्मों से कोई मतलब नहीं। एकदम प्रारंभ में जब कोई बीता कल ही न था, यह अन्तर कैसे आया? तब क्यों एक को सुंदर और दूसरों को कुरूप बनाया गया? यदि प्रत्येक को समान बनाया गया, सभी को बराबर बनाया गया? और यदि प्रत्येक को

सामान बनाया गया, सभी को बराबर की सुंदरता और बुद्धिमत्ता दी गई तो फिर वे अलग तरह के कृत्य कैसे कर सकते हैं? कैसे उनके कार्य भिन्न हो सकते हें?''

सदगुरु ने कहा-'' प्रतीक्षा करो, यह इतना गुप्त रहस्य है कि इसे मैं तुम्हें तब बताऊंगा, जब यहां से सभी लोग चले जाएंगे। ''

वहां बहुत से व्यक्ति बैठे थे इसलिए वह बैठ गया, उत्सुकता से भरा हुआ, लेकिन लोग जाते रहे और आते रहे और वहां बताने का कोई अवसर था ही नहीं। शाम होने पर जब सभी लोग चले गए, तब उस व्यक्ति ने पूछा, '' अब...। ?? '

सद्गुरु ने कहा-'' मेरे साथ बाहर आओ। चंद्रमा उदित हो रहा था और सद्गुरु उसे बगीचे में ले गया और उसने कहा, '' वह पेड़ देख रहे हो, वह छोटा है और यहां जो वह वृक्ष है वह बहुत लंबा है। मैं इन वृक्षों के साथ वर्षों से रहा हूं लेकिन उन्होंने कभी यह प्रश्न उठाया ही नहीं -कि यह वृक्ष छोटा क्यों है और वह लंबा क्यों है? जब वहां मुझ में मन था, तब मैं भी इन वृक्षों के नीचे बैठा हुआ कई बार यही पूछा करता था कि यह पेड़ छोटा क्यों है और वह पेड़ लंबा क्यों है? जब मेरा मन गिर गया तो प्रश्न भी गिर गया। अब मैं जानता हूं कि यह वृक्ष छोटा है और वह वृक्ष बड़ा और लंबा। इसमें समस्या क्या है? इसलिए उन्हें देखो। वहां कोई समस्या है हीं नहीं। ''

मन ही तुलना करता है। तुम कैसे तुलना कर सकते हो जब मन होगा ही नहीं? तब तुम कैसे कह सकते हो कि यह वृक्ष छोटा है और वह बड़ा मन गिर जाता है- तो तुलना करना भी गिर जीती है और जब वहां कोई तुलना नहीं होती तो अस्तित्व के सौंदर्य का विस्फोट होता है। वह .ज्वालामुखी का विस्फोट बन जाता है, तब तुम देखते हो कि छोटा ही बड़ा है और जो बड़ा है वह छोटा भी है, तब सारे विरोधाभास मिट जाते हैं और आंतरिक नियमितता दिखाई देती है।

मन को विसर्जित कर दो और मुझे सुनो। तब तुम पूछोगे नहीं-कल क्यों था और आज क्यों है? तब न कोई कल होगा और न आज, तब मैं यहां हूं और तुम भी यहीं हो और इस यहां-वहां का ही मिलन हो रहा है और यह अभी और यहीं, जब मन वहां नहीं होता, एक सहभागिता या अंतर्मिलन बन जाता है।

मेरी दिलचस्पी तुम्हें कोई चीज सम्प्रेषित करने की नहीं है। मेरी दिलचस्पी एक दूसरे में घुल जाने या अंतर्मिलन में है। सम्प्रेषण का अर्थ है कि मेरा मन तुम्हारे मन से बातचीत कर रहा है और अंतर्मिलन का अर्थ है- मैं एक मन नहीं हूं और तुम भी एक मन नहीं हो-बस तुम्हारा हृदय मेरे हृदय से मिल रहा है, दोनों एक दूसरे को महसूस कर रहे हैं और वहां शब्द नहीं है।

यहीं है वह कहानी, इस बर्तन के बारे में, बिना किसी शब्द का प्रयोग करते हुए कुछ कहो। भोजन बनाने वाले भिक्षु ने ठोकर मारी और चला गया। जो कुछ भी मैं कह रहा हूं उसे ठोकर मार कर अपने अंदर चले जाओ।

आज बस इतना ही...।

छठवां प्रवचन

साधारण होने का चमत्कार

कथा:

एक दिन झेन सदगुरू बांके अपने शिष्यों के साथ शांति से बैठा
कुछ चर्चा- परिचर्चा कर रहा था, तभी एक दूसरे पंथ के धर्माचार्य ने
उसकी बात चीत में विघ्न डाल दिया, यह पंथ चमत्कारों की शक्ति में
विश्वास रखता था और उसका मानना था कि मुक्ति पवित्र मंत्री के
निरंतर उच्चारण से मिलती है बांके ने चचा-परिचर्चा रोककर उस
धर्माचार्य से पूछा- " आप क्या कहना चाहते है?"
उस धर्माचार्य ने शेखी बधारते हुए कहा- " उसके धर्म के संस्थापक
नदी के एक किनारे पर खड़े होकर अपने हाथ में लिए हुए बुश से?
नदी के दूसरे किनारे पर खड़े अपने शिष्य के हाथ में थमे कोरे कागज
पर पवित्र नाम लिख सकते हैं।"
फिर उस धर्माचार्य ने बांके से पूछा– " आप क्या चमत्कार कर सकते हें?"
बांके ने उत्तर दिया- " केवल एक हुई चमत्कार में जानता हूं, जब
मुझे भूख लगती है? मैं भोजन करता हूं और जब मुझे कम लगती है? मैं पानी पीता है।"

केवल एक ही चमत्कार है, जो असंभव जैसा है और वह है बस सहज साधारण बनकर रहना। मन की कामना होती है- असाधारण बनना। अहंकार, पहचान बनाने के लिए प्यास और भूखा रहता है। अहंकार का भोजन है पहचान, लोग उसे जानें कि तुम कुछ हो। कोई अपने इस स्वप्न को धन द्वारा पूरा करता है, कोई दूसरा इस सपने को सत्ता, शक्ति और राजनीति के द्वारा और कोई अन्य इसे चमत्कारों और चालबाजियों द्वारा पूरा करता है, लेकिन स्वप्न वहीं-का-वहीं का रहता है। मैं अपने आपको कुछ नहीं होना बरदाश्त नहीं कर सकता और चमत्कार यही है, तब तुम अपने को कुछ नहीं होना स्वीकार कर लेते हो, जब तुम ठीक वैसे ही साधारण हो जाते हो, जैसे कि दूसरे हैं। जब तुम किसी पहचान की मांग नहीं करते, जब तुम यों रहते हो जैसे तुम हो ही नहीं।

यह कहानी बहुत सुंदर है, झेन के सबसे अधिक सुंदर वृत्तांतों में से एक, और बांके सर्वश्रैष्ठ झेन सद्गुरुओं में एक हैं। बांके वास्तव में एक साधारण मनुष्य है। एक बार ऐसा हुआ कि बांके अपने बगीचे में काम कर रहा था। कोई खोजी, सद्गुरु की तलाश में आया और उसने बांके से पूछा-" माली! सदगुरु यहां कहां रहते हैं? "

बांके हंसा और उसने कहा-" जरा प्रतीक्षा करें। उस दरवाजे के पास जाएं, अंदर तुम सद्गुरु को पाओगे। "

इसलिए वह व्यक्ति घूमता हुआ उस दरवाजे के अंदर पहुंचा, उसने देखा कि सद्गुरु की चौकी पर वही व्यक्ति बैठा हुआ है जो बाहर माली का काम कर रहा था। उस व्यक्ति ने कहा-" क्या तुम मजाक कर रहे हो? फौरन इस सद्गुरु की चौकी से नीचे उतरो। इस पवित्र आसन पर आरूढ़ होकर तुम अधार्मिक कृत्य कर रहे हो। तुम अपने सद्गुरु के प्रति जरा भी सम्मान नहीं रखते। "

बाँके चौकी से उतरकर नीचे जमीन पर बैठ गया और कहा-" अब तुम्हारा उनसे मिलना कठिन है। अब तुम यहां सद्गुरु को न खोज पाओगे, क्योंकि मैं ही सदगुरु हूं। "

उस व्यक्ति के लिए यह देख पाना बहुत कठिन था कि एक महान सद्गुरु बगीचे में माली जैसा साधारण काम भी कर सकता है। वह चुपचाप वापस चला गया। वह विश्वास ही नहीं कर सका कि यह साधारण-सा व्यक्ति ही सद्गुरु था। वह उससे चूक गया।

हम सभी किसी असाधारण की खोज मैं हैं, लेकिन तुम क्योंकि असाधारण की खोज में हो! यह इस कारण क्योंकि तुम भी असाधारण बनना चाहते हो। एक साधारण सद्गुरु के साथ तुम कैसे असाधारण और अद्वितीय बन सकते हो।

बांके चर्चा –परिचर्चा कर रहा था, उपदेश दे रहा था कि एक आदमी आकर खड़ा हो गया और उससे पूछा.।

वह व्यक्ति किसी दूसरे ऐसे पंथ का था, रहो पवित्र मंत्र जाप के द्वारा साधना करते

स्मरण रहे-मंत्र जाप अधिक शक्ति प्राप्त करने के लिए एक गुहा विधि है। मंत्र जाप, आध्यात्मिक प्रक्रिया न होकर राजीनतिक है, लेकिन यह राजनीति किसी बाहरी स्थान के लिए न होकर अंदर की शक्तियों के लिए हैं। मन शक्तिशाली बनना चाहता है, यदि तुम इसे संकरा करते हुए सिकोड़ते जाओ, मंत्रजाप वही विधि है। जितना अधिक संकरा और सिकुड़ा हुआ मन होगा, वह उतना ही शक्तिशाली बन जाता है। यह ठीक पृथ्वी पर पड़ती सूर्य की किरणों जैसा है, यदि तुम एक लैस के द्वारा इन किरणों को एक स्थान गर केंद्रित कर दो तो आग उत्पन्न हो सकती है। जो किरणें- चारों ओर गिरती हुई फैल गई थीं, वे ही अब लैंस के द्वारा संकरी और तंग होकर एक जगह इकट्ठी हो गई हैं। वे एक बिंदु पर सघन हो गई हैं और अब आग का प्रकट होना संभव है।

मन एक ऊर्जा है और वास्तव में ऐसी ही ऊर्जा सूर्य के द्वारा भी आती है, वैसी ही सूक्ष्म किरणों के द्वारा। भौतिक शास्त्रियों से पूछो, वे कहते हैं कि मन के पास भी एक विद्युत-शक्ति होती है, जो विद्युत ही है।

यदि तुम न को एक लैस द्वारा केंद्रित करो और एक मंत्र एक लैस ही है- और तुम राम, राम, राम अथवा ओर, ओम् या किसी भी चीज का कोई भी एक शब्द दोहराते जाओ, दोहराते ही जाओ.. .दोहराते और दोहराते ही जाओ तो मन की पूरी ऊर्जा उस शब्द पर केंद्रित हो जाती है और वह लैस बन जाता है। अब ऊर्जा की सभी किरणें उस लैस के द्वारा ही गुजरती हुई एक बिंदु पर संकरी व सघन हो जाती हैं। वे शक्तिशाली बन जाती हैं और अब तुम चमत्कार कर सकते हो। केवल सोचने मात्र से तुम चमत्कार कर सकते हो।

लेकिन स्मरण रहे -यह चमत्कार आध्यात्मिक नहीं है। कोई भी शक्ति आध्यात्मिक नहीं होती। शक्तिहीनता, असहायता, कुछ भी न होना ही आध्यात्मिक है, शक्ति कभी आध्यात्मिक नहीं होती। यही अंतर है जादू और धर्म में जादू है शक्ति की खातिर और धर्म है शून्यता की खातिर।

एकमंत्र भी एक जादू का ही एक भाग है, न कि धर्म का। धर्म का तो उससे कोई मतलब ही नहीं, लेकिन हर चीज इकट्ठी कर दी गई है, मिला दी गई है। जो लोग चमत्कार कर रहे हैं, वे केवल जादूगर हैं, अध्यात्म विरोधी हैं, क्योंकि वे धर्म के स्थान पर जादू का प्रसार कर रहे हैं, जो बहुत खतरनाक है।

मंत्र के द्वारा मन सीमित या संकीर्ण हो जाता है। वह जितना अधिक संकीर्ण होता जाता है, उतना ही अधिक शक्तिशाली होता जाता है, तब कुछ भी हो सकता है। तब वहां केवल एक चीज होती है कि तुम स्वयं से ही चूक जाते हो। अन्य सभी चमत्कार संभव है, लेकिन सर्वोच्च चमत्कार से तुम चूक जाओगे। तुम स्वयं से चूक जाओगे क्योंकि मन को संकीर्ण बनाते हुए किसी वस्तु को प्राप्त कर सकते हो। जितना अधिक संकुचित और सीमित हो जाएगा, मन उतना ही अधिक किसी वस्तु या पदार्थ पर स्थिर होकर पदार्थगत बन जाता है। तुम उसके पीछे छिप जाते हो और पदार्थ या वस्तु बाहर होती है।

इसलिए यदि तुम मंत्रसिद्ध मनुष्य हो तो तुम इस वृक्ष से कह सकते हो-'' सूख जाओ और वृक्ष मर जाएगा। '' तुम किसी व्यक्ति से कह सकते हो-'' स्वस्थ हो जाओ '' और बीमारी गायब हो जाएगी अथवा कह सकते हो, '' बीमार हो जाओ '' और बीमारी उसमें प्रविष्ट हो जाएगी। तुम बहुत-सी चीजें कर सकते हो। तुम कुछ बन सकते हो और लोग तुम्हें शक्ति सम्पन्न व्यक्ति के रूप में पहचानेंगे, लेकिन तुम कभी परमात्मा को प्राप्त नहीं हो सकते।

परमात्मा को प्राप्त होने वाले व्यक्ति का तभी जन्म होता है, जब मन को बिकुल भी संकुचित किया ही नहीं जाता। जब मन एक ही दिशा की ओर प्रवाहित न होकर सभी दिशाओं में अतिरेक प्रवाह से छलकता हुआ

बहता है। वहां न कोई मंत्र होता है और न लैस, केवल सभी दिशाओं में प्रवाहित ऊर्जा होती है। वह हर जगह अतिरेक से बहती हुई ऊर्जा ही तुम्हें, तुम्हारे स्वयं के प्रति सजग बनाती है। क्योंकि तब कोई वस्तु या पदार्थ नहीं होता। केवल तुम और केवल वैयक्तिता होती है और अपने स्वर्य के द्वारा ही तुम परमात्मा के प्रति सजग होते हो, न कि किसी. शक्ति के द्वारा।

इस व्यक्ति ने बांके से पूछा-'' आप किस तरह के चमत्कार हर सकते हैं? मेरे सद्गुरु तो मंत्रों और पवित्र नाम के जप द्वारा तमाम चमत्कार कर सकते हैं। वे नदी के एक किनारे पर खड़े होंगे और शिष्य अपने हाथों में कोरे कागज लिए नदी के दूसरे किनारे पर खड़े होंगे दोनों किनारे एक दूसरे से आधा मील दूर होंगे और वे इस किनारे से जो शब्द लिखेंगे, वह दूसरे किनारे पर खडे शिष्यों के कोरे कागजों पर अंकित हो जाएंगे। ऐसा हमारे सद्गुरु कर सकते हैं। आप क्या कर सकते हैं? ''

और बांके ने कहा-'' हम तो यहां केवल एक ही चमत्कार जानते हैं और वह यह है कि जब मुझे भूख लगती है, मैं भोजन कर लेता हूं और जब मुझे नींद आती है, मैं सो जाता हूं। केवल इतना ही-इससे अधिक और कोई चमत्कार नहीं मेरे पास। '' तुम्हारा मन कहेगा-'' यह किस तरह का चमत्कार है? .इस पर गर्व करने जैसा कुछ है ही नहीं। '' लेकिन मैं तुमसे कहता हूं बांके ने असली या वास्तविक बात कही। यही है वह जो एक बुद्ध ही कर सकता है, यही है वह जो महावीर और जीसस कर रहे हैं। केवल तभी वह सूली पर झूलने वाले क्राइस्ट हैं, अन्यथा नहीं। जो कुछ वह कह रहा है वह कितनी साधारण चीज है। जब मुझे भूख लगती है, मैं भोजन करता हूं। क्या यह इतना कठिन है कि इसे चमत्कार कहा जाए? मैं कहता हूं यह तुम्हारे लिए कठिन है मन के लिए तो यह सर्वाधिक कठिन है- अपने को रोकना मत। जब तुम्हें भूख लगती है, मन कहता है, नहीं, आज तो धार्मिक दिन है और मैं उपवास पर हूं। जब तुम्हें भूख लगती तो मन कहता है, खा लो, क्योंकि इसी समय तो तुम प्रतिदिन भोजन करते हो। जब पेट ऊपर तक भरा होता है तो मन कहता है, खाते चलो, भोजन बहुत स्वादिष्ट है। तुम्हारा मन हस्तक्षेप करता है।

बांके क्या कह रहा है? वह कह रहा है-'' मेरे मन ने हस्तक्षेप करना बंद कर दिया है। जब मुझे भूख लगती है, मैं भोजन करता हूं और जब मुझे भूख नहीं लगती, मैं नहीं खाता। ''

भोजन करना एक स्वाभाविक चीज बन गया है। अब मन निरंतर हस्तक्षेप नहीं करता। जब मुझे नींद आती है, मैं सौ जाता हूं। नहीं, तुम ऐसा नहीं कर रहे हो। तुम सोने के लिए भी केवल संस्कार वश जाते हो, तब नहीं जाते जब नींद आ रही होती है। तुम जागते भी संस्कारण वश हो क्योंकि एक ब्रह्म मुहूर्त है और चूंकि तुम एक हिंदू हो इसलिए तुम्हें सूर्योदय से पहले उठ जाना चाहिए। तुम हिंदू हो तुम उठ जाते हो। यह हिंदू कौन है? यह तुम्हारा मन है। तुम न हिंदू हो सकते हो और न मुसलमान। वहां अस्तित्व में तुम्हारे लिए कोई सम्प्रदाय है ही नहीं, वहां केवल मन है। यह मन ही कहता है, " तुम एक हिंदू हो, तुम्हें अब उठ जाना चाहिए। '' इसलिए तुम उठ जाते हो। जब मन कहता है, '' अब समय हो गया। जाओ, जाकर सो जाओ, '' तुम सोने चले जाते हो। तुम मन का अनुसरण करते हो, प्रकृति का नहीं।

बांके कह रहा है, मैं प्रकृति के साथ बहता हूं मेरा पूरा अस्तित्व जो भी अनुभव करता है, मैं वही करता हूं। वहां नियंत्रित करने वाला खण्डित मन नहीं है और नियंत्रण करना ही एक समस्या है। तुम नियंत्रण किए चले जाते हो और यह शोर, हस्तक्षेप और मन का यह नियंत्रण करना ही समस्या है।

सपनों को भी तुम नियंत्रित करते हो। मनोवैज्ञानिकों से पूछो, वे कहते हैं कि जब तुम जागते हो, तुम्हारा नियंत्रण करना जारी रहता है। मन तुम्हें यह देखने की आज्ञा नहीं देता, जो वहां है, मन तुम्हें वह सुनने की भी आज्ञा नहीं देता जो तुमसे कहा जा रहा है, वह व्याख्या करता है। सपनों में भी तुम नकली और झूठे होते हो, क्योंकि मन तुम्हारे साथ कपटपूर्ण खेल खेले जाता है। फ्रॉयड ने खोज की कि हमारे स्वप्न भी नकली हैं। यदि तुम अपने पिता की हत्या करना चाहते हो तो सपने में तुम अपने पिता को नहीं मारते, तुम किसी और व्यक्ति को

मारते हो जो तुम्हारे पिता जैसा दिखाई देता हो। तुम अपने पत्नी को विष देना चाहते हो, लेकिन सपने में तुम अपनी पत्नी को जहर न देकर किसी ऐसी स्त्री को जहर देते हो, जो तुम्हारी पत्नी से मिलती जुलती हो। मन निरंतर हस्तक्षेप किए चले जाता है।

मैंने सुना है, एक मित्र अपने दूसरे मित्र से कह रहा था-" कल रात मैंने क्या गजब का सपना देखा। क्या शानदार सपना था। मैं सपने में कोनी द्वीप गया, वहां ऐसी स्वादिष्ट आइसक्रीम और स्वादिष्ट रात्रि भोज का मजा लिया.. .मैंने अपने पूरे जीवन में ऐसा स्वादिष्ट भोजन कभी किया ही नहीं था। "

दूसरे व्यक्ति ने कहा था-" तुम चिढ़ा रहे हो। तुम इसे अद्भुत सपना कहते हो? पिछली रात मैंने सपने में देखा कि मेरी एक बगल में एलिजाबेथ टेलर थी और दूसरी बगल में मर्लिन मुनरो और दोनों एकदम नंगी। "

दूसरे मित्र ने उत्तेजित होकर-" तब तुमने मुझे बुलाया क्यों नहीं? "

उसने उत्तर दिया-" मैंने तुम्हें आवाज दी थी, लेकिन तुम्हारी पत्नी ने कहा कि तुम पहले ही कोनी द्वीप चले गए हो। "

सपनों में भी मन संसार निर्मित करता रहता है, कोनी द्वीप, एलिजाबेथ टेलर और तुम्हें दूसरे के सपने के बारे में ईर्ष्या भी होती है, तुमने मुझे बुलाया क्यों नहीं? बांके कह रहा है-" हम केवल एक ही चमत्कार जानते हैं। हम प्रकृति को उसकी अपनी गति से आने देते हैं। "

उसमें हस्तक्षेप करने से अहंकार आ जाता है, जितना अधिक तुम हस्तक्षेप करते हो, जितना अधिक तुम नियंत्रण करते हो, उतना ही अधिक तुम्हें कुछ होने का अनुभव होता है।

साधु-संन्यासियों को देखो! उनके अहंकार इतने परिष्कृत और सूक्ष्म हैं, इतने चमकीले हैं क्यों? क्योंकि उन्होंने प्रकृति की गति में सबसे अधिक हस्तक्षेप किया है, उतना अधिक हस्तक्षेप तो तुमने भी नहीं किया है। उन्होंने अपनी कामवासना को मार ही दिया है, उन्होंने अपने प्रेम को नष्ट कर दिया है, उन्होंने अपने क्रोध का दमन किया है, उन्होंने अपनी भूख को पूरी तरह मार ही दिया है और उनका शरीर संवेदनहीन बन गया है। उनके अहंकारी होने का यही कारण है कि वे कुछ विशिष्ट हैं। जरा उनकी आंखों में झांकों, वहां सिवाय अहंकार के और कुछ भी नहीं है। उनके शरीर लगभग मृत हो गए हैं, लेकिन उनका अहंकार सर्वोच्च शिखर पर है। वे अहंकार के गौरीशंकर शिखर बन गए हैं।

यह सा! और भिक्षु वह सब कुछ समझने में असमर्थ हैं, जो बांके का अर्थ है। वह कहता है, हम एक ही चमत्कार जानते हैं, हम प्रकृति को अपनी गति से स्वयं चलने देते हैं। हम उसमें हस्तक्षेप नहीं करते। यदि तुम हस्तक्षेप नहीं करते तो तुम अनुपस्थित हो जाते हो। संघर्ष करना, वहां बने रहने का एक तरीका है।

लोग मेरे पास आते हैं और पूछते हैं, अहंकार को कैसे छोड़ा जाए? मैं उनसे कहता हूं उसे छोड़ेगा कौन? यदि तुम उसे गिराने या छोड़ने का प्रयास करोगे तो किसी के सामने तुम यह दावा करोगे-' मैंने अहंकार गिरा दिया ' यह दावा करने वाला है कौन? कौन कर रहा है यह दावा? यह अहंकार ही है और सबसे अधिक सूक्ष्म अहंकार हमेशा अहंकार शून्य होने का बहाना करता है।

मैं केवल एक ही चमत्कार जानता हूं प्रकृति को अपनी गति से स्वयं चलने देता हूं जो कुछ होता है, उससे राजी हो जाता हूं। हस्तक्षेप मत करो, उसके रास्ते में मत आओ और अचानक तुम रहोगे ही नहीं। बिना प्रतिरोध, संघर्ष, आक्रमण और बिना हिंसा किए तुम वहां हो ही नहीं सकते। अहंकार प्रतिरोध के द्वारा ही अस्तित्व में बना रहता है। यह बहुत गहराई से समझ लेने जैसा है। तुम जितना अधिक संघर्ष करो, तुम उतना ही अधिक वहां होगे।

सैनिक युद्ध करते हुए क्यों इतनी प्रसन्नता का अनुभव करते हैं? युद्ध करना कोई ऐसी सुंदर चीज नहीं है, युद्ध तो बहुत कुरूप है, लेकिन सैनिक लड़ते हुए इतने खुश क्यों बने रहते हैं? यदि तुमने कभी भी युद्ध में भाग

लिया है तो फिर तुम शांति में कभी भी प्रसन्न नहीं रहोगे क्योंकि युद्ध करते समय अहंकार अपने शिखर पर होता है। प्रतियोगिता में तुम इतनी प्रसन्नता का अनुभव क्यों करते हो? यह इसलिए क्योंकि दूसरों को पछाड़ते हुए अहंकार उठ खड़ा होता है और संघर्ष करते हुए तुम शक्तिशाली हो जाते हो।

लेकिन दूसरे से लड़ना इतना अधिक अहंकार की पूर्ति नहीं करता क्योंकि तुम हार भी सकते हो-वहां यह संभावना भी बनी रहती है-लेकिन अपने से स्वयं लड़ते हुए तुम कभी नहीं हार सकते। तुम हमेशा जीतने वाले रहते हो। तुम्हारे सिवाय वहां कोई दूसरा नहीं होता। दूसरे से लड़ते हुए वहां असफल होने का भय बना रहता है, लेकिन तुम्हें स्वयं से लड़ने में कोई भय होता ही नहीं, तुम अकेले ही होते हो वहां। तुम आज नहीं तो कल जीतोगे, लेकिन अंतिम रूप में तुम जीतोगे ही क्योंकि तुम अकेले हो।

संन्यासी स्वयं अपने से ही संघर्ष कर रहा है, जबकि सैनिक दूसरों के विरुद्ध लड़ रहा है, व्यापारी भी दूसरों से संघर्ष कर रहा है, लेकिन संन्यासी स्वयं से ही लड़ रहा है। भिक्षु और संन्यासी अधिक चालाक होते हैं, उन्होंने ऐसा रास्ता चुना है, जहां उनकी जीत अनिवार्य है। तुम इतने हिसाबी-किताबी नहीं हो, तुम्हारा पथ जोखिम भरा है। तुम सफल भी हो सकते हो, तुम असफल भी हो सकते हो, और किसी भी क्षण तुम्हारी सफलता, असफलता में भी बदल सकती है, क्योंकि तुम्हारे चारों ओर वहां अनेक .लोग संघर्ष कर रहे हैं। तुम्हारा अस्तित्व इतना अधिक नगण्य और छोटा है कि तुम नष्ट भी हो सकते हो, लेकिन .जब तुम स्वयं से लड़ रहे हो तो, तुम अकेले हो, वहां कोई प्रतियोगिता नहीं है। इसलिए वे लोग बहुत अधिक चालाक और बेईमान हैं, जिन्होंने संसार से पलायन कर स्वयं से लड़ना शुरूकर दिया है। जो लोग इतने चालाक नहीं हैं, वे लोग अधिक सरल हैं और संसार में दूसरों से लड़े जा रहे हैं, लेकिन मूलभूत आवश्यक चीज है-लड़ाई में बने रहना।

बांके कह रहा है-मैं संघर्ष करने वाला नहीं । मैं कभी भी लड़ता ही नहीं। जब मुझे भूख लगती है। मैं खा लेता हूं। जब मुझे नींद आती है, मैं सो जाता हूं। जब में जीवित हूं तो मैं जीवित हूं जब मौत आएगी मैं मर जाऊंगा। मैं रास्ते में आता ही नहीं। वह कहता है, " केवल यही चमत्कार मैं जानता हूं। "

लेकिन इसे चमत्कार क्यों कहा जाए? सभी पशु इसे पहले ही से कर रहे हैं, वृक्ष भी इसे पहले ही से कर रहे हैं, पक्षी भी इसे पहले ही से कर रहे हैं और पूरा अस्तित्व इसे पहले ही से कर रहा है। इसे चमत्कार क्यों कहा जाए ' मनुष्य इसे नहीं कर सकता। यह पूरा अस्तित्व ही एक चमत्कार है, सिवाय मनुष्य के।

ईसाइयों की कहानी- आदम को ईडेन के बाग से बाहर निकाल दिया गया, बहुत अर्थपूर्ण दिखाई देती है, यह बहुत संगत और महत्वपूर्ण लगती है।

यह पूरा अस्तित्व एक निरंतर गतिशील चमत्कार है, यह एक अटूट अनुभूति है। प्रतिक्षण यहां चमत्कार होते ही रहते हैं। अस्तित्व अद्‌भुत है, लेकिन आदम उससे बाहर निकाल दिया गया है।

आदम उससे बाहर क्यों निकाला गया? कहानी कहती है क्योंकि उसने ज्ञान के वृक्ष का फल खा लिया था और परमात्मा ने उसके लिए मना किया था। परमात्मा ने कहा था, " इस ज्ञान के वृक्ष का फल कभी मत खाना। सिवाय इसके सारे वृक्ष तुम्हारे उपयोग के लिए उपलब्ध हैं। " लेकिन शैतान ने फुसलाया। वास्तव में उसने पहले ईव को ही फुसलाया, क्योंकि शैतान हमेशा स्त्री के द्वारा ही प्रवेश करता है। क्यों? क्योंकि स्त्री ही मनुष्य की सबसे बड़ी कमजोरी है वही सबसे कमजोर कड़ी है, जहां से शैतान प्रविष्ट हो सकता था, सीधे उसका पुरुष में प्रवेश करना कठिन है क्योंकि वह उससे अच्छी खासी लड़ाई लड़ेगा और उसके लिए कठिनाई उत्पन्न करेगा, लेकिन स्त्री के द्वारा वह पुरुष को फुसला सकता है इसलिए शैतान ने ईव से कहा, " केवल यही फल खाने जैसा है और यही वजह है कि परमात्मा ने इसे खाने से मना किया है। यदि तुम इस फल को खाओगी तो तुम भी परमात्मा जैसी हो जाओगी। वह तुमसे ईर्ष्या करता है, तुमसे डरता है। यदि तुमने इस फल को खा लिया तो तुम परमात्मा जैसी ही हो जाओगी। तुम स्वयं परमात्मा ही हो जाओगी। "

ईव अपने को रोकन सकी। प्रलोभन बहुत बड़ा था। उसने आदम को फुसलाया। आदम ने कहने का प्रयास भी किया-''यह ठीक नहीं होगा, क्योंकि परमात्मा ने इसे खाने से मना किया है। ''

लेकिन जब परमात्मा और पत्नी के बीच चुनने की समस्या हो तो तुम अपनी पत्नी को ही चुनोगे। वास्तव में वहां कोई वास्तविक विकल्प है भी नहीं, क्योंकि वह चौबीस घंटे ऐसी मुसीबत खड़ी करेगी, जबकि परमात्मा इतनी अधिक मुसीबत खड़ी नहीं कर सकता।

इसलिए अंत में आदम को वह फल खाना ही पड़ा और जिस क्षण उसने फल खाया, वह अहंकार के प्रति सचेत हो गया, वह सजग. हो गया 'कि मैं हूं तुरंत ही वह-ईडेन के उद्यान से निष्कासित कर दिया गया।

यह बहुत सुंदर कहानी है और वास्तव में यह कहानी सभी रहस्यों की कुंजी है। ज्ञान ने ही तुम्हें इस अद्‌भुत संसार से निष्कासित कर दिया है, जो तुम्हारे अंदर ही है। इससे पहले आदम बने जैसा निर्दोष था-वह नंगा रहता था, लेकिन सजग नहीं था कि वह नंगा है, वह सजग नहीं था कि नंगे रहना कोई अपराध है। वह ईव से प्रेम करता था, लेकिन वह प्रेम स्वाभाविक था। वह कभी इसके प्रति सजग नहीं था कि वह कुछ भी गलत कर रहा है अथवा ऐसा करने में कोई पाप है।

ज्ञान से पहले वहां कोई पाप नहीं था। एक बच्चा कोई पाप कर ही नहीं सकता, केवल एक बूढ़ा आदमी ही पापी हो सकता है इसलिए सभी पापी बूढ़े ही होते हैं। एक बच्चा पापी नहीं हो सकता, वह स्वयं के प्रति भी सजग नहीं होता कि वह है भी। आदम एक बच्चे जैसा था। ईव भी एक बच्ची जैसी थी। वे आनंदित रहते थे, लेकिन वहां कोई और दूसरा था ही नहीं जो आनंद मना रहा हो।

वे इस रहस्य और चमत्कार के एक भाग थे। जब उन्हें भूख लगती थी, वे खा लेते थे, जब उन्हें नींद आती थी, वे सो जाते थे। वे जब प्रेम करने जैसा महसूस करते थे, प्रेम कर लेते थे। हर चीज एक प्राकृतिक घटना होती थी। तब वहां मन नहीं था, जो नियंत्रित करे। वे पूरे अस्तित्व के एक भाग थे, जो नदी की तरह बहे जा रहे थे, वृक्षों की तरह पुष्पित हो रहे थे, पक्षियों की भांति गीत गा रहे थे, वे एक दूसरे के मित्र नहीं थे। मित्रता का भाव तो ज्ञान के बाद आया कि मैं हूं।

आदम और ईव ने जो पहला काम किया, वह था अपनी नग्नता को छिपाने का प्रयास करना। वह बचपना अब खो गया था। जब एक बच्चे को यह अनुभव होना शुरू हो जाता है कि वह नंगा है और यही वह बिंदु था, जहां आदम और ईव को ईडेन के स्वर्गिक उद्यान से निष्कासित कर दिया गया।

मेरा हमेशा ही यह अहसास रहा है कि ईसाइयों की इस कहानी का उत्तर, जीसस में नहीं, महावीर में विद्यमान है। यदि ज्ञान का फल खाने से आदम सजग हुआ और अपने को नग्न देखकर उसे अपराध बोध हुआ तो इसका उत्तर तो महावीर में ही निहित है। जिस क्षण महावीर मौन हुए तो पहली चीज जो उन्होंने की, वह नग्न हो जाना था और मैं कहता हूं कि महावीर ने ईडेन के उद्यान में फिर से प्रवेश किया। वे फिर एक निर्दोष बच्चे बन गए। ईसाइयों की यह कहानी अधूरी है और यह जैनों की कहानी उसका दूसरा भाग है और दोनों को मिलाकर ही कहानी पूरी होती है। यह पूरा अस्तित्व एक चमत्कार है और तुम्हीं उस ईडेन उद्यान से निष्कासित किए गए हो।

बांके कहता है-' हम तो केवल एक चमत्कार जानते हैं। ' हम इस महान आश्चर्यजनक संसार में फिर प्रविष्ट हो गए हैं। हम अहंकार के कारण उससे जरा भी पृथक नहीं है और न हमारी कोई वैयक्तिकता है। वहां भूख है लेकिन वहां कोई है नहीं, जो भूखा हो। नींद आती है, लेकिन वहां कोई है नहीं, जिसे नींद' आ रही हो। वहां प्रतिरोध करने अथवा निर्णय करने के लिए अहंकार है ही नहीं, हम नदी की तरह बहते हैं, पक्षी की भांति आकाश में उड़ते हैं। न तो कुछ गलत है और न कुछ ठीक। यह द्वंद्व के पार की स्थिति है, यह सर्वश्रेष्ठ व्यवहार है, जहां न तो कुछ बुरा है और न कुछ अच्छा। तुम निर्दोष बन गए हो। तुम्हारे साधु-संत निर्दोष नहीं बन सकते क्योंकि उनकी अच्छाई बलपूर्वक लाई गई है, उनकी अच्छाई पहले ही से कुरूप है। उनकी अच्छाई व्यवस्था करके लाई गई है, वह नियंत्रित और विकसित की गई है, वह निर्दोष नहीं है।

मैंने एक बूढ़ी स्त्री के बारे में सुना है। उसने एक बौद्ध भिक्षु की तीस वर्ष तक सेवा की। उसने उस भिक्षु के लिए सब कुछ किया। वह ठीक उसकी मां की तरह देखभाल करती थी और उसकी शिष्या भी थी। वह बौद्ध भिक्षु ध्यान बस ध्यान में ही डूबा रहता था। जिस दिन वह बूढ़ी स्त्री मरने जा रही थी, उसने शहर से एक वेश्या को बुलाया और उससे कहा- " उस भिक्षु की झोपड़ी में जाओ। उसमें प्रविष्ट होकर उस भिक्षु के निकट जाओ, उसका आलिंगन करो और लौटकर उसकी प्रतिक्रिया के बारे में मुझे बताओ। क्योंकि आज की रात मैं मरने जा रही हूं और मैं निश्चित हो जाना चाहती हूं कि मैं प्रत्येक स्थिति में एक ऐसे व्यक्ति की सेवा कर रही थी जो निर्दोष है। मैं इस बाबत आश्वस्त नहीं हूं। "

वह वेश्या भयभीत हो गई। उसने कहा-" वह इतने अच्छे व्यक्ति हैं, इतने बड़े संत है कि मैंने ऐसी साधुता कभी किसी में आज तक देखी ही नहीं। "

वहां जाने और उस भिक्षु की परीक्षा लेने के लिए भी उस वेश्या को अपराध बोध होने लगा, लेकिन उस बूढ़ी स्त्री ने उसे प्रलोभन देकर राजी कर लिया। वह गई उसने झोपड़ी का दरवाजा खोला। वह भिक्षु अगन कर रहा था। वह मध्यरात्रि का समय था और उस एकांत भाग में कोई आस-पास था भी नहीं।

भिक्षु ने अपनी आंखें खोली, उस वेश्या की ओर देखा और एक साथ उछलकर खड़ा हो गया। उसने स्त्री से कहा-" तुम अंदर आई क्यों? तुरंत बाहर निकल जाओ। " यह कहते हुए उसका पूरा शरीर कांप रहा था। वह वेश्या उसके और निकट गई। भिक्षु कूदकर झोपड़ी से बाहर आकर चिल्लाने लगा-" यह स्त्री मुझे पथभ्रष्ट करना चाहती है। "

वह वेश्या वापस चली गई। उसने उस बूढ़ी स्त्री को पूरी बात बताई। उस स्त्री ने अपने सेवकों को उस भिक्षु की झोपड़ी में आग लगाने के लिए भेजा। उसने कहा- "यह व्यक्ति किसी काम नहीं यह अभी तक निर्दोष नहीं हुआ है। वह एक संत हो सकता है, पर यह ओढ़ा गया संतत्व कुरूप है, यह नियंत्रित है। इतने अचानक उसे स्त्री में वेश्या क्यों दिखाई दी? एक स्त्री प्रवेश कर रही थी झोपड़े में, वेश्या नहीं। उसने यह कैसे सोच लिया कि वह उसे पथभ्रष्ट करने आई है? उसे उसके साथ कम-से- कम सज्जनता का तो व्यवहार करना चाहिए था। उसने उससे कहा होता, आओ बैठो। तुम क्यों आई हो? कम-से-कम उसमें थोड़ी सी भी करुणा दिखाई होती। यदि उसने उसे आलिंगन में भी लिया था तो क्या उसे भयभीत हो जाना चाहिए था नहीं, उसका संतत्व विकसित किया गया एक ओढ़ी गई मुद्रा है। यह अंदर से नहीं आया। यह बाहर से लाया गया है। उसने इसकी व्यवस्था कर सब कुछ ठीक-ठाक किया है, लेकिन अंदर से वह निर्दोष नहीं है। एक बच्चे जैसा सरल नहीं है।

जब तक संतत्व बच्चे जैसा निर्दोष नहीं होता, वह किसी भी तरह संतत्व है ही नहीं, वह बाहर से ओढ़े गए मुखौटे के पीछे ठीक एक पापी को छिपाने जैसा है।

बांके ने कहा-" मैं एक ही चमत्कार जानता हूं। " क्या है वह चमत्कार? वह है एक बच्चे जैसा बन जाना। जब एक बच्चे को भूख लगती है, वह रोना-चीखना शुरू कर देता है और बताता है कि वह भूखा है। जब उसे नींद आती है वह सो जाता है। हम एक बच्चे को भी व्यवस्थित करने की कोशिश करते हैं और उसकी निर्दोषता नष्ट कर देते हैं।

अब पश्चिम में मां के लिए वहां पुस्तकें और गाइड उपलब्ध हैं। यह किस तरह का संसार होने जा रहा है, जब एक मां को बच्चे को पालने के लिए पथ प्रदर्शिका पुस्तक की जरूरत होती है। वे निर्देश देते हुए कहते हैं-" तीन घंटे बाद ही दूध. दो, कभी भी उससे पहले नहीं, लेकिन प्रत्येक तीन घंटे बाद। बना रो रहा है, चिल्लाए जा रहा है, लेकिन यह बात जरूरी है ही नहीं कि बच्चा भूखा है, जरूरी बात यह है कि गाइड पुस्तक कहती है, केवल तीन घंटे के बाद ही.। मां प्रतीक्षा कर रही है कि कब तीन घंटे पूरे हों वह बच्चे को दूध पिलाएं। जैसे मातृत्व यथेष्ट नहीं है, किसी दिशा निर्देश की जरूरत है। और एक बच्चे के प्रामाणिक रूप से चीखने-होने पर भी विश्वास नहीं किया जा सकता है। जैसे कि बच्चा धोखा देने की कोशिश कर रहा है, लेकिन बच्चा धोखा क्यों देगा? यदि वह भूखा है तो वह रो रहा है।

हम बचपन को भी नष्ट करने का प्रयास कर रहे हैं। देर-सवेर वह भी हमारा अनुसरण करेगा ही, वह भी घड़ी देखता रहेगा और जैसे ही तीन घंटे पूरे होते हैं वह चीख के द्वारा कहेगा, ' मैं भूखा हूं। ' यह भूख नकली होगी और जब भूख भी नकली हो जाती है तो हर चीज नकली हो जाती है।

हम बच्चे को सो जाने के लिए विवश किए जा रहे हैं, जब हम सोचते हैं कि उसके सोने का समय हो गया लेकिन नींद को समय के द्वारा नियंत्रित नहीं किया जा सकता। नींद अंदर स्वत: आने वाली कोई चीज है। जब बच्चा नींद का अनुभव करता है, वह सो जाएगा, लेकिन मां-बाप बच्चे पर बल प्रयोग कर रहे हैं, " जाओ जाकर सो जाओ। " जैसे मानो नींद को भी आदेश दिया जा सकता है। बच्चे जरूर सोचते होंगे तुम बेवकूफ हो, वे सोचते होंगे, तुम्हारा दिमाग खराग हो गया है। बच्चे को सोने के लिए कैसे विवश किया जा सकता है? वह बहाना बना सकता है, इसलिए जब तुम वहां हो, वह अपनी आंखें बंद कर सकता है। जब तुम चले जाते हो, वह अपनी आंखें खोल सकता है, क्योंकि नींद को आने के लिए विवश नहीं किया जा सकता। कोई भी या तुम भी नींद को विवश नहीं कर सकते। यदि नींद नहीं आ रही हो तो तुम कैसे सो सकते हो?

लेकिन इसी तरह यह सम नष्ट होता है। इसी तरह से शैतान फुसलाता है और इसी तरह से हम बच्चे को स्वर्ग के ईडेन उद्यान से बाहर ले आते हैं। स्मरण रहे, केवल न और ईव ही स्वर्ग के उद्यान में नहीं जन्में, प्रत्येक बच्चा भी वहीं जन्म लेता है क्रम वही प्रत्येक का जन्म स्थल है और समाज ही बच्चे को उससे बाहर ले जाता है। इसलिए समाज ही शैतान है। समाज ही फुसलाता है कि यह करो, वह करो और बच्चा उससे बाहर हो जाता है। समाज ही उसमें अहंकार को निर्मित करता है और वही उसे नियंत्रण करने वाला बनाता है।

केवल यही चमत्कार संभव है कि तुम ईडेन के उद्यान में फिर से प्रविष्ट हो जाओ, बच्चे जैसे बन जाओ और प्रकृति को अनुमति दो कि वह तुममें प्रवाहित हो। उसे रोको मत, उसके रास्ते में रोड़े बनकर खड़े मत हो, उसे धकेलो मत, बस उसके साथ बहो। तुम्हीं प्रकृति हो, तुम्हीं ताओ हो तुम्हीं एक अविराम रहस्य के एक भाग हो, जो निरंतर घट रहा है।

बांके ठीक कहता है। हमारे लिए यह कठिन है क्योंकि हम मन और उसके-द्वारा किए जाने वाले नियंत्रण के बहुत अधिक आदी हो चुके हैं और जब मैं तुमसे कहता हूं स्वाभाविक बन जाओ तो तुम स्वाभाविक होने का प्रयास करोगे और चूक जाओगे क्योंकि कोई कैसे स्वाभाविक बनने की कोशिश कर सकता है? यदि मैं कहता हूं कि कोई भी काम मत करो, तुम कोई भी काम न करने की कोशिश करते हो, यदि मैं निष्किय होने की बात कहता हूं तो तुम निष्किय होने के लिए हर प्रयास करते हो। लेकिन प्रयास करना ही सक्रियता है इसलिए यह बात समझ लेने जैसी है कि किसी प्रयास की आवश्यकता ही नहीं है। तुमने अपनी ओर से कोई भी प्रयास किया तो तुम इस चमत्कार से चूक जाओगे।

तब आखिर किया क्या जाए? कुछ करना ही नहीं है। बस यह अहसास बना रहे। प्रकृति से राजी हो जाना है। प्रारंभ में यह कठिन लगेगा क्योंकि तुम हमेशा बीच रास्ते में कूदते रहे हो, सदा हस्तक्षेप करते रहे हो। शुरू में यह कठिन लगेगा, लेकिन बस तीन सप्ताह में ही तुम प्रकृति से राजी होने लगोगे। जब तुम्हें भूख लगे, तभी खाना, जब तुम्हें नींद आए तभी सोना। जब तुम्हें भूख न लगी हो, हरगिज मत खाना और यह कोई उपवास नहीं है, इसे याद रखना क्योंकि उपवास मन से ही आता है, तुम्हें भूख लगी है, लेकिन तुम उपवास कर रहे हो। इसमें कोई नुकसान नहीं है कि तुम्हें नींद नहीं आ रही है, कोई नुकसान इसलिए नहीं है क्योंकि शरीर को उसकी जरूरत ही नहीं है इसलिए उसे विवश मत करो। जागे रहो, आनंद लो, टहलने निकल जाओ, कमरे में बैठकर कोई गीत गा, नाचो, या ध्यान करो, लेकिन सोने के लिए शरीर को विवश मत करो। जब तुम्हें नींद आने जैसा लगे, जब आंखें कहने लगे कि अब जाकर सो जाओ... और फिर सुबह बिस्तर से बाहर आने को अपने को विवश मत करो, अपने आंतरिक अस्तित्व को एक अवसर दो, उसे अनुमति दो। वह तुम्हें उसका संकेत देगा और आंखें स्वमेव खुल जाएंगी।

कुछ दिनों तक तो कठिनाई होगी, लेकिन तीन सप्ताह में और मैं कहता हूं तीन सप्ताह तक यदि तुमने हस्तक्षेप न किया तो और यदि तुमने बीच में हस्तक्षेप किया तो तीन जन्म भी काफी नहीं है। हस्तक्षेप मत करो और प्रतीक्षा करो चीजों को स्वयं घटने दो। तीन सप्ताह के अंदर तुम फिर से प्रकृति के साथ एक हो जाओगे और अचानक तुम देखोगे कि तुम ईडेन के उद्यान में रह रहे हो और आदम को कभी भी वहां से निष्कासित नहीं किया गया-वह सिर्फ उसका ख्याल है कि वह बाहर कर दिया गया है। ज्ञान के फल का यही अर्थ है कि तुम महज यह सोचने लगो कि तुम्हें वहां से निष्कासित कर दिया गया है। निष्कासित होने के बाद तुम रहोगे कहां? पूरी प्रकृति ही ईडेन का उद्यान है। संपूर्ण अस्तित्व ही परमात्मा का घर है इसलिए निष्कासित होने के बाद तुम अन्यत्र कहां हो सकते हो?

बांके कहता है-" मैं उद्यान में फिर से प्रविष्ट हो गया हूं। " बांके मरने जा रहा है। उसके शिष्य बहुत चिंतित हैं और उन्होंने पूछा, हम लोगों को क्या करना चाहिए? हम लोग आपके मृत शरीर की क्या व्यवस्था करें? क्या उसे सुरक्षित रखा जाए?"हमें हिंदुओं और बौद्धों की तरह क्या उसे जला देना चाहिए अथवा हम उसे जमीन में दफन कर दें, जैसा कि मुसलमान और ईसाई करते हैं? क्योंकि शिष्यों ने कहा-" हम लोग यह नहीं जानते कि आप हिंदू हैं, बौद्ध या मुसलमान? आपने हम सभी को इतना अधिक भ्रमित कर दिया है कि हम लोगों को कुछ भी नहीं मालूम कि आप कौन हैं और हम लोगों को क्या करना चाहिए? "

बांके ने कहा-" जरा प्रतीक्षा करो, पहले मुझे मर जाने दो। तुम लोग इतनी जल्दबाजी में क्यों हों? "

मन हमेशा उछलकर आगत भविष्य के बारे में सोचने लगता है।

तुम लोग इतनी जल्दबाजी में क्यों हो? तुम लोग अपने को मेरा शिष्य कहते हो। पहले मुझे मरने दो। फिर तुम लोग जो चाहो करना, क्योंकि फिर मैं तो वहां हूंगा ही नहीं। चाहे तुम गाडो, चाहे जलाओ या तुम उसे सुरक्षित रखा, इससे बांके को क्या फर्क पड़ता है? बांके तो वहां होगा ही नहीं, लेकिन उछलकर आगे की बात सोचना मन की प्रवृत्ति है। वह हमेशा आगत भविष्य में छलांग लगा देता है।

एक मंत्री ने अपने उद्यान के रात्रिभोज के जलसे में लोगों को आमंत्रित किया। वह एक बूढ़ी महिला को निमंत्रित करना भूल गया। दावत शुरू होने से ठीक पहले उसे उसका ख्याल आया, इसलिए उसने उस महिला को फोन किया क्योंकि वह महिला बहुत धार्मिक और बहुत खतरनाक थी और अधिक धार्मिक लोग ही हमेशा खतरनाक होते हैं। उसे भय था कि वह महिला कोई मुसीबत या झंझट खड़ा कर सकती है। वह उसकी सभा की सबसे पुरानी सदस्य थी और उसने गिरजाघर के लिए अनुदान में बड़ी धनराशि देकर उसके लिए बहुत कुछ किया था। इसलिए उसने फोन पर उस महिला से कहा- "मुझे माफ करें मैं गलती से आपको बुलाना भूल गया और कृपया आप जरूर आने का कष्ट करें। "

उस बूढ़ी महिला ने कहा- " अब तो काफी देर हो चुकी है। मैं तो पहले ही वर्षा हो जाने की प्रार्थना कर चुकी हूं। "

वहां खुले में गार्डेन पार्टी होने जा रही थी और उस धार्मिक महिला को चूंकि आमंत्रित नहीं किया गया इसलिए उसने वर्षा होने की पहले ही परमात्मा से प्रार्थना कर दी। उसे बुलाने में काफी देर हो चुकी थी। अब फोन करने का कोई लाभ न था। अब कुछ भी नहीं किया जा सकता था।

मन हमेशा आगत भविष्य में छलांग लगा देता है उसका यही तरीका है।

कम-से- कम छलांगें भरो और यदि ऐसा करना तुम्हारे लिए कठिन हो, मन को एक ही स्थान पर उछलने के लिए कहो लेकिन कूदकर छलांग मत लगाओ। एक ही स्थान पर जोगिंग करना या उछलना एक ध्यान है। जोगिंग है जमीन के एक ही स्थान पर बार-बार उछलना। मन को आगे कूद पड़ने की आदत होती है। उसे पूरी तरह रोकना कठिन हो सकता है इसलिए आधा- आधा करो। उछलो लेकिन आगे की ओर न उछलकर एक ही स्थान पर उछलो। आधी क्रिया को काट दो। तब आहिस्ता- आहिस्ता उछलने की गति करते जाओ, धीमे और धीमे फिर खड़े रहो बिना हिले हुले और तब बैठ जाओ। जब तुम यहीं होते हो आगे की ओर उछलते नहीं पूरी तरह शांत बैठ जाते हो, चमत्कार अपने आप घटित होता है। इस क्षण में बने रहना ही चमत्कार

लेकिन मैं जानता हूं बांके तुम्हें अच्छा नहीं लगेगा। तुम्हें साईं बाबा अच्छे लगेंगे क्योंकि साईं बाबा के साथ तुम्हारे मन के तर्क की संगति बैठ जाती है। बांके के साथ तुम्हारा मन तालमेल नहीं बैठा सकता, उसे विसर्जित ही होना होगा। केवल तभी उसके साथ लयबद्धता घट सकती है। साईं बाबा के साथ तुम चीजों को समझ सकते हो, वे तर्क के साथ वैसी ही हैं। जो तुम्हारा मन कहता है कि वहां चमत्कार घट रहे हैं लेकिन यह धर्म तो है ही नहीं-यह तो जादू का खेल है और हुडनी जादूगर तथा साईं बाबा में कोई भी अंतर नहीं है। अंतर केवल इतना है यदि कोई है तो सिर्फ इतना कि हुडनी साईं बाबा से अधिक ईमानदार था क्योंकि वह कहता था, मैं एक जादूगर हूं और सभी चमत्कार मेरी हाथ की सफाई है। जो कुछ साईं बाबा कर रहे हैं उसे कोई भी जादूगर कर सकता है लेकिन तुम एक जादूगर को अधिक सम्मान नहीं दोगे क्योंकि वह ईमानदार और सच्चा है और वह कहता है- " यह केवल चालबाजी और हाथ की सफाई है, "इसलिए तुम कहते हो- " ठीक है, तो यह सिर्फ चालबाजियां हैं, चमत्कार नहीं। "

जब कोई दूसरा कहता है-" यह चालबाजिया न होकर चमत्कार है और परमात्मा की शक्ति मेरे द्वारा प्रकट हो रही है। " तब तुम्हारा मन उछलना शुरू हो जाता है। तब तुम सोचते हो, यदि मैं इस व्यक्ति का निकट शिष्य बन जाऊं तो मैं कोई कुछ बन सकता हूं और मैं भी कुछ ऐसा ही कर सकता हूं।

यदि तुम मेरे पास ऐसे ही किसी चमत्कार की खोज में आए तो तुम एक गलत व्यक्ति के पास आए हो। मैं तो फिर से जन्म लेने वाला बांके ही हूं। मैं केवल एक ही चमत्कार जानता हूं। अभी और यहीं बने रहने का। जब भूख लगे तो भोजन कर लो, जब नींद आए -सो जाओ, बस सहज साधारण बनो और अस्तित्व का बस एक भाग बन जाओ।

यदि तुम ऐसे चमत्कार की खोज में हो तो मेरे निकट बहुत कुछ हो सकता है, लेकिन यदि तुम ऐसी खोज में नहीं हो तो मेरे निकट कुछ भी नहीं घट सकता। स्मरण रहे, तुम ही इसके लिए जिम्मेदार होंगे, क्योंकि तुम्हारी पूरी खोज ही गलत है। तब वहां मेरे साथ तुम्हारी कोई लयबद्धता नहीं हो सकती इसलिए अपने मन में स्पष्ट रूप से निर्णय कर एक समझ तक पहुंचो कि तुम किस तरह का चमत्कार खोज रहे हो? मैं तुम्हें अति साधारण बना सकता हूं मैं तुम्हें एक सहज साधारण मनुष्य बना सकता हूं मैं तुम्हें वृक्षों और पक्षियों के समान बना सकता हूं। यहां मेरे चारों ओर कोई बाजीगिरी या जादू नहीं है केवल धर्म है, लेकिन यदि तुम देख सकते हो तो यह सबसे बड़ा चमत्कार है।

क्या कुछ?

प्रश्न : करे ओशो? आप भोजन के बारे में अभी बता रहे थे

और अब पश्चिम में भोजन, एक महान धार्मिक आराधना बन गया है।

आध्यात्मिकता के आधार पर जो चीजें सामने-रही, यह उनमें से एक है, आपने कहा कि यदि हम लोग सहज स्वाभाविक होकर जीएं? हम लोग जानना चाहते हैं कि इसके लिए हमें क्या खाना चाहिए और कब खाना चाहिए? लेकिन अब हम बच्चे जैसी प्रकृति से बहुत दूर हो चुके है साथ ही कई लोग कहते हैं कि जो भी भोजन तुम करते हो? उससे तुम्हारे आध्यात्मिक पथ पर चलने और उस' आध्यात्मिक तल पर प्राप्त करने में बहुत फर्क पड़ता है। क्या आप हम लोगों को भोजन के बारे में कोई ऐसी चीज बता सकते हैं तो हम पश्चिमी लोगों का पथ प्रदर्शन करें?

यह आचरण करने की ठीक दूसरी विधि है। भोजन तुम्हें आध्यात्मिक नहीं बना सकता, लेकिन यदि तुम आध्यात्मिक हो तो तुम्हारे भोजन करने की आदतें स्वयं बदल जाएंगी। किसी भी चीज को खाने से कुछ विशेष अंतर नहीं पड़ता। तुम शाकाहारी होकर भी बहुत अधिक निर्दय, क्रुर और हिंसक हो सकते हो। तुम मांसाहारी होकर दयावान और प्रेमपूर्ण हो सकते हो। भोजन से कुछ विशेष अंतर न पड़ेगा।

भारत में ऐसे समाज हैं, जो पूरी तरह से केवल शाकाहारी भोजन पर ही जीवित हैं। जैन समाज पूरी तरह से शाकाहार पर ही जीता है, बहुत से ब्राह्मण भी केवल शाकाहारी भोजन ही करते हैं, लेकिन न तो वे

अहिंसक हैं। न आध्यात्मिक। भारत में जैन समाज सबसे अधिक भौतिकवादी है, वे धन सम्पत्ति के संग्रह करने की ओर सबसे अधिक आकर्षित हैं और इसी कारण वे सबसे अधिक धनी और समृद्ध हैं। वे जैसे भारत में रहने वाले यहूदी हैं।

पश्चिम का मांसाहारी संसार भारत के इन शाकाहारी समाजों से किसी तरह भिन्न नहीं है, वस्तुत: स्थिति उल्टी है। एक बहुत महत्वपूर्ण चीज याद रखने की है। यदि तुम हिंसक हो तो तुम्हारा भोजन शाकाहारी है। तुम्हारी हिंसा प्रकट होने के लिए कोई मार्ग खोजेगी। एक स्वाभाविक है, क्योंकि मांसाहारी भोजन खाने से, भोजन तुम्हारी हिंसा जो मुक्त कर देता है।

इसलिए यदि तुम कुछ शिकारियों को जानते हो तो तुमने अनुभव किया होगा कि शिकारी बहुत ही प्रेमपूर्ण होते हैं। उनकी पूरी हिंसा शिकार करने में मुक्त हो जाती है और वे बहुत मित्रतापूर्ण और प्रेमपूर्ण होते हैं, लेकिन एक शाकाहारी व्यापारी के लिए अपनी हिंसा को मुक्त करने का कोई मार्ग नहीं है इसलिए उसकी पूरी हिंसा धन और शक्ति की खोज बन जाती है, वह संकुचित हो जाती है।

लेकिन यह व्यवहार और आचरण के रूप में दूसरे तरीके से भी घटित होता है-ऐसा महावीर के साथ हुआ। महावीर योद्धाओं के क्षत्रिय परिवार से आए जिसमें हिंसा करना उनके लिए एक आसान बात थी। तब बारह वर्षों के लंबे मौन और ध्यान की गहराइयों में डूबने का प्रयास करते हुए उनका आंतरिक सार तत्व ही बदल गया।

जब सार तत्व बदल गया, अभिव्यक्ति बदल गई। जब आंतरिक अस्तित्व बदल गया, उनका चरित्र ही बदल गया, लेकिन चरित्र का बदलना बुनियादी न था, वह प्रतिफलन था। इसलिए मैं तुमसे कहता हूं कि जितने ध्यान पूर्ण बनोगे, तुम अपने आप अधिक से अधिक शाकाहारी होते जाओगे। तुम्हें इस बारे में फिक्र करने की जरूरत ही नहीं। यदि यह होता कि ध्यान के द्वारा तुम्हारा भोजन शाकाहारी भी हो जाता है और मन द्वारा नियंत्रित करने पर नहीं, तो यह अच्छा है, लेकिन मन के द्वारा नियंत्रित करने से तर्क- वितर्क और कारण जुटाने से कि शाकाहारी भोजन ही अच्छा है और वह तुम्हें आध्यात्मिक होने में सहायता करेगा, तुम्हें कोई भी मदद मिलने की नहीं। तुम्हारे वस्त्र, तुम्हारा भोजन, तुम्हारे जीवन की आदतें, तुम्हारा रंग-ढंग सब कुछ बदल जाएगा, लेकिन यह परिवर्तन बुनियादी नहीं होगा, बुनियादी परिवर्तन तो तुममें होने जा रहा है और तब प्रत्येक चीज उसका अनुसरण करती है।

यदि तुमने लंबी अवधि तक काफी गहराई तक ध्यान किया है तो यह तुम्हारे लिए असंभव है कि तुम भोजन के लिए किसी को भी सताओ। यह तर्क-वितर्क प्रश्न नहीं है, यह शास्त्रों का भी प्रश्न नहीं है। यह भी नहीं कि- कोई क्या कहता है और यह गणना करने का भी प्रश्न नहीं है कि यदि तुम शाकाहारी भोजन ले रहे हो तो तुम आध्यात्मिक बन जाओगे, यह जो होता है, अपने आप होता है।

यह प्रश्न किसी तरह की कोई चालबाजी करने का भी नहीं है। तुम बस आध्यात्मिक बन जाते हो। यह पूरी चीज ही मूर्खता पूर्ण दिखाई देती है कि केवल भोजन के लिए पशुओं और पक्षियों की हत्या की जाए। यह इतना मूर्खता पूर्ण दिखाई देने लगता है कि मांसाहारी भोजन स्वयं छूट जाता है। तुम्हारे वस्त्र भी स्वत: बदल जाते हैं, धीरे:- धीरे तुम ढीले से ढीले वस्त्र पहनने लगते हो। तुम अंदर से जितने अधिक विश्रामपूर्ण होने जाते हो, वस्त्र ढीले हो जाते हैं। अपने आप ही। मैं बलना हुं कि तुम्हारी, ओर से कोई निर्णय होगा ही नहीं। धीरे- धीरे यदि तुम कसे हुए तंग वस्त्र पहनते हो, तुम्हें असुविधा का अनुभव होने लगेगा, क्योंकि कसे वस्त्र तनाव पूर्ण मन की सम्पत्ति है और ढीले वस्त्र विश्रामपूर्ण मन की।

लेकिन आंतरिक परिवर्तन ही पहली चीज है, अन्य सब कुछ तो केवल उसका परिणाम है। यदि तुम यह क्रम उलट दोगे तो तुम चूक जाओगे, तब तुम भोजन के व्यसनी हो जाओगे। वहां ऐसे भी लोग हैं, जो अब...।

एक व्यक्ति मेरे पास आया। वह तब दुबला-पतला था, चेहरा पीला हो रहा था और वह किसी क्षण मर सकता था। उसने कहा-'' मैं केवल पानी पीकर ही जीवित रहना चाहता हूं। ''

मैंने पूछा-'' क्यों? ''

उसने जवाब दिया-'' क्योंकि इसके अतिरिक्त प्रत्येक वस्तु आध्यात्मिकता में बाधा है। अब मैं केवल जल लेकर ही जीवित रहना चाहता हूं। ''

यह व्यक्ति मरने जा रहा हैं। वहां कुछ थोड़े-से ऐसे लोग हैं, जो केवल पानी पीकर ही जीवित रहे, लेकिन यह उन्हें स्वाभाविक रूप से घटा। इसका अभ्यास नहीं किया सकता। ऐसे लोग किसी दुर्घटनावश असाधारण रूप से विकसित हो जाते हैं और उनके शरीर की यांत्रित व्यवस्था और रसायन भिन्न रूप से कार्य करने लगते हैं। ऐसा हुआ है-कोई व्यक्ति केवल पानी पीकर ही जीवित रह सकता है, पर इसका अभ्यास नहीं किया जा सकता। कोई केवल वायु पर ही जीवित रह सकता है, लेकिन कोई इसका अभ्यास नहीं कर सकता। एक दिन विज्ञान, मूल रासायनिक परिवर्तन को खोजने में सफल हो सकता है और तब प्रत्येक ऐसा कर सकेगा...। तब विज्ञान तुम्हारे शरीर के रसायन बदल देगा और तुम केवल वायु पर ही जीवित रह सकोगे। यह संभव है लेकिन तुम इसका अभ्यास नहीं कर सकते। और यह पूरा प्रयास ही अर्थहीन है और शरीर को दुख देना अनावश्यक है, लेकिन वहां ऐसे पागल आदमी भी है जो इस तरह की चीजों का प्रयास करते हैं। प्रयास करके ऐसा कभी किसी को घटा नहीं।

वहां बंगाल में एक स्त्री थी जो बिना भोजन किए चालीस वर्ष तक जीवित रही, लेकिन यह साधारण रूप से हुआ। उसके पति की मृत्यु हुई और वह कुछ दिनों तक भोजन कर ही न सकी। वेदना और दुख के कारण वह कुछ खा ही न सकी, लेकिन अचानक उसे अनुभव हुआ कि बिना भोजन किए वह हमेशा ही अच्छा महसूस कर रही थी। तब उसने महसूस किया कि अतीत में जब भी भोजन करती थी, तब हमेशा बीमार हो जाती थी और अचानक वह इतनी स्वस्थ हो गई, जितना पहले कभी न थी। तब वह कुछ भी भोजन किए बिना चालीस वर्ष तक जीवित रही। बस वायु ही उसका भोजन था और ऐसा कई मामलों में हुआ।

ऐसी एक स्त्री योरोप में भी थी-बिना भोजन किए वह तीस वर्ष तक जीवित रही। वह एक संत बन गई क्योंकि ईसाइयों ने उसे एक चमत्कार माना। उन्होंने वैज्ञानिक उपकरणों से यह देखने के लिए उसका हर परीक्षण किया कि आखिर ऐसा क्योंकर हो रहा है पर वे कुछ भी न खोज सके और तब वह एक चमत्कार लगा। पर यह चमत्कार नहीं है।

योग कहता है कि शरीर को परिवर्तन की ऐसी संभावना है कि शरीर का रसायन हो बदल जाए। ठीक अभी भी तुम ऐसा ही कर रहे हो, पर किसी अन्य माध्यम के द्वारा। तुम सूर्य की किरणें सीधे ही नहीं खा सकते क्योंकि तुम्हारे शरीर का रसायन इस स्थिति में नहीं है। उसकी यांत्रिक व्यवस्था होती नहीं है कि शरीर सीधे ही सूर्य किरणों का अवशोषण कर सके। इसलिए वृक्षों के फल सबसे पहले सूर्य किरणों को अवशोषित कर लेते हैं और वह फलों में विटामिन सी बन जाता है, तब तुम उस फल को खाकर अपने शरीर में विटामिन सी पहुंचाते हो। फल ठीक एक माध्यम है। फल तुम्हारे लिए काम करने वाला एक एजेंट है, जो सूर्य किरणों को सोखकर तुम्हें दे देता है। तुम उसे फल के द्वारा अवशोषित कर लेते हो, पर इसे प्रत्यक्ष रूप से नहीं कर सकते। यदि फल सीधे ही सूर्य किरणों को सोख सकता है तो तुम क्यों नहीं

विज्ञान की खोजों से एक दिन ऐसा आने को है, जब शरीर में किए कुछ परिवर्तनों से तुम सीधे उन्हें अवशोषित कर सकोगे। तब फल की कोई आवश्यकता नहीं होगी। निकट भविष्य में और मेरा ख्याल है कि अधिक लम्बे समय में न होकर पचास वर्षों में ही विज्ञान यह खोज करने के लिए बाध्य होगी। उसे वह खोज करनी होगी अन्यथा मनुष्यता मर जाएगी क्योंकि सभी को भोजन देना संभव न होगा और संतति नियमन भी सहायक नहीं हो रहा है। कुछ भी सहायक नहीं हो पा रहा है, क्योंकि जनसंख्या निरंतर तेजी से बढ़ रहा है। कुछ ऐसा रास्ता खोजना ही होगा .जिससे भोजन छोड़कर सीधे सूर्य किरणों का अवशोषण करना संभव हो सके। कुछ व्यक्तिगत मामलों में ऐसा हुआ भी है, पर किसी दुर्घटना वश। यदि ऐसा एक व्यक्ति के साथ हो सकता है तो प्रत्येक के साथ भी हो सकता है-लेकिन किसी दुघर्टना घटने पर नहीं, वह होगा, वैज्ञानिक परिवर्तन के कारण।

तुम ऐसी चीजें करने का प्रयास मत करो, यह आध्यात्मिक नहीं है। भले ही तुम सूर्य किरणों को सीधे अवशोषित भी कर लो, फिर भी इसमें कुछ भी आध्यात्मिक नहीं है। फिर आध्यात्मिकता क्या है? क्या फल के माध्यम को हटा देने से तुम आध्यात्मिक बन जाओगे? यदि केवल पानी पर ही जीवित रहते हो तो भी इसमें कोई आध्यात्मिकता नहीं है। तुम जो भी हो, यह पूरी तरह से भिन्न बात है।

जब तुम बदलते हो तो हर चीज बदल जाएगी, लेकिन वह परिवर्तन मन के द्वारा न होगा, वह होगा तुम्हारे सबसे अधिक के अंदर अस्तित्व से। तब चीजें स्वत: बदल जाएंगी। धीरे- धीरे सेक्स तिरोहित हो जाएगा। मैं यह नहीं कहता कि तुम ब्रह्मचारी बनो, ब्रह्मचर्य का पालन करो। यह बेवकूफी है क्योंकि यदि बलपूर्वक दान करके ब्रह्मचारी बनोगे तो मन अधिक-से- अधिक कामुक होता जाएगा और तुम्हारा मन कुरूप और गंदा हो जाएगा। तुम केवल कामवासना के बारे में ही सोचोगे और कुछ भी नहीं। यह कोई मार्ग नहीं है। तुम सनकी और पागल बनते जाओगे। फ्रॉयड कहता है कि नब्बे प्रतिशत पागल, सेक्स का दमन करने की वजह से ही पागल है।

मैं नहीं कहता कि सेक्स करने की आदत बदलो, मैं नहीं कहता कि भोजन बदलो, मैं कहता हूं कि अपने अस्तित्व को बदली और तब चीजें स्वयं बदलना शुरू हो जाएंगी।

सेक्स की इतनी अधिक क्यों आवश्यकता है? क्योंकि तुम तनाव पूर्ण हो और सेक्स द्वारा ऊर्जा मुक्त हो जाती है। तुम्हारे सारे तनाव उसके द्वारा मुक्त हो जाते हैं। तुम विश्रामपूर्ण हो जाते हो, तुम चैन से सो सकते हो। यदि तुम उसका दमन करोगे तो तुम तनाव में रहोगे और यदि तुमने सेक्स का दमन किया तो उसके विकास की केवल संभावना तुम्हारे पागलपन में होगी। दमन से होगा क्या, तुम पागल हो जाओगे। तुम अपना तनाव फिर मुक्त करोगे कैसे?

तुम खाना खाते हो? शरीर को उसकी आवश्यकता होती है और उन चीजों से शरीर इनकार कर देता है जिनकी उसे आवश्यकता नहीं होती। जो कुछ भी तुम खाते हो किसी-न-किसी रूप में शरीर को उसकी आवश्यकता होती है। यदि तुम भोजन में किसी पशु का मांस ले रहे हो, मांसाहारी भोजन कर रहे हो, तो तुम्हारा मन, तुम्हारा शरीर और तुम्हारा पूरा शरीर हिंसक है और उसकी तुम्हें आवश्यकता है। उसे बदलो मत, अन्यथा तुम्हारी हिंसा फिर दूसरा निकास खोजेगी।

तुम अपने आपको बदलो और भोजन बदल जाएगा, वस्त्र बदल जाएंगे, सेक्स बदल जाएगा, लेकिन परिवर्तन तुम्हारी गहराई में स्थित आंतरिक केंद्र से आना चाहिए वह बाहर परिधि से न आए। सारा कौलाहल परिधि पर है, अंदर गहराई में कोई शोर है ही नहीं। तुम ठीक एक सागर के समान हो। जाओ और जाकर सागर को देखो। सारा शोर सभी लहरों के टकराने से बस सतह पर है, तुम जितने गहरे उतरो सागर में, वहां अधिक-से- अधिक शांति हैं। समुद्र के सबसे गहरे तल में न तो एक भी लहर है और न कोई कौलाहल है।

पहले अपने ही गहरे सागर में डुबकी लगाओ, जिससे तुम शांत चेतना के एकीकरण को सघन रूप में प्राप्त कर सको, जिससे तुम उस बिंदु या केंद्र पर पहुंच सकी, जहां कोई व्यवधान और शोर कभी पहुंचता ही नहीं। वहीं स्थिर खड़े रही। वहीं से हर परिवर्तन आता है, प्रत्येक रूपान्तरण वहीं से होता है। एक बार तुम वहां पहुंच गए फिर तुम मालिक हो गए मन के। अभी तो जो भी अनावश्यक है, उसे तुम बिना किसी संघर्ष और लड़ाई के सरलता से छोड़ सकते हो।

जब भी तुम कोई चीज लड़कर छोड़ते हो, वह. कभी नहीं छूटती। तुम संघर्ष के द्वारा सिगरेट पीना छोड़ सकते हो और तब तुम कोई और चीज करना शुरू कर दोगे, जो उसका प्रतिस्थापन बन जाएगा, उसकी जगह ले लेगा। तुम चूंगम चूसना शुरू कर सकते हो, जो है वही, तुम पान चबाना शुरू कर सकते हो, जो है वही, वहां उसमें कोई भी अंतर नहीं।

अपने मुंह के लिए तुम्हें किसी चीज की जरूरत है-वह सिगरेट पीना हो, कुछ चबाना हो या कुछ और हो। जब तुम्हारा मुंह चलता रहता है, तुम सुविधा या आराम का अनुभव करते हो, क्योंकि मुंह के द्वारा तनाव मुक्त

होते रहते हैं। इसलिए जब भी कोई व्यक्ति तनाव का अनुभव करता है तो सिगरेट पीना शुरू कर देता है। ऐसा क्यों है कि सिगरेट पीने च्यूंगम अथवा तंबाकू चबाने से तनाव मुक्त हो जाता है वह? जरा एक छोटे बच्चे की ओर देखो। जब कभी वह तनाव का अनुभव करता है, अपना अंगूठा मुंह में रखकर उसे चूसना शुरू कर देता है। यह सिगरेट पीने का विकल्प है उसके पास। उसे क्यों अच्छा लगता है जब वह मुंह में अपना अंगूठा रख कर उसे चूस रहा होता है? बच्चे को क्यों अच्छा लगता है ऐसा करना और वह क्यों सो जाता है? यही रणनीति लगभग सभी बच्चों की होती है। जब उन्हें लगता है कि नींद नहीं आ रही, वे अपना अंगूठा अपने मुंह में रख लेते हैं और वे आराम का अनुभव करते हुए गहरी नींद सो जाते हैं। क्यों? क्योंकि अंगूठा मां के स्तन का स्थान ले लेता है। भोजन के बाद आराम चाहता है शरीर। तुम खाली पेट भूखे नहीं सो सकते, नींद आना कठिन हो जाता है। जब पेट पूरा भरा हो, तुम्हें नींद आने लगती है, शरीर को आराम की जरूरत होती है। इसलिए जब भी बच्चा मुंह में स्तन लेता है, प्रेम और उष्णता भरा तरल भोजन प्रवाहित होने लगता है। वह वि श्रामपूर्ण हो जाता है, उसका तनाव मिट जाता है, फिर उसे कोई फिक्र ही नहीं रहती। हाथ का अंगूठा तो स्तन के स्थान पर उसका विकल्प होता है, वह दूध ही नहीं होता है, वह एक नकली विकल्प नहीं है, लेकिन फिर भी वह स्तनपान करने जैसी अनुभूति देता है।

जब यह बच्चा बड़ा होता है और यदि सभी के मध्य वह अपना अंगूठा चूसता है तो वह बेवकूफ कहा जाएगा, इसलिए वह सिगरेट पीता है। सिगरेट पीना बेवकूफी नहीं माना जाता, उसे स्वीकार कर लिया गया है। वह ठीक अंगूठे जैसा है और अंगूठा चूसने से कहीं अधिक हानिप्रद है। इससे तो अच्छा है कि यदि तुम अपने अंगूठे को ही सिगरेट की तरह पीयो। अपनी कब में जाने तक धुआं उड़ाते रहो, वह हानिप्रद है ही नहीं। लेकिन तब लोग सोचते हैं कि युवा होते हुए तुममें बचपना है, लोग तुम्हें मूर्ख समझते हैं। तुम कर क्या रहे हो? लेकिन वहां उसकी जरूरत है इसलिए उसके स्थान पर कोई दूसरा विकल्प तो चाहिए ही।

उन देशों में जहां स्तनों द्वारा बच्चों को दूध पिलाना बंद कर दिया गया है, अधिक धुम्रपान अपने आप बढ़ गया है। यही कारण है कि पूरब की अपेक्षा पश्चिम में धूम्रपान अधिक किया जाता है-क्योंकि वहां कोई मां बच्चे को स्तनपान कराने के लिए तैयार नहीं है, क्योंकि इससे स्तनों की आकृति खराब हो जाती है। इसलिए पश्चिममें धुम्रपान अधिक-से- अधिक बढ़ता जाता है, और छोटे बच्चे भी धुम्रपान कर रहे हैं।

मैंने सुना है, एक मां अपने बच्चे से कह रही थी-'' मैं नहीं चाहती कि पड़ोसी मुझसे कहें कि तुमने सिगरेट पीना शुरू कर दिया है। हमेशा सच बोलो और जब तुम धुम्रपान करना शुरू करो मुझे बता देना। ''

बच्चे ने कहा-'' मम! चिंता मत करो। मैंने पहले ही से धुम्रपान करना बंद कर दिया है। इसे एक साल हो गया। अब अगर फिक्र करें ही मत, आपको परेशान होने की जरा भी जरूरत नहीं। ''

छोटे-छोटे बच्चे धुम्रपान कर रहे हैं और मां इसके प्रति सजग नहीं है। क्योंकि उसने स्तनपान कराना बंद कर दिया है। सभी आदिम समाजों में सात साल का बच्चा और यहां तक कि आठ और नौ साल के बच्चे भी स्तनपान करते रहते हैं। तब वहां संतुष्टि होती है और धुम्रपान करना इतना जरूरी नहीं होता। यही कारण है कि आदिम समाजों में पुरुषों की दिलचस्पी स्त्रियों के स्तनों में अधिक नहीं होती। उन्होंने काफी ले लिया है, उन्हें जरूरत हीं नहीं है। स्त्रियां अपने वक्ष बिना ढके आती-जाती हैं, उन्हें यह समस्या नहीं है कि कोई उन पर आक्रमण करेगा। कोई भी उनके स्तनों की ओर देखता तक नहीं।

यदि तुम्हें निरंतर दस वर्षों तक स्तनपान करने दिया जाए तुम उनसे ऊब जाओगे और कहोगे, ' अब बंद करो ' लेकिन प्रत्येक बच्चे को स्तनों से समय से पहले ही दूर कर दिया जाता है और उसके अंदर एक घाव रह जाता है इसलिए सभी सभ्य देशों में लोगों के मस्तिष्क में स्तन ही घूमते रहते है। यहां तक कि एक मरते हुए बूढ़े आदमी के मन में भी स्तन घूम रहे हैं और वह उन्हीं को खोजता रहता है। यह पागलपन लगता है लेकिन यह है। वहां मूल कारण यही है। बच्चों को अधिक समय तक स्तनपान कराना चाहिए अन्यथा वे उनके नशे में जीवन-भर उनकी ही खोज करते रहेंगे। तुम किसी भी रूप से धुम्रपान नहीं रोक सकते क्योंकि इससे संबंधित बहुत-सी

चीजें हैं और कई उलझाव है, तुम तनाव में हो और यदि तुम धुम्रपान करना बंद कर दो तो तुम कोई अन्य चीज शुरू कर दोगे जो उससे अधिक हानिप्रद होगी।

समस्याओं से पलायन मत करो, उनका सामना करो। समस्या यह है कि तुम तनाव ग्रस्त हो इसलिए लक्ष्य यह होना चाहिए कि तनाव कैसे दूर हो, धुम्रपान करके या बिना धुम्रपान के। ध्यान करो। आकाश में बिना किसी वस्तु के अपने तनावों को मुक्त करो। रेचन करो। जब सारे तनाव दूर हो जाएंगे तो ये चीजें अर्थहीन और बेवकूफी भरी लगेगी और स्वयं छूट जाएंगी। भोजन भी बदलेगा, तुम्हारे जीने का ढंग बदल जाएगा।

लेकिन मेरा जोर तुम पर है। चरित्र बाद की बात है, आधारभूत चीज और सारभूत तुम हो। जो कुछ तुम करते हो, उसकी ओर अधिक ध्यान मत दो, अधिक ध्यान यह जानने में दो कि तुम क्या हो? केंद्र बिंदु होना चाहिए तुम्हारा होना, तुम्हारा अस्तित्व और कृत्य को उसी पर छोड़ देना चाहिए। जब अस्तित्व बदलता है? कृत्य उसका अनुसरण करते हैं।

क्या कुछ और...?

प्रश्न : प्यारे ओशो, जब आप हम लोगों की असफलताओं की
चर्चा करते हे तो आप प्राय: क्रोध सेक्स और ईर्ष्या का उल्लेख करते
है क्रोध और सेक्स तो सामान्यत? स्वयं अपनी बाबत स्पष्ट रूप से
बता ही देते है? लेकिन ठीक ईर्ष्या क्या है? " इस बाबत हम लोगों को
कुछ भ्रम है और उसके केंद्र पर पहुंचना कठिन लगता है। क्या हम
लोगों को ईर्ष्या के बारे में आप बताने की कृपा करेंगे "

हां! मैंने क्रोध और सेक्स का अधिक और ईर्ष्या का बहुत कम उल्लेख किया है, क्योंकि ईर्ष्या प्राथमिक वस्तु नहीं है, यह दूसरे स्थान पर है। यह सेक्स का ही दूसरा हिस्सा है। जब तुम्हारे मन में सेक्स की प्रवृत्ति उभरती है, तुम्हारे अस्तित्व में काम का वेग उठने लगता है, जब कभी सेक्स के लिए ही तुम किसी स्त्री के प्रति आकर्षण का अनुभव करते हो और उसे किसी अन्य से संबंधित पाते हो तो ईर्ष्या का प्रवेश होता है। क्योंकि तुम प्रेम नहीं कर रहे हो। यदि तुम प्रेमपूर्ण हो, प्रेम कर रहे हो तो ईर्ष्या कभी होती हीं नहीं।

इस पूरी चीज को समझने की कोशिश करो। जब कभी तुम किसी से सेक्स तल पर जुड़े होते हो, तुम भयभीत रहते हो, क्योंकि सेक्स वास्तव में कोई आतंरिक रिश्ता न होकर एक शोषण है। यदि तुम किसी स्त्री या पुरुष के प्रति सेक्स तल पर ही आकर्षित हो तो तुम्हें सदा यह भय बना रहता है कि स्त्री किसी और के साथ भी जा सकती है अथवा यह पुरुष किसी अन्य स्त्री के पास भी जा सकता है। वास्तव में वहां प्रेमपूर्ण संबंध हैं ही नहीं, वह केवल एक दूसरे का आपसी शोषण है। तुम एक दूसरे का शोषण कर रहे हो, लेकिन प्रेम नहीं कर रहे हो और तुम इसे जानते हो, इसलिए तुम भयभीत हो। यह भय ही ईर्ष्या बन जाता है, जिससे तुम चीजों को होने से रोकते हो, तुम चौकसी करोगे, तुम सुरक्षा के हर संभव प्रयास करोगे। जिससे यह स्त्री या पुरुष किसी अन्य की ओर देख भी न सके। देखना मात्र ही खतरे का संकेत होगा। इस पुरुष को दूसरी स्त्री से बात भी नहीं करनी चाहिए क्योंकि बातचीत करना भी... और तुम्हें भय लगता है कि वह कहीं तुम्हें छोड़ न दे। इसलिए तुम सभी रास्ते बंद कर दोगे जिससे यह पुरुष उस स्त्री के पास न जाए अथवा वह स्त्री दूसरे पुरुष के पास न जा सके, तुम सभी रास्ते और सभी दरवाजे बंद कर दोगे।

लेकिन तब दूसरी समस्या उठ खड़ी होती है। जब सभी दरवाजे बंद हो जाते हैं वह पुरुष या स्त्री मृत हो जाते हैं, एक कैदी या गुलाम हो जाते हैं और तुम एक मृत अस्तित्व से प्रेम नहीं कर सकते। तुम उससे प्रेम नहीं कर सकते, जो स्वतंत्र न हो क्योंकि प्रेम केवल तभी सुंदर होता है, जब उसे स्वतंत्रता दी जाए। जब वह लिया नहीं जाता, न मांगा जा सकता है और न उसे विवश किया जाता है।

पहले तुम सुरक्षा प्रबंध करते हो, तभी वह व्यक्ति मृतप्राय एक वस्तु की भांति हो जाता है। एक प्रेमिका जीवन्त व्यक्ति हो सकती है, एकपत्नी तो वस्तु बन जाती है। एक प्रेमी एक जीवन्त व्यक्ति हो सकता है, पति तो ऐसी वस्तु बन जाता है, जो सम्पत्ति समझकर चौकसी करता है और नियंत्रण रखता है, लेकिन तुम जितना अधिक नियंत्रण करते हो, तुम उसे उतना ही अधिक मारते जाते हो क्योंकि स्वतंत्रता ही खो जाती है। दूसरा व्यक्ति प्रेम के कारण नहीं दूसरे कारणों से ही वहां होता है क्योंकि तुम उस सेक्स को भी नहीं छोड़ सकते। प्रश्न केवल यही है कि सेक्स को कैसे प्रेम में रूपान्तरित किया जाए! ईर्ष्या स्वयं मिट जाती है।

यदि तुम किसी व्यक्ति से प्रेम करते हो तो वास्तविक प्रेम ही यथेष्ट गारंटी है, सच्चा प्रेम ही पर्याप्त सुरक्षा है। यदि तुम किसी व्यक्ति से प्रेम करते हो, तुम जानते हो कि वह किसी अन्य के पास नहीं जा सकता और यदि वह जाता है तो जाता है, इसमें कुछ भी नहीं किया जा सकता। तुम कर ही क्या सकते हो? तुम उस व्यक्ति को मार सकते हो, लेकिन एक मृत व्यक्ति का कोई उपयोग नहीं होता।

जब तुम एक व्यक्ति से प्रेम करते हो, तुम विश्वास करते हो कि वह अन्य किसी और के पास नहीं जाएगा। यदि वह जाता है तो वहां प्रेम है ही नहीं और कुछ भी नहीं

किया जा सकता। प्रेम यही समझ उत्पन्न करती है कि वहां ईर्ष्या नहीं होती। इसलिए यदि वहां ईर्ष्या है तो भली- भांति जान लेना, वहां प्रेम नहीं है। तुम एक खेल खेल रहे हो। तुम प्रेम की आड़ में अपनी कामवासना को छिपा रहे हो। प्रेम तो केवल रंग-रोगन किया हुआ एक शब्द है और वास्तविक रूप से वह सेक्स की चाह ही है।

भारत में चूंकि प्रेम करने की अधिक अनुमति नहीं है या कहें बिलकुल भी अनुमति नहीं है विवाह आयोजित होता है-यहां जबर्दस्त ईर्ष्या है। एक पति भयभीत रहता है। उसने कभी प्रेम किया ही नहीं, इसलिए वह जानता है, पत्नी भी सदा भयभीत रहती है क्योंकि उसने भी कभी प्रेम किया नहीं, इसलिए वह भी जानती है। यह एक जुटाई गई व्यवस्था है। यह व्यवस्था, माता-पिता ने की, ज्योतिषियों ने की, समाज ने की, लेकिन पति और पत्नी से कभी पूछा ही नहीं गया। कई मामलों में तो वे एक दूसरे को जानते तक न थे, उन्होंने एक दूसरे को कभी देखा तक न था। इसलिए भय बना रहता है। पत्नी भयभीत है, पति डरा हुआ है और दोनों एक दूसरे की जासूसी कर रहे हैं। वास्तविक संभावना ही खो गई। भय के रहते प्रेम कैसे उत्पन्न हो सकता है? वे साथ-साथ रह सकते हैं। वे एक दूसरे को बरदाश्त कर सकते हैं। वे किसी-न-किसी तरह साथ निभाए जा रहे हैं। यह केवल उपयोगिता है और उपयोगिता से तुम प्रबंध तो कर सकते हो, पर परम आनंद घटना संभव ही नहीं। तुम इसका उत्सव नहीं मना सकते, यह एक पर्व नहीं बन सकता, यह संबंध एक भार स्वरूप होगा।

इसलिए मृत्यु से पहले ही पति मृत है, मृत्यु से पहले पत्नी भी मृत है। दो मृत व्यक्ति एक दूसरे से प्रतिशोध ले रहे हैं क्योंकि प्रत्येक सोचता है कि दूसरे ने उसे मार दिया। बदला लेते हुए क्रोध करते हुए और ईर्ष्या करते हुए सब कुछ बहुत कुरूप हो गया है।

लेकिन पश्चिम में एक अलग तरह की घटना घट रही है। जो है वैसी ही पर दूसरी अति पर। उन्होंने आयोजित विवाह तो समाप्त कर दिए हैं, जो एक अच्छा कार्य है। वह रिवाज किसी कीमत का था ही नहीं, लेकिन उसे समाप्त कर प्रेम का जन्म तो हुआ नहीं, केवल सेक्स उन्मुक्त हो गया है जब सेक्स की स्वतंत्रता है तो तुम हमेशा भयभीत रहते हो, क्योंकि यह केवल एक अस्थायी व्यवस्था है। आज रात तुम इस लड़की के साथ हो, कल वह किसी और के साथ होगी और कल वह किसी और के साथ थी। जिसके साथ कल थी वह लड़की, आने वाले कल वह किसी अन्य के साथ होगी, केवल आज रात ही वह तुम्हारे साथ है। यह संबंध कैसे घनिष्ट और गहरे हो सकते हैं? यह केवल परिधि पर ही मिलन हो सकता है। तुम एक दूसरे के हृदय की गहराई में प्रविष्ट नहीं हो सकते, क्योंकि गहराई में उतरने के लिए विशेष तैयारी और समय चाहिए। इसके लिए जरूरत है समय की, जरूरत है गहराई की, साथ-साथ रहते हुए जरूरत है घनिष्टता की। एक लंबे समय की जरूरत होती

है। गहराई तक जाने के लिए एक दूसरे की अंतरंग बातचीत करते हुए ही उस गहराई का द्वार खुलता है.. .यह तो केवल जान पहचान है और हो सकता है वह जान-पहचान भी न हो।

पश्चिम में तुम एक स्त्री से एक रेलगाड़ी में मिलकर उससे प्रेम कर सकते हो और मध्यरात्रि में तुम उसे किसी स्टेशन पर उतार सकते हो। वह कभी इसकी फिक्र ही नहीं करेगी और हो सकता है वह तुम्हें कभी फिर से जान भी न पाएं। यह भी संभव है वह तुम्हारा नाम तक न पूछें। यदि सेक्स इतनी साधारण चीज बन जाती है, ठीक शरीर का कार्य व्यापार जहां दो सतहें या परिधि मिलती हैं और अलग हो जाती हैं- तुम्हारी गहराई का वे स्पर्श तक नहीं करती। तुम फिर किसी चीज से चूक रहे हो- किसी बहुत महान और किसी बहुत रहस्यमय चीज से, क्योंकि तुम अपनी गहराई के प्रति तभी सजग होते हो जब कोई दूसरा तुम्हारा स्पर्श करता है। केवल दूसरे के द्वारा ही तुम अपने आंतरिक अस्तित्व के प्रति सजग होते है, केवल गहरे संबंधों में ही किसी का प्रेम तुम्हारे अस्तित्व की गहरी घाटी में गूंजता है। केवल किसी अन्य के द्वारा ही तुम स्वयं अपने को खोजते हो।

खोज के वहां दो रास्ते हैं। एक है ध्यान, बिना किसी दूसरे के तुम अपनी गहराइयों को खोजते हो और दूसरा है प्रेम। तुम दूसरे के साथ उस गहराई की खोज करते हो। वह तुम्हारे अस्तित्व तक पहुंचने में मूल या जड़ बन जाता है। दूसरा एक चक्र निर्मित करता है और दोनों प्रेमी एक दूसरे की सहायता करते हैं। उनके बीच का अनुभव करते हैं, और किसी दिन एक दूसरे का अस्तित्व उनके सामने प्रकट होता है, लेकिन तब वहां कोई ईर्ष्या नहीं होती।

प्रेम ईर्ष्यालु हो ही नहीं सकता, यह असंभव है। वह सदा विश्वास करता है। यदि कुछ चीज घटती है और तुम्हारा विश्वास तोड़ देती है, तुम्हें तब भी उसे स्वीकार करना होता है। उस बारे में कुछ भी नहीं किया जा सकता क्योंकि तुम जो कुछ भी करोगे, तुम दूसरे को नष्ट ही करोगे। विश्वास को विवश नहीं किया जा सकता। ईर्ष्या उसे विवश करने का प्रयास करती है। ईर्ष्या कोशिश करती है तुम्हें तैयार करने का, जिससे तुम हर प्रयास को ऐसा आकार दो जिससे विश्वास बना रह सके, लेकिन विश्वास ऐसी चीज नहीं जिसे प्रयास द्वारा बनाए रखा जाए। वह या तो वहां होता है या नहीं होता। मैं तुमसे पुन: कहता हूं कि उसके बारे में कुछ भी नहीं किया जा सकता। यदि वह वहां है, तुम उसके द्वारा उसके निकट जाते हो और यदि वह नहीं है तो अच्छा है अलग हो जाओ।

लेकिन उसके लिए संघर्ष मत करो, क्योंकि तुम व्यर्थ समय और जीवन बरबाद कर रहे हो। यदि तुम किसी से प्रेम करते हो और तुम्हारे हृदय की गहराई का दूसरे हृदय की गहराई से संवाद होने लगे, तुम्हारा मिलन अस्तित्वगत हो-तो सभी कुछ ठीक और सुंदर है और यदि ऐसा नहीं होता है तो अलग हो जाओ। लेकिन कोई संघर्ष, झगड़ा या लड़ाई मत करो क्योंकि प्रेम संघर्ष या लड़ने से प्राप्त नहीं होता और समय बरबाद होता है-न केवल समय, तुम्हारी क्षमता भी क्षतिग्रस्त होती है। तुम किसी दूसरे व्यक्ति के साथ फिर शुरू कर सकते हो प्रेम, वही पुराने ढांचे को दोहराते हुए।

इसलिए यदि विश्वास नहीं रहा तो अलग हो जाओ-जितनी शीघ्र हो सके, उतना ही अच्छा है, जिससे तुम बरबाद न हो सको, जिससे तुम्हारा कोई नुकसान न हो सके और प्रेम की क्षमता ताजी बनी रह सके और तुम किसी दूसरे से प्रेम कर सको। न तो यह स्थल तुम्हारे लिए है, न यह पुरुष तुम्हारे लिए है और न यह स्त्री तुम्हारे लिए है। आगे बढ़ जाओ, एक दूसरे को बरबाद मत करो। जीवन बहुत छोटा है और क्षमताएं बहुत नाजुक हैं, वे नष्ट हो सकती हैं। एक बार क्षतिग्रस्त होने पर उनके मरम्मत किए जाने की कोई संभावना नहीं है।

मैंने सुना है, एक बार ऐसा हुआ कि विंस्टन चर्चिल को मित्रों की एक छोटी- सी सभा में बोलने के लिए आमंत्रित किया गया। प्रत्येक जानता था कि चर्चिल पक्के पियक्कड़ हैं और शराब से बहुत प्रेम करते हैं। जिस व्यक्ति ने उनका सभी से परिचय कराया, वह क्लब का सभापति था उसने कहा, " श्रीमान विंस्टन ने अब तक इतनी अधिक शराब पी ली है कि यदि हम उस सभी को इस हॉल में उड़ेल दें तो वह मेरे सिर तक आ जाएगी। " वह काफी बड़ा हॉल था और वह मजाक कर रहा था। "

विंस्टन चर्चिल उठ खड़े हुए। उन्होंने कल्पना में उसके सिर तक की ऊंचाई की रेखा देखी, फिर छत की ओर देखते हुए कहा-" उस हॉल की छत काफी ऊंची है। " तब वह उदास होकर बोले, " और उस तक भरने के लिए अब भी काफी कुछ करना पड़ेगा और समय बहुत थोड़ा बचा है। "

जहां तक प्रेम का संबंध है। प्रत्येक को बहुत कुछ करना है और समय बहुत थोड़ा बचा है। अपनी ऊर्जा लड़ने, ईर्ष्या करने और संघर्ष करने में व्यर्थ बरबाद मत करो। दोस्ताना तरीके से विदा लेकर आगे बढ जाओ।

कहीं और किसी अन्य व्यक्ति की खोज करो, जो तुम्हें अपने पूरे अस्तित्व से प्रेम करेगा। किसी ऐसे के साथ जमे मत बैठो रहो जो गलत है, जो तुम्हारे लिए है ही नहीं। क्रोध मत करो, इसमें क्रोध करना, जरूरी नहीं और विश्वास को विवश करने का प्रयास मत करो, उसे कोई भी विवश न कर सका और ऐसा कभी आज तक नहीं हुआ। तुम समय से चूक जाओगे, तुम अपनी ऊर्जा खो दोगे और तुम केवल तभी होश में आओगे, जब कुछ भी न किया जा सकेगा। आगे बढ़ो या तो विश्वास करो या आगे बढ़ जाओ।

प्रेम सदा विश्वास करता है अथवा यदि वह पाता है कि विश्वास करना संभव नहीं तो वह बस मित्रतापूर्ण ढंग से आगे बढ़ जाता है। वह वहां कोई संघर्ष या लड़ाई नहीं करता। सेक्स ही ईर्ष्या उत्पन्न करता है। प्रेम की खोज करो। सेक्स को आधारभूत चीज मत बनाओ, वह ऐसा है भी नहीं।

भारत आयोजित विवाह के साथ चूक गया और पश्चिम उन्मुक्त प्रेम के कारण चूक रहा है। भारत प्रेम से चूक गया क्योंकि माता-पिता बहुत हिसाबी-किताबी तथा चालाक थे। उन्होंने लड़के-लड़की को प्रेम करने की अनुमति नहीं दी, क्योंकि वह खतरनाक था। कोई नहीं जानता था कि वह प्रेम उन्हें कहां ले जाएगा। वे लोग बहुत अधिक चालाक थे और अपनी चालाकी के कारण ही भारत प्रेम की सभी संभावनाओं से चूक गया।

पश्चिम में वे लोग बहुत विद्रोही हैं, बहुत अधिक युवा हैं। वे चालाक नहीं हैं, पर उनमें बहुत बचपना और यौवन का पागलपन है। उन्होंने सेक्स को एक उन्मुक्त चीज बना दिया है, जो दूर कहीं उपलब्ध है। उन्हें गहराई में जाकर प्रेम को खोजने की आवश्यकता ही नहीं है, वे सेक्स का आनंद लेते हैं और सब कुछ खत्म हो जाता है। सेक्स के द्वारा ही पश्चिम चूक रहा है और विवाह के द्वारा पूरब चूका है, लेकिन यदि तुम सजग हो तो तुम्हें न तो पूरब का और न पश्चिम का बनने की जरूरत है। प्रेम न तो पूरब का होता है और न पश्चिम का।

अपने ही अंदर प्रेम की खोज करते ही रहो। यदि तुम प्रेम करते हो तो देर-सवेर ऐसे व्यक्ति के साथ मिलकर घटना घटेगी ही क्योंकि एक प्रेम भरा हृदय देर-सवेर प्रेम करने वाले दूसरे हृदय के निकट आ ही जाता है। ऐसा हमेशा हुआ है। तुम सही व्यक्ति को पा ही लोगे, लेकिन यदि तुम ईर्ष्यालु हो तो तुम उसे नहीं पाओगे, यदि तुम केवल सेक्स के लिए ही हो तो भी तुम उसे न खोज सकोगे। यदि तुम केवल सुरक्षा के लिए जीना चाहते हो तो तुम उसे न खोज पाओगे।

प्रेम का पथ खतरनाक है और केवल वे ही लोग जिनमें साहस है, यह यात्रा कर सकते हैं। मैं तुमसे कहता हूं यह ठीक ध्यान करने के सामान ही है, पर केवल उनके लिए जो साहसी हैं और वहां परमात्मा तक पहुंचने के लिए केवल दो रास्ते हैं या तो ध्यान अथवा प्रेम। खोजों, तुम्हारा कौन-सा रास्ता है और कौन-सी तुम्हारी मंजिल है?

आज बस इतना ही!

सातवां प्रवचन

सद्गुरु बेरहम हो सकता है?

कथा:

जापानी सदगुरु इकीदो एक कठोर शिक्षक थे और उनके शिष्य उससे डरते थे एक दिन उनका एक शिष्य दिन का समय बताने के लिए मठ का घंटा बजा रहा था। समय के अनुसार वह घंटे पर एक चोट करना भूल गया क्या? क्योंकि वह द्वार से गुजरती हुई एक सुंदर लड़की को देख, उस शिष्य की जानकारी में आए बिना इकीदो उसके पीछे ही खड़ा था। इकीदो ने अपने डंडे से उस शिष्य पर प्रहार किया इस आघात से उस शिष्य की हृदयगति रुक गई और वह मर गया पुरानी परंपरा के अनुसार शिष्य अपना जीवन सदगुरू के नाम लिखकर अपने हस्ताक्षर करके दे देने के लेकिन अब यह परंपरा समाप्त होते हुए औपचारिकता रह गई है, सामान्य लोगों के द्वारा इकीदो की निंदा की गई लेकिन इस घटना के बाद इकीदो के दस निकट शिष्य बुद्धत्व को उपलब्ध हुए जो इकीदो के उत्तराधिकारी बने एक सदगुरू के निकट बोध को प्राप्त होने वालों की यह संख्या असाधारण रूप से काफी अधिक थी।

झेन और झेन सद्गुरुओं के लिए एक विशिष्ट घटना--केवल एक झेन सदगुरु ही अपने शिष्यों को पीटता है और कभी-कभी ऐसा भी हो जाता है कि उसके पीटने से शिष्य की मृत्यु हो जाए। सामान्यत: यह कृत्य बहुत क्रूर, हिंसक और पागलपन से भरा दिखाई देता है। धार्मिक लोग कभी कल्पना भी नहीं कर सकते कि एक सद्गुरु कैसे इतना बेरहम हो सकता है जो अपने शिष्य को जान से मार दिया, लेकिन जो लोग उन्हें जानते हैं, उनका अनुभव अलग है।

एक व्यक्ति जो बोध को प्राप्त हो गया है, भली भांति जानता है कि कोई भी व्यक्ति मरता ही नहीं। अंदर आत्मा शाश्वत है, जो आगे यात्रा पर निकल जाती है। वह शरीर बदल सकती है, लेकिन यह परिवर्तन केवल घरों का होता है। यह परिवर्तन केवल वस्त्रों का होता है, और यह परिवर्तन केवल वाहनों का होता है। यात्री निरंतर चलता ही चला जाता है और कुछ भी नहीं मरता।

मृत्यु का क्षण, बुद्धत्व को उपलब्ध होने का क्षण भी हो सकता है। दोनों ही समान हैं। जब कोई भी बुद्धत्व को प्राप्त होता है, वह साधारणमृत्यु की अपेक्षा, गहराई में एक तरह की मृत्यु ही होती है। जब कोई भी बुद्धत्व को प्राप्त होता है, वह भली- भांति जान लेता है कि वह शरीर नहीं है। उसकी आसक्ति, उसकी पहचान सब कुछ खो जाती. है। पहली बार वह उस अनन्त अंतराल को देख सकता है, जिस पर कोई सेतु बनाया ही नहीं जा सकता। वह यहां होता है, शरीर वहां होता है और वहां उनके बीच एक अनंत खाई होती है। वह (चेतना) कभी शरीर नहीं रहा और शरीर कभी वह नहीं रहा। साधारण मृत्यु से यह मृत्यु कहीं अधिकगहरी है, जब तुम मरते हो तो सामान्यत: तब भी तुम्हारा शरीर के साथ तादात्म्य बना रहता है।

यह मृत्यु कहीं अधिक गहरी है। न केवल तुम्हारा शरीर के साथ कोई तादात्म्य नहीं रहता, तुम्हारी मन और अहंकार के साथ पहचान भी समाप्त हो जाती है। तुम बस एक शून्यता रह जाते हो, एक आतरिक सीमाहीन विराट शून्य की भांति न तुम शरीर होते हो और न मन।

साधारण मृत्यु में केवल शरीर मरता है, मन एक छाया के समान तुम्हारा अनुसरण किए जाता है। मन ही समस्या है, शरीर नहीं। मन के द्वारा ही तुम शरीर के साथ एक हो जाते हो और जब तक मन विलुप्त नहीं हो जाता, तुम नए-नए शरीरों और नए-नए वाहनों को बदलते जाओगे। जब तुम बुद्धत्व को प्राप्त होते हो, अचानक न तो तुम शरीर रह जाते हो और न मन। केवल तभी तुम यह जान पाते हो कि तुम कौन हो। शरीर एक बीज है, मन भी एक बीज है और जो इन दोनों के पार छिपा है, तुम वही हो।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि एक झेन सद्गुरु तुम्हारी मृत्यु के क्षण को तुम्हारे बुद्धत्व की घटना केसाथ जोड़ सकता है और दोनों घटनाएं एकसाथ घट जाती हैं। बिस्कूल ठीक उसी क्षण वह तुम पर चोट कर सकता है तुम्हारा शरीर नीचे भूमि पर गिर पड़ता है-प्रत्येक देख सकता है उसे-लेकिन गहराई में तुम्हारा अहंकार भी विसर्जित हो जाता है जिसे केवल तुम और सद्गुरु ही जानता है। यह कूरता नहीं है, यह करुणा की पराकाष्ठा है और ऐसा केवल एक महान सद्गुरु ही कर सकता है। तुम्हारी मृत्यु के क्षण का अनुभव करना बहुत सूक्ष्म है और उसी को अंतर्रूपांतरण और रूप से अरूप बनाना एक सद्गुरु का ही काम है।

जरा इस कहानी की ओर देखो और सोचो-कहानी से यह कैसे लगता है कि एक सद्गुरु ने अपने एक शिष्य को मार डाला। यह बात है ही नहीं। शिरू तो किसी तरह मरने ही जा रहा था, वह क्षण उसकी मृत्यु का था। सद्गुरु इसे जानते थे, उन्होंने केवल उसकी मृत्यु के क्षण का उसके बुद्धत्व के लिए प्रयोग किया, लेकिन यह अंतर्जगत का रहस्य है। यह कुछ चीज अत्यंत अबूझ और गूढ़ हैं, और मैं इसके द्वारा इकीदो का कोर्ट कचहरी में कोई बचाव नहीं कर सकता। कोर्ट कहेगा, उसने हत्या की है। किसी भी तरह से वहां यह सिद्ध करने का कोई रास्ता नहीं है कि शिष्य उस क्षण मरने जा रहा था।

आखिर मृत्यु का उपयोग क्यों नहीं किया जा सकता? अज्ञानी मनुष्य तो जीवन का भी उपयोग नहीं कर सकता, जबकि बुद्धत्व को प्राप्त व्यक्ति मृत्यु का भी उपयोग कर सकता है। एक सद्गुरु को ऐसा होना ही चाहिए जो शिष्य के बुद्धत्व के लिए प्रत्येक चीज का उपयोग कर सके।

इकीदो ठीक शिष्य के पीछे ही खड़ा हुआ था; शिष्य मठ के घंटे पर चोट कर रहा था और सद्गुरु उसका निरीक्षण कर रहा था। यदि यह शिष्य होशपूर्वक मर सके तो मृत्यु इसके जीवन चक्र के चरम विकास और परिवर्तन का बिंदु बन जाएगा। यदि यह होश पूर्वक मर सके, यदि तुम भूमि पर गिरकर भी होशपूर्ण बना रह सके, यदि शरीर गिर भी जाए पर गहने में वह केंद्र पर बना रह सके, सजग और सचेत तब उसकी यह अंतिम मृत्यु होगी, यदि तम पूरे होश के साथ मर सको तो जीवन चक्र रुक जाता है। तुम नए शरीर में तभी प्रवेश कर सकते हो, यदि तुम मरते समय बेहोश और मूर्च्छित रहो। जब कोई व्यक्ति पूरे होश में मरता है तो उसके लिए यह संसार रहता ही नहीं और न फिर उसका जन्म होता है।

यही वजह है कि हम कहते हैं कि एक बुद्ध कभी दुबारा इस संसार में नहीं आता। एक बुद्ध बस केवल शून्य में खो जाता है। तुम फिर शरीर में, उससे मिलने में समर्थ न हो सकोगे। तुम उसके अशरीर अस्तित्व से मिल सकते हो। तब वह हर जगह होता है, लेकिन शरीर में ही नहीं होता। तुम एकबुद्ध से किसी भी स्थान पर नहीं मिल सकते क्योंकि केवल शरीर ही किसी स्थान पर रहता है। जब शरीर नष्ट हो जाता है तो एक बुद्ध हर कहीं या कहीं भी नहीं रहता है। तुम उससे यहां मिल सकते हो, तुम उससे वहां मिल सकते हो, तुम उससे कहीं भी मिल सकते हो, लेकिन कहीं भी उससे उसके शरीर में न मिल सकोगे।

शरीर ही स्थान विशेष में रहता है और जब शरीर विसर्जित हो जाता है तो आत्मा या चेतना सर्वत्र व्याप्त हो जाती है। तुम बुद्ध से किसी भी स्थान में हर कहीं भी मिल सकते हो, तुम जहां भी जाओगे, तुम उससे मिल सकते हो।

शरीर वहां है, क्योंकि मन शरीर के द्वारा ही इच्छाओं की खोज में निकलता है। बिना शरीर के कामनाएं पूरी हो ही नहीं सकतीं। तुम बिना शरीर के पूरी तरह संतुष्ट हो सकते हो, लेकिन बिना शरीर कामनाएं पूरी नहीं हो सकतीं। कामना को शरीर की जरूरत होती है, शरीर ही कामनाओं का वाहन है। यही कारण है कि कामनाएं तुम्हें अपने अधिकार में ले लेती हैं। तुमने सुनी भी होगा, ऐसी कई कहानियां, भूतों-प्रेतों के बारे में कि उन्होंने किसी व्यक्ति को अपने अधिकार में ले लिया। किसी के भी शरीर को अपने अधिकार में लेने की एक प्रेत की दिलचस्पी क्यों होती है? ऐसा होता है- कामनाओं के कारण। बिना शरीर के कामनाएं पूरी नहीं हो सकतीं, इसलिए उन कामनाओं को पूरा करने के लिए ही वह किसी के शरीर में प्रवेश कर जाता है।

ठीक ऐसी ही स्थिति तब भी होती है जब तुम नया शरीर प्राप्त करने और अपनी कामनाओं को पूरा करने की यात्रा प्रारंभ करने के लिए गर्भ में प्रवेश करते हो, लेकिन यदि तुम सजग होकर मरो तो उस सजगता में न

केवल शरीर मरता है, सभी कामनाएं भी जैसे भाप बनकर उड़ जाती हैं। तब गर्भ में प्रवेश नहीं करना होता है। गर्भ में प्रविष्ट होना अत्यंत पीड़ाजनक विधि है, यह इतनी अधिक दर्द से भरी प्रक्रिया है कि तुम होशपूर्वक इसे नहीं कर सकते, केवल बेहोशी में ही कर सकते हो।

अंग्रेजी का शब्द (Anxiety) व्यग्रता, लेटिन मूल से आता है जिसका अर्थ है संकुचित होते जाना और प्रारंभ में इस शब्द का प्रयोग गर्भ में आत्मा के प्रवेश के लिए किया जाता था। इसलिए व्यग्रता का अनु भव तब होता है जब आत्मा गर्भ में प्रविष्ट होती है क्योंकि हर चीज संकुचित हो जाती है। एक अनन्त आत्मा सूक्ष्म शरीर धारण कर लेती है। यह सबसे अधिक पीड़ा युक्त विधि है। पूरे आकाश को बलपूर्वक एक बीज में प्रविष्ट होने के लिए विवश किया जाता है। तुम इसे नहीं जानते क्योंकि यह इतनी अधिक पीड़ायुक्त है कि उस समय तुम पूरी तरह बेहोश जाते हो।

वहां दो विधियां ही सबसे अधिक पीड़ायुक्त हैं। तुमने बुद्ध के इस वचन के बारे में जरूर सुना होगा, " जन्म दुख है मृत्यु दुख है। " यही सबसे बड़े दुख है जितनी बड़ी-से-बड़ी वेदना होना संभव है, उतने ही जब असीमित गर्भ में सीमित होकर प्रविष्ट होता है। यह पीड़ाजनक होता ही है, यही व्यग्रता या Anxiety है और जब अनन्त शरीर से बाहर निकलता है, फिर वही पीड़ा और वेदना होती है।

इसलिए जब कभी कोई भी होशपूर्वक मरता है, वह शून्य में खो जाता है तब वहां शरीर में फिर से प्रवेश नहीं करना होता है। तब वहां कोई व्यग्रता या Anxiety! नहीं होती, क्योंकि तब पूरी करने के लिए कोई कामना होती ही नहीं। तुम असीमित ही बने रह सकते हो, फिर वहां किसी वाहन में प्रवेश करने की आवश्यकता नहीं होती क्योंकि अब तुम्हें कहीं भी जाना नहीं है।

वह शिष्य जो मठ के घंटे पर चोट कर रहा था, अवश्य ही उसकी मृत्यु निकट होगी और इसी कारण सद्गुरु उसके पीछे खड़ा हुआ था। वह शिष्य किसी भी क्षण मरने ही जा रहा था। यह बात कहानी में नहीं कहीं गई है। इसे कहा भी नहीं जा सकता, लेकिन चीजें इसी तरह से घटती हैं अन्यथा सद्गुरु को शिष्य के पीछे खड़े होने की आवश्यकता ही नहीं थी, विशेष रूप से तब जब वह घंटा बजा रहा था। सद्गुरु के करने के लिए वहां बहुत से अन्य आवश्यक काम भी होते हैं। घंटे पर समय बताने के लिए चोट करना केवल एक मामूली-सी बात है और यह प्रतिदिन का रुटीन कार्य है। उस समय सद्गुरु क्यों उसके पीछे खड़ा हुआ था?

यह इकीदो बड़ा अजीब व्यक्ति दिखाई देता है। क्या उस समय उसके करने के लिए कोई अन्य महत्वपूर्ण कार्य नहीं था? उस क्षण वहां इससे अधिक महत्वपूर्ण और कुछ भी नहीं था क्योंकि यह शिष्य किसी भी तरह से शीघ्र मरने जा रहा था और उसकी मृत्यु का उपयोग किया जाना था। केवल एक सद्गुरु ही मृत्यु का प्रयोग कर सकता है-केवल करुणा वश। वह उसे देखता हुआ यह प्रतीक्षा कर रहा था कि वह मृत्यु के क्षण सजग रहता है अथवा नहीं। वह चूक ही गया था।

यह कहानी बहुत सुंदर और महत्वपूर्ण है। उसने एक सुंदर लड़की को उधर से गुजरते हुए देखा और उसका पूरा होश जाता रहा। वह एक कामना बन गया, उसका पूरा अस्तित्व एक कामना बन गया। उसने उस लड़की को पाने के लिए उसका पीछा करना चाहा और जब वहां कोई कामना होती है तो होश खो जाता है क्योंकि दोनों साथ-साथ नहीं रह सकते। कामना रहती है मूर्च्छा के साथ, वह चेतना के साथ नहीं रह सकती। जब तुम कामना की ओर गति करते हो, चेतना खो जाती है इसलिए सभी बुद्धों और जिनों का आग्रह कामना मुक्त होने पर है। जब तुम कामनामुक्त होते हो, तुम सचेत होते हो और जब तुम सचेत होते हो तुम कामना शून्य होते हो। यह एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। एक तरफ कामना शून्यता है तो दूसरी ओर सजगता और चेतना

यह कहानी बहुत महत्वपूर्ण है। उधर से गुजरती एक सुंदर लड़की को देखकर वह शिष्य स्वयं को भूल गया। उस समय वह वहां रहा ही नहीं। वह एक कामना ही बन गया। उसे जैसे झपकी लग गई, वह स्वप्न देखने लगा, उसने लड़की का पीछा करना शुरू कर दिया है.. .वह मूर्च्छित ही हो गया जैसे।

मृत्यु और जीवन के मध्य का बिंदु कामवासना ही है। जन्म और मृत्यु के मध्य कामवासना है। वास्तव में जन्म और मृत्यु के मध्य सेक्स के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है। वह सेक्स का ही विस्तार है। तुम सेक्स क्रिया के

द्वारा ही गर्भ में आए हो और जिस क्षण भी तुम कल्पना करते हो या सोचते हो, तुम्हारी कामवासना के सुख की यात्रा शुरू हो जाती है। जिस क्षण तुम मरते हो, यह यात्रा तब भी जारी रहती है और सेक्स इतना अधिक शक्तिशाली है कि यदि मृत्यु भी सामने खड़ी हो, तुम उसे भूल जाओगे। जब कामवासना तुम्हें अपने पंजे में जकड़ लेती है, तब तुम हर चीज भूल जाते हो, तुम पूरी तरह पागल हो जाते हो।

उस लड़की की आकृति को उसके मन ने पकड़ लिया, वह वहां तब रहा ही नहीं। एक क्षण पहले ही वह सजग था, अब वह जरा भी सजग नहीं था।

तुमने भारत में ऋषियों, और खोजियों द्वारा कठोर तप करते हुए पहाड़ों और जंगलों की कंदराओं में ध्यान करने की कहानियां अवश्य सुनी होंगी। ऐसा हमेशा होता था कि वे जब भी चेतना के चरम बिंदु पर पहुंचने को होते थे अचानक कामवासना उन्हें घेर लेती थी और तुरंत स्वर्ग की सुंदर स्त्रियां और अप्सराएं उतर आती थीं जैसे मानो वे बस प्रतीक्षा ही कर ही होती थीं कि कोई चेतना के चरम बिंदु पर पहुंचे, जैसे मानो उनके चेतना के बिंदु पर पहुंचने के विरुद्ध उन्होंने कोई सूक्ष्म साजिश कर रखी थी। जंगल की गहराई में छिपी कंदरा में जब कोई थोड़ा-सा भी होशपूर्ण होता था तो अचानक स्वर्ग की सुंदर नवयौवनाएं प्रकट हो जाती थीं-वह भी इस पृथ्वी की नहीं, परिपूर्ण, तुम उनसे अधिक पूर्ण सौंदर्य की कल्पना भी नहीं कर सकते। उनके शरीर ऐसे होते थे मानो वह पारदर्शी और स्वर्णिम आभा से आलोकित हो रही हों। तभी अचानक होश खो जाता था और ऋषि कामनायुक्त साधारण मनुष्य बन जाते थे। उनका पतन हो जाता था।

कहां से आती थीं अप्सराएं? क्या वास्तव में वे स्वर्ग से आती थीं? क्या होश के विरुद्ध उनकी कोई साजिश थी नहीं, वे खोजी साधक के मन से ही प्रकट होती थीं। जब मन यह देखता है कि वह सब कुछ खोने जा रहा है, वह आखिरी शस्त्र के रूप में सेक्स का प्रयोग करता है। जब मन देखता है कि चेतना एकीकृत और घनीभूत होकर केन्द्रित हो रही है तब उसके आगे उसकी कोई पूछ नहीं होगी और उसे विसर्जित होना ही होगा, तब वह आखिरी संघर्ष करता है। अचानक मन कामवासना और उसकी कामना उत्पन्न और प्रक्षेपित करता है।

मैं तुमसे कहता हूं हो सकता है कि उधर से कोई सुंदर लड़की गुजर ही न रही हो। वह ठीक उसकी मृत्यु का क्षण था और यह शिष्य सजग था, इसलिए उसके मन ने आखिरी चाल चली हो। यह उसका आखिरी प्रयास था, यदि वह शिष्य जीत जाता तो उसने मन पर विजय प्राप्त कर ली होती। मन पहले दूसरी चालें चलेगा और हमेशा सेक्स को अंतिम आश्रय के रूप में सुरक्षित रखेगा। यदि सेक्स भी काम नहीं करता, तब कुछ भी काम नहीं कर सकता। मन आधारभूत रूप से कामवासना पर ही आश्रित होता है।

जरा अपने मन को देखो, तुम उसमें नब्बे प्रतिशत सेक्स ही पाओगे, सेक्स के बारे में विचार चलरहे हैं। सेक्स के बारे में स्वप्न आ रहे हैं। अतीत को याद करता हुआ वह उसे ही भविष्य में प्रक्षेपित कर रहा है और जब कभी तुम यह अनुभव भी करो कि मन सेक्स के बारे में नहीं सोच रहा है, तब उस पर जरा विचार करते हुए ध्यान करना, वह सेक्स के कारण ही दूसरी चीजों की कामना करता है। हो सकता है कि तुम धनी बनने के बारे में सोच रहे हो-तुम धन पाकर उसका करोगे क्या? अपने मन से जरा पूछना तो मन कहेगा-तब तुम शरीर का सुख ले सकोगे, तब तुम जितनी ही सुंदर स्त्री होना संभव है, उसे पा सकोगे।

मन सोच सकता है, ' नेपोलियन बनो, हिटलर बनो। ' लेकिन पूछना मन से, शक्ति पाकर तुम करोगे क्या? अचानक तुम पाओगे-सेक्स और उसकी कामना कहीं गहराई में छिपी हुई है।

हो सकता है-उधर से कोई लड़की न गुजर रही हो अथवा यदि लड़की गुजर भी रही थी तो हो सकता है वह उतनी सुंदर न हो जितनी उसे दिखाई दे रही थी पहले स्थान पर तो मेरा यही ख्याल है कि वहां कोई लड़की थी ही नहीं-ठीक उसकी मृत्यु का वह क्षण था और थी उस व्यक्ति की सजगता। वह घंटे पर पूर्ण रूप से सजग होकर चोट कर रहा था। यह झेन मठों में ध्यान का ही एक भाग है: तुम जो कुछ भी करो, होशपूर्वक करो। जब तुम चलो तो पूरी तरह सजग होकर चलो, जब तुम सिर हिलाओ तो पूर्ण सजग बने रहो। तुम जो कुछ भी करो। पूरी सजगता से उसका पालन करो, उसे चूको मत। किसी और चीज के बारे में सोचो ही मत। एक

प्रकाश की तरह उसमें ही बने रही, हर चीज प्रकट हो जाती है। प्रत्येक कार्य, प्रत्येक निर्जन स्थान और कोना-कोना बोध के प्रकाश से आलोकित हो उठता है, कुछ भी अंधेरे में रहता ही नहीं। जब भी तुम भोजन करो, होशपूर्वक खाओ। यह ही सब कुछ एक झेन मठ में करना होता है-चौबीसों घंटे निरंतर सजग बने रहो।

यह शिष्य अवश्य ही पूरी सजगता से घंटे पर चोट कर रहा होगा। घंटे पर चोट प्रत्येक को सजग बनाने के लिए ही की जाती है, वह भी जरूर सजग रहा होगा। घंटे की ध्वनि मठ में गूंज रही थी कि तभी वह लड़की प्रकट हुई-वह वहां कहां से आई? पहली बात तो यह कि मेरे ख्याल में वहां कोई लड़की थी ही नहीं, वह उसके ही मन का प्रक्षेपण था। दूसरी बात यह कि यदि वहां कोई लड़की थी भी तो वह उतनी सुंदर न थी। जितना उसका मन सोच रहा था, वह उसके मन ही प्रक्षेपण था।

ऐसा ही सब कुछ प्रत्येक के साथ होता है। जब पहली बार तुम किसी के प्रेम में पड़ते हो तो लड़की इस संसार की न लगकर कहीं और से आई हुई लगती है। वह स्वर्ग से उतरी कोई सुंदरी या अप्सरा जैसी लगती है, लेकिन धीरे- धीरे तुम जितना अधिक उससे परिचित होते जाते हो, वही लड़की अधिक-से-अधिक इसी धरती की साधारण और घरेलू बन जाती है। अचानक तुम पाते हो वहां कुछ भी तो नहीं है, यह तो बस एक साधारण लड़की है और तब तुम सोचते हो कि तुम छले गए और इस लड़की ने तुम्हें धोखा दिया।

तुम्हें किसी ने भी धोखा नहीं दिया। तुम्हारे ही मन ने प्रक्षेपित किया उसे जिससे कामना गति कर सके। सुदंरता चीजों में नहीं होती, सुंदरता प्रक्षेपित होती है। सुंदरता पदार्थगत नहीं है, वह व्यक्तिगत है। इसलिए एक दिन कोई सुंदर लगता है। और दूसरे ही दिन वही व्यक्ति कुरूप बन जाता है। यह तुम ही हो, जो प्रक्षेपण करते हो, यह तुम ही हो जो उसे हटा लेते हो, दूसरा ठीक एक पर्दे की तरह काम करता है।

तुम एक बार यह जान जाओ कि मन ही सुंदरता और कुरूपता को प्रक्षेपित करता है और मन ही अच्छे और बुरे दोनों को प्रक्षेपित करता है, तुम प्रक्षेपित बंद कर दोगे। तब पहली बार तुम यह जान पाते हो कि पदार्थगत वास्तविकता क्या होती है। न वह अच्छी होती है और न बुरी, न वह सुंदर होती है और न कुरूप! बस वह होती है। प्रक्षेपणों के साथ तुम्हारी व्याख्याएं खो जाती हैं।

इसलिए यह शिष्य मृत्यु के क्षण सजग और सचेत होने ही जा रहा था। उसके मन ने जो अंतिम उपाय किया और अंतिम शस्त्र का आश्रय लिया, एक सुंदर लड़की प्रकट हुई। उसके मन ने उसके चारों ओर सुंदरता प्रक्षेपित की और चेतना खो गई। मन का दर्पण धुंधला हो गया, कामना उठ खड़ी हुई और उस समय वहां आत्म तो थी ही नहीं। वह शिष्य मात्र शरीर बन गया।

यही कारण है कि सभी धर्म कामवासना के पार जाने की बात करते हु। बिना सेक्स का अतिक्रमण किए हुए मन आखिरी चाल जरूर खेलेगा और वही विजेता बनेगा-तुम नहीं, लेकिन उसका दमन करने से रूपांतरण नहीं होगा, यह तो उससे पलायन है। पूरे होश के साथ कामना में प्रवेश करो, काम कृत्य में बने रहने का प्रयास करो, लेकिन सजग होकर। धीरे- धीरे तुम देखोगे उसका बल और दबाव कम होता जा रहा है, ऊर्जा अधिक-से-अधिक सजगता की ओर गतिशील हो -रही है और काम कृत्य की ओर कम है। अब जो आधारभूत चीज थी, वह घट गई। देर-सवेर पूरी काम-ऊर्जा ध्यान की ऊर्जा बन जाएगी और तब तुम उसका अतिक्रमण कर जाओगे। तब भले ही तुम बीच बाजार खड़े हो या जंगल में बैठे हो, अप्सराएं तुम्हारे पास नहीं आ सकतीं। वे हो सकता है सड़क पर से गुजर रही हों, लेकिन वे तुम्हारे लिए नहीं होंगी। यदि तुम्हारा मन वहां है तो अनुपस्थित अप्सराएं भी विलीन हौ? जाएगी।

इस क्षण जब शिष्य होश खो बैठा, सद्गुरुने उसके सिर पर डंडे से प्रहार किया। तुम्हारी मृत्यु के क्षाण में मैं भी तुम्हारे साथ ऐसा ही करना चाहूंगा, लेकिन यहां इसे बरदाश्त नहीं किया जा सकता। जापान में यह पुरानी परंपराओं में से एक है: जब भी एकशिष्य सद्गुरु केपास उगता था, वह कहता था-'' मेरा जीवन, मेरी मृत्यु दोनों ही आपकी हैं! यदि आप मुझे मारना चाहते हैं, आप मार सकते हैं। '' इसी को कहते हैं, ' समर्पण और क्योंकि कानून और राज्य सुनेंगे नहीं। कानून इस बात को नहीं सुनेगा, यदि तुम कहोगे–क्योंकि वह स्वयं ही

मरने जा रहा था, इसी वजह से मैंने उस पर चोट की। कानून कहेगा-क्योंकि तुमने उस पर प्रहार किया इसलिए वह मर गया।

कानून, जो दिखाई देता है, उसी ओर गतिमान होता है और एक सद्गुरु अदृश्य से गतिशील होता है। सद्गुरु शिष्य की आती हुई अदृश्य मृत्यु को देख रहा है और वह शिष्य को सजग बनाने के लिए उस पर चोट करता है'। एक बहुत ही कड़ी चोट की जरूरत है। जब मन कामवासना की ओर भाग रहा है, साधारण चोट से कुछ होने वाला नहीं। एक असली चोट की जरूरत है, असली बिजली के झटके जैसी कोई चीज। यह एक पुरानी कहानी है। यदि अब भविष्य में पुराने झेन मठों जैसे मठ होंगे तो वहां डंडे से चोट करने की जरूरत न होगी। बिजली का एक झटका दिया जा सकता है-लेकिन कोई चीज ऐसी आघात करने वाली हो जो उसके पूरे अस्तित्व को कंपा दे, कोई चीज ऐसा धक्का देने वाली हो कि वह कामना, जो तुम्हें कामवासना की ओर लिए जा रही है, टूट जाए।

सद्गुरु ने उस पर इतना गाड़ा प्रहार किया कि वह मर गया। यह तो इसका दृश्य भाग, वह नीचे गिर पड़ा और मर गया।

लेकिन अंदर क्या हुआ? अंदर की क्या कहानी है? जब सद्गुरु ने शिष्य पर चोट की, वह उसकी मृत्यु का क्षण था, लेकिन उसके अंदर कामना जाग गई थी। मृत्यु के क्षण में यदि वहां कामवासना हो, केवल तभी तुम दूसरे के गर्भ में प्रवेश कर सकते हो, अन्यथा नहीं कर सकते।

बिस्तरे पर मर रहा व्यक्ति यदि वह सचेत भी है, हमेशा सेक्स के बारे में ही सोचेगा। यह आश्चर्यजनक है कि एक बूढ़ा व्यक्ति भी भले ही वह सौ वर्ष का हो, बिस्तरे पर मरते हुए लगभग हमेशा सेक्स के बारे में ही सोचता है क्योंकि शरीर गत जीवन में सेक्स ही प्रथम और अंतिम है। इससे पहले वह परमात्मा के बारे में सोचता रहा होगा, वह राम, राम, राम का मंत्र जपता रहा होगा, लेकिन मृत्यु के क्षण में अचानक सब कुछ छूट जाता है और कामवासना प्रकट हो जाती है। यह स्वाभाविक है। पहला ही आखिरी होना ही चाहिए। सेक्स से ही तुम्हारा जन्म होता है और मन में कामवासना के साथ ही तुम्हारा मरना भी जरूरी होता है।

यह बस काल्पनिक कहावत ही नहीं है कि बूढे आदमी गंदे होते हैं। शरीर तो लगभग मृत होता है, लेकिन मन निरंतर सोचता रहता है और युवाओं की अपेक्षा बूढ़े व्यक्ति सेक्स के बारे में अधिक सोचते हैं क्योंकि युवा तो उस बारे में कुछ कर भी सकते हैं और बूढ़े कुछ कर भी नहीं सकते। वे केवल सोच सकते हैं और पूरी घटना मस्तिष्क में घूमती हुई .मानसिक बन जाती है।

मृत्यु के क्षण में तुम तैयारी कर रहे हो पुन: प्रवेश की, गर्भ में प्रवेश करने की। जरा इसे गहराई से समझने का प्रयास करें स्त्री के शरीर में प्रविष्ट होने के लिए वहां इतना आकर्षण क्यों है? तुमसे आखिर उसे क्या मिलता है? प्रेम करने के समय, जब तुम्हारा पूरा अस्तित्व स्त्री के शरीर की गहराई में समा जाना चाहता है तो उससे तुम्हें क्या प्राप्त होता है? मनोवैज्ञानिक कहते हैं और आध्यात्मवादी भी इस बारे में हमेशा से सजग रहे हैं-यह पुन: प्रवेश करने का वही प्रतीकात्मक कृत्य है। यह केवल इतना ही नहीं है कि जब तुम कल्पना कर रहे होते .हो कि तुम्हारा अस्तित्व स्त्री के गर्भ में प्रविष्ट हो रहा है यह निरंतर पूरे जीवन जारी रहता है।

सेक्स का अर्थ है-स्त्री के शरीर में बलपूर्वक गहरे प्रवेश करना और गर्भ में प्रविष्ट होना। यह दोनों समान चीजें हैं, दोनों स्थितियों में तुम प्रवेश करते हो-तुम बीज के रूप में प्रवेश करो या काम-कृत्य करने के लिए-प्रवृत्ति है प्रवेश करने की। मृत्यु के क्षण में मन में कामवासना का ख्याल जरूर आता है और यदि यह आता है तो तुम चूक गए। तुमने एक कामना उत्पन्न कर ली और अब यह कामना तुम्हारे लिए फिर से दूसरे गर्भ में प्रवेश करने का पथ प्रदर्शन करेगी।

सद्गुरु पीछे खड़ा प्रतीक्षा कर रहा था। सद्गुरु हर स्थिति में शिष्य के पीछे खड़े प्रतीक्षा करते हैं, भौतिक रूप सशरीर अथवा सूक्ष्म रूप से और यह उन महान क्षणों में से एक है जब एक व्यक्ति मरने जा रहा है।

सद्गुरु ने उस पर सख्त चोट की, उसका शरीर भूमि पर नीचे गिर पड़ा, लेकिन अंदर वह सजग था। वासना नष्ट हो गई थी। कोई लड़की उधर से गुजर ही नहीं रही थी और अब वहां कोई सड़क भी नहीं थी। शरीर

गिरने के साथ-साथ ही सब चीजें नष्ट हो गई थीं, वह सजग हो गया था। उसी सजगता में उसने शरीर छोड़ दिया और यदि तुम सजगता को मृत्यु के साथ संयुक्त कर दो तो तुम बुद्धत्व को प्राप्त हो जाओगे। इसी कारण एक आश्चर्यजनक घटना घट जाती है।

इकीदो की परंपरा जापान में वहां की महत्वपूर्ण परंपराओं में से एक बन गई है। उनके निकट दस व्यक्ति और बुद्धत्व को प्राप्त हुए। लोगों को आश्चर्य होने लगा। यह व्यक्ति जो इतना अधिक निर्दयी, आक्रामक और हिंसक था और जिसने एक व्यक्ति को भी मार डाला, उसके शिष्य बुद्धत्व को कैसे प्राप्त हो रहे हैं? यह संख्या दुर्लभ है- दस की संख्या असाधारण। एक सद्गुरु के निकट दस शिष्य बुद्धत्व को प्राप्त हो जाएं यह बहुत कठिन और अनूठी बात है। एक ही सहायता पाकर बोध को प्राप्त हो जाएं यही बहुत है, लेकिन इसमें कुछ भी आश्चर्य नहीं है। यह साधारण गणित है-केवल इसी तरह के सद्गुरु सहायता कर सकते हैं और जब मैं इस कहानी को पड़ता हूं तो मुझे हमेशा आश्चर्य होता है कि उसके निकट दूसरे लोग कैसे चूक गए? लेकिन जो लोग डर गए जिन्हें भय ने जकड़ लिया, वे लोग जरूर इस व्यक्ति से चूक गए। लोगों ने उसे खतरनाक समझ कर उसके मठ में आना बंद कर दिया होगा।

इकीदो के बारे में एक बात यह भी कही जाती है कि जब उस शिष्य की मृत्यु हुई, उसने उसके बारे में कभी कुछ कहा ही नहीं। उसने यह कभी नहीं कहा-'' यह शिष्य मर गया। '' वह वैसा ही सब कुछ करता रहा, जैसे कुछ हुआ ही न हो। और जब कभी कोई उससे पूछता भी था, '' क्या हुआ था आपके उस शिष्य के साथ?'' वह हंस पड़ता था। उसने उस शिष्य का कभी उल्लेख तक न किया, उसने यह कभी नहीं कहा कि उसके साथ कुछ गलत हो था वह इसलिए मर गया। उसने कभी यह भी नहीं कहा कि वह एक दुर्घटना थी। जब भी कोई उससे उस बाबत पूछता था तो वह हंस पड़ता था, वह क्यों हंस पड़ता था? उसके अंदर घटी कहानी के ही कारण।

लोग केवल बाहर की बात ही जान पाते हैं? यदि मैं तुम पर कड़ा प्रहार करता हूं तो तुम मर जाते हो तो लोग बस तुम्हारे मरने को ही जान सकते हैं, कोई भी यह जानने में समर्थ न हो सकेगा कि तुम्हारे अंदर क्या घटा?

इस शिष्य को कुछ उपलब्ध हो गया, जिसे घटाने के लिए बुद्ध भी कई जन्मों तक प्रयास करते हैं और इकीदो ने उसे क्षण- भर में कर दिया। वह एक महान सद्गुरु के साथ एक महान कलाकार भी था। उसने मृत्यु के क्षण का इतनी सुंदरता से प्रयोग किया कि वह शिष्य बुद्धत्व को प्राप्त हो गया। वह न केवल शरीर से बल्कि मन से भी मुक्त हो गया। उस शिष्य का निकट दुबारा जन्म नहीं हुआ। बिना पुनर्जन्म के यही उसकी परिपूर्ण मृत्यु थी।

जापान में लोग ऐसी चीजों के घटने के अभ्यस्त हो जाते हैं। तुम एक सद्गुरु के पास जाओ तो वह तुम पर डंडे से चोट कर सकता है, वह तुम्हें उठाकर खिड़की से बाहर फेंक सकता है, वह तुम्हारे ऊपर कूदते हुए तुम्हें मारना-पीटना शुरू कर सकता है। तुम उससे एक दार्शनिक प्रश्न पूछ रहे थे-' परमात्मा का अस्तित्व है अथवा नहीं ' और वह तुम्हें पीटना शुरू कर दे। इकीदो ने बुद्धत्व को प्राप्त होने में कई लोगों की सहायता की। ऐसा व्यक्ति केवल महान करुणावश ही लोगों की सहायता कर सकता है लेकिन सर्वात्म समर्पण की जरूरत है।

यह कहा जाता है कि उस शिष्य के मरने पर उसके माता-पिता उस मठ में इकीदों से भेंट करने आए। वे बहुत क्रोधित थे। वे उसे कैसे भूल सकते थे। वही उनका इकलौता पुत्र था और वह मर चुका था। वे वृद्ध हों गए थे और उसी पर आश्रित थे। वे उसकी प्रतीक्षा कर रहे थे कि देर सवेर वह मठ से लौटकर घर आएगा और बुढ़ापे में उनकी सहायता करेगा।

जापान में मठ का जीवन एक निश्चित अवधि के लिए ही होता है। तुम मठ जा सकते हो, एक भिक्षु बन सकते हो, वहां कुछ समय रहकर अध्ययन और ध्यान करते हुए एक निश्चित मात्रा तक सजगता और अपने होने का अहसास पाकर अपने घर लौटकर साधारण जीवन व्यतीत कर सकते हो। कुछ समय बाद यदि तुम पाते हो कि तुम्हारा मन फिर धुंधला तथा भ्रमित हो रहा है और तुम कुछ चूक रहे हो, तो तुम फिर मठ जा सकते हो।

जापान में स्थायी रूप से संन्यासी या भिक्षु बनने की जीवन शैली नहीं है। केवल थोड़े-से लोग जीवन- भर इसका अनुसरण करते हैं और वह उनका अपना निर्णय होता होता है। तुम मठ से घर लौट सकते -हो और इसे गलत या कोई अपराध नहीं समझा जाता।

भारत में यह अपराध है। यदि एक बार तुम संन्यासी बन गए तब वापस लौट कर विवाह करके गृहस्थ बने तो प्रत्येक व्यक्ति तुम्हारी ओर यों देखता है जैसे तुम पतित हो गए हो। यह व्यर्थ की बात है, बेवकूफी है क्योंकि पूरा देश संन्यासी नहीं बन सकता। केवल थोड़े-से लोग ही संन्यासी बन सकते हैं। वे कोई भी काम नहीं करते हैं और दूसरे लोग जो जीवन में सक्रिय होकर कुछ कर रहे हैं, उन्हें उनका आश्रित बनना पड़ेगा।

संन्यास प्रत्येक के लिए उपलब्ध होना चाहिए। पूरे देश को संन्यासी बनने की सामर्थ्य होना चाहिए लेकिन यह केवल तभी संभव है, जब तुम संन्यासी बनकर साधारण जीवन जी सको, तुम चाहो तो दफ्तर जा सकते हो, तुम चाहो तो दुकान या कारखाने में काम कर सकते हो अथवा शिक्षक, डॉक्टर या इंजीनियर बन सकते हो, लेकिन फिर भी तुम संन्यासी हो।

इसलिए जापान में लोग झेन मठों में जाते हैं-वह उनकी प्रशिक्षण- अवधि है, जिससे पूरा समय ध्यान करते हुए व्यतीत करें-तब वे वापस घर लौट जाते हैं। साधारण जीवन में वे अपने साथ एक गुणात्मकता लेकर लौटते हैं और जहां तक बाहर के जीवन का संबंध है, वे फिर से साधारण नागरिक बनकर जीवन में सभी काम करते हैं। अपने अंदर गहराई में अंतर्ज्योति प्रज्वलित होने की प्रतीक्षा करते रहते हैं।

वे जब भी अनुभव करते हैं कि उनके अंदर सजगता कम हो रही है अथवा वे होश से चूक रहे हैं वे फिर से मठ चले जाते हैं। वहां कुछ समय ठहरते हैं और पिर वापस लौट आते हैं।

यह बूढ़ा दम्पती अपने. लड़के के वापस लौटने की प्रतीक्षा कर रहा था वह मर गया। उनका क्रोधित होना अवश्य ही स्वाभाविक था। उन्होंने सद्गुरु की दो के विरुद्ध बहुत कुछ जरूर सोचा होगा। इसलिए वे इकीदो के पास आए। उनकी ओर देखा और प्रतीक्षा करने लगे थे कि इकीदो कुछ करें। इकीदो ने क्या कहा? उन्होंने कहा, " तुम प्रतीक्षा क्या कर रहे हो? लड़के का ही अनुसरण करो। तुमने अपना जीवन काफी व्यर्थ गंवा दिया और अधिक मत गंवाओ। " और जब उन्होंने इकीदो की आंखों में देखा तो वै अपना -क्रोध भूल गए। वह व्यक्ति निर्दयी नहीं हो सकता, इससे तो करुणा बह रही है। वे आए तो थे शिकायत करने पर इकीदो को धन्यवाद देकर चले गए। जब तुम सद्गुरु के पास आते हो तो मरने की तैयारी के साथ आओ। घंटे पर चोट करते हुए लड़की का अनुसरण करते हुए या कामना के जाल में फंसते हुए सद्गुरु किसी भी क्षण तुम पर प्रहार कर सकता है। यदि तुम समर्पित नहीं हो तो वह चोट व्यर्थ हो सकती है? और इस दशा में सद्गुरु प्रहार करेगा भी नहीं, क्योंकि तुम चूक जाओगे उसका कोई अधिक उपयोग होना भी नहीं।

यह शिष्य अवश्य ही बहुत निकट, घनिष्ट और समर्पित रहा होगा, वह मर जाएगा लेकिन शिकायत नहीं करेगा। वह बिना शिकायत के नीचे गिर पड़ा, जैसे मानो शरीर, उसके -द्वारा उतारे गए वस्त्रों की भांति हो। उसके अंदर जो प्रकाश था, वह सब कुछ आलोकित हो उठा और वह उसी प्रकाश में प्रवेश कर गया।

मरने की पूरी तैयारी रहे, केवल तभी तुम पूरी तरह एक अलग आयाम में पुन: जन्म ले सकते हो। वही आयाम ही दिव्यता का आयाम है। अपने आपको बचाओ मत! तुम्हारा बचाव ही तुम्हारा न करना है। अपनी सुरक्षा करने का प्रयास मत करो। एक सद्गुरु के निकट, असुरक्षित होकर रहो क्योंकि वह ही तुम्हारी सुरक्षा है। असुरक्षित बनो, सब कुछ उस पर छोड़ दो और उसके चोट करने की प्रतीक्षा करो। किसी भी क्षण डंडे का प्रहार हो सकता है, लेकिन यदि तुमने समर्पण नहीं किया है तो वह प्रहार होगा ही नहीं क्योंकि किसी भी सद्गुरु को दिलचस्प से तुम पर प्रहार करने की नहीं है। न उसकी दिलचस्पी तुम्हारी जान लेने में है। सद्गुरुओं की दिलचस्पी केवल तुम्हारी पूरी खिलावट और बुद्धत्व में है और वह तभी घट सकती है, जब तुम्हारी मृत्यु और तुम्हारी सजगता मिलें-यह बहुत कठिन है और ऐसा संयोग दुर्लभ है।

एक सद्गुरु ही देख सकता है कि तुम कब मरने जा रहे हो। यह लिखा हुआ है... क्योंकि तुम्हारे शरीर से ऊपर से नीचे तक स्मृतियों का लेख लिखा है जिसे पढ़ा जा सकता है। ज्योतिषी से चूक हो सकती है। एक

हस्तरेखा विशेषज्ञ भी इसे पढ़ने में समर्थ नहीं है, क्योंकि तुम इतने बड़े झूठे हो कि तुम्हारी हथेली भी धोखा दे सकती है। तुम ऐसे धोखेबाज हो कि तुम्हारा मस्तक भी सच नहीं कहेगा और तुम मृत्यु से इतने डरे हुए हो कि अनजाने में अपने अचेतन में तुम उस जानकारी को सबसे अंदर के कक्ष में छिपा लेते हो। यदि तुम सच्चे और प्रामाणिक हो तो तुम स्वयं इसके प्रति सजग हो जाओगे कि तुम कब मरने जा रहे हो।

इसलिए झेन सद्गुरु अपनी मृत्यु की भविष्यवाणी करते रहे हैं। वे हमेशा बता सकते हैं कि वे कब मरने जा रहे हैं लेकिन फिर भी लोग उस पर विश्वास नहीं करते। हम कैसे विश्वास कर सकते हैं कि तुम अपनी मृत्यु की बाबत जान सकते हो? हमने तो उसे इतना गहरा छिपा लिया है कि हम कभी उसे देख नहीं पाते।

ज्योतिष असफल हो सकता है क्योंकि यह बाहर का विज्ञान है, जो कुछ चीज बाहर से अंदर की ओर देखता है। हस्तरेखा ज्ञान असफल हो सकता है क्योंकि यह भी निश्चित नहीं है। तुम्हारे हाथों पर विश्वास नहीं किया जा सकता। तुम पर और तुम्हारे पूरे शरीर पर विश्वास नहीं किया जा सकता और तुम्हारे हथेली की रेखाएं आसानी से बदल सकती हैं। पन्द्रह दिनों तक यदि निरंतर आत्महत्या करने के बारे में तुम सोचते रहो तो तुम्हारी जीवन-रेखा टूट जाएगी। लगातार पंद्रह दिनों तक किसी और चीज के बारे में सोचो ही मत, केवल आत्महत्या करने के ही बारे सोचो। कल्पना में उसका ही दृश्य उभारों, उसके ही सपने देखो तो पन्द्रह दिनों में जीवन-रेखा टूट जाएगी। मन ही उसे निर्मित कर सकता है और वही उसे बदल सकता है। यदि तुम किसी हस्तरेखा विशेषज्ञ के पास जाओ और वह कहता है कि तुम तीन महीनों में मरने जा रहे हो, यह हो सकता है उसकी व्याख्या या अनुमान गलत हो, लेकिन यदि यह विचार तुम्हारे मन की गहराई में जाकर जम जाता है तो तुम तीन महीनों में मर जाओगे और तीन महीनों में तुम्हारी जीवन रेखा ही मिट जाएगी। तुम्हारा हाथ तुम्हारे मन को प्रभावित नहीं कर रहा है, तुम्हारा मन ही निरंतर तुम्हारे हाथ को प्रभावित कर रहा है।

मैंने मिस्र के एक राजा के बारे में सुना है। उसे मृत्यु से बहुत भय लगता था, वह बहुत बीमार रहता था और कमजोरी का अनुभव करते हुए बिस्तरे पर ही पड़ा रहता था। उसे एक ज्योतिषी के बारे में पता चला कि उसने उसके एक मंत्री की मृत्यु के बारे में भविष्याणी की थी और वह ठीक उसी समय मर गया वह।

राजा ने सोचा-' यह आदमी खतरनाक है। यह आदमी कुछ काले जादू की तरह कोई चीज जानता है। इसी ने उस मंत्री को मार डाला और इस आदमी को जीने देना खतरनाक हो सकता है। वह ऐसा मेरे साथ भी कर सकता है। '

उसने ज्योतिषी को बुलवाया और उससे पूछा, " मेरी मृत्यु के बारे में मुझे कुछ बताओ। मैं कब मरने जा रहा हूं? "

उस ज्योतिषी ने राजा के चेहरे की ओर देखा और कुछ खतरा अनुभव किया। राजा का चेहरा बहुत भयानक था। उसे कुछ संदेह हुआ, इसलिए उसने जन्मपत्री आदि फैलाकर अध्ययन कर कहा-" मेरी मृत्यु होने के एक सप्ताह बाद ही आपकी मृत्यु हो जाएगी। "

इसलिए राजा ने अपने चिकित्सकों को बुलाकर उस ज्योतिषी की -ठीक तरह से देखभाल करने के लिए कहा। उसके लिए एक महल बनवा दिया गया और उसे अच्छे से अच्छा भोजन और सुविधा की हर चीज उपलब्ध कराई गई। उसकी सेवा में सर्वश्रेष्ठ डॉक्टर बुलाकर रखे गए और उनसे राजा ने कहा-"इसे बहुत संभाल कर रखो क्योंकि यह कहता है कि इसके मरने के सात दिनों बाद...।"

यह कहा जाता है कि वह राजा बहुत दिनों तक जीवित रहा क्योंकि वह ज्योतिषी जीवित था और वह बहुत स्वस्थ था। वह राजा केवल तभी मरा, जब वह ज्योतिषी मरा, उसके मरने के एक सप्ताह बाद ही मर गया।

तुम्हारा मन बदलता जाता है और चूंकि तुम्हारा मन झूठा है इसलिए किसी हस्तरेखा विशेषज्ञ के पास जाओ ही मत। वह तुम्हें धोखा ही देगा, लेकिन तुम एक सद्गुरु को धोखा नहीं दे सकते, क्योंकि वह कभी तुम्हारी हथेली नहीं पड़ता, वह कभी तुम्हारा मस्तक नहीं देखता। उसे तुम्हारे ग्रहों और सितारों की फिक्र नहीं होती, वह तो तुम्हें तुम्हारी गहराइयों में देखता है। वह तुम्हारी मृत्यु का ठीक क्षण जानता है और यदि तुम

उसके प्रति समर्पित हो तो तुम्हारी मृत्यु का उपयोग किया जा सकता है। यह कहानी बहुत सुंदर है। इस पर ध्यान करो। ऐसा ही तुम्हारे साथ हो सकता है, लेकिन काफी तैयारी की जरूरत है, परिपक्व होने और समर्पण की जरूरत है।

क्या कोई बात और....?

प्यारे सद्गुरू? इस झेन कहानी की अंतिम पंक्ति कहती है? कि दस लोग बुद्धत्व को प्राप्त हुए और यह संख्या काफी बड़ी है, मुझे तो यह दल की संख्या किसी तरह बड़ी नहीं लगती क्या हम लोग आपकी झेन छड़ी खरीद सकते हैं और उसका अपने पर प्रयोग कर सकते हैं जिससे समर्पण घटे?

दस की संख्या वास्तव में एक बड़ी संख्या है। क्योंकि बुद्धत्व को प्राप्त होना इतना अधिक श्रमपूर्ण और कठिन है कि लगभग असंभव जैसा है। दस की संख्या बड़ी संख्या है, लेकिन इससे बड़ी संख्या में भी ऐसा घटा है। बुद्ध के सान्निध्य में सैकड़ों बोध को प्राप्त हुए। महावीर के साथ सैकड़ों को बुद्धत्व मिला। मूल बात यह नहीं है कि तुम मेरी झेन छड़ी कैसे खरीद लो-तुम उसे नहीं खरीद सकते-मुख्य बात है कि तुम कैसे राजी होते हो।

यह प्रश्न, सद्गुरु द्वारा तुम पर चोट किए जाने का नहीं है। प्रश्न उस चोट को प्राप्त करने का भी नहीं है। यदि तुम प्रतिरोध करते हो तो कुछ भी नहीं किया जा सकता और प्रतिरोध वहां है-साधारण चीजों में भी तुम प्रतिरोध करते हो और मुत्यु तो बहुत बड़ी चीज है। वह तो अंतिम है और तुम साधारण चीजों में भी...।

एक व्यक्ति मेरे पास आया और उसने कहा-'' मैं समर्पण करना चाहता हूं। '' मैंने उससे कहा-'' इस बारे में पहले अच्छी तरह सोच लो- आखिर इसका अर्थ क्या है? यह बहुत कठिन है.। यह इतना आसान नहीं है कि तुम आओ और कहो-मैं समर्पण करता हूं। जाओ, पहले जाकर अपना सिर मुंडाकर आओ। ''

उस व्यक्ति ने कहा–'' यह तो बहुत कठिन है। मैं यह नहीं कर सकता। मैं अपने लंबे बालों से बहुत प्रेम करता हूं। ''

वह व्यक्ति पूरी तरह भूल ही गया कि वह मुझे सब कुछ समर्पित कर रहा था, लेकिन वह अपने बाल तक कटाने को तैयार न हुआ। बाल तो पहले ही से शरीर का मृत भाग है, उनमें कोई जीवन नहीं है। यही कारण है कि तुम उन्हें काट सकते हो और तुम्हें कोई हानि नहीं होती। बाल मृत है, पहले ही से मृत है। तुम्हारे शरीर ने मृत कोषों के रूप में उन्हें बाहर फेंक दिया है। यह व्यक्ति कह रहा है वह अपने बालों को नहीं कटा सकता क्योंकि वह अपने लंबे बालों से बहुत प्रेम करता है और वह समर्पण करने के लिए तैयार है? वह जानता ही नहीं कि समर्पण का क्या अर्थ है?

कोई मेरे पास आता है और कहता हैँ-'' मैं समर्पण करने के लिए तैयार हूं। '' मैं उससे कहता हूं-'' नारंगी 'वस्त्र पहनकर आओ। '' वह अपने कपड़े उतार कर नारंगी वस्त्र तक नहीं पहन सकता और वह समर्पण करने को तैयार है। समर्पण शब्द हो अर्थहीन हो गया है। उसके लिए इसका कोई अर्थ है ही नहीं। वह क्या कह रहा है, वह इसके प्रति भी सजग नहीं है, अन्यथा समर्पण शब्द के उच्चारण से ही उसका सर्वांग कांप उठता, क्योंकि उसका अर्थ है-मृत्यु।

मेरी छड़ी वहां रखी हुई है। मैं तुम पर चोट भी कर सकता हूं लेकिन वहां तुम्हारी कोई तैयारी है ही नहीं। तुम्हारे तैयार होने से पूर्व ही यदि मैं उससे चोट करता हूं तो तुम मुझे छोड़कर भाग खड़े होंगे। बहुत से लोग मुझे छोड़कर चले गए क्योंकि मैंने किसी-न-किसी तरह से उन पर चोट की थी। यह मत सोचो कि मेरी छड़ी या डंडा कोई दृश्यमान चीज है, मैं सूक्ष्म अशरीर छड़ी का प्रयोग करता हूं। ठीक मेरे एक शब्द की चोट से तुम टूटकर बिखर सकते हो, मर सकते हो। तुम्हारे तर्क, तुम्हारे धर्म, तुम्हारे विचारों और मान्यताओं पर चोट लगे तो तुम टुकड़े-टुकड़े हो जाते हो। मैं तुम्हारी भावनाओं पर चोट करता हूं तब तुम मेरे विरोधी हो जाते हो। अभी तुम्हें परिपक्व होने की जरूरत है।

जिससे तुम उस चोट का स्वागत कर सको, उसके लिए प्रतीक्षा और प्रार्थना कर सको।

झेन मठों में यह सबसे पुरानी परम्पराओं में से एक है कि जब भी किसी शिष्य पर डंडे से सद्गुरु चोट करते हैं तो -पूरा मठ प्रमुदित प्रसन्न हो उठता है और वह विषय किसी विशिष्ट उपहार के रूप में उसे स्वीकार करता है। सद्गुरु ने उस पर चोट की अर्थात वह शिष्य उसके द्वारा चुन लिया गया। सद्गुरु द्वारा चोट किए जाने की वर्षों तक शिष्य प्रतीक्षा करते हैं। वे प्रार्थना करते हैं-पूछते हैं सद्गुरु से-'' कब? आखिर हम कब समर्थ होंगे '' अथवा-'' हमे कब आपकी चोट का सौभाग्य प्राप्त होगा? कब आपकी छड़ी या डंडा हमारे ऊपर पड़ेगा ''

एक गहरी ग्राहकता की जरूरत है। मेरी छड़ी खरीदने की कोई जरूरत नहीं, वह पहले ही से तुम्हारी है। केवल एक- स्वागत भरा हृदय चाहिए। एक गहरी ग्राह्यता चाहिए तब चाहिए धैर्य और वह छड़ी किसी भी क्षण तुम पर गिर सकती है। कभी- कभी वह तुम्हारे निकट आती भी है, लेकिन तुम भयभीत हो जाते हो। कभी-कभी मैं तुम्हारे शरीर के कई केन्द्रों पर प्रहार करता हूं लेकिन तब तुम डर जाते हो, तब तुम बचाव करना चाहते हो, पलायन कर जाते हो। मन के प्रति सजग बने रहो। मन हमेशा पलायन करने को कहेगा। जहां कहीं भी खतरा होता है-मन कहेगा, 'यहां से भाग जाओ।'

किसी स्थिति का आमना-सामना करने के लिए मन के पास दो रास्ते हैं, पहला है संघर्ष और दूसरा है भाग खड़े होना। तुम्हारा मन मेरे साथ संघर्ष करना शुरू कर देता है, जिसे मैं देख सकता हूं। जब मैं बोल रहा होता हूं तो मैं तुम्हारी आंखों में देख सकता हूँ कि तुम संघर्ष कर रहे हो या दूर भाग रहे हो। तुम्हारी उस दृष्टि, तुम्हारे हर ढंग- जिस तरह से तुम बैठते हो, जिस तरह से सुनते हो, उससे स्पष्ट हो जाता है कि तुम संघर्ष कर रहे हो, प्रतिरोध करते हुए अपने को दूर हटा रहे हो-एक दूरी निर्मित कर रहे हो, जिससे मैं तुममें प्रवेश न कर सकूं अथवा यदि तुम भागना चाहते हो, तब तुम्हें नींद आने लगती है, तुम मुझे सुन ही नहीं रहे होते हो या तुम कुछ और सोचते हुए कहीं और ही होते हो और तुम अपने में व्यस्त हो जाते हो, जिससे तुम भाग सको।

जब तुम न तो संघर्ष कर रहे हो और न भाग रहे हो, प्रार्थना पूर्ण होकर धैर्य से प्रतीक्षा कर रहे हो-केवल तभी तुम तैयार होते हो। उसके बारे में व्यग्रता होती ही नहीं, क्योंकि व्यग्रता तनाव उत्पन्न करती है। तुम व्यग्र होते ही नहीं, बस परम संतोष से प्रार्थनापूर्ण भावदशा के साथ निष्किय प्रतीक्षा करते रहते हो। अब चोट तुम्हीं पर होगी, मैं समय की प्रतीक्षा कर रहा हूं। और इकीदो के शिष्यों से भी कहीं अधिक लोग बुद्धत्व को प्राप्त हो सकते हैं। यहां पूरी सम्भावना है, अवसर भी है और सरिता बही जा रही है, लेकिन यह तुम पर ही निर्भर है, तुम चाहोगे, तभी नीचे झुककर नदी का जल पी सकोगे अथवा अहंकार से तने खड़े रहोगे। नदी से यह सोचते हुए वापस लौट आओगे कि संघर्ष करूं या भाग जाऊं। अपने चारों ओर इन विचारों को लिए हुए यह तुम पर ही निर्भर है कि तुम्हारा मन तुम्हें मुझसे दूर खींचकर ले जाएगा अथवा तुम मन को एक ओर रखकर मुझे अपने पर चोट करने की इजाजत दोगे।

वह चोट बस तुम पर होने ही वाली है, लेकिन तुम हिल-डुल रहे हो, कांप रहे हो। यह शिष्य जिस पर इकीदो द्वारा चोट की गई, वह वास्तव में पूर्ण समर्पित था। उसकी मृत्यु के पश्चात कई और लोग भी तैयार थे। कहीं से भी उस शृंखला को टूटना ही था। जब एक दीप जलता और प्रकाश बिखरता है तो कई उसका अनुसरण करते हैं। प्रश्न यह है कि पहले कौन मरने के लिए तैयार होगा? एकबार यह शिष्य मर गया और उसके अंदर बुद्धत्व घट गया, फिर कई लोगों ने उसका अनुसरण किया और दस लोग बुद्धत्व को उपलब्ध हुए।

यह शब्द 'दस' भी सोचने जैसा है। यह दस की संख्या प्रतीकात्मक है. .क्योंकि दस ही सबसे बड़ी संख्या है। यह ठीक दस ही नहीं है, यह गणित की संख्या नहीं है, दस तो बस सबसे बड़ी संख्या है। मनुष्य ने पहले अपनी उंगलियों पर गिनना शुरू किया और वहां दस उंगलियां ही होती हैं। अभी भी गांव वाले उंगलियों पर ही गिनते हैं। दस ही सबसे बड़ी संख्या है और सभी संख्याएं दोहराई जाती हैं। ग्यारह का अर्थ है एक के बाद एक, बारह का अर्थ है एक और दो और वहां सभी संख्याएं एक दूसरे को दोहराती हैं। विश्व की सभी भाषाओं में मूल

संख्या दस तक ही है, क्योंकि हर कहीं मनुष्य की दस उंगलियां ही होती हैं। संख्याएं केवल दस होती हैं इसलिए दस सबसे बड़ी संख्या है और यह प्रतीकात्मक है।

असीम अनन्त में एक गिरा और बहुतों ने उसका अनुसरण किया। एक बार खाई का मुंह खुल गया और उसमें तुमने एक को प्रवेश करते हुए देख लिया। तुम उस परमानंद और आशीर्वाद को देख रहे हो तो तुम आसानी से उसमें प्रविष्ट हो सकते हो, तुम छलांग लगा सकते हो। बहुत-से अन्य भी तैयार रहे होंगे, लेकिन यदि तुम निन्यानवें प्रतिशत भी तैयार हो, चोट तुम पर नहीं हो सकती थी। चोट तुम पर केवल तभी हो सकती थी जब तुम सौ प्रतिशत तैयार हो, क्योंकि तभी एक क्रांति घटती है। तुम निन्त्रान्तवे प्रतिशत से भी वापस लौट सकते हो, यही समस्या है। यह बहुत बड़ा दुर्भाग्य भी है लेकिन यही होता है।

मैं बहुत, बहुत लोगों पर काम करता रहा हूं और जब कभी वे बिलकुल ठीक उसी क्षण भाग खड़े होते हैं, जब घटनाघटने ही वाली होती है। यह मन काफी चालबाज है, यह उसकी दार्शनिक विवेचना कर सकता है, यह कह सकता है कि तुम भाग खडे हुए। ठीक उसी क्षण जब कुछ घटने जा रहा था, तुम भाग सकते हो। यही अधिक सम्भावना है कि अन्य क्षणों की अपेक्षा तुम ठीक उसी क्षण भाग खड़े हुए यह बहुत दुर्भाग्यपूर्ण है, लेकिन ऐसा ही होता है। तुम प्रतीक्षा, प्रतीक्षा और प्रतीक्षा करते रहते हो और वह क्षण निकट आता जाता है, जहां पानी के वाष्प बनने का बिंदु आ पहुंचता है और ठीक उसी क्षण तुम भाग खड़े होते हो। उस भागने से अपने को रोकना बहुत कठिन है। तब ठीक ऐसा लगता है जैसे मृत्यु पास, पास और पास आती जा रही है और अनन्त खाई देखकर तुम जितनी तेजी से सम्भव होता है, भाग खड़े होते हो।

सजग बने रहो। खोजियों के साथ यह दुर्भाग्य घटता है, यह तुम्हारे साथ भी हो सकता है।

बुद्ध चालीस वर्षों में यात्रा करते हुए एक विशेष गांव से होकर कई बार गुजरते थे। एक मनुष्य उन्हें सुनने जरूर आता था, लेकिन वह कुछ मिनट रुककर ही उन्हें सुनता था और तब उठकर चला जाता था। यह उसकी एक आदत बन गई थी, उसने कभी भी बुद्ध का पूरा प्रवचन सुना ही नहीं। वह आएगा जरूर, यह निश्चित था और जब कभी बुद्ध उस गांव में आते थे, वे उस मनुष्य की प्रतीक्षा करते थे क्योंकि उसका आना निश्चित था। वह कुछ मिनट बैठकर उन्हें सुनता था और तब आदरपूर्वक बुद्ध को सिर झुकाकर नमन करते हुए चला जाता था। आनन्द ने एक बार उस व्यक्ति से पूछा-'' तुम ऐसा क्यों करते हो? ''

उस मनुष्य ने उत्तर दिया-'' कभी-कभी यही समय मेरे व्यापार का सबसे व्यस्त समय होता है। मैं सम्मान प्रकट करने के लिए आता जरूर हूं लेकिन मेरी दुकान खुली हुई है और वहां बहुत से ग्राहक भी हैं, जो प्रतीक्षा नहीं करेंगे। बुद्धत्व तो प्रतीक्षा कर सकता है अगली बार मैं उन्हें पूरा जरूर ही पूरा सुनूंगा। ''

और हर बार यही होता रहा। जिस दिन बुद्ध ने शरीर छोड़ा, वह उस गांव के निकट ही थे और अपना शरीर छोड़ने से पूर्व उन्होंने आनन्द से कहा-'' वह व्यक्ति नहीं आया अभी तक। यह अप्रत्याशित बात थी-वह आज तक कभी नहीं चूका। वह हमेशा एक अर्थ में तो चूकता ही रहा, पर वह आना कभी नहीं भूला। वह आया। हर बार और आज वह अभी तक नहीं आया। ''

तब बुद्ध ने शिष्यों से पूछा-'' क्या तुम लोगों को कुछ पूछना है? क्योंकि बहुत शीघ्र मैं अंतिम परमानंद की समाधि में प्रवेश करने जा रहा हूं और तब मैं वापस लौटकर तुम्हारे प्रश्न का उत्तर न दे सकूंगा। ''

वे लोग रोने और बिलखने लगे, लेकिन उनके पास कोई प्रश्न न था। आनन्द ने कहा-'' भगवान। हम लोगों ने आपसे सभी कुछ तो पूछ लिया और आपने सभी बातों का समाधान भी कर दिया। अब कुछ बचा ही नहीं। हम लोगों के मन अब कोरे और खाली हैं, लेकिन बस यह विचार कर कि आप सदा के लिए खो जाने के लिए जा रहे हैं...। ''

बुद्ध ने बार-बार तीन बार पूछा, पर वहां कोई प्रश्न ही नहीं था, इसलिए वृक्ष के पीछे जाकर उन्होंने अपने नेत्र मूंद लिए जिससे असीम अनन्त में पिघलकर वे विलुप्त हो जाएं और अपना शरीर छोड़ दें। तभी

अचानक वह व्यक्ति आया और से झगड़ने लगा और बोला-'' मुझे उनके दर्शन करना बहुत जरूरी है, क्योंकि अब यह आखिरी अवसर है और मैं उन्हें फिर कभी न देख सकूंगा। चालीस वर्षों से मैं उनसे चूकता रहा हू और उनसे पूछने का पहले कभी समय ही न निकाल सका क्योंकि कभी मेरे परिवार में कोई विवाह होता था, कभी मेरे व्यापार की व्यस्तता का समय होता था। कभी मैं स्वयं या पत्नी बीमार होती थी और कभी घर में मेहमान ठहरे होते थे। मैं हमेशा चूकता रहा, लेकिन अब कृपया मुझे रोकिए मत। ''

शिष्यों ने कहा-'' अब यह सम्भव नहीं है क्योंकि अब युद्ध अंतिम समाधि ले रहे हैं। ''

बुद्ध अपनी परमानंद की अंतिम समाधि से वापस लौट आए। वे वृक्ष के समाने आकर बोले-'' इस व्यक्ति को रोको मत। हो सकता है यह व्यक्ति मूर्ख हो और अपने अज्ञान और मूर्च्छा के कारण यह अभी तक चूकता रहा हो, लेकिन मैं इसके प्रति कठोर नहीं हो सकता। मैं अभी तक जीवित हूं इसलिए उसे आने दो। कोई यह न कहे कि बुद्ध के जीवित रहते एक व्यक्ति कुछ मांगने आया था और वापस लौट गया। '' उसके निकट आने पर बुद्ध ने उससे पूछा-'' तुम क्या पूछना चाहते हो? ''वह व्यक्ति अपना प्रश्न भूल ही गया। उसने कहा-''जब मैं यहां आया, तब वह प्रश्न मैं जानता था, लेकिन अब वह मुझे याद ही नहीं आ रहा... और अब और कोई अगला समय आने का नहीं...। ''

उसी दिन बुद्ध ने शरीर छोड़ दिया अवश्य ही वह व्यक्ति इस या उस पृथ्वी पर किसी ऐसे व्यक्ति की खोज में भटक रहा होगा, जो उसके प्रश्न का उत्तर दे सके। वह व्यक्ति बुद्ध को निरन्तर चालीस वर्ष तक चूकता रहा।

तुम भी मुझसे चूक सकते हो-हमेशा इस सम्भावना का स्मरण रखो, लेकिन यह मेरे कारण नहीं, तुम्हारे अपने ही कारण होगा। मैं तो हमेशा ही तैयार हूं तुम जब भी तैयार हो जाओगे, मैं तुम पर चोट करूंगा, लेकिन एक गहरे समर्पण की आवश्यकता है। उससे पहले कुछ भी नहीं हो सकता। तुम्हें एक दिन मरना ही है, तुम जैसे हो, वैसे ही मरना है जिससे तुम जो वास्तव में हो, उसका तुमसे जन्म हो सके। अपनी अहंकार मुक्त दिखावटी आकृति को मिटाना ही तुम्हारा मरना है, जिससे तुम्हारे अंदर जो वास्तविक सत्य है, उसका जन्म हो सके। तुम्हें अपनी परिधि के प्रति मरना है, जिससे केन्द्र विकसित और प्रकाशित होकर परिपूर्णता में प्रकट हो सके। सभी चोटें बीज को तोड़ने के लिए हैं जिससे वृक्ष का जन्म हो सके।

'क्या कुछ और...?

प्रश्न : आप योद्धाओं और व्यापारियों के सम्बन्ध में प्राय: चर्चा
करते रहते है और उसी से सबंधित वहां कई प्रश्न हैं। चूंकि हम लोगों
में से योद्धा वा सैनिक न होकर अधिकतर व्यापारी या पेशेवर लोग ही
हैं- क्या हम लोग बुद्धत्व से इसीलिए चूकते जा रहे है?

योद्धा होने का अर्थ सैनिक या सिपाही होना नहीं है। यह एक गुण है चित्त का। तुम एक व्यापारी होकर भी एक योद्धा बन सकते हो और तुम एक योद्धा होते हुए भी व्यापारी ही हो सकते हो।

व्यापारी का अर्थ है-मन के वह गुण जो हमेशा मोल-तोल करते रहते हैं। जो कम-से-कम देने और अधिक-से-अधिक लेने की कोशिश करते हैं। जब मैं व्यापारी शब्द का उल्लेख करता हूं तो उससे मेरा यही तात्पर्य होता है, जो कम -से- कम देने और अधिक-से- अधिक पाने का प्रयास करता है। हमेशा मोल- भाव करता है और हमेशा लाभ के लिए सोचता है।

योद्धा होना भी एकचित्त दशा है। उसमें मोल-तोल के गुण न होकर एक जुआरी के गुण होते हैं ऐसे गुण जो हर चीज दांव पर लगा सके-इस पार या उस पार-एक ऐसा चित्त जो समझौता वादी नहीं होता।

एक व्यापारी बुद्धत्व को भी अन्य वस्तुओं के बीच एक वस्तु की ही भांति सोचता है। उसके पास एक कार्य सूची होती है। उसे एक बडी कोठी या महल बनवाना है, उसे यह और वह, वगैरा, वगैरा खरीदना है और अंत में उसे बुद्धत्व भी खरीदना है, लेकिन बुद्धत्व हमेशा अंत में होता है-जब हर चीज पूरी हो जाए तब जब कुछ भी करने को बाकी न बचे। और वह बुद्धत्व भी उसे खरीदना है क्योंकि वह केवल धन की ही बात समझता है।

ऐसा हुआ एक बार कि एक धनी व्यक्ति महावीर के पास गया। वह वास्तव में अत्यधिक धनी व्यक्ति था। वह कुछ भी खरीद सकता था, यहां तक कि राज्य भी।

राजा-महाराजा भी उससे धन उधार लेते थे। वह महावीर के पास आया और उसने कहा-'' मैंने ध्यान के बारे में बहुत कुछ सुना है और जब से आप यहां पधारे हैं, उस समय से आपने लोगों के मन में उसके लिए एक रुचि और लालसा उत्पन्न कर दी है.। अब हर कोई ध्यान की ही बात करता है। यह ध्यान है क्या? उसकी कीमत क्या है? मैं उसे खरीदना चाहता हूं। ''

महावीर हिचकिचाए। क्या कहें और क्या न कहें?

उनकी ओर देख उस व्यक्ति ने कहा-'' आप कीमत की जरा भी फिक्र न करें, आप बस जो कहेंगे मैं तुरन्त उसे अदा कर दूंगा, इस बारे में मेरे लिए वहां कोई समस्या है ही नहीं। ''

इस व्यक्ति से कैसे बातचीत की जाए? महावीर कुछ समझ न पा रहे थे। क्या कहें इस व्यक्ति से? अंत में महावीर ने कहा-'' तुम यहां सीधे नगर में अमुक व्यक्ति के पास जाओ। वह एक निर्धन व्यक्ति है, हो सकता है वह ध्यान बेचने को तैयार हो? उसने ध्यान प्राप्त किया है और वह इतना अधिक निर्धन है कि वह शायद उसे बेचने को तैयार हो जाए। ''

उस व्यक्ति ने महावीर को धन्यवाद दिया और भागता हुआ उस निर्धन व्यक्ति के घर पहुंचकर उसका दरवाजा खटखटाया और कहा-'' मैं तुमसे तुम्हारा ध्यान खरीदना चाहता हूं। तुम ध्यान की कितनी कीमत चाहते हो? ''

वह व्यक्ति हंसने लगा। उसने कहा-'' आप मुझे खरीद सकते हैं, यहां तक ठीक भी है, लेकिन मैं आपको अपना ध्यान कैसे दे सकता हूं? वह तो मेरे अस्तित्व का, मेरे होने का एक गुण है, वह कोई वस्तु या पदार्थ नहीं है। ''

लेकिन व्यापारी चित्त लोग हमेशा इसी तरह से सोचते हैं। वे खरीदने के लिए दान देते हैं, वे स्वर्ग खरीदने के लिए मंदिर बनवाते हैं। वे देते हैं, लेकिन उनका देना कभी देना है ही नहीं, वह हमेशा कुछ लेना ही है, वह उनकी लगाई गई पूंजी है। जब मैं योद्धा बनने की बात कहता हूं मेरा तात्पर्य एक जुआरी बनने से है जो प्रत्येक चीज दांव पर लगा देता है। तब बुद्धत्व जीवन-मरण का प्रश्न बन जाता है। वह एक वस्तु नहीं है और तुम उसके लिए प्रत्येक वस्तु फेंक देने के लिए तैयार हो। तुम किसी लाभ के बारे में नहीं सोच रहे हो।

लोग मेरे पास आते हैं और पूछते हैं-'' हमें ध्यान से मिलेगा क्या? आखिर इसका उद्देश्य क्या है? इससे क्या लाभ होगा? यदि हम ध्यान करने में एक घंटा लगाएं तो उससे क्या प्राप्त होगा? ''उनका पूरा जीवन एक अर्थशास्त्र है।

एक योद्धा किसी लाभ के पीछे नहीं पड़ा है, एक योद्धा शिखर अनुभव की प्राप्ति के पीछे पागल है। एक योद्धा युद्ध में लड़ते हुए क्या प्राप्त करता है? तुम्हारे सैनिक योद्धा नहीं हैं, वे केवल सेवक हैं। योद्धा तो अब इस पृथ्वी पर रहे ही नहीं, क्योंकि अब तो पूरी चीज ही एक तकनीकी बन गई है। तुम हीरोशिमा पर एक बम गिराते हो, बम गिराने वाला एक योद्धा नहीं है। कोई बच्चा भी इसे कर सकता है, कोई पागल इसे कर सकता है और वास्तव में एक योद्धा या जांबाज बनना नहीं है। युद्ध अब वैसा ही नहीं रह गया, जैसा कि अतीत में था। अब कोई भी इसे कर सकता है और देर-सवेर केवल यांत्रिक प्रक्रिया से ही सब कुछ होने लगेगा। बिना चालक या हवाई जहाज इसे कर सकता है और हवाई जहाज कोई योद्धा नहीं है। वह गुण ही खो गया। योद्धा तो वह था जो दुश्मन का आमने-सामने मुकाबला करता था।

जरा कल्पना करो, दो व्यक्ति तलवारें खींचे हुए एक दूसरे का आमना-सामना कर रहे हैं। क्या वे सोच सकते हैं? यदि वे कुछ सोचते हैं तो चूक जाएंगे। जब तलवारें खिंची हों तो विचार रुक जाते हैं। लड़ते हुए वे सोच नहीं सकते कोई योजना नहीं बना सकते, क्योंकि यदि वे कोई योजना बनाते हैं तो दूसरा उस पर वार कर

देगा। वे स्वयं प्रवर्तित होकर गतिशील होते हैं, वे अमन की दशा में होते हैं। खतरा बहुत अधिक है, मृत्यु की सम्भावना इतनी निकट है कि मन उसकी अनुमति नहीं दे सकता। मन को समय की आवश्यकता होती है, आपात काल के लिए मन राजी नहीं होता। जब तुम कुर्सी पर बैठे हुए हो, तुम सोच सकते हो, लेकिन जब तुम शत्रु का आमना-सामना कर रहे हो तुम सोच नहीं सकते।

यदि तुम किसी अंधेरी सड़क से होकर गुजर रहे हो और अचानक तुम एक सांप देखते हो, एक खतरनाक सांप वहां बैठा हुआ है तो तुम क्या करोगे? क्या तुम सोचना शुरू करोगे? नहीं, तुम कूदकर उससे दूर चले जाओगे और यह छलांग तुम्हारे मन से उत्पन्न नहीं होगी क्योंकि मन सोचने में कुछ समय लेता है और सांप कभी कोई समय नहीं लेता उसके पास मन होता ही नहीं। सांप तुम पर प्रहार करेगा-इसलिए मन इजाजत नहीं दे सकता। सांप का सामना करते ही तुम छलांग लगा जाते हो और यह छलांग तुम्हारे अस्तित्व से आती है। यह विचार करने से पहले आती है। तुम पहले छलांग लगाते हो और फिर सोचते हो। मेरा तात्पर्य योद्धा के इसी गुण से है, क्रिया होती है बिना सोचे-विचारे, क्रिया होती है अमन से, क्रिया होती है समग्रता से।

तुम बिना युद्धभूमि में गए हुए भी एक योद्धा हो सकते हो। इसके लिए युद्ध में जाने की कोई जरूरत नहीं है और हर जगह शत्रु और सांप हैं और भयानक जंगली जानवर तुम पर आक्रमण करने को तैयार बैठे हैं। यह पूरा जीवन ही एक युद्ध है। यदि तुम सजग हो तो तुम देखोगे कि पूरा जीवन ही एक सतत संघर्ष है और किसी भी क्षण तुम्हारी मृत्यु हो सकती है, इसलिए आपातकाल की स्थिति स्थायी है।

सजग बनो, एक योद्धा की तरह बनो, जैसे तुम शत्रुओं के बीच जा रहे हो। किसी भी क्षण किसी भी ओर से मृत्यु तुम पर छलांग लगा सकती है। मन को इजाजत मत दी। एक जुआरी बनो, क्योंकि जुआरी ही छलांग लगा सकते हैं। यह छलांग लगाना कुछ ऐसा है, जिसे वे लोग नहीं लगा सकते, जो हमेशा लाभ के बारे में ही सोचते हैं। यह एक जोखिम है, सबसे बड़ा जोखिम! तुम खो भी सकते हो और कुछ भी प्राप्त होने वाला नहीं। जब तुम मेरे पास आते हो तो तुम हर चीज खो सकते हो और तुम्हें कुछ भी प्राप्त होने वाला नहीं।

मैं जीसस की एक कहावत को दोहराना चाहता हूं। वे कहते हैं-'' जो कोई भी जीवन से बंधकर रहता है जो कोई भी उसे सुरक्षित रखने की कोशिश करता है, वह उसे खो देगा और जो कोई भी खोने को तैयार है, वह उसे सुरक्षित कर लेना। ''

जब मैं व्यापारी की बात करता हूं तो मेरा तात्पर्य एक हिसाबी-किताबी. चालाक मन के व्यक्ति से है। चालाकी भरा मन मत रखो। कोई बच्चा व्यापारी नहीं होता और ऐसा बूढ़ा व्यक्ति खोज पाना मुश्किल है, जो व्यापारी न हो। प्रत्येक बना एक योद्धा है और प्रत्येक क्या व्यक्ति एक व्यापारी है। हर योद्धा कैसे एक व्यापारी बनता है यह, एक लम्बी' कहानी है पूरा समाज, शिक्षा, संस्कृति और संस्कार तुम्हें अधिक-से- अधिक भयभीत बनाते हैं। तुम कोई भी जोखिम नहीं उठा सकते और हर चीज जो सुन्दर है, वह जोखिम भरी है-। प्रेम करना एक जोखिम भरा काम है। जीवन जीना बहुत बड़ा जोखिम उठाने जैसा है। परमात्मा को पाना बहुत बड़ा खतरा है और वह सबसे जोखिम भरा काम है। तुम गणित के द्वारा उस तक नहीं पहुंच सकते, केवल सबसे बड़ा जोखिम उठाते हुए और जो कुछ भी तुम्हारे पास है उसे दाँव पर लगाने के बाद ही कुछ हो सकता है। तुम उस अज्ञात को जानते भी नहीं, ज्ञात के लिए तुम खतरा उठाते हो और अज्ञात जिसे तुम जानते नहीं, उसके लिए...? व्यापारी मन कहेगा– '' तुम क्या कर रहे हो? जो कुछ तुम्हारे पास है, उसे तुम उसके लिए खो रहे हो जिसे कोई भी -नहीं जानता कि उसका अस्तित्व है भी या नहीं? जो कुछ हाथ में है, उसे सुरक्षित रखो और अज्ञात के लिए चाह मत करो। ''

योद्धा मन कहता है-'' जो ज्ञात है उसे पहले ही जाना जा चुका है, अब उसमें कुछ भी नहीं है। वह तो एक भार बन गया है, उसे व्यर्थ में ढोना क्या? अब अज्ञात को जानना ही जरूरी है और उस अज्ञात के लिए ज्ञात को जोखिम में डालना मेरे लिए जरूरी है। ''

यदि तुम पूरा जोखिम ले सकते हो, बिना कुछ भी सुरक्षित रखते हुए बिना अपने साथ छल किए हुए बिना किसी चीज पर पकड़ रखते हुए तभी अचानक अज्ञात तुम्हें चारों दिशाओं से घेर लेता है और जब वह आता है तो तुम सजग हो जाते हो कि वहन केवल अज्ञात है, वह जाना ही नहीं जा सकता। वह ज्ञात के विरोध में नहीं है, वह जानने के भी पार है।

अंधेरे में आगे बढ़ने के लिए अनजाने स्थान की ओर किसी नकशे और बिना पथ चिह्नों के अकेले ही उस परम सत्ता की खोज में यात्रा करने के लिए एक योद्धा के ही गुणों की आवश्यकता होती है।

तुममें से बहुतों के पास अब भी वह थोड़ा-सा गुण बचा हुआ है क्योंकि तुम सभी कभी एक बच्चे थे, तुम सभी कभी एक योद्धा थे और तुम सभी उस अज्ञात के स्वप्न देखते थे। तुम सभी में वह बचपन अभी भी कहीं छुपा हुआ है, जो कभी नष्ट नहीं हो सकता वह अभी भी तुम्हारे अस्तित्व के किसी कोने में मौजूद है। उसे क्रिया शील होने की अनुमति दो, बच्चे जैसे बन जाओ,तब तुम फिर से योद्धा बन जाओगे। मेरे कहने का यही तात्पर्य है।

निराशा का अनुभव करने की कोई जरूरत नहीं, क्योंकि तुम एक दुकान चलाते हो तुम एक व्यापारी हो। निराशा का अनुभव करो ही मत, तुम तभी एक योद्धा बन सकते हो। जोखिम उठाना एक बच्चे जैसे मन का ही गुण है। जो सुरक्षित है-वह उसके पार जाने पर विश्वास करता है।

आज के लिए इतना काफी है।

आठवां प्रवचन

झेन का शास्त्र है कोरी किताब

कथा: –

झेन सदगुरू मूनान का एक ही उत्तराधिकारी था, उसका नाम था-शोजू
जब शोजू झेन का प्रशिक्षण और अध्ययन पूरा कर चुका, मू-नान ने
उसे अपने कक्ष में बुलाकर कहा- " मैं अब बूढ़ा हुआ और जहां तक
मैं जानता हूं, तुम्हीं अकेले ऐसे हो जो इस प्रशिक्षण को विकसित कर
आगे ले जाओगे। यहां मेरे पास एक पवित्र ग्रंथ है- जो सात पीढ़ियों
से एक सद्गुरु से दूसरे सदगुरु को सौपा गया है, मैंने भी अपनी समझ
के अनुसार-उसमें कुछ जोड़ा है यह ग्रंथ बहुत कीमती है और मैं इसे
तुम्हें सौंप रहा जिससे मेरा उत्तराधिकारी बन कर तुम मेरा प्रतिनिधित्व
शोजू? ने उत्तर- " कृपया अपनी यह किताब अपने पास रखिए मैंने
तो आपसे अनलिखा झेन पाया है और मैं उसे ही पाकर आंनदिन हूं,
आपका बहुत-बहुत धन्यवाद।"
मूनान ने उत्तरदिया- "मैं इसे जानता हूं, लेकिन यह एक महान कार्य
का पवित्र दस्तावेज है? जो एक सदगुरू से दूसरे सदगुरू तक सात
पीढ़ियों से हस्ततिरित होता रहा है और यह तुम्हारे भी प्रशिक्षण का
एक प्रतीक बनेगा यह रहा वह पवित्र ग्रंथ।"
दोनों जलती आग के सामने बैठे बातचीत कर रहे थे और जिस क्षण
शोजू ने अनुभव किया कि किताब उसके हाथों में है? उसने उसे आग
की लपटों में झांक दिया
मूनान जो अपने जीवन में कभी क्रोधित हुआ ही नहीं था।
चिल्लाकर बोला- " यह तुम क्या कर रहे हो?"
और शोजू ने भी प्रत्युत्तर में चीखते हुए कह?- "और आप कह क्या हो?'

सभी ग्रंथ और सभी किताबें मृत हैं और उन्हें होना भी चाहिए क्योंकि वे जीवन्त सारे शास्त्र कब्रिस्तान जैसे हैं, इसके सिवाय वे और कुछ हो भी नहीं सकते। जिस क्षण किसी शब्द का उच्चारण किया जाता है, वैसे ही वह गलत हो जाता है। वह अनुच्चरित है, वहां तक ठीक है। जैसे ही उसका उच्चारण किया, उच्चारण करते ही वह नकली हो गया। सत्य कहा ही नहीं जा सकता, उसे लिखा भी नहीं जा सकता और न किसी तरीके से उस ओर इशारा किया जा सकता है। यदि वह कहा जा सकता, तब तुम केवल उसे सुनकर ही सत्य को प्राप्त हो जाते, यदि वह लिखा जा सकता होता तो तुम उसे पढ़कर ही सत्य को प्राप्त कर लेते, यदि उस ओर संकेत किया जा सकता होता तो तुम सत्य को केवल इशारे से ही समझ लेते। ऐसा सम्भव ही नहीं है, सत्य को तुम्हें हस्तांतरित करने का कोई उपाय है ही नहीं, ऐसा कोई सेतु भी अभी तक नहीं बना। यह न तो दिया जा सकता है और न इसे दूसरे तक पहुंचाया जा सकता है।

लेकिन लोग शास्त्रों, किताबों, शब्दों और सिद्धान्तों के आदी बन जाते हैं। मन के लिए एक सिद्धान्त को समझना आसान है, एक पुस्तक पढ़ना भी आसान है, एक परम्परा को आगे ले जाना भी बहुत आसान है क्योंकि किसी भी मृत चीज का मन हमेशा मालिक बन जाता है और किसी भी जीवन्त चीज का मन सेवक हो जाता है।

इसीलिए मन हमेशा जीवन से डरता है, वह तुम्हारे अंदर एक मृत भाग है। जैसा मैंने कहा था-बाल और नाखून तुम्हारे शरीर के मृत भाग हैं, वे भाग जो पहले ही मर चुके है और शरीर ने उन्हें बाहर फेंक दिया है, इसलिए मन भी ठीक तुम्हारी चेतना का वैसा ही मृत भाग है। यह वह भाग है जो पहले ही मर चुका है और चेतना उससे छुटकारा पाना चाहती है।

क्या है मन? वह तुम्हारा बीता हुआ अतीत है, वह तुम्हारी स्मृति है। वह तुम्हारा इकट्ठा किया गया अनुभव है, लेकिन जिस क्षण तुमने उस चीज का अनुभव कर लिया, वह मृत हो गया। अनुभव होना वर्तमान में होता है और किया गया अनुभव अतीत है। तुम मुझे क्यों सुन रहे हो? ठीक इस क्षण में, ठीक यहां और अभी। यह तुम्हें अनुभव हो रहा है, यह एक जीवन्त प्रक्रिया है, लेकिन जिस क्षण तुम कहते हो, ' मैंने सुन लिया है वह मृत हो जाता है, वह अनुभव बन जाता है। मुझे सुनते हुए तुम्हारा मन वहां नहीं है, वहां तुम हो। जिस क्षण मन आता है। वह कहता है-मैंने इसे समझ लिया, मैंने सुन लिया और मैं अब इसे जानता हूं। ' तुम्हारे कहने का तात्पर्य क्या है? मन ने अब अपना अधिकार जमा लिया। मन के द्वारा शब्द का संग्रह किया जा सकता है-मन के द्वारा किसी भी मृत चीज को ही कब्जे में लिया जा सकता है और केवल मृत वस्तुओं को ही नियंत्रण में लिया जा सकता है। यदि तुम किसी जीवित व्यक्ति को नियंत्रण में रखने का प्रयास करो तो उसके केवल दो रास्ते हैं-या तो तुम उस पर नियंत्रण कर ही न सकोगे अथवा तुम्हें पहले उसे मारना होगा और तब उसे तुम अपने अधिकार में ले सकते हो। इसलिए जहां भी नियंत्रण है, वहां जीवित व्यक्ति को मारना है, उसकी हत्या करना है।

यदि तुम किसी व्यक्ति को प्रेम करते हो तो प्रेम करना ही अपने आप में अनुभव करने जैसा है। क्षण-क्षण उसके साथ बहना है जिसमें किसी अतीत को ढोया नहीं जा रहा है। प्रेम की सरिता सदा ताजी बहती ही रहती है, लेकिन मन कहता है-इस स्त्री को नियंत्रण में रखो, इस पुरुष को बांधकर रखो क्योंकि भविष्य के बारे में कौन जानता है? इसे नियंत्रण में रखो, वह भाग सकती है, वह किसी और के साथ जा सकती है, वह किसी और के प्रेम में पड़ सकती है। उसे कब्जे में रखो और उसके भागने के सारे रास्ते बंद कर दो, निकलने के सारे दरवाजे बंद कर दो जिससे वह हमेशा तुम्हारी ही बनी रहे। अब मन प्रविष्ट हो गया और अब वह स्त्री मार दी जाएगी। अब यह पुरुष कत्ल कर दिया जाएगा। वहां केवल एक पति होगा, वहां केवल एक पत्नी होगी, लेकिन वहां दो जीवन्त व्यक्ति न होंगे।

और यही बदमाशी मन हर जगह किए चला जा रहा है, लिए क्षण तुम कहते हो–' मैं प्रेम करता हूं ' वह एक अनुभव बन जाता है, वह पहले ही मृत हो जाता है। प्रेम करना कुछ और ही चीज है, वह एक प्रक्रिया है। क्यों? जब तुम प्रेम में हो, क्या तब तुम यह नहीं कह सकते-मैं प्रेम करता हूं ए वह आक्रमण या हिंसा होगी। तुम कैसे कह सकते हो- ' मैं तुमसे प्रेम करता हूं? 'प्रेम में तुम होते ही नहीं, अधिकार जमाने वाला मन नहीं होता, इसलिए तुम कैसे कह सकते हो, ' मैं प्रेम करता हूं। ' प्रेम में ' मैं ' होता ही नहीं, प्रेम वहां निश्चित रूप से होता है लेकिन तुम नहीं होते।

जब तक एक अनुभव जीवन्त है, तुम अनुभव कर रहे हो, वहाँ अहंकार नहीं है। अनुभव करने की प्रक्रिया वहां चल रही है और तुम कह सकते हो-प्रेम वहां है लेकिन तुम यह नहीं कह सकते-' मैं प्रेम करता हूं ' उस प्रेम में तुम घुल जाते हो, पिघल जाते हो, मिलकर एक हो जाते हो। तुमसे प्रेम कहीं अधिक बड़ा होता है। तुम्हारी अपेक्षा कोई भी जीवित या जीवन्त चीज या व्यक्ति अधिक श्रेष्ठ होता है। यदि वह मृत है तो मन कूद सकता है, ठीक वैसे ही जैसे एक बिल्ली चूहे पर छलांग भरकर उसे झपट लेती है। सत्य दिया नहीं जा सकता, उसे देने या बांटने का कोई उपाय नहीं। उसे एक बार बांट दो, वह मृत हो जाता है, वह पहले ही से असत्य हो जाता है।

लाओत्से अपने पूरे जीवन में सत्य के सम्बन्ध में कुछ भी न कहने पर जोर देता रहा। जब भी कोई उससे सत्य के बारे में कुछ पूछता, वह और चीजों के बारे में तो बहुत कुछ बताता पर सत्य के बारे में कुछ न कहता, - उसे टाल जाता। अंत में उसे शिष्यों, प्रेमियों द्वारा यह कहते हुए विवश किया गया–" आपने जो कुछ जाना है,

उसे बहुत कम जाना जाता है, आप उसे पाकर अद्वितीय और अनूठे बन गए हैं- आप उसे अभिव्यक्त करें क्योंकि दूसरा लाओत्से फिर दुबारा न होगा। " इसलिए उसने एक छोटी-सी पुस्तक ' ताओ ते चिन ' लिखी, लेकिन उसका पहला ही वाक्य है- "ताओ को कहा नहीं जा सकता, सत्य का उच्चारण भी नहीं किया जा सकता। जिस क्षण तुम उसका उच्चारण भी करते हो, वह पहले ही असत्य हो जाता है। " और तब उसने कहा-" अब मैं आसानी से लिख सकता हूं क्योंकि आधारभूत तत्व की मैंने पहले ही घोषणा कर दी। सत्य कहते ही असत्य बन जाता है, उसे लिखो, वह उससे पहले ही गलत हो गया। अब मैं आसानी से लिख सकता हूं। "

यह शब्द असत्य क्यों है? पहली चीज तो यह कि यह हमेशा अतीत की सम्पत्ति है। दूसरे यह कि वह स्वयं अपने साथ अनुभव ढोते हुए तुम तक नहीं पहुंचा सकता। मैं कहता हूं-मैं मौन हूं। तुम यह शब्द सुनते हो, शब्द स्वयं अपने साथ अनुभव लिए हुए तुम तक नहीं पहुंच सकता। मैं कहता हूं मैं मौन हूं। तुम यह शब्द सुनते हो- 'मौन' शब्द सुना जाता है लेकिन तुम इससे क्या समझते हो? यदि तुम कभी भी मौन नहीं रहे हो, यदि तुमने कभी भी उसका स्वाद नहीं लिया है, यदि उसने कभी तुम्हारे हृदय को मथा नहीं है, यदि उसने कभी अभिभूत नहीं किया तुम्हें, यदि उसने कभी तुम्हें अपने काबू में नहीं किया तो तुम उसे कैसे समझ सकते हो?

और यदि इसने तुम्हें अपने काबू में किया है, यदि मौन के वहाँ होने और तुम्हारे अनुपस्थित हो जाने में कोई अंतराल था, तब मौन के बारे में मेरे लिए तुमसे बात करने की जरूरत ही नहीं होगी। जिस क्षण तुम मुझे देखोगे, तुम जान जाओगे, जिस क्षण तुम मेरे निकट आओगे, तुम अनुभव करोगे। शब्द की जरूरत होगी ही नहीं।

शब्द की जरूरत इसलिए है क्योंकि तुम उसे नहीं जानते और यही समस्या है क्योंकि तुम नहीं जानते, इसीलिए शब्द की आवश्यकता है, पर शब्द कैसे अपने को अभिव्यक्त करे? जिसे तुम नहीं जानते, शब्द उसे तुमसे नहीं कह सकते। शब्द सुने जा सकते हैं, तुम उन्हें याद रख सकते हो, तुम उनका अर्थ समझ सकते हो, जो शब्दकोष में भी लिखे हैं-मौन का अर्थ है, यह भाषाकोश में लिखा हुआ है और तुम उसे पहले ही से जानते हो- लेकिन वह उसका अर्थ नहीं है। जब मैं कहता हूं मैं मौन हूं तो जिस शांति और मौन में मैं यहां हूं वह भाषाकोष में नहीं लिखा है, वह लिखा भी नहीं जा सकता, उसके लिखने का कोई उपाय भी नहीं। यदि तुम मौन हो तो तुम समझ जाओगे लेकिन तब कहने की भी कोई जरूरत नहीं। यदि तुम मौन नहीं हो, तब तुम जो कुछ भी समझते हो, वह गलत ही होगा-लेकिन तब भी उसे कहने की जरूरत है।

मैंने एक कहानी सुनी है। एक बार एक देहाती व्यक्ति ने एक बड़े बैंक में प्रवेश किया। बहुत से लोग आ-जा रहे थे और काफी कार्य-व्यपार हो रहा था। अचानक देहाती चिल्लाया। वह सबसे तेज आवाज में चीखा-" क्या किसी के नोटों की गड्डी गिर गई है, जिसके चारों ओर एक रबर बैंड बंधा था? "

बहुत से लोग चिल्ला उठे-" हां, मेरी ही गिर गई। " और वे उसकी ओर दौड़े। एक नहीं, कई लोग। वहां एक भीड़ इकट्ठी हो गई और प्रत्येक उस नोटों की गड्डी का दावा कर रहा था। उस देहाती ने कहा-" मुझे तो उस गड्डी का केवल रबर बैंड मिला है। "

जब भी मैं कहता हूं ' सत्य जब भी मैं कहता हूं ' मौन तुम केवल रबर बैंड पाओगे, नोटों की गड्डी नहीं होगी वहां। शब्द तुम तक पहुंचेगा, लेकिन उसके साथ नोटों का भार नहीं होगा। वे नोट तो पीछे छूट जाएंगे-वे तो हृदय में हैं। शब्द पहुंचेगा, लेकिन वह ठीक एक रबर बैंड की तरह होगा। कभी उसमें नोट भी रहे होंगे लेकिन अभी तो वह केवल एक रबर बैंड है।

सत्य सम्प्रेषित नहीं किया जा सकता, लेकिन तब यह सद्गुरु क्या कर रहे हैं? वे व्यर्थ के सक्रिय प्रयास में लगे प्रतीत होते हैं। हां, यह बात बिलकुल ठीक है। वे उस बात को कहने का प्रयास कर रहे हैं, जिसे नहीं कहा जा सकता और वे उस ओर इशारा कर रहे हैं, जिसकी ओर इशारा भी नहीं किया जा सकता। वे उसे सम्प्रेषित करने का प्रयास कर रहे हैं, जो कभी भी सम्प्रेषित नहीं किया जा सका और न सम्प्रेषित किया जा सकेगा। तब

फिर वे कर क्या रहे हैं? उनका पूरा प्रयास ही व्यर्थ प्रतीत होता है, लेकिन फिर भी उनके प्रयास में वहां कुछ है- उनकी करुणा है वह।

यह भली- भांति जानते हुए भी कि जो मैं कहना चाहता हूं उसे कहा नहीं जा सकता, सबसे आसान तरीका यही है कि मैं मौन रहूं क्योंकि यदि मैं यह जानता हूं कि वह कहा नहीं जा सकता, तब क्यों परेशान हुआ जाए? तुम मेरे शब्दों को नहीं समझ सकते, लेकिन क्या तुम मेरे मौन को समझने में समर्थ हो सकोगे? इसलिए दो खराबियों में से यह एक का चुनना है।

अच्छा यही है मैं मौन रहूं यह अधिक नियमित होगा। वह नहीं कहा जा सकता, इसलिए मुझे मौन ही रहना चाहिए लेकिन क्या तुम मेरे मौन को समझने में समर्थ हो सकोगे? शब्द को तुम समझने में समर्थ न हो सकोगे, लेकिन तुम उसे सुन तो सकते हो और कुछ सम्भावना खुली हुई है। निरन्तर सुनते हुए तुम उस चीज के बारे में सजग हो सकते हो, जो शब्दों में नहीं कही गई है। धीरे- धीरे मुझे सुनते हुए तुम मेरे प्रति सजग बन सकते हो, भले ही जो मैं कह रहा हूं तुम उसके प्रति सजग न हो सको। शब्द सहायता करेंगे जैसे कांटे में लगा चारा मछली पकड़ने में सहायक होता है और तुम जाल में पकड़े जा सकते हो, लेकिन यदि मैं मौन रहूं तो तुम बगल से निकल जाओगे। तुम उसके प्रति भी सजग नहीं होगे कि मैं वहां बैठा हूं और थोड़ी-सी सम्भावना भी खो जाएगी।

इसलिए जब सद्गुरु बोलते हैं, वे उस सत्य को बताने के लिए नहीं बोलते, जो कहा नहीं जा सकता। उनके पास चुनाव होता है या तो वे मौन बने रहें अथवा वे बात चीत करें। मौन के साथ तो तुम उनसे पूरी तरह चूक जाओगे। शब्दों के साथ सम्भावना का एक द्वार खुला रहता है, वह निश्चित तो नहीं होता क्योंकि हर चीज तुम पर निर्भर है, लेकिन एक सम्भावना खुली रहती है। एक बुद्ध को निरन्तर सुनते हुए तुम किसी दिन मौन हो ही जाओगे, क्योंकि केवल एक बुद्ध के निकट बने रहना ही मौन के सरोवर के निकट होना है। एक विराट ऊर्जा के निकट बने रहना है जो शांत बना देती है। इसी को भारत में सत्संग कहते हैं-सत्य के निकट बने रहना। यह प्रश्न कुछ देने या पहुंचाने का नहीं है। इस सत्य के पास बने रहना का है। यह संक्रामक है-ठीक वैसे ही जैसे जब तुम नदी के निकट आते हो तो हवा ठंडी हो जाती है। तुम नदी को नहीं देख सकते, वह कुछ दूर हो सकती है, लेकिन ठंडी हवा तुम्हें ठंडक के अहसास के साथ उसका संदेश दे रही है।

जब तुम एक बुद्ध के निकट आते हो तो उसके शब्द भी अपने साथ ठंडक जैसा कुछ अहसास लिए हुए होते हैं। बुद्ध नदी की तरह कहीं पास में ही है। तुम उसे खोजना शुरू कर सकते हो। तुम उसके शब्दों में खो सकते हो, तुम जंगल में भी भटक सकते हो और नदी से भी चूक सकते हो, लेकिन यदि तुम सजग और बुद्धिमान हो, तब धीरे- धीरे तुम्हें अनुभव होने लगेगा कि यह ठंडी हवा किधर से आ रही है। यह सुंदर शब्दों की ध्वनि किधर से आ रही है और यह शब्द अपने चारों ओर एक मौन की सुवास लिए हुए हैं। वह ठीक एक रबर बैंड ही हो सकता है, लेकिन उस रबर बैंड का नोटों के साथ गहरा रिश्ता रहा है। यह हवा अपने साथ कुछ लिए जा रही है, उस स्रोत की कुछ खबर दे रही है, जहां से ठंडी बयार आ रही है। यदि तुम बुद्धिमत्ता से उस हवा का अनुसरण कर सके तो देर-सवेर उस स्रोत तक पहुंच ही जाओगे।

एक बुद्ध के शब्द भले ही सत्य को सम्प्रेषित करने में समर्थ न हो सकें, लेकिन वे उस संगीत की लहरों को अभिव्यक्त कर रहे हैं, जो संगीत बुद्धत्व को प्राप्त उस व्यक्ति में मौजूद है। वे शब्द, उस स्रोत के संगीत की लय अपने साथ लिए जा रहे हैं, भले ही वह उस संगीत का बहुत-बहुत .छोटा एक भाग हों, लेकिन उसमें स्रोत की कुछ धड़कन और सुवास जरूर है। ऐसा होना भी चाहिए क्योंकि जब एक शब्द एक बुद्ध की वीणा से झंकृत होता है तो उसमें कुछ चीज बुद्ध की जरूर होती है। होनी ही चाहिए। वह शब्द उसके अस्तित्व में झंकृत होता रहा है, उसने बुद्ध के हृदय की धड़कनों का स्पर्श किया है, वह बुद्ध के मौन से होकर गुजरा है, वह बुद्ध के गर्भ में रहा है। वह उसकी गंध और सुवास अपने साथ लिए जा रहा है, यद्यपि वह दूर, बहुत दूर की आवाज है, लेकिन फिर भी...।

यदि तुम उसके शब्दों में खो गए तो तुम बुद्ध से चूक जाओगे, लेकिन यदि तुम इसके प्रति सजग हो कि शब्द सत्य को अपने साथ नहीं ले सकते, तब तुम शब्दों को एक ओर अलग रख दोगे और उस सुवास का अनुसरण करोगे। शब्दों को एक ओर अलग रखकर तुम उस संगीत का पीछा करोगे और शब्दों को अलग रखते हुए तुम उसकी उपस्थिति को समझोगे, महसूसोगे। यदि मैं अचानक कहूं-' हे! 'तुम मेरी ओर देखने लगोगे। यह शब्द अर्थहीन है, लेकिन मेरा देखना, मेरी चितवन... अचानक तुम मेरे प्रति सजग हो जाओगे। उसी सजगता का अनुसरण करना है, तब शब्द भी सहायक बन जाएंगे। वे सत्य भले ही न बता सकें, लेकिन सत्य की ओर एक कदम आगे बढ़ाने के लिए वे सहायक बन सकते हैं।

यह कहानी बहुत सुन्दर है। एक सदगुरु अपनी मृत्यु शैया पर पड़ा है, उसे शीघ्र ही यह पृथ्वी और उसके वाहन इस शरीर को छोड़ना है और वह एक ऐसा उत्तराधिकारी चाहता है, जो उस ज्योति को अपने साथ लिए हुए चल सके, जो उसने प्रज्वलित की थी, जो उस कार्य को निरन्तर आगे बढ़ाने में समर्थ हो, जो उसने शुरू किया था। वह अपने एक शिष्य को चुनता है और उसे अपने पास बुलाकर कहता है-'' तुम उन सभी शिष्यों में जो मेरे चारों ओर मठ में हैं, सबसे अधिक योग्य और सक्षम हो और तुम ही मेरे उत्तराधिकारी बनने जा रहे हो। तुम्हीं को इस कार्य को निरन्तर जारी रखना है। सात पीढ़ियों से एक पवित्र ग्रंथ सद्गुरु द्वारा उस शिष्य के सुपुर्द किया जाता है, जो उत्तराधिकारी होने जा रहा हो। मैंने इस ग्रंथ को अपने सद्गुरु से प्राप्त किया था और अब मैं इसे तुम्हें देता हूं। यह बहुत कीमती और अनूठा कोष है। बुद्धत्व को प्राप्त सात बुद्धों ने इसमें अपने सत्य के अनुभवों को लिपिबद्ध किया है और इसमें मैंने भी अपनी थोड़ी-सी समझ को शामिल किया है। इसे तुम सुरक्षित रखना। कभी खोना मत। ख्याल रहे, यह कहीं खो न जाए। ''

शिष्य ने कहा-'' लेकिन मैंने जो कुछ अनुभव पाया है, वह बिना किसी ग्रंथ को पड़े पाया है और मैं प्रसन्न और आनन्दित हूं। मैं किसी भी तरह से जरा-सा भी असंतुष्ट नहीं हूं इसलिए आप यह भार मुझे क्यों दे रहे हैं? आप यह अनावश्यक जिम्मेदारी मुझे क्यों सौंप रहे हैं? मैंने पहले ही से सत्य का अनुभव कर लिया है और इस किताब की मुझे कोई भी जरूरत है ही नहीं। यह बिलकुल अनावश्यक है। '' सदगुरू ने फिर भी आग्रह करते हुए कहा-'' जो बहुत अधिक मूल्यवान है, वही इसमें लिखा है। यह कोई साधारण पुस्तक नहीं है। यह पवित्र ग्रंथ है और सात पीढ़ियों के बुद्धों काइसमें सत्य का अनुभव लिपिबद्ध है। इसका निरादर कर अधार्मिक कृत्य मत करो। इस ग्रंथ का सम्मान करो, इसे अपने पास रखो और बाद में इसे तुम अपने उत्तराधिकारी को सौंप देना। इस पुस्तक को तुम्हें सौंपते हुए मैं तुम्हें प्रमाणित कर रहा हूं। यह ग्रंथ ठीक इस बात का प्रतिनिधित्व कर रहा है कि तुम मेरे उत्तराधिकारी हो। ''

और सद्गुरु ने वह पुस्तक शिष्य के हाथों पर रख दी। वह अवश्य ही कोई सर्द रात रही होगी क्योंकि वहां आग जल रही थी। सद्गुरु ने उस शिष्य के एक हाथ में वह पुस्तक जैसे ही रखी, उसी क्षण उसने उसे जलती आग में फेंक दिया। सद्गुरु जो अपने जीवन में कभी आज तक क्रोधित न हुआ था, चीखते हुए बोला-'' क्या कर रहे हो तुम? ''

और वह शिष्य सद्गुरु से भी अधिक जोर से चिल्लाकर बोला-'' आप क्या कह रहे हैं? ''

यह बहुत सुन्दर कहानी है। सदगुरु जरूर ही बहुत शांति से भर गए होंगे। यही ठीक और सच्चा है। उस किताब को आग में ही फेंकना चाहिए था, वरना वह शिष्य चूक गया होता। यदि उसने वह किताब अपने पास रख ली होती तो वह चूक जाता और तब वह उत्तराधिकारी न बनाया जाता.. क्योंकि तुम पुस्तक केवल तभी अपने पास रखते, जब तुम्हें कुछ घटा न होता। जब सत्य तुम्हारे साथ है, फिर शब्दों की फिक्र कौन करता है? कौन किताब की झंझट साथ रखता, जब वास्तविक चीज अर्थात सत्य तुम्हें घट चुका है। कौन परेशान होता उन व्याख्याओं के बारे में, जब अनुभव वहां पहले ही से था। व्याख्याएं तभी कीमती होती हैं, जब अनुभव नहीं होता, सिद्धान्त तभी महत्वपूर्ण होते हैं, क्योंकि वहां ज्ञान का आलोक नहीं होता। जब तुम जानते हो तो तुम

सिद्धान्तों को फेंक सकते हो-वे खाली रबर बैंड हैं। जब नोटों की गड्डी तुम्हारे पास है, तुम रबर बैंड को फेंक सकते हो। रबर बैंड को सुरक्षित रखना तुम्हारी मूर्खता को प्रदर्शित करता है।

यह किताब कीमती न थी-कोई किताब कीमती नहीं होती और सद्गुरु उसके साथ खेल खेल रहा था, ठीक वही खेल, जो उसके सदगुरु ने उसके साथ कभी जरूर खेला होगा। कोई नहीं जानता कि उस किताब में' क्या लिखा था, लेकिन मैं बताता हूं तुम्हें कि उस किताब में कुछ भी नहीं लिखा था। वह कोरी थी। यदि शिष्य ने उसे सुरक्षित रखा होता तो सद्गुरु के मरने पर -यदि उसने उसे खोलकर देखा होता तो उसके मुंह से जरूर चीख निकलती, उस किताब में कुछ भी न लिखा था। वह बस एक खेल था, एक पुराना खेल।

प्रत्येक सद्गुरु शिष्य के अनुभव की परीक्षा लेने की कोशिश करता है कि वह ' उसे ' जानता है या नहीं। यदि वह जानता है तो वह किताबों का आदी नहीं होगा। क्यों? उनमें कोई आवश्यक बात अर्थात सत्य है ही नहीं। यही कारण था कि शिष्य ने कहा-'' आप क्या कह रहे हैं? जब मैंने उसे बिना पड़े सब कुछ प्राप्त कर लिया, मैंने उसे पहले से ही पा लिया, फिर किताब संभालकर रखने की जरूरत क्या? आप करा कह रहे हैं? ''

सद्गुरु ने उत्तेजना दिलाते हुए एक स्थिति निर्मित की और उस स्थिति में शिष्य को अपने स्वभाव और साहस को सिद्ध करना था। जो कुछ वह जानता था, उससे उसने सिद्ध भी किया। यदि वह थोड़ा-सा भी झुकाव उस किताब को सुरक्षित रखने में प्रकट करता तो वह चूक गया होता और उसका उत्तराधिकारी न बनता। उसने तो उस पुस्तक में झांका तक नहीं कि उसमें था क्या? वह उसमें जरा भी उत्सुक नहीं हुआ क्योंकि अज्ञान ही उत्सुक होता है। यदि तुम जानते हो तो बस जानते हो, उत्सुकता दिखाने की जरूरत क्या?

तुम्हारे अंदर इस स्थिति में क्या हुआ होता जो पहली चीज तुम्हारा मन कहता- कम-से-कम यह देख तो लो आखिर उस पुस्तक में है क्या? लेकिन वह मुख मुद्रा ही यह सिद्ध करने को पर्याप्त होती कि तुमने अभी उसे प्राप्त नहीं किया है। उत्सुकता दिखाने का अर्थ है- अज्ञान। प्रज्ञा में उत्सुकता या कौतूहल नहीं होता। उत्सुकता प्रश्न पूछती है, प्रज्ञा के पास पूछने को कुछ होता ही नहीं। तुमने क्या किया होता? जो पहली चीज मन में आती कि कम-से-कम देखें तो पुस्तक में है क्या? यदि मेरे सद्गुरु इतना आग्रह कर रहे हैं कि यह किताब बहुत कीमती है और उसे इसलिए सुरक्षित रखना है क्योंकि वह पीढ़ियों से एक पीढ़ी से दूसरी को हस्तांतरित की जाती रही है और उसमें सात बोध को प्राप्त बुद्धों ने अपने अनुभव लिखे हैं, जिसमें मेरे सद्गुरु ने भी अपनी समझ से कुछ और जोड़ा है तो कम-से-कम आग में झोंकने से पूर्व उसे देख तो लें कि उसमें है क्या?

लेकिन मैं तुमसे कहता हूं यदि उस शिष्य ने उस पुस्तक की ओर देखा भी होता तो सद्गुरु ने उसे पुस्तक सहित उस कमरे से क्या आश्रम से बाहर ही उठाकर फेंक दिया होता। उसका कार्य गहरी समझ से उद्भूत था। एक सद्गुरु जो स्वयं जानता है कि पुस्तक के कीमती होने पर क्यों जोर दे रहा है? जरूर वह कोई खेल खेल रहा है। सद्गुरु तो पूरे जीवन में कभी आज तक नाराज हुए ही नहीं और आज वह कह रहे हैं-'' तुम क्या कर रहे हो? ''उन्होंने पूरी स्थिति निर्मित कर दी।

इस क्रोध में शिष्य सकपकाकर हार मानकर कह सकता था-' मुझसे कुछ गलती हो गई, मुझे माफ कीजिए। ' मन इसी तरह सोचता और कार्य करता है। अब सद्गुरु मुझे अपना उत्तराधिकारी नहीं भी बना सकते हैं। यदि मेरे सद्गुरु मुझसे इतने नाराज हैं तो इसका अर्थ है मैंने कुछ गलत कर दिया और उत्तराधिकारी बनने से चूक सकता हूं मैं। मैं मठ का प्रधान बनने जा रहा था, मैं सदगुरु-बनने जा रहा था, लाखों मेरा अनुसरण करते, हजारों मेरे शिष्य होते और अब मुझसे कोई चीज गलत हो गई, क्योंकि वह व्यक्ति क्रोध कर रहा है, चिल्ला रहा है, जिसने आज तक कभी क्रोध किया ही नहीं।

यदि उस शिष्य की जगह तुम वहां हुए होते तो सद्गुरु के पैर पकड़कर तुमने कहा होता-' मुझे माफ कर दीजिए लेकिन मुझे ही चुनिए। ' लेकिन उस शिष्य ने कहा-' आप क्या कह रहे हैं? 'यदि सद्गुरु क्रोध का अभिनय कर सकते हैं तो शिष्य भी वह खेल खेल सकता है, लेकिन ऐसा तभी हो सकता है जब दोनों ही जानते

हों। उसने खरे सिक्के की तरह खरा उत्तर दिया। उसने बिलकुल ठीक उत्तर दिया और सद्गुरु संतुष्ट हुए यही है वह व्यक्ति। वह उत्तराधिकारी बना। वही उत्तराधिकारी था भी।

लेकिन यही प्रत्येक धर्म द्वारा किया गया है। वे धर्मशास्त्रों को सुरक्षित रखने के अतिरिक्त अन्य कुछ भी नहीं करते। ईसाई अपनी बाइबिल की रक्षा करते हैं, मुसलमान अपनी कुरान और हिन्दू अपनी गीता की रक्षा करते हैं- और वे चूक जाते हैं। वे सच्चे उत्तराधिकारी नहीं हैं। मुसलमानों में मुहम्मद के चरित्रगत गुण नहीं हैं, वे हो भी नहीं सकते। यदि होंगे तो कुरान को आग में जलाना होगा। ईसाई, क्राइस्ट के बारे में कुछ नहीं जानते क्योंकि वे बाइबिल की रक्षा करते हैं और हिंदुओं को गीता के कारण ही कृष्ण की कोई समझ नहीं है-वे उसका भार ढोए चले जा रहे हैं। सभी वेद, बाइबिल और कुरान उन लोगों के लिए हैं, जो उन्हें नहीं समझते। वे उनका बोझा ढोए जा रहे हैं और उनका भार इतना अधिक हो जाता है कि वे उन्हीं के नीचे दबकर रह जाते हैं। वे उनके द्वारा मुक्त और स्वतंत्र नहीं होते और उन्हीं के गुलाम बन जाते हैं।

एक धार्मिक व्यक्ति हमेशा शास्त्रों के पार होता है, एक धार्मिक चेतना कभी शब्दों और वचनों की आदी नहीं होती। पूरी चीज ही एक बचपना है। एक धार्मिक व्यक्ति प्रामाणिक अनुभव की खोज में होता है, उधार लिए गए शब्दों और दूसरों के अनुभवों की खोज में नहीं.. .'' क्योंकि जब तब मैं न जाएं-बुद्ध लोग कभी रहे होंगे, लेकिन ये व्यर्थ हैं। यदि मैं नहीं जानता तो वहां कोई सत्य है ही नहीं क्योंकि सत्य ही मेरा अनुभव बन सकता है। केवल तभी वह वहां है। पूरा संसार भी यदि कहे कि वहां प्रकाश है और जहां आकाश में इन्द्रधनुष निकला है और सूर्य उदय हो रहा है, लेकिन यदि मेरी आंखें बंद हैं तो मेरे लिए उन सभी का क्या अर्थ है? वह इन्द्रधनुष, वे रंग, सूर्योदय का सौंदर्य और सभी चीजें मेरे लिए अस्तित्वहीन हैं। मेरी आंखें बंद हैं, मैं अंधा हूं और यदि उनके बारे में मैं बहुत सुनता हूं और यदि में उन पर बहुत अधिक विश्वास करना शुरू कर देता हूं और यदि मैं उनके शब्द उधार लेकर इन्द्रधनुष के बारे में, जिसे मैंने कभी देखा ही नहीं, उन रंगों के बारे में जिन्हें मैं देख ही नहीं सकता और उस सूर्योदय के बारे में, जिसका मुझे कोई अनुभव ही नहीं, यदि बात करना शुरू कर देता हूं तो मैं शब्दों के जंगल में खो सकता हूं। ''

इससे यह कहना कहीं अच्छा है-'' मैं अंधा हूं मैं न तो रंगों के बारे में और न प्रकाश के बारे में कुछ भी नहीं जानता। यदि मेरी आंखें खुली नहीं हैं तो वहां न कोई सूरज है और न वहां कोई सूर्योदय हो सकता है। ''

तुम्हारा जोर इस बात पर हो जिससे तुम आंखों द्वारा फिर देख सको। शास्त्रों का बोझ ढोए मत चलो, उनमें दूसरों के द्वारा देखे गए इन्द्रधनुष का जिक्र है, वे उस सूर्योदय के बारे में जिसका अनुभव दूसरों ने किया, बात कर रहे हैं। अपने साथ उधार लिया हुआ परमात्मा लेकर मत चलो, जबकि तुम तुरन्त प्रत्यक्ष रूप से उसका साक्षात्कार कर सकते हो। तुम अपने और उसके बीच में किताबों का अवरोध क्यों खड़ा करते हो? उन किताबों को जला दो, उन्हें जलती आग में फेंक दो, यही इस कहानी का सन्देश है।

पर इसका यह अर्थ नहीं कि तुम जाओ और गीता को आग में फेंक दो-इससे कुछ अधिक सहायता मिलने की नहीं, क्योंकि यदि गीता सत्य की ओर जाने में तुम्हारी सहायता नहीं कर सकती तो गीता को जलाने से भी तुम्हें सहायता कैसे मिल सकती है? नहीं, असली मुद्दा यह है ही नहीं। तुम सभी किताबों को फेंक सकते हो, पर तुम सिद्धान्तों और उपदेशों के आदी बने रह सकते हो। जब मैं कहता हूं कि किताबों को जला दो तो मेरे कहने का अर्थ है, उस मन को जला दो, उस मन को विसर्जित कर दो। कहे गए शब्दों में उलझकर मौखिक मत बनो। प्रामाणिक अनुभव को खोजो, लेकिन किताबों के द्वारा तुम पूछताछ करने में लग जाते हो, यही समस्या है, किताबें पढ़कर तुम्हारे अन्दर प्रश्न खड़े तो सकते हैं और यदि तुम्हारा प्रश्न पूछना अपने आप में महज किताबी है तो तुम्हारी पूरी पूछताछ एक गलत दिशा में शुरू हो जाती है।

लोग मेरे पाए आते हैं और पूछते हैं-'' परमात्मा क्या है?" और मैं उनसे पूछता हूं क्या यह प्रश्न तुम्हारे जीवन से आया है अथवा किसी पुस्तक में परमात्मा के बारे में पढ़कर तुम इतने उत्सुक हो उठे हो? यह प्रश्न तुम्हारा नहीं है और यदि प्रश्न ही तुम्हारा नहीं है तो किसी भी उत्तर से कोई सहायता नहीं मिल सकती। जब

मूल चीज ही उधार की है, जब प्रश्न भी उधार का है तो तुम उत्तर भी उधार लेते रहोगे। तुम अपने प्रामाणिक प्रश्नों की खोज करो। तुम्हारा प्रश्न क्या है?

मैंने एक दार्शनिक के बारे में सुना है जिसने लंदन में कारों के एक शोरूम में प्रवेश किया। उसने चारों ओर घूमकर कारों को देखा और एक नदी की धारा की तरह तेज चलने वाली एक सुंदर स्पोर्ट्स कार को देखकर जैसे सम्मोहित हो गया वह। शोरूम का सेल्समैन सजग हो गया क्योंकि वह उस कार को इतनी दिलचस्पी से देख रहा था। उसने उसके पास आकर पूछा-'' क्या आपकी इस कार में दिलचस्पी है?" दार्शनिक ने उत्तर दिया-'' हां! मैं इसी के प्रति उत्सुक हूं। क्या यह बहुत तेज चल सकती है?"

सेल्समैन ने उत्तर दिया-'' तेज? आप इससे अधिक तेज गति से भागने वाली कोई दूसरी कार नहीं पा सकते। यदि आप इसमें अभी बैठ जाएं तो कल सुबह तीन बजे आप एबरडीन में होंगे। क्या आप वास्तव में इसे खरीदने में दिलचस्पी रखते हैं?" दार्शनिक ने उत्तर दिया-'' मैं इसके- बारे में विचार करूंगा। "

अगले दिन वह फिर शो रूम में आया और उसने कहा-'' नहीं! मैं इस कार को रही खरीदना चाहता। मैं सारी रात सो ही न सका। मैं निरन्तर जागता रहा और सोचता रहा, सोचता और सोचता ही रहा मैं कोई भी कारण न खोज सका कि मुझे. .सुबह तीन बजे एबरडीन में क्यों होना चाहिए?"

जब कभी तुम एक पुस्तक पढ़ते हो, तुम पूछते हो और पूछते ही चले जाते हो कि तुम्हें सुबह तीन बजे एबरडीन में क्यों होना चाहिए?

तुम एक किताब पढ़ते हो। उसमें कुछ परमात्मा के बारे में पढ़ते हो, कुछ चीज मोक्ष के बारे में पढ़ते हो, कुछ आत्मा और कुछ परमानन्द के बारे में पढ़ते हो और तुम सम्मोहित हो जाते हो-जो लोग सत्य जानते थे, उन लोगों के शब्द वास्तव में सम्मोहक हैं-लेकिन तुम यह पूरी तरह भूल जाते हो कि किन कारणों से तुम परमात्मा का साक्षात्कार करना चाहते हो? क्या केवल एक किताब पढ़कर क्या केवल उस व्यक्ति के बारे में पढ़कर- उदाहरण के लिए तुम जीसस को पढ़कर सम्मोहित हो जाते हो क्योंकि इस व्यक्ति ने परमात्मा को छक कर पीया है। उसके हर शब्द में शराब जैसा नशा है। यदि तुम उसे सुनते हो तुम मदहोशी का अनुभव करते हो, लेकिन बंद कर दो बाइबिल को, जीसस से छुटकारा पा लो और चिंतन करो कि क्या हर स्थिति में वह तुम्हारा निरीक्षण है अथवा इस व्यक्ति ने अपना निरीक्षण तुम्हें बेच दिया है, दूसरे के निरीक्षण के साथ तुम्हारी अपनी खोज नकली बन जाती है।

जो पहली चीज याद रखने की है, वह यह है कि तुम्हारा प्रश्न तुम्हारा अपना होना चाहिए। तब दूसरी चीज याद रखने की है कि उत्तर भी तुम्हारा ही होना चाहिए। किताबें दोनों ही चीजों की पूर्ति करती हैं। इसी कारण में कहता हूँ किताबों को जला दो और प्रामाणिक बन जाओ। शब्दों के जंगल से बाहर निकलो और अनुभव करो तुम क्या चाहते हो, क्या तुम्हारी कामना है और तब अनुसरण करो, .फिर वह तुम्हें जहां भी ले जाए। देर–सवेर तुम परमात्मा तक पहुंच ही जाओगे। इसमें थोड़ा लम्बा –समय लगेगा, लेकिन तब यह खोज असली होगी।

और यह शिष्य सदगुरु से कह रहा है-'' मैंने तो उसे बिना कोई किताब पड़े ही प्राप्त कर लिया, फिर आखिर क्यों... आप यह किताब मुझ पर बलपूर्वक क्यों थोप रहे हैं? ''उसने अच्छा ही किया, उसे जलती हुई आग में फेंक दिया।

यदि सभी धार्मिक ग्रंथ जला दिए जाएं तो संसार कहीं अधिक धार्मिक होगा। वहां ऐसी बहुत-सी पुस्तकें और पहले से तैयार उत्तर हैं कि प्रत्येक व्यक्ति प्रश्न और उत्तर दोनों जानता है। यह एक तरह का खेल बन गया है। यह तुम्हारा जीवन नहीं है। यह संसार किताबों से स्वतंत्र होना चाहिए सभी आदर्शों से मुक्त होना चाहिए और सभी उधार ली गई पूछताछ या जांच से मुक्त होना चाहिए। प्रत्येक मनुष्य को अपने हृदय और अपनी नाड़ी की धड़कन का अनुभव होना शुरू होना चाहिए वे उसे किस दिशा. में ले जा रही हैं उसकी क्या कामनाएं

हैं और उसका क्या प्रश्न है? यदि तुम अपना प्रश्न खोज सके तो उसका उत्तर ठीक उसके पास ही प्रतीक्षा करता हुआ मिलेगा।

यह हो सकता है प्रश्न को खोजते हुए तुमने उत्तर पहले ही पा लिया हो, क्योंकि उत्तर प्रामाणिकता में ही विश्राम कर रहा होता है। यदि प्रश्न प्रामाणिक है, यदि तुम प्रश्न करने में प्रामाणिक बन गए हो, पांच प्रतिशत समस्या तो पहले ही से सुलझी हुई है। बस थोड़ा-सा प्रयास और करने पर, थोड़ा-सा गहरे और जाने पर उत्तर, हमेशा प्रश्न के पीछे ही छिपा मिल जाता है।

प्रश्न करना, सिक्के का ठीक एक पहलू है। दूसरा पहलू है उत्तर। प्रश्न के ठीक पीछे ही, उत्तर विश्राम करता हुआ तुम्हारी प्रतीक्षा करता रहता है, लेकिन यदि तुम अपने प्रश्न तक ही न पहुंचे तो तुम उत्तर तक कैसे पहुंचोगे? और केवल तुम्हारा उत्तर ही तुम्हें मुक्त करेगा।

जीसस कहते हैं-" सत्य तुम्हें मुक्त करता है। " हां! सत्य मुक्त करता है, लेकिन उधार लिया हुआ सत्य नहीं। जीसस का सत्य तुम्हें मुक्त नहीं करेगा, लेकिन ईसाइयों का विश्वास है कि जीसस का सत्य उन्हें मुक्त करेगा। केवल इतना ही नहीं, वे सोचते हैं कि केवल जीसस के सलीब पर लटक जाने से पूरी मनुष्यता पहले से मुक्त हो चुकी है। यह अंधा बनना है, पूरी तरह अंधा होना। कुछ भी मुक्त नहीं हुआ, कोई भी मुक्त नहीं हुआ, पापों से मुक्ति अभी हुई ही नी। जीसस कूर पर लटका दिए गए यह ठीक है लेकिन जीसस के कूरूस पर चढ़ने से जीसस मुक्त हुए थे, तुम नहीं। यह पूरी चीज ही एक छल प्रतीत होती है। जीसस की मृत्यु कूरूस पर होती है और मनुष्यता, विशेष रूप से ईसाइयत मुक्त हो गई, कोई भी जो ईसाई है पहले ही से मुक्त है। मन इसी तरह से सोचता है, वह जिम्मेदारी दूसरों पर थोपता है। यदि तुम पापी हो तो तुम हो पापी, क्योंकि आदम ने पाप किया था और वह स्वर्ग से बाहर फेंक दिया गया था और अब तुम मुक्त हो गए क्योंकि जीसस ने फिर से परमात्मा के राज्य में प्रवेश किया इसलिए आदम और जीसस ही प्रामाणिक व्यक्ति हैं। तुम तो बस एक छाया-भर हो। आदम पाप करता है और पापी तुम बन जाते हो इसलिए तुम कौन हो? तुम एक छाया- भर हो। आदम को स्वर्ग के बाहर फेंक दिया गया, इसलिए तुम्हें ही फेंक दिया गया। केवल छाया के साथ ही ऐसा हो सकता है, एक वास्तविक व्यक्ति के साथ नहीं। यदि मैं इस घर से बाहर फेंक दिया जाऊं तो मेरे साथ मेरी छाया भी फेंक दी जाएगी और कुछ नहीं। और यदि मैं परमात्मा के राज्य में प्रवेश करता हूं तो केवल मेरी छाया ही मेरे साथ प्रविष्ट हो जाएगी। तुम प्रवेश नहीं कर सकते।

जीसस ने हर चीज का समाधान कर दिया। उन्होंने परमात्मा के राज्य में प्रवेश किया और उनके साथ पूरी मनुष्यता प्रविष्ट हो गई। कोई भी प्रविष्ट नहीं हुआ। कोई भी इतने आसान तरीके से प्रवेश नहीं कर सकता। तुम्हें उसकी कीमत चुकानी होगी तुम्हें अपना क्रॉस स्वयं ढोना होगा। तुम्हें कष्ट सहते हुए स्वयं कूरूस पर लटकना होगा- तुम्हारी पीड़ाएं तुम्हें याद रहेंगी। न तो जीसस के दुःख और न किसी दूसरे की पीड़ाएं तुम्हारे लिए द्वार खोलेंगे। वे तो बंद हैं और तुम केवल जीसस का अनुसरण करते हुए उनमें प्रवेश नहीं कर सकते। उस तरह से उस द्वार में कोई भी प्रविष्ट नहीं हो सकता। दरवाजे तो किसी एक के लिए खुलते हैं क्योंकि वैयक्तिक रूप से केवल वही प्रामाणिक और सच्चा होता है।

उस शिष्य ने कहा-" प्यारे सद्गुरु! मैं तो पहले ही प्रविष्ट हो चुका हूं इसलिए आप मुझे यह नक्शो क्यों दे रहे हैं? नक्शे की आवश्यकता तो उसे होती है जो रास्ता भूल गया हो, सो गया हो, लेकिन मैं तो पहले ही मंजिल पर पहुंच चुका हूं इसलिए यह नक्शा क्यों? "

और सद्गुरु ने कहा-" यह नक्शो बहुत कीमती है। इसमें सारे मार्गों के संकेत है। "

यदि एक क्षण के लिए भी शिष्य झिझका होता.. सद्गुरु मर्मबेधी दृष्टि से उसका हृदय टटोल रहे थे, यदि वह कहता, ठीक है, शायद सद्गुरु ठीक ही कहते हों और नक्शे कीमती हो... लेकिन उस व्यक्ति के लिए नक्शो की क्या जरूरत, जो पहले ही लक्ष्य पर पहुंच चुका हो? इसलिए उसने वह किताब आग में फेंक दी, उसने उस नक्शे को फेंक ही दिया।

मैंने सुना है एक व्यक्ति सुनसान सड़क पर अपनी कार ड्राइवर कर रहा था और उसे संदेह था कि वह गलत दिशा में मुड़ गया है। उसने टहलते हुए एक भिखारी को देखा और कार रोककर उससे पूछा-'' क्या यह सड़क देहली की ओर जाती है? ''भिखारी ने उत्तर दिया-'' मुझे नहीं मालूम।''

इसलिए फिर उस आदमी ने पूछा-'' तो क्या यह सड़क आगरा की ओर जा रही है? ''

भिखारी ने उत्तर दिया-'' मुझे नहीं मालूम। ''

कार चालक जो पहले ही झल्लाया हुआ था और भी नाराज होकर क्रोधित होकर भिखारी से बोला-'' तो तुम इससे अधिक और कुछ नहीं जानते। ''

भिखारी हंस पड़ा और उसने कहा-'' लेकिन मैं रास्ते से भटका या खोया हुआ नहीं हूं। ''

इसलिए प्रश्न जानकारी का नहीं है, प्रश्न है-क्या तुम खोजने में समर्थ हो अथवा नहीं? भिखारी ने कहा-'' लेकिन मैं अपने रास्ते से नहीं भटका हूं। मैं जानता हूं या नहीं, यह जरूरी बात नहीं है। '' जब तुम अपना रास्ता न खोज सको, तभी नक्शे की आवश्यकता होती है, जानकारी या किसी किताब की जरूरत होती है। जब तुमने अपना रास्ता खोया ही नहीं, तो एक किताब या नक्शो को साथ ढोए जाने की क्या जरूरत है? एक बोध को प्राप्त व्यक्ति का लक्ष्य हर कहीं होता है। वह जहां है, वही उसका लक्ष्य या मंजिल है। एक बार तुम सजग हो जाओ कि तुम्हीं लक्ष्य हो, फिर तुम कहीं भटक ही नहीं सकते। भिखारी ने भी अपना मार्ग खोया नहीं था। क्यों? क्योंकि न तो वह देहली जा रहा था और न आगरा, वह कहीं जा ही नहीं रहा था। वह जहां भी पहुंच जाता, वही उसकी मंजिल होगी। उसने रास्ता इसलिए खोया नहीं था क्योंकि वह किसी भी दिशा की ओर जा ही नहीं रहा था, वह इसलिए नहीं भटका था क्योंकि वहां उसका कोई इच्छित लक्ष्य था ही नहीं।

इस शिष्य ने नक्शे या किताब को फेंक दिया क्योंकि वहां कोई लक्ष्य था ही नहीं। अब वह स्वयं ही लक्ष्य है। वह जहां भी है, वह शांति से है, अपने ही घर में है। अब वहां कोई कामना नहीं, कोई प्रोत्साहन नहीं। अब भविष्य विलुप्त हो गया, यह क्षण ही यथेष्ट और सब कुछ है। सभी नक्शे को फेंक दो, क्योंकि तुम्हीं लक्ष्य या मंजिल हो। नक्शे तभी सहायक होते हैं, जब लक्ष्य कहीं और बाहर हो। यदि तुम स्वयं हो लक्ष्य हो तो नक्शे कुछ भी सहायता नहीं देते, बल्कि वो तुम्हारा ध्यान भंग कर देते हैं, क्योंकि जब तुम नक्शो की ओर देखते हो तो स्वयं अपनी ओर नहीं देख सकते। किताबें कोई सहायता नहीं कर सकतीं, क्योंकि तुम स्वयं ही सत्य हो और वहां ऐसी कोई किताब नहीं जिसमें तुम्हारा जिक्र हो। तुम ही स्वयं पुस्तक और शास्त्र हो। कोई दूसरी पुस्तक तुम्हारे सिवाय है ही नहीं। यहां तुम हो, जो तुम हो वही तुम्हारी इस पुस्तक में लिखा हुआ है। तुम्हीं को वह गूढ़ आशय समझना है। यदि तुम्हीं गलत हो तो वे सभी किताबें जिन्हें तुम साथ ढो रहे हो, गलत होंगे और गलत संकेत करेंगे, क्योंकि कौन पड़ेगा, वह किताबें और कौन उन निर्देशों का अनुसरण करेगा, जो नक्शे में दिए गए हैं?

मैंने सुना है : एक व्यक्ति कार चला रहा था और उसकी पत्नी नक्शे देख रही थी। अचानक पत्नी दहशत से चिल्लाकर बोली-'' हम लोग रास्ता भटक गए- क्योंकि यह नवा उल्टा रखा हुआ है। नक्शे का ऊपर का भाग नीचे की ओर है। हम लोग जरूर उल्टे आ गए। ''

नक्शे को सीधा रखा जा सकता है, कोई भी नवा अपने आप उल्टा नहीं होता अर्थात उसका ऊपर का भाग नीचे नहीं रखा जाता। उसकी पत्नी को ही ऊपर से नीचे की ओर होना जरूरी था। यदि तुम्हीं उल्टे या गलत हो तो जो किताब तुम पढ़ोगे वह उल्टी ही होगी। यदि -तुम परेशान या व्याकुल हो तो उसका प्रभाव कुरान, बाइबिल या गीता पढ़ते समय अवश्य होगा, यदि तुम पागल हो तो तुम्हारी वेद की व्याख्याएं भी पागलपन होंगी और यदि तुम भयभीत हो तो तुम जहां भी जाओगे वहां तुम्हें भय ही मिलेगा। तुम जो कुछ भी करते हो, तुम्हारा करना तुम्हीं से आता है, तुम्हारी व्याख्या भी तुमसे ही आएंगी अगर तुम गलत हो। इसलिए एक सद्गुरु की दिलचस्पी तुम्हें कोई भी सही किताब देने की नहीं होती। किसी सही या ठीक किताब का कोई

अस्तित्व है ही नहीँ, केवल लोग ही सही और गलत होते हैं, सच्चे लोग और झूठे लोग। एक वास्तविक सद्गुरु को दिलचस्पी तुम्हें सही दिशा में रखने की होती है। एक सद्गुरु की दिलचस्पी तुम्हारे रूपान्तरण में होती है, व्यक्तिगत रूप से उसकी कोई दिलचस्पी तुम्हें किताब देने की होती ही नहीं।

इसी वजह से शिष्य ने कहा-'' आप क्या कह रहे हैं? इतनी नासमझी की बात आपने पहले कभी नहीं की। यह कहते हुए कि मैं इस किताब को सुरक्षित करलूं और यह एक कीमती किताब है। मुझे लगता है कि आप पागल हो गए हैं। ''

कोई भी किताब कीमती नहीं होती, केवल व्यक्ति ही कीमती होता है, लेकिन जब तुम अपना मूल्य स्वयं नहीं जानते, तुम सोचते हो कि किताब कीमती है। जब तुम अपने अस्तित्व का कीमती महत्व नहीं जानते, तब प्रत्येक तरह के सिद्धान्त मूल्यवान बन जाते हैं। शब्द तभी तक मूल्यवान हैं, जब तक तुमने अपने अस्तित्व के मूल्य को अभी तक जाना ही नहीं।

क्या कोई बात और?

प्रश्न : करे सदगुरू? यह पुस्तक बहुत मूल्यवान होगी? जब यह
प्रकाशित होकर आएगी क्योंकि यह लोगों को बता सकेगी कि अभी
वहां एक बुद्ध उपलब्ध है और उसके पास हम लोगों के लिए और
समय के अनुसार उचित विधियां हैं।
लेकिन कई प्रश्नों में से एक प्रश्न जो यहां यह उठता है और निश्चित
रूप से पश्चिमी मन में भी उठता है- मैं यह कैसे जाएं कि मुझे एक
सदगुरू की आवश्यकता है?

हां! यह पुस्तक बहुत कीमती होने जा रही है। इसे संभालकर रखना। यह मुझे सात पीढ़ियों के सद्गुरुओं ने दी है और अब इसे मैं तुम्हें देने जा रहा हूं। अब यह तुम पर निर्भर है कि तुम अब क्या करते हो? मैंने इसमें अपनी भी समझ जोड़ दी है, लेकिन जहां तक मेरा सम्बन्ध है, मैं इसे तुम्हें आग में फेंक देने के लिए दे रहा हूं। जिस दिन तुम इसे आग में फेंक सकोगे, वही वह दिन होगा, जब तुम उसे समझ जाओगे। यदि तुम फिर भी इसे संभालकर रखे ही रहते हो तो तुम चूक गए।

लेकिन पुस्तक की जरूरत है, क्योंकि यदि यह नहीं होगी तो फिर तुम किसे आग में फेंकोगे इसकी जरूरत है। इसे संभालकर रखना-यह बहुत कीमती है और जब तुम समझ जाओ। तो इसे आग में फेंक सकोगे।

इसलिए मैं तुम्हें न सिर्फ कुरान को आग के सुपुर्द करने की बात कहता हूं मैं कहता हूं तुम मेरी पुस्तकों को भी आग की भेंट कर दो क्योंकि वे कुरान, गीता और बाइबिल से भी, जो एक अर्थ में अब समय से बाहर हो गई हैं, कहीं अधिक खतरनाक हैं। तुम मुहम्मद से तो बहुत-बहुत दूर हो, कृष्ण से तो इससे भी कहीं अधिक दूर हो गए हो। उनकी आवाजें बहुत-बहुत दूर की मद्धिम और धीमी हो गई हैं। मेरी आवाज तुम्हारे निकट है। यह प्रत्यक्ष है और तुम अभी भी इसे सुन रहे हो। यह भी तुम्हारे लिए एक बड़ी कारागार बन सकती है क्योंकि यह ठीक अभी अधिक जीवन्त है। यह तुम्हें पकड़ सकती है, यह तुम पर एक बोझ बन सकती है। यदि एक जीवित सदगुरु तुम्हें मुक्त कर सकता है तो एक जीवित सद्गुरु एक कारागार भी बन सकती है। यह तुम पर निर्भर करता है।

पुस्तक में वहां निर्देश है। यह एक नक्शा है, यह नक्श तुम्हें संसार की चेतना में ले जाता है, यह नकश बताता है कि तुम कैसे अपनी जड़ें 'पृथ्वी में जमाओ। यह नक्शा बताता है कि तुम आकाश में उड़ने के लिए कैसे पंख प्राप्त कर सको। लेकिन इन वृक्षों को इनकी कोई जरूरत नहीं। यदि मैं उनसे कहता हूं कि तुम पृथ्वी में कैसे अपनी जड़ें जमाओ तो वै कहते हैं-हमें परेशान मत करो, हमारी जड़ें पहले ही से पृथ्वी में जमी हैं यदि मैं उनसे कहता हूं कि तुम आकाश में उड़ने के लिए कैसे पंख प्राप्त करो तो वे कहते हैं-हमारे मौन को भंग मत करो, हम तो हमेशा से ही आकाश में बांहें फैलाए मस्ती में ही झूम रहे हैं और यदि मैं उनसे इस पुस्तक को संभालकर रखने के लिए कहूं तो वे हंसेंगे और यदि वे आग खोज सके तो वे इस पुस्तक को आग में फेंक देंगे

इसलिए मैं तुमसे सिर्फ यही कह रहा हूं पृथ्वी में अपनी जड़ें जमाओ और नक्शे को उठाकर फेंक दो, उड़ने के लिए पंख उत्पन्न करो और नक्शे को फेंक दो। जो मैं तुमसे कहता हूं उससे जड होकर न बैठ जाओ। जो मैं कहता हूँ उससे आवेशित मत हो जाओ। शब्दों को एक ओर उठाकर रख दो और मेरी ओर देखो अगर जो मैं तुमसे आशा करता हूं वह यह है कि एक दिन यदि मैं कहूं-'' पुस्तक को संभाल कर रखना '' तुम चीखते हुए यह कहने में समर्थ हो सको-'' आप क्या कह रहे हैं, कहीं पागल तो नहीं हो गए आप?'' तुम कह सकते हो कि उस बिंदु पर पहुंचे बिना, जहां वह अर्थपूर्ण बन जाता है, मैं कैसे कर सकता हूं यह लेकिन तुम मुझे धोखा नहीं दे सकते। तुम बिना अपनी आसक्ति को फेंके हुए पुस्तक को आग में फेंक सकते हो। तब तुम नकल कर रहे हो। अनुकरण करने से काम नहीं चलने का। इस पृथ्वी पर कई बुद्ध हुए हैं, बहुत से शिष्य भी हुए हैं, जो घट सकती थी वह हर चीज घट चुकी है यहां और हर चीज पुस्तकों में लिखी है। तुम्हीं निर्णय ले सकते हो, और तुम ही अनुकरण कर सकते हो, लेकिन अनुकरण करने कोई सहायता नहीं मिलेगी।

एक बार ऐसा हुआ की एक व्यक्ति एक झेन सद्गुरु के पास आया। उसने सभी शास्त्र पढ रखे थे। वे उसने जवानी याद किए थे और वह एक महान दार्शनिक बन गया था, क्योंकि वह शब्दों और तर्कों का प्रयोग करने में सिद्धहस्त था। यह झेन सद्गुरु बस एक गांव का रहने वाला ठीक उस भिखारी की तरह था, जो कहता था-'' मैं खोया हुआ नहीं हूं ' जिसके पास न नक्शे थे और न किताबें। उसने कभी बौद्धों के महान शास्त्र ' लोट्स-सूत्र ' को भी नहीं पड़ा था जिसे बौद्ध बहुत कीमती समझकर संभालकर रखते हैं। ठीक जैसे कि सोने के. बिस्तर के सिरहाने कुछ पुस्तकें रखी जाती हैं, उसी तरह लोट्स सूत्र हृदय के निकट रखने की पुस्तक है, जिसका सम्बन्ध हृदय के साथ ही है। कंवल (लोट्स) हृदय का ही प्रतीक है। पूरा तरह खिला कमल का फूल हृदय ही होता है और बौद्धों का ऐसा ख्याल है कि लोट्स सूत्र के सामने और कोई भी शास्त्र जैसे कुछ है ही नहीं।

उक्त व्यक्ति को पूरा लोट्स सूत्र कंठस्थ था। वह उसे कहीं से भी दोहरा सकता था। उससे कोई भी प्रश्न पूछो, वह तुरन्त उसका उत्तर देता था। वह एक कम्प्यूटर के समान था, बहुत कुशल और योग्य। इसलिए उसने झेन सद्गुरु से पूछा-'' क्या आपने लोट्स सूत्र पढ़ा है? ''

झेन सद्गुरु ने कहा-'' लोट्स सूत्र? मैंने कभी इसकी बाबत सुना तक नहीं। '' उस व्यक्ति, उस विद्वान और उस पंडित ने कहा-'' कभी सुना भी नहीं? और लोग कहते हैं कि आप बुद्धत्व को प्राप्त है। ''

झेन सद्गुरु ने कहा-'' लोग अवश्य ही गलत समझते हैं। मैं तो एक अज्ञानी व्यक्ति हूं मैं कैसे बोध को प्राप्त हो सकता हूं? ''

अब उस विद्वान के लिए सब कुछ बहुत आसान हो गया। उसने कहा-'' अब मैं लोट्स सूत्र को दोहराऊंगा। क्या आप उसे पड़ सकते हैं? ''

सदगुरु ने उत्तर दिया-'' मैं नहीं पड़ सकता हूं। ''

इसलिए उस व्यक्ति ने कहा-'' ठीक है, तब आप उसे मुझसे सुनिए। आप जो कुछ इस बाबत पूछना चाहेंगे, मैं किसी भी चीज को स्पष्ट कर दूंगा। ''

वह व्यक्ति स्वयं एक सद्गुरु की खोज में आया था और अब वह स्वयं गुरु बन गया।

अहंकार कभी भी शिष्य नहीं बनना चाहता, वह हमेशा सद्गुरु बनने की खोज में रहता है। इस स्थिति पर वह बुद्ध अवश्य ही हंसे होंगे? सद्गुरु शिष्य बन गया और शिष्य सद्गुरु। उसने कहा-'' सुनिए। ''

सद्गुरु ने उसे सुनना शुरू किया। '' फिर ठीक है '' कहते हुए उसने लोट्स सूत्र को दोहराना शुरू कर दिया।

लोट्स सूत्र में यह कहा गया है-'' प्रत्येक वस्तु शून्य है-यह विश्व भी एक शून्य है, स्वर्ग भी एक शून्य है, परमात्मा भी शून्य है और प्रत्येक वस्तु शून्य है। सभी वस्तुओं का स्वभाव या प्रकृति ही शून्यता है। इसी शून्यता के प्रति लयबद्ध हो जाओ और तुम उसे पा लोगे। ''

अचानक सद्गुरु उछला और उसने उस पंडित के सिर पर चोट की। वह विद्वान तो जैसे पागल हो गया। उसने चीखना शुरू कर दिया और कहा-" तुम बुद्धत्व को तो उपलब्ध हुए ही नहीं और तुम अज्ञानी हो, मुझे तो तुम एक मानसिक रोगी दिखाई देते हो। तुम यह कर क्या रहे हो? "

सद्गुरु फिर अपने स्थान पर बैठ गया और उसने कहा-" यदि प्रत्येक वस्तु एक शून्यता है, फिर तुम्हारे अंदर यह क्रोध कहां से आ रहा है? पूरा संसार शून्य है, स्वर्ग शून्य है, नर्कशून्य है, और वस्तुओं का स्वभाव शून्यता है-फिर यह क्रोध आया कहां से? "

वह पंडित तो उलझन में पड़ गया। उसने कहा-" यह लोट्स सूत्र में कहीं भी नहीं लिखा है। तुम बेवकूफी भरा प्रश्न पूछ रहे हो। इसका उत्तर लोट्स सूत्र में लिखा ही नहीं है। मुझे पूरा लोट्स सूत्र जबानी याद है और यह प्रश्न पूछने का कोई तरीका नहीं है, फिर मेरे सिर पर चोट करते हुए प्रश्न पूछने का यह कौन-सा तरीका है? "लेकिन केवल यही वह तरीका है। सिद्धान्त कोई सहायता नहीं करते। तुम कह सकते हो कि प्रत्येक वस्तु में एक शून्यता है, लेकिन ठीक एक छोटी-सी चोट से क्रोध, उस शून्यता से उत्पन्न हो गया, एक स्त्री उधर से गुजरती है और शून्यता से ही कामवासना उत्पन्न हो जाती है, तुम एक सुंदर भवन देखते हो और शून्यता से ही उसे प्राप्त करने की कामना जाग उठती है। जब बुद्ध ने कहा-" प्रत्येक वस्तु एक शून्यता ही है तो वे कह रहे हैं-यदि तुम इसे समझ सकते हो तो फिर क्रोध आदि कुछ नहीं उठेगा, क्योंकि शून्यता से कोई भी चीज कैसे उत्पन्न हो सकती है? शून्य होना एक ध्यान है, लेकिन सिद्धान्त नहीं। यह तो अनन्त में गिरने जैसा है। तब न तो क्रोध उत्पन्न हो सकता है और न कामवासना। "

यहां दो तरह के व्यक्ति हैं, पहले वे, जो सिद्धांतों की खोज में हैं- और कृपया आप उस तरह के मत बनिए क्योंकि यह श्रेणी मूढ़ों की है। दूसरी तरह के लोग होते हैं-बुद्धिमान या प्रज्ञावान, जो सिद्धान्तों की नहीं अनुभव की खोज में होते हैं।

यह पुस्तक और जो कुछ मैं कह रहा हूं तुम्हारे लिए एक सिद्धान्त बन सकते हैं और तब तुम चूक जाओगे। यह एक प्यास, एक भूख. और अनुभव करने की गहरी प्रवृत्ति भी बन सकते हैं, तब तुमने जरूरी बात पकड़ ली, लेकिन शब्दों के आदी मत बनो अपने साथ खाली कनस्तर या खोल को साथ ढोते मत चलो, जो उसमें सार तत्व है, उसे याद रखो।

जब उस शिष्य ने किताब को आग में फेंकदिया तो वह खाली कनस्तर या खोल को फेंक रहा है। उसमें भरा सार तत्व तो उसने अपने हृदय में संभालकर रखा है। सदगुरु-प्रसन्न था किइस व्यक्ति ने सार समझ लिया, खोल को तो फेंकना ही है, उसमें रखे सार को संभालकर रखना है।

जो कुछ मैं कहता हूं उसे आग में फेंक दो, लेकिन मेरी उपस्थिति में तुम्हें जो कुछ भी घट रहा है, वही सार है। उसे संभालकर रखो, वही कीमती है, लेकिन उसे संभालकर रखने की भी कोई जरूरत नहीं, यदि वह घटता है तो तुम उसे संभालकर रखोगे ही, यदि तुम जानते हो तो वह सुरक्षित है और तब उसे आग में फेंकने का कोई उपाय नहीं। केवल किताबें हो आग में फेंकी जा सकती हैं, सत्य नहीं।

यही वजह थी कि उस शिष्य ने चिल्लाकर कहा-" आप क्या कह रहे हैं? " क्या एक अमूल्य वस्तु आग में फेंकी जा सकती है? क्या कीमती सार तत्व आग में जल सकता है? यदि तुम्हारी पुस्तक का सार तत्व आग में जल सकता है, यदि आग तुम्हारी पुस्तक को जला सकती है तो किस तरह से अमूल्य है वह? किस तरह का सत्य है यह? यदि आग सत्य को जला सकती है तो वह संभालकर रखने के योग्य ही नहीं।

वह जो जलाया नहीं जा सकता, वह जिसकी कभी कोई मृत्यु नहीं होती, जो आग में जाकर भी अधिक जीवन्त और शुद्ध हो जाता है-वही सत्य है। इसी कारण मैंने कहा-बाइबिल को आग में फेंक दो, इसलिए नहीं कि

मैं बाइबिल के विरुद्ध हूं मैं खोल या खोखे के विरुद्ध हूं। उसमें भरा सार तत्व नहीं फेंका जा सकता। खोल या खोखा है-लोट्स सूत्र-उसका सार है तुम्हारा अपना कमल और वही तुम्हारा हृदय

क्या कोई बात और...?

प्रश्न : प्यारे सदगुरु? बहुत से लोग यह कहते है कि वे अपने शरीर के कष्ट और दर्द के डर से ही वास्तव में अपने को ध्यान में नहीं ले जा सकते क्योंकि ध्यान करने समय जब वे दूसरे से टकरा जाते है? तो वे गिर पड़ते हैं। उनका ऐसा अनुभव करना ही वास्तव में उनके ध्यान न करने का बहाना अगर कारण बन जाता हैं। कृपया इस शारीरिक पहलू के बारे में हमें बताने की कृपा करें?

एक बच्चा गिर सकता है, लेकिन वह चोट का अनुभव नहीं करेगा। सड़क पर चलता हुआ एक शराबी गिर पड़ता है लेकिन उसका शरीर सुरक्षित रहता है, उसकी हड्डियां नहीं टूटती। होता क्या है? वास्तविक चीज यह नहीं है कि दूसरे ने तुम्हें टक्कर मार दी, असली चीज है तुम्हारा प्रतिरोध। तुम डर रहे हो कि कहीं दूसरा तुमसे टकरा. न जाए इसलिए तुम पूरे समय प्रतिरोध करते रहते हो।

कोई तुम्हें टक्कर न मार दे, तुम इसी दहशत से डरे रहते हो। भय तुम्हें बंद कर देता है। तुम हठपूर्वक तन जाते हो और यदि कोई तुमसे टकराता है तो तुम्हारी तनी हुई जड़ता को ही चोट लगती है, तुम्हें नहीं, लेकिन तुम अनुभव करते हो कि चोट तुम्हें लगी है और तुम्हारा मन तब तुमसे कहता है-तुम बिलकुल ठीक थे, जो शुरू से ही डर रहे थे और सजग होना अच्छा है, जिससे कोई तुम्हें टक्कर न मार दे। '

यह मन एक दुष्चक्र है। यही तुम्हें एक विचार देता है और उस विचार के कारण ही कुछ चीजें घटती हैं। जब वह विचार और मजबूत हो जाता है, तब तुम डर जाते हो और तब तुम निरन्तर भय में ही रहते हो। फिर तुम कैसे ध्यान कर सकोगे?

जापान में उन लोगों के पास कुश्ती लड़ना एक विज्ञान है, जिसे वे ओ या जुजित्सू कहते हैं वह पूरा विज्ञान बहुत कुछ ध्यान जैसी चीज ही है। जूडो पहलवान सीखता है कि कैसे प्रतिरोध न किया जाए। जब कोई तुम पर आक्रमण करता है, तुम प्रतिरोध नहीं करते और तुम्हें उसकी ऊर्जा को अपने में सोखना या जज्ब करना होता है, जैसे मानो वह तुम्हें ऊर्जा दे रहा हो। उसकी ऊर्जा को अपने में जज्ब कर लो, प्रतिरोध या बचाव मत करो। वह शत्रु नहीं है, वह मित्र है जो तुम्हारे पास आ रहा है और जब वह अपने हाथ अथवा अपनी हथेली से तुम पर चोट करे तो उसकी हथेली से काफी ऊर्जा बाहर निकल जाती है। वह शीघ्र ही थक जाएगा। जो ऊर्जा उसकी हथेली से बाहर निकल रही है, उसे अपने में जज्ब कर लो। जब वह थक जाता है तो केवल उसकी ऊर्जा को सोखने के कारण ही तुम शक्ति शाली होने का अनुभव करोगे, इतने शक्तिशाली जितने तुम पहले कभी नहीं रहे, लेकिन यदि तुम प्रतिरोध करते हो, तुम सिकुड़कर तन जाते हो, जिससे तुम्हें चोट न लगे। तब उसकी ऊर्जा और तुम्हारी ऊर्जा एक दूसरे से टकराती है और उसी टकराने में दर्द उत्पन्न होता है। तुम ऐसे ही हो। ध्यान करते समय इस बात का स्मरण रहे, यदि कोई आकर तुमसे टकराता है तो उसकी ऊर्जा अपने में जज्ज कर लो। यहां तो ध्यानी व्यक्ति ही तुमसे टकरा रहा है इसलिए तुम बहुत भाग्यशाली हो। वह अपनी सुंदर ऊर्जा मुक्त कर रहा है और तुम तक ध्यान की ऊर्जा आ रही है, उसे अपने में सोख लो। उसे धन्यवाद दो और फिर उछलना शुरू कर दो। न प्रतिरोध करो और न अपने को हठपूर्वक जानो, क्योंकि अनजाने ही अपनी ऊर्जा में तुम्हें अपना सहभागी बना रहा है। उस ऊर्जा को प्राप्त करो, तब शीघ्र ही तुम्हें अपने में कुछ अलग गुणात्मकता का जो प्रतिरोध न करने की होगी, अनुभव होगा। तब पूरा शरीर और मन कुछ अलग तरह से व्यवहार करने लगेंगे। तुम एक नए रहस्य को जानोगे।

अचानक तुम भूमि पर गिर जाते हो, पर ऐसे गिरो जैसे पृथ्वी तुम्हारी मां है। उसे संघर्ष न बनाकर विश्राम बनाओ। नीचे भूमि पर गिरकर तने मत रहो। यदि तुम तने रहे, शरीर को सख्त बनाए रहे तो तुम्हारी

हड्डी भी टूट सकती हैं, क्योंकि फ्रैक्चर तभी होगा, जब तुम सख्त बने तने हुए थे और तुम्हारे और पृथ्वी के मध्य संघर्ष हो रहा था और वास्तव में पृथ्वी तुमसे कहीं अधिक विराट और विराट और महान है इसलिए उससे संघर्ष करने में नुकसान तुम्हारा ही होगा। ठीक एक शराबी की तरह भूमि पर गिर पड़ी। तुम उन्हें सड़क पर रोज गिरते हुए देखते हो लेकिन सुबह वे फिर पूरी तरह ठीक होकर वापस लौट आते हैं। हर रात वे नीचे गिरते हैं और उनकी हड्डियां कभी नहीं टूटती। ये शराबी एक खास रहस्य जानते। वे अपनी ओर से बिना किसी होश के गिरते हैं। वहां कोई अहंकार नहीं होता। वे बस गिर पड़ते हैं। वहां पृथ्वी से संघर्ष करने वाला कोई होता ही नहीं। पृथ्वी उन्हें अपने में सोख लेती है और वे पृथ्वी को अपने में जज्ब कर लेते हैं।

एक शराबी बनो, बिना किसी अहंकार के गिरो। गिरने का मजा लो और पृथ्वी से मित्रता और घनिष्टता जोड़ो। शीघ्र ही तुम अपने पैरों में और अधिक ऊर्जा लेकर, जैसे तुम्हारे पास पहले कभी न थी वापस लौटोगे और फिर तो तुम वह तरकीब पा लोगे जिससे कोई व्यवधान आगे आएगा ही नहीं। तुम चोट इसीलिए खा जाते हो क्योंकि तुम लड़ रहे हो, निरन्तर संघर्ष कर रहे हो। तुम चोट इसलिए खा जाते हो क्योंकि तुम निरन्तर प्रतिरोध कर रहे हो। चेतन या अचेतन किसी भी रूप में तुम हमेशा पहले ही से प्रतिरोध कर रहे हो। जब इतने अधिक लोग ध्यान कर रहे हैं तो तुम डर जाते हो और किसी से तुम चोट खा बैठते हो-लेकिन यदि वहां पहले ही से भय है तो तुम ध्यान कैसे कर सकते हो?

वस्तुत: भय में बने रहने की अपेक्षा प्रेम में बने रहो। ध्यान करने वाले इतने लोगों के साथ इतनी दिव्य ऊर्जा विस्तृत हो रही है। यह तो एक उत्सवमय समारोह है, फिर भय कैसा? इस चेतना के समूह का आनन्द लो। इतने सारे लोग नृत्य कर रहे हैं। अपने अहंकार को शिथिल करके उसका एक भाग बन जाओ। इस सामूहिक शक्ति और ऊर्जा के साथ एक हो जाओ। शुरू-शुरू में यह कठिन लगेगा क्योंकि बहुत से लोग प्रतिरोध के एक जमे-जमाये ढांचे में जीने के अभ्यस्त हो गए हैं, लेकिन किसी दिन तुम सजग बनोगे, किसी दिन एक अंतराल निर्मित होगा और तुम देख सकोगे। एक अनुभव ही काफी होगा। यदि तुम किसी दिन अचानक पृथ्वी पर गिर पड़ो और तुम्हें कोई चोट न लगे तो तुम्हें बहुत सुंदर और सुखद लगेगा, फिर तुम उस रहस्य को जान लोगे, फिर तुमने वह कुंजी पा ली जिससे आगे गलती न हो, अब यह कुंजी कई तालों और रहस्यों के द्वार खोल देगी। यह मास्टर चाभी है।

जब भी कोई तुमसे संघर्ष करने या लड़ने के लिए आगे बड़े, उसे अपने में जज्ब करो, जब कोई तुम्हारा अपमान करे, उसकी ऊर्जा को सोखे और तुम देखोगे वही अपमान एक फूल बन जाता है। वह ऊर्जा निसृत करता है। जब कोई तुम्हारा अपमान करता है, वह अपनी ऊर्जा बाहर फेंक रहा है। वह बेवकूफ है, मूर्ख है इसलिए तुम धन्यवाद दो उसे और वापस चले जाओ। फिर देखो क्या होता है? जब कोई लड़ने के लिए पहले ही से तैयार है, उसे चोट करने की अनुमति दो। ऐसे बन जाओ जैसे तुम वहां हो ही नहीं और वह एक शून्यता से लड़ रहा है। प्रतिरोध मत करो, उसे अनुमति दो, एक बार तुम यह जान गए हो फिर किसी और रास्ते की जरूरत ही नहीं।

केवल मुझे सुनने से ही कुछ नहीं होगा। यह तो एक कला है, यह कोई विज्ञान नहीं है। विज्ञान की व्याख्या कर उसे स्पष्ट किया जा सकता है, लेकिन कला का तो अनुभव किया जाता है। यह ठीक तैरने जैसा है। यदि तुम न तैरने वाले से कहो-इसमें कुछ है ही नहीं, तुम बस कूद पड़ो पानी में और अपने हाथ चारों ओर चलाना शुरू कर दो तो वह कहेगा-' तुम कह क्या रहे हो, यह तो आत्महत्या करने जैसा होगा। ' तुम बिना तैरने वाले को कैसे स्पष्ट करोगे कि तैरना बहुत सुन्दर है। वह सबसे अधिक खूबसूरत अनुभव है जो शरीर तुम्हें दे सकता है। यह ऐसा प्रवाहमय अनुभव है जिससे नदी के साथ एक होने की अनुभूति होती है। पूरा शरीर, उसका पोर-पोर, हर कोष, जीवन्त हो उठता है। जल ही जीवन है क्योंकि सभी जीवन, जल से उद्‌भूत हुआ है। जल ही महत्वपूर्ण भाग है। तुम्हारे शरीर में पचासी प्रतिशत जल ही है, इसलिए तुम्हारा पचासी प्रतिशत जल और तरल पदार्थ, एक बड़ी सरिता या सागर के साथ मिल रहा है। तुम मूल स्रोत के सार के महत्वपूर्ण भाग से मिल रहे हो।

लेकिन जो तैरना नहीं जानता, उसे तुम यह स्पष्ट नहीं कर सकते। तुम्हें उसे धीरे- धीरे एक-एक कदम आगे ले जाना होगा-शुरू में उथले पानी में, जिससे उसमें आत्मविश्वास आए फिर धीरे- धीरे गहरे पानी में। शुरूमें उसे बुरा लगेगा, वह डरेगा, वह नदी से लड़ेगा, डरेगा कि नदी कहीं उसे डुबो न दे? उसे नदी अपनी विरोधी लगेगी, लेकिन शीघ्र ही उसे अनुभव होगा कि नदी विरोध में नहीं है और वह भी उसके तैरने का मजा ले रही है और उसे प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है कि उसका ही एक भाग वापस आकर उससे मिल रहा है। नदी के लिए यह उत्सव मनाने की घड़ी है। वह नदी जिसमें कोई नहीं तैरता उदास लगती है, लेकिन जहां बहुत से लोग तैरते, नाचते आनन्दित होते हैं, नदी भी प्रसन्न होती है। शीघ्र ही तुम्हें लगेगा कि नदी तुम्हारी सहायता कर रही है और तुम उससे अनावश्यक रूप से ही संघर्ष कर रहे थे। धीरे- धीरे तुम अपनी गतिविधियां और सक्रियता छोड़ते जाओगे। जब कोई तैराक पूर्ण कुशल हो जाता है, वह बस नदी में बहता है। कुछ करने की उसे जरूरत होती ही नहीं। नदी ही सब कुछ करती है और तैराक सिर्फ नदी में बहता रहता है।

योग की पुरानी विधियों में एक विशेष ध्यान है-बस नदी के साथ बहते हुए उसके साथ एक हो जाने का अनुभव करना, लेकिन कोई गतिविधि या क्रिया करना ही नहीं है, न शरीर को हिलाना है, नदी को ही काम करने दो। यदि नदी सब कुछ कर ही रही है, तुम बस कुछ भी न करते हुए उसके साथ बहो। तुम्हें पूरे अस्तित्व के एक होने की अनुभूति होगी। इसी तरह से पूरा अस्तित्व प्रवाहित हो रहा है।

तुम अनावश्यक रूप से संघर्ष कर रहे हो। ध्यान में तुम चेतना की सरिता में प्रवेश कर रहे हो। तुम्हारे चारों ओर बहुत से लोग एक तीव्र ऊर्जा का सोता निर्मित कर रहे हैं। एक तैराक की तरह उसमें प्रविष्ट हो जाओ, बिना कोई संघर्ष किए। बस बहते जाओ और देखो-क्या होता है? यही वह कला है।

मैं उसे बता नहीं सकता, मैं बस संकेत कर सकता हूं और तुम्हें उसका अनुभव करना है। तुम्हें तब तक प्रतीक्षा करनी है, जब तक तुम्हें अनुभव घट न जाए। एक क्षण का भी यह अनुभव कि कोई तुम्हारे विरोध में नहीं है, कोई भी तुम्हें नुकसान पहुंचाने नहीं जा रहा और पूरा अस्तित्व तुम्हारा ही घर है, तुम्हें हर चोट से सुरक्षित कर देना। मैं तुमसे कहता हूं कि यदि तुम्हारी हड्डी भी चटक या टूट जाए उसमें दर्द नहीं होगा, उससे कोई बड़ी हानि नहीं होगी। यदि तुम नीचे गिर पड़ते हो और मान लो, यदि मर भी जाते हो फिर भी तुम्हें कोई पीड़ा नहीं होगी। यदि तुम नीचे भूमि पर गिरकर मां पूर्वी में वापस चले जाओगे तो कोई भी पीड़ा नहीं होगी, पृथ्वी तुम्हें अवशोषित कर लेगी।

और कौन जानता है, ध्यान में केवल किसी से टकराना ही तुम्हारे लिए बुद्धत्व की पहली झलक बन जाए क्योंकि वह एक धक्का या आघात है जिससे अकस्मात चेतना का प्रवाह तुमसे टकराता है। कौन जानता है कि तुम्हारा बस पृथ्वी पर गिर पड़ना, एक हड्डी का टूट जाना ही तुम्हारी पहली सटोरी बन जाए तुम्हारी पहला बुद्धत्व बन जाए। कोई भी नहीं जानता, यह जीवन बहुत रहस्यमय है। बुद्धत्व कितने अलग- अलग तरीकों से घटता है, इसे कोई नहीं जानता।

इसे बहुत प्रेम से करो। यहां घर जैसा ही महसूस करो और चीजों को घटने की अनुमति दो। यदि कोई तुमसे टकराता है तो उसे टकराने दो और उसे अपने से होकर जाने दो। बीच में दीवार मत बनो, न उसके रास्ते में आओ। उसे गुजर जाने दो।

पोरस बनो, ऐसे छिद्रयुक्त स्पंज की तरह जिसमें ऊर्जा अवशोषित हो जाए।

आज के लिए इतना बहुत है।

नौवां प्रवचन

बिल्ली को बचाओ

कथा: –

नानसेन ने भिक्षओं के दो समूह, को, एक बिल्ली के स्वामित्व के
लिए आपस में शोर करते और झगड़ते हुए पाया नानसेन उस घर में
गया और एक तेज धार की छुरी लेकर लौटा उसने बिल्ली को हाथ
में उठाकर भिक्षओं से कहा– "तुममें से कोई भी यदि कोई अच्छा
और भला शब्द कहे तो तुम इस बिल्ली को बचा सकते हो "
कोई भी ऐसे शब्द को न कह सका इसलिए नानसेन ने बिल्ली के
दो टुकड़े कर दिए और आधा-आधा भाग प्रत्येक समूह को दे दिया
शाम को जब जोशू मठ में लौटा तब जो कुछ भी हुआ कु नानसेन
ने उसे उसकी बाबत बताया
जोशू ने कुछ भी नहीं कहा:
उसने बस अपनी चप्पलें अपने सिर पर रखीं और चला गया
नानसेन से कहा– " यदि तुम वहां रहे होते तो तुमने बिल्ली को बचा लिया होता "

जीवन की रक्षा, मन से, सोच-विचार से या तर्क के द्वारा नहीं की जा सकती। यदि तुम उसे तर्क द्वारा बचाने की कोशिश करोगे तो उसे खो दोगे। जीवन बचाया जा सकता है केवल एक बेतुकी छलांग के द्वारा, किसी ऐसी चीज के द्वारा जो बुद्धिगत न होकर समग्र हो, लेकिन यह पूरी कहानी बहुत अधिक निर्मम प्रतीत होती है। नानसेन के शिष्य एक बिल्ली के ऊपर आपस में झगड़ रहे थे। नानसेन का काफी बड़ा मठ था और उस मठ के दाएं बाएं दो भाग थे। यह बिल्ली एक भाग से दूसरे में घूमती रहती थी और दोनों भागों के भिक्षु यह दावा करते थे कि बिल्ली उन्हीं की है। यह बिल्ला बहुत सुन्दर थी। समझने योग्य जो पहली चीज है, वह है कि एक सच्चा संन्यासी किसी की मालकियत का कोई दावा ही नहीं करता। एक संन्यासी का अर्थ है जिसने अपने सारे अधिकार छोड़ दिए अथवा सभी सम्पत्ति, पद, प्रतिष्ठा और हर चीज का स्वामित्व छोड़ दिया और यही मूल और अधिक गहरा इसका अर्थ भी है। तुम धन-सम्पत्ति छोड़ सकते हो, जो आसान है लेकिन स्वामित्व या पकड़ छोड़ना कठिन है, क्योंकि यह में चली गई है। तुम संसार छोड़ सकते हो, लेकिन मन उसके साथ लिपटा चला जाता है।

नानसेन के इन शिष्यों और भिक्षुओं ने अपने पीछे घर-संसार, अपनी पत्नी और बच्चे सभी कुछ छोड़ दिया था, लेकिन अब वे बिल्ली पर स्वामित्व के लिए आपस में झगड़ रहे थे। मन इसी तरह कार्य करता है। तुम एक चीज छोड़ दो तो मन दूसरी चीज का दावा करता है लेकिन आधारभूत चीज वही बनी रहती है और उससे कोई भी फर्क नहीं पड़ता। भले ही स्वामित्व की वस्तु बदल जाए उससे कोई अंतर पड़ता। अंतर तो तब पड़ता है, क्रांति तो तब घटित होती है, वास्तविक परिवर्तन तो तब होता है जब वैयक्तिकता बदल जाए जब स्वामी ही बदल जाए। समझने योग्य सबसे पहली चीज यही है। जो भिक्षु बिल्ली पर स्वामित्व का दावा कर रहे हैं, मूर्ख दिखाई देते हैं, लेकिन पूरे संसार में भिक्षु और संन्यासी यही सब कुछ कर रहे हैं। वे अपना घर छोड़ देते हैं तब वे मंदिर या चर्च पर अपने स्वामित्व का दावा करते हैं। वे सब कुछ छोड़ देते हैं, लेकिन अपना मन नहीं छोड़ सकते और मन ही उनके लिए निरन्तर नए-नए संसार निर्मित करता रहता है। इसलिए प्रश्न एक राज्य पर स्वामित्व जमाने या उसे पाने का नहीं है, इसे तो एक बिल्ली भी कर देगी। जहां कहीं भी स्वामित्व का भाव आता है तो उसके साथ वहां संघर्ष हिंसा और आक्रमण का होना निश्चित है। जब भी तुम किसी चीज पर

अधिकार जमाते हो, तुम संघर्ष कर रहे होते हो, क्योंकि जिसे तुम अपने अधिकार में लेते हो, वह पूर्ण अस्तित्व का ही एक भाग है। तुम किसी चीज के स्वामी नहीं हो सकते तुम बस उसका उपयोग कर सकते हो। हम कैसे आकाश के स्वामी हो सकते हैं और पृथ्वी को कैसे नियंत्रित कर सकते हैं? लेकिन हम सभी पर अधिकार जमाते हैं, उसे नियंत्रित करना चाहते हैं और इसी से सभी तरह के संघर्ष युद्ध, लड़ाई, हिंसा और प्रत्येक चीज उत्पन्न होती है।

मनुष्य निरन्तर लड़ाई और लड़ाइयां ही लड़ता चला आ रहा है। इतिहासकार कहते हैं कि पिछले तीन हजार वर्षों से लगभग निरन्तर ही कहीं-न-कहीं पृथ्वी के किसी-न-किसी भाग में युद्ध होता ही रहा है। इन तीन हजार वर्षों में हमने कम-से- कम चौदह हजार युद्ध लड़े हैं। आखिर इतने अधिक युद्ध क्यों? यह केवल अपना अधिकार जमाने और नियंत्रण के कारण ही लड़े गए हैं। यदि तुम किसी वस्तु को अपने अधिकार में लेते हो तो तुम पूर्ण अस्तित्व से एक संघर्ष की शुरुआत कर देते हो।

बुद्ध, महावीर और जीसस सभी यही कहते हैं, यदि तुम परिग्रही होकर किसी भी वस्तु या व्यक्ति पर अधिकार जमाकर उसके स्वामी बनते हो तो तुम परमात्मा के राज्य में प्रवेश नहीं कर सकते। जीसस कहते हैं-'' एक ऊंट भी सुई के छेद से एक बार बाहर निकल सकता है लेकिन एक धनी व्यक्ति स्वर्ग के द्वार में प्रविष्ट नहीं हो सकता। ''यह असम्भव है क्योंकि जैसे तुम कुछ भी अपने अधिकार में लेते हो निरन्तर परमात्मा से लड़ रहे होते हो। जब तुम अपने स्वामित्व का दावा करते हो तो तुम किस पर अपनी मालकियत का दावा कर रहे हो, क्योंकि पूर्ण तो पूर्ण के ही अधिकार में है और पूर्ण का एक भाग पूर्ण होने का दावा नहीं कर सकता। प्रत्येक दावा एक आक्रामकता है इसलिए जिन लोगों के अधिकार यानि यंत्रणा में कुछ भी है, उनका गहराई में परमात्मा से सम्बन्ध नहीं हो सकता।

अपरिग्राही होने का यह अर्थ नहीं है कि तुम्हें घर में नहीं रहना चाहिए। रहो घर में ही, लेकिन उस अखण्ड सत्ता या परमात्मा के प्रति अहोभाव और धन्यवाद प्रकट करते रहो। उपयोग करो उस वस्तु का, पर उस पर अधिकार मत जाओ। यदि तुम बिना परिग्रह या पकड़ के वस्तुओं का उपयोग कर सकते हो तो तुम एक संन्यासी ही हो जाते हो।

नानसेन के इन शिष्यों ने संसार छोड़ दिया था, लेकिन उनके मन एक छाया की तरह अभी वस्तुओं के पीछे ही भाग रहे थे। अब वे एक बिल्ली पर अपने स्वामित्व का दावा कर रहे थे। यह पूरी चीज ही एक बेवकूफी से भरी हुई है, लेकिन मन छू ही है। मन हमेशा लड़ने के बहाने खोजता रहता है। यदि तुम्हारे पास मन है तो तुम्हारे अन्दर एक छिपा हुआ लड़ाका है जो हमेशा किसी-न-किसी से लड़ने का बहाना छूता रहता है। मन सदा लड़ने का बहाना क्यों खोजता रहता है? क्योंकि लड़ने से अहंकार पुष्ट होता है। लड़ते हुए अहंकार उत्पन्न होता है और यदि तुम नहीं लड़ते हो तो अहंकार होता ही नहीं।

महावीर और बुद्ध दोनों ही अहिंसा पर जोर देते हैं। मूल कारण न लड़ने का ही है। यदि एक बार तुमने लड़ना बंद कर दिया तो अहंकार रह ही नहीं सकता। लड़ने में ही अहंकार का अस्तित्व है, यह लड़ने का ही प्रतिफलन है। तुम जितना अधिक लड़ते हो, उतना ही अधिक अहंकार का अस्तित्व होता है। यदि तुम पृथ्वी पर अकेले छोड़ दिए जाओ, तुम्हारे साथ लड़ने को कोई हो ही नहीं, तो क्या तुम्हारे पास कोई अहंकार होगा? तुम्हारे पास कोई अहंकार होगा ही नहीं। उसे उत्पन्न करने के लिए दूसरे का होना जरूरी है, दूसरा होना ही चाहिए। स्मरण रहे, तुम्हारे अन्दर अहंकार नहीं है, तुम्हारे अन्दर वह स्थित नहीं है। वह हमेशा तुम्हारे और दूसरे के बीच रहता है, जहां लड़ने का अस्तित्व है।

यहां दो ही तरह के रिश्ते हैं-एक है संघर्ष का, भय और घृणा का-जो अहंकार उत्पन्न करता है और दूसरा है-प्रेम, करुणा और सहानुभूति का। ये दो ही तरह के सम्बन्ध हैं। जहां प्रेम है, वहां संघर्ष समाप्त हो जाता है, अहंकार विसर्जित हो जाता है। यही कारण है कि तुम प्रेम नहीं कर सकते। यह कठिन है क्योंकि प्रेम का अर्थ है अहंकार को गिराना, स्वयं के 'मैं' को विसर्जित करना। प्रेम का अर्थ है-स्वयं की अनुपस्थिति।

जरा देखें इस अजीब घटनाक्रम को, प्रेमी निरन्तर लड़ते ही रहते हैं। प्रेमी लड़ कैसे सकते हैं? यदि वहां प्रेम है-लड़ाई होनी ही नहीं चाहिए और अहंकार भी नहीं होगा, वह विसर्जित हो जाएगा। तुम्हारा पूरा अस्तित्व प्रेम का प्यासा होता है, तुम्हारा पूरा मन अहंकार का प्यासा होता है, इसलिए तुम एक समझौता करते हो। तुम प्रेम भी करते हो और लड़ते भी हो। प्रेमी एक-दूसरे के घनिष्ट शत्रु बन जाते हैं और यह शत्रुता बनी रहती है। सभी प्रेमी एक-दूसरे से लड़ते भी रहते हैं और प्रेम भी करते रहते हैं। उन्होंने एक समझौता कर रखा है, कुछ क्षणों तक वे केवल प्रेम करते हैं और तब उनके अहंकार गिर जाते हैं, लेकिन फिर मन को बेचैनी होने लगती है और मन फिर लड़ना शुरू कर देता है। इसलिए सुबह वे लड़ते हैं और शाम को प्रेम करते हैं। अगली सुबह वे फिर लड़ते हैं, तब युद्ध और प्रेम की एक ताल या लय निर्मित हो जाती है।

सच्चे प्रेम का अर्थ है जहां लड़ाई रही ही नहीं, जहां दो, एक हो गए। उनके दो शरीर अलग- अलग अस्तित्व में जरूर हैं, लेकिन उनका होना एक मिश्रण है। उनके बीच सीमाएं खो गई हैं और कहीं कोई विभाजन नहीं है। वहां अब ' मैं ' और ' तुम ' नहीं रह गए अब केवल एक ही रह गया।

नानसैन के इन भिक्षुओं ने सभी कुछ छोड़ रखा है, लेकिन उनके मन अभी भी वहां हैं, जहां पकड़ है, परिग्रह है। वे चाहते हैं लड़ाई-झगड़ा हो, अहंकार निर्मित हो। बिल्ली तो मात्र एक बहाना बन गई।

नानसेन ने सभी भिक्षुओं और शिष्यों को बुलाया, बिल्ली को अपने हाथों से पकड़ा और कहा-" कुछ ऐसा कहो जिससे इस बिल्ली की जान बच जाए। " उसके कहने का क्या अर्थ था, जब उसने कहा-" कोई बात ऐसी कहो जिससे इस बिल्ली की जान बच सके। " कुछ चीज झेन जैसी कहो, कुछ चीज ध्यान से भरी हुई कहो, कुछ बात दूसरे संसार की कहो, कोई चीज परमानंद की कहो, कुछ बात ऐसी कहो जो मन के पार की हो। यह बिल्ली तभी बच सकती है। यदि तुम कुछ ऐसा कहो जो मन से उद्भूत न हो, जो तुम्हारे आंतरिक मौन से आए। उसने असम्भव की मांग की। यदि उन भिक्षुओं में आंतरिक मौन ही घटा होता तो वे बिल्ली पर स्वामित्व का दावा ही नहीं करते। यदि उनके पास आंतरिक मौन ही होता तो यह असम्भव था कि वे आपस में लड़े होते।

भिक्षुओं के लिए सद्गुरु का वचन एक पहेली बन गया। वे जानते थे कि यदि वे कुछ भी कहेंगे तो वह मन से ही कहेंगे और बिल्ली मार दी जाएगी इसलिए वे मौन ही रहे, लेकिन वह मौन वास्तविक मौन नहीं था, अंदर तो बिल्ली को बचाने की ही बात चल रही थी। वे इसलिए मौन रहे क्योंकि वे कुछ ऐसा खोज ही न सके जो अमन से आता, जो उनके आंतरिक स्रोत और उनके अपने अस्तित्व से आता अथवा जो उनके केन्द्र से आता। उनका मौन रहना उनकी सोची-समझी एक चाल या योजना थी, मौन रहना इसलिए अच्छा था जिससे सद्गुरु को धोखा दिया जा सके कि उनका मौन ही उनका उत्तर है और वे मौन द्वारा उसे अभिव्यक्त कर रहे हैं।

लेकिन तुम एक सद्गुरु को धोखा नहीं दे सकते। यदि तुम एक सद्गुरु को धोखा दे सकते हो, तब वह सद्गुरु वास्तव में एक सच्चा सद्गुरु है ही नहीं। उनका मौन नकली था। उनके अंदर तो कौलाहल हो रहा था, उनके अंदर तो निरन्तर चटर-पटर चल ही रही थी। वे बस सोचे ही जा रहे थे, सोचे ही जा रहे थे और एक ऐसा उत्तर खोज रहे थे जिससे बिल्ली की जान बचाई जा सके। वे सभी अंदर बहुत उद्विग्न थे और उनका मन बहुत तीव्र गति से क्रियाशील था। सद्गुरु ने उनकी ओर देखा होगा। उनके मन निष्किय नहीं थे। वे भी निष्किय नहीं थे, वहां उनके अन्दर कोई ध्यान न था और न था मौन। उनका मौन बस उनका एक नकली मुखौटा था। तुम अन्दर से मौन हुए बिना भी मौन बैठ सकते हो और तुम अंदर से मौन होते हुए भी बातचीत भी कर सकते हो, तुम निष्क्रिय बनकर चल भी सकते हो और तुम प्रस्तर मूर्ति की तरह बैठे हुए भी सक्रिय हो सकते हो। यह मन बहुत जटिल चीज है। तुम दौड़ सकते हो, गतिशील होकर चल सकते हो और अपने अंदर गहराई में तुम्हारा केन्द्र फिर लव भी हो सकता है।

मैं तुमसे बातचीत कर रहा हूं और मैं मौन हूं। तुम मुझसे बातचीत नहीं कर रहे हो, लेकिन तुम मौन नहीं हो। तुम्हारे मन में निरन्तर विचार चल रहे हैं। तुम्हारे अन्दर व्यर्थ की बकवास निरन्तर चल रही है। यह मन एक बन्दर की तरह है। यह कभी शांत बैठ ही नहीं सकता। डार्विन ने खोज की कि बन्दर से ही मनुष्य का

विकास हुआ है, लेकिन पूरब के ध्यानी सदा से इस बात के प्रति सजग रहे हैं, कि यदि मनुष्य बन्दर से विकसित नहीं भी हुआ हो, फिर भी निश्चित रूप से उसका मन तो बन्दर के मन से ही विकसित हुआ है। वह ठीक बन्दर जैसा ही है-वैसे ही उछलता, कूदता और किकियाता रहता है, कुछ-न-कुछ काम निरन्तर करता ही रहता है और कभी शांत बैठता ही नहीं।

नानसेन ने अपने शिष्यों से कहा था-'' यदि तुम लोग बन्दरों की तरह व्यवहार नहीं करते तो बिल्ली बच सकती थी। तुम कुछ भी सहायता नहीं कर सकते, क्योंकि यदि वहां मन है तो तुम कर भी क्या सकते हो? यदि तुम उसे निष्किय बनाने की कोशिश करते हो तो वह और अधिक सक्रिय हो जाता है। यदि तुम उसे शांत होने के लिए विवश करते हो तो वह और भी अधिक बातें करता है। यदि तुम उसे दबाते हो तो वह विद्रोह करता है। तुम उसे दबा नहीं सकते, तुम उसे फुसला नहीं सकते। तुम इस बारे में कुछ भी नहीं कर सकते, क्योंकि जिस क्षण तुम कुछ भी करते हो तो करने वाला तुम्हारा मन ही होता है और यही समस्या है।'' वे सभी बिल्ली को बचाना चाहते थे, वे सभी बिल्ली पर अपना अधिकार चाहते थे और बिल्ली वास्तव में बहुत सुंदर थी, लेकिन वह मन जो परिग्राही हो, कैसे शांत हो सकता है?

जो मन किसी को नियंत्रण में लेकर उस पर अधिकार जमाना चाहता है वह कैसे किसी को बचा सकता है? वह केवल उसे मार ही सकता है। स्मरण रहे वह नानसैन नहीं था जिसने बिल्ली को मारा। वे सभी भिक्षु ही थे जिन्होंने उसे मारा। यही इस कहानी की गुप्त कुंजी है। नानसेन ने उन्हें अवसर दिया और कहा- ''तुम इस बिल्ली को बचा सकते हो। कुछ ऐसा कहो, जो अमन से आए जो तुम्हारे अपने अस्तित्व से प्रकट हो। यदि तुम ऐसा नहीं करते हो तो मैं बिल्ली को काट कर दोनों समूहों में उसे वि भाजित कर दूंगा, जिससे दोनों उस पर अपना अधिकार जमा सकें। ''

वह नानसेन नहीं था जिसने बिल्ली को मारा। यद्यपि लगता ऐसा ही है कि उसी ने बिल्ली को मारा, लेकिन वास्तव में वे सभी भिक्षु ही थे जिन्होंने उसे मारा। जब भी तुम किसी जीवित प्राणी को अपने अधिकार या नियंत्रण में लेते हो, तुम उसे पहले ही से मार देते हो। जब भी तुम यह दावा करते हो कि तुम्हारा किसी व्यक्ति पर स्वामित्व और कब्जा है तुमने उसकी हत्या कर दी क्योंकि जीवित को नियंत्रित नहीं किया जा सकता। वह बिल्ली बाएं भाग से दाएं भाग में आती-जाती थी और पूरी तरह जीवन्त थी, बल्कि उन सभी भिक्षुओं से भी कहीं अधिक जीवन्त। उसका कोई घर नहीं था, वह किसी की भी सम्पत्ति न थी। वह ठीक हवा के द्गल झोंके की तरह थी-कभी वह बाएं भाग से होकर गुजरती थी और कभी दाएं भाग से। उस बिल्ली ने कभी यह दावा नहीं किया था वे भिक्षु उसके अधिकार में हैं या उसकी सम्पत्ति हैं। वह कभी भी परिग्रही न थी। सभी पशु अपरिग्रही हैं सभी वृक्ष अपरिग्रही हैं केवल मनुष्य ही परिग्रही है और इस परिग्रह के कारण ही जो कुछ भी जीवन्त है मनुष्य उससे चूक गया है। तुम केवल एक मृत वस्तु को ही अपन अधिकार या नियंत्रण में रख सकते हो। जिस क्षण तुम किसी व्यक्ति को अपने नियंत्रण में लेते हो तुम उसे मारकर मृत बना देते हो। तुम एक स्त्री से प्रेम करते हो और तब उसे अपने अधिकार में लेने की कोशिश करते हो, ऐसा कर तुम उसे मार ही देते हो जैसे पत्नी एक व्यक्ति न होकर एक वस्तु हो, एक पति जैसे व्यक्ति न होकर एक निर्जीव वस्तु हो।

यही सबसे बड़ी पीड़ा है-तुम एक व्यक्ति से प्रेम करते हो, तब उस पर अधिकार जमाना शुरू कर देते हो और ऐसा कर अनजाने ही में तुम उस व्यक्ति को जहर देकर पूरी तरह मार रहे हो। देर-सवेर वह दिन भी आएगा, जब तुम उस व्यक्ति को विष देकर पूरी तरह उसकी हत्या कर दोगे और तब उसे अपने अधिकार में ले लोगे लेकिन तुम एक वस्तु को कैसे प्रेम कर सकते हो। प्रेम घटने के लिए पहली जरूरी बात तो यह है कि वह व्यक्ति जीवन्त हो। अब उसका प्रवाह ही रुक गया है, अब उसमें जीवन गतिशील ही नहीं है और अब उसकी स्वतंत्रता के सारे द्वार बंद हैं। अब वह जैसे एक जमी हुई चीज है। जब नदी जमकर बर्फ बन जाती है, तब उसमें कोई गति नहीं रह जाती। निश्चित रूप से अब यह व्यक्ति दूसरे के निकट नहीं जा सकता। तुम पूरी तरह उसे अपने नियंत्रण में रखते हो, लेकिन तुम एक मृत व्यक्ति से कैसे प्रेम कर सकते हो? प्रेम की यही पीड़ा है। तुम एक

मृत व्यक्ति से प्रेम नहीं कर सकते, फिर भी जब तुम प्रेम करते हो तुम अधिकार जमाना शुरू कर देते हो। सभी तरह की पकड़ और नियंत्रण, मृत्यु ही लाती है। केवल वस्तुओं को अधिकार में रखा जा सकता है।

इन भिक्षुओं ने बिल्ली को पहले ही मार डाला। नानसेन उसे मारने नहीं जा रहा था, जो कुछ पहले ही हो चुका था, वह तो उसे सभी को दिखाना चाह रहा था। यह कहानी झेन भिक्षुओं और झेन सद्गुरुओं के विरुद्ध यह दिखाने के लिए प्रयुक्त की जाती है कि वे कितने हिंसक हैं। एक ईसाई धर्मशास्त्री के सम्बन्ध में जरा विचार करें, जो इस कहानी को पढ़कर कहेगा-'' यह नानसेन किस तरह का धार्मिक व्यक्ति है? उसने बिल्ली को मार डाला, एक बेचारी निरीह बिल्ली को। वे भिक्षु जो उस पर अपना दावा कर रहे थे, वे उससे कहीं अच्छे थे। कम-से-कम वे उसे मार तो नहीं रहे थे। यह किस तरह का सद्गुरु है? ''

इस व्यक्ति के तौर-तरीके कैसे हैं? महावीर के अतिरिक्त यदि जैनियों ने पढ़ा होता इस कहानी को तो वे नानसेन को नर्क में फेंक देते, जिसने एक बिल्ली को जान से मार दिया।

देखने में नानसेन केवल उन्हीं लोगों के लिए हिंसक है, जो उसे समझ नहीं सकते। उन लोगों के लिए जो उसे समझ सकते हैं, वह केवल उस चीज को दिखा रहा है जो पहले ही घट चुकी है। वह बिल्ली तो उसी क्षण मर गई थी, जब उस पर अधिकारों के दावे किए गए थे। नानसेन ने तो उन्हें एक अवसर दिया लेकिन वे उस अवसर का उपयोग नहीं कर सके। वे खामोश रहे, लेकिन यदि उनका मौन वास्तविक होता तो बिल्ली जीवित बच जाती। यह मौन झूठा था, वह मौन केवल ऊपर ही ऊपर था, परिधि पर था, चेहरे पर था लेकिन शरीर के अन्दर पागल मन तेजी से सक्रिय था। वह चक्कर खा रहा था, चरखे की तरह विचारों को बुन रहा था। उन भिक्षुओं ने अवश्य ही कई उत्तरों पर सोचा होगा, लेकिन उन्हें कोई उत्तर मिला ही नहीं। इसलिए नान-सेन को उसे मारना ही पड़ा। उसने बिल्ली के दो टुकड़े कर दिए एक टुकड़ा बाएं भाग के दावेदारों को और दूसरा टुक डा दूसरे भाग के दावेदारों को दे दिया। वे भिक्षु अवश्य ही खुश हुए होंगे-खुश उस अर्थ में कि कम-से-कम बिल्ली का आधा भाग तो उनके कब्जे में आया।

ऐसा ही सब कुछ तुम सभी के साथ भी हो रहा है। तुम जब कभी भी लड़ते हो, जीवन मृत में विभाजित हो जाता है। माता-पिता आपस में पुत्र के लिए लड़ते हैं- वहां बच्चों की खातिर निरन्तर लड़ाई होती ही रहती है। पिता कहता है कि पुत्र पर उसका अधिकार है और उसे उसका अनुसरण करना चाहिए और मां सोचती है कि पुत्र पर उसका अधिकार है और उसे उसका ही अनुसरण करना चाहिए। वे दोनों यह दावा कर बच्चे को मार रहे हैं। देर सवेर वह पुत्र दो भागों में विभाजित हो जाएगा। उसका आधा भाग पिता का अनुसरण करेगा और आधा भाग मां का। उसका पूरा जीवन बरबाद हो जाएगा, क्योंकि अब उसका अखण्ड या पूर्ण हो पाना बहुत कठिन हो जाएगा। उसका आधा हृदय हमेशा मां के अधिकार में रहेगा और आधा भाग पिता के। उसका आधा भाग मां के विरुद्ध होगा और आधा भाग पिता के। अब वह विभाजित जीवन पर उसका पीछा करेगा। वह दो खण्डों में कटकर बंट चुका है।

बिल्ली को दो भागों में काटकर नानसेन तुम्हें यही बता रहा है-किसी व्यक्ति के लिए लड़ी मत और न उस पर आधिपत्य जमाओ, क्योंकि ऐसा कर तुम उसे दो टुकड़ों में बांट दोगे। ऊपर से देखने पर वह एक ही दिखाई देगा, लेकिन गहराई में अपने हृदय में विभाजित होकर वह दो हो जाएगा और अब उसमें निरन्तर संघर्ष होगा।

पहले माता-पिता, पुत्र के लिए झगड़ रहे थे, अब भले ही माता-पिता दोनों मर गए हों, लेकिन वे उस पुत्र के अंदर निरन्तर झगड़ रहे हैं। कभी उसे मां की आवाज सुनाई देती है तो कभी पिता की और पुत्र के लिए यह तय कार पाना एक पहेली बन जाता है कि वह किसका अनुसरण करे ताकि वह कभी अखण्ड नहीं हो पाए। तुम यहां मेरे पास पूर्ण या अखण्ड बनने के लिए ही आए हो और मैं हमेशा कहता हूं-पूर्ण बनना ही धार्मिक होना है। धार्मिक बनने का और कोई दूसरा रास्ता है ही नहीं, बस अखण्ड हो जाओ। तुम्हारे अंदर का विभाजन गिरना जरूरी है। तुम्हें एक इकाई बनना आवश्यक है, लेकिन तुम अंदर-हीं- अंदर संघर्ष कर रहे हो। तुम्हारे अन्दर तुम्हारे पिता लड़ रहे हैं, माता लड़ रही है, भाई लड़ रहे हैं, तुम्हारे शिक्षक और गुरु झगड़ रहे हैं। प्रत्येक

पर तुम अपना अधिकार जमाने के लिए लड् रहे हो। यहां तुम्हारे बहुत से दावेदार हैं। उन्होंने तुम्हें खण्डित कर दिया है। उन्होंने तुम्हें काटकर कई टुकड़ों में बांट दिया है। तुम अनेक हो गए हो। तुम एक इकाई नहीं रह गए हो तुम एक भीड़ बन गए हो। इसी से मानसिक रोग उत्पन्न होते, इसी से मूर्च्छा और पागलपन उत्पन्न होता है। क्या तुमने कभी निरीक्षण किया है कि तुम्हारे अन्दर कितनी आत्माएं और कितने स्वार्थ काम कर रहे हैं, तुम एक नहीं हो, इतना तो निश्चित है।

जब मैं विश्वविद्यालय में पड़ता था तो उन दिनों मैं एक लड़के के साथ रहा करता था। वह कभी सुबह पांच बजे नहीं उठता था, लेकिन हर दिन पांच बजे का अलार्म लगाकर सोता था। इसलिए मैंने उससे पूछा-'' तुम यह अलार्म घड़ी लगाते ही क्यों हो, व्यर्थ का झंझट करने से फायदा क्या, क्योंकि तुम कभी पांच बजे उठते ही नहीं तुम अलार्म बजते ही उसे बंद कर फिर सो जाते हो इसलिए हर सुबह इतनी परेशानी उठाकर इतनी मुसीबत उठाने की जरूरत क्या है? ''

वह हंस पड़ा, लेकिन उसकी हंसी खोखली थी। वह स्वयं यह भली- भांति जानता था कि वह अलार्म बजने पर उठेगा नहीं, लेकिन शाम उसके अंदर मौजूद कोई दूसरी आत्मा उससे कहती थी-'' नहीं! कल सुबह तुझे जल्दी उठना ही है। ''

मैंने कहा-'' ठीक है, कोशिश करते रहो। '' और जब वह अलार्म भरता था तो उस समय उसे यह पक्का विश्वास होता था कि वह सुबह पांच बजे जरूर उठेगा। उसमें उसे जरा भी संदेह होता ही नहीं था लेकिन यह उसके अन्दर का एक खण्ड था जो उससे कहता था-' अब तुझे उठना ही है। तू काफी सो लिया। अब बहुत कम समय बचा है, परीक्षा पास आ रही है। '

सुबह पांच बजे मैं उसके उठने की प्रतीक्षा करता था। जब अलार्म बज रहा था तो उसने मेरी ओर देखा। जब वह मुझे देख रहा था, मैं पूर्ण सजग था और अपने बिस्तरे पर बैठा था। मुझे देखकर वह मुस्कराया, अलार्म बंद किया और करवट बदलकर सो गया।

बाद में जब सुबह आठ बजे वह हमेशा की तरह सोकर उठा, तब मैंने उससे पांच बजे उठने की बाबत पूछा।

उसने उत्तर दिया-'' मैंने सोचा, कुछ मिनट और सो लूं.. और बस कुछ मिनट अधिक सो जाने में हर्ज क्या है? मुझे उस वक्त बहुत नींद आ रही थी और रात भी बहुत ठंडी थी, लेकिन तुम देखना कल मैं जल्दी उठ बैठूंगा। ''

ये उसके दो विभिन्न खण्ड हैं और वह इसके प्रति सजग नहीं था। जब उसके एक खण्ड ने उससे कहा था-' सुबह पांच बजे उठना है। ' और उससे अलग उसके दूसरे खण्ड ने जिसके प्रति वह पूरी तरह भूला हुआ था, उससे कहा था-' अभी और सो लो। रात बहुत ठंडी है। '

तुम भी यही कर रहे हो। तुम एक चीज तय करते हो और अगले ही क्षण तुरन्त यह भुला बैठते हो कि तुमने क्या तय किया था। तुम कहते हो कि अब तुम कभी क्रोध नहीं करोगे और जैसे आने वाला क्षण तुमसे बहुत दूर हो। यदि कोई तुमसे सतर्क यह कहना शुरू करता है कि नहीं, तुम जरूर क्रोध करोगे तो तुम नाराज हो जाओगे। तुम क्रोधित भी हो सकते हो क्योंकि वह तर्क कर रहा है-तुरन्त तुम्हें क्रोध आ सकता है और तुमने कभी भी क्रोध न करने की बाबत कुछ ही क्षण पहले निश्चय किया था। तुम्हारा घर बंटा हुआ है। तुम्हारे घर में बहुत से कमरे हैं, जो एक-दूसरे से जुड़े नहीं हैं। उनके बीच संबंध टूटे हुए हैं और उनके बीच पुल भी नहीं है। तुम्हारे अंदर जैसे कई आत्माएं और कई मन एक साथ रह रहे हों इसलिए जो भी तुम्हें अपने अधिकार में-ले लेता है, तुम्हें काट देता है। तुम पहले ही से खण्ड-खण्ड कर दिए गए हो।

ये भिक्षु उस बिल्ली को बचा न सके, क्योंकि वे खण्डित और विभाजित थे। नानसेन कह रहा था-'' कुछ ऐसा करो, कुछ ऐसा कहो, तो समग्र हो, धार्मिक हो और अविभाजित हो। एक इकाई की तरह काम करो, ताकि यह बिल्ली बचाई जा सके। '' उनमें से कोई भी ऐसा न कर सका और बिल्ली काट दी गई।

यहां एक प्रश्न उठता है-नानसेन कैसे काट सका बिल्ली को? क्या यह ठीक एक नीति कथा या एक प्रतीकात्मक कहानी है अथवा क्या वास्तव में उसने बिल्ली को काट दिया? जहां ऐसे भी लोग हैं जो नानसेन को बचाना चाहते हैं। मैं उनमें से नहीं हूं। उसने वास्तव में बिल्ली को काट दिया। यह कोई नीति कथा नहीं है, यह कोई काल्पनिक वृत्तान्त, प्रतीकात्मक या अलंकारिक बोध कथा भी नहीं है। नहीं, वास्तव में ठीक सब कुछ वैसा ही हुआ, जिस रूप में वह कहा जाता है। उसने बिल्ली को दो टुकड़ों में काट दिया। क्या कोई संत ऐसा कर सकता है? मैं तुमसे कहता हूं कि एक संत ही ऐसा कर सकता है।

यही है वह-जिसे गीता में कृष्ण अर्जुन से कहते हैं-'' कोई चिंता करो ही मत। इन लोगों को, जो तुम्हारे सामने खड़े है, काट डालो, जान से मार दो। केवल एक ही चीज याद रहे, उनके भीतर जो छिपा हुआ है, उसे नष्ट नहीं किया जा सकता। केवल शरीर ही नष्ट हो सकता है, शरीर पहले से ही मरा हुआ है। केवल मृत ही नष्ट हो सकता है। जीवन्त सदा जीवित रहता है, वह शाश्वत है, उसका कुछ भी नहीं बिगड़ सकता। आग उसे जला नहीं सकती, शस्त्र उसे काट नहीं सकते। ' नैन छिदन्ति शस्त्राणि '-कोई शस्त्र उसे काट नहीं सकता, कोई आग उसे जला नहीं सकती। केवल रूप.. लेकिन रूप या आकृति की चिंता मत करो क्योंकि रूप तो झूठा है, अवास्तविक है, वह माया या भ्रम का एक भाग है। ''

यह नानसेन कृष्ण जैसी मनःस्थिति में अवश्य रहा होगा, उसकी कृष्ण जैसी ही चेतना रही होगी। उसने बिल्ली को काट दिया। वह जानता है कि बिल्ली की आत्मा नष्ट नहीं की जा सकती, वह जानता है कि केवल रूप या आकृति बदल सकती है। एक चीज और जिसे समझना बहुत कठिन है, क्योंकि नैतिक नियम मानने वाले नीतिज्ञों ने, चारों ओर बहुत अधिक भ्रम और धुआ उत्पन्न कर दिया है। जब नानसेन द्वारा एक बिल्ली को काटा जाता है, वह बिल्ली के लिए एक वरदान और आशीर्वाद जैसा है। यह बिल्ली दुर्लभ या अनूठी जरूर होनी चाहिए और अब यह बिल्ली फिर से बिल्ली के रूप में जन्म न लेगी, उसका जन्म अब एक मनुष्य के रूप में होगा। नानसेन जैसे सद्गुरु के द्वारा काटा जाना एक दुर्लभ अवसर है और बिल्ली इसी क्षण की प्रतीक्षा करते हुए ही मठ में चारों ओर इसीलिए घूमा करती थी।

नानसेन ने उसकी आकृति बदल दी। अब उस बिल्ली का किसी उच्च योनि में जन्म होगा, क्योंकि नानसेन ने उसे काटा है। उन क्षणों में उन भिक्षुओं की अपेक्षा बिल्ली कहीं अधिक शांत थी, उन भिक्षुओं की अपेक्षा बिल्ली कहीं अधिक आनंदित थी। नानसेन द्वारा उसका काटा जाना कोई हिंसक कृत्य न था। वह एक प्रेम से भरा कृत्य था। नानसेन ने उस बिल्ली को उसकी बिल्ली की आकृति और रूप से मुक्त कर दिया। अब वह एक उच्च योनि में जन्म लेगी, लेकिन इसे समझना और इसका अनुसरण करना कठिन है। मैं तुमसे यह कहने नहीं जा रहा हूं कि जाओ और दूसरे लोगों को उनके रूप और आकृति से इसलिए मुक्त करो जिससे वे उच्च योनियों में जन्म ले सकें। किसी को काटो मत-तुम जैसे चाहो, आनन्द मनाओ, लेकिन नानसेन के लिए वह कृत्य एक गहरी प्रार्थना थी। वह अवश्य ही इस बिल्ली का निरीक्षण करता रहा होगा। यह बिल्ली कोई साधारण बिल्ली न थी। यहां ऐसे भी पशु हैं, जो अपनी आकृति से मुक्त होने के लिए चिल्लाते और पुकारते हैं।

माथेरान शिविर में कुछ ऐसा ही हुआ। मैं शिविर स्थल से काफी दूर ठहरा हुआ था। पहली ही शाम जब मैं बंगले से बाहर जा रहा था, एक कुत्ते ने मेरा पीछा किया- वह वास्तव में एक- दुर्लभ कुत्ता था।

वह कुत्ता तब से निरन्तर मेरे साथ ही बना रहा। मैं शिविर संचालन के लिए तीन बार जाता था और तीन बार वहां से लौटता था। वह आधे घंटे की यात्रा थी। तीनों बार कुत्ता शिविर स्थल तक मेरी गाड़ी का अनुसरण करता था और तीनों बार वह मेरे साथ ही अनुसरण करता हुआ लौटता था। जब मैं सोता था तो वह बंगले के बाहर बरामदे में ही बैठा रहता था। पूरे शिविर- भर उसकी यही दिनचर्या थी। जब भी वह कोई चीज खाने के लिए भी कहीं जाता था तो कभी उसने मुझे छोड़ा नहीं। वह मेरे आस-पास ही बना रहता था। वह मेरे साथ रोज शिविर स्थल तक जाता था और जब दूसरे लोग ध्यान करते थे तो वह भी शांत बैठा रहता था। जो

लोग उस शिविर में भाग ले रहे थे, वह उनसे भी अधिक गहराई से शांत बैठा रहता था और तब मेरे साथ ही वापस लौट आता था।

आखिरी दिन जब मैं माथेरान छोड्कर रेलगाड़ी में बैठा, उसने रेल का भी पीछा किया। वह ट्रेन के साथ-साथ ही दौड़ रहा था। यहां ऐसे कई लोग हैं, जो इस घटना के प्रत्यक्ष साक्षी हैं। चूंकि वह ट्रेन के साथ-साथ ही दौड़ रहा था, गार्ड ने करुणा कर उसे ट्रेन में चढ़ा लिया। नरेल स्टेशन तक वह साथ आया। वह छोटी लाइन की बहुत धीमी गति से चलने वाली खिलौना रेलगाड़ी थी, जो माथेरान से नरेल तक जाती थी और सात मील का सफर दो घंटों में पूरा करती थी इसलिए कुत्ता उस रेलगाड़ी का पीछा कर सका, लेकिन नरेल से दूसरी तेज रेलगाड़ी थी। जब मैंने नरेल से मुम्बई जाने वाली दूसरी गाड़ी पकड़ी तो प्लेटफार्म पर खड़े बहुत से लोग रुदन और विलाप कर रहे थे और पास ही खड़ा कुत्ता भी आंसू बहा रहा था।

मैं जानता हूं कि वह बिल्ली निश्चित रूप से असाधारण रही होगी, अन्यथा नानसेन उसे काटने के लिए इतनी मुसीबत मोल लेता ही नहीं। उसने अपने शिष्यों के लिए एक अवसर अथवा स्थिति उत्पन्न की और उस अवसर का प्रयोग उसने बिल्ली के लिए भी किया। उसने एक ही पत्थर से दो निशाने साधे। यह सम्भव है। यदि तुम तैयार हो तो तुम्हारा रूप और आकृति नष्ट होकर उच्च योनि प्राप्त कर लेती है, क्योंकि तुम्हारी उच्च योनि की आकृति उस क्षण की चित्त दशा पर निर्भर करती है जब तुमने प्राण छोड़े थे। वह बिल्ली नानसेन के हाथों द्वारा मरी-जो एक बहुत दुर्लभ अवसर था। इतना शांत और मौन नानसेन जैसा सद्गुरु-बिल्ली ने निश्चित रूप से उस मौन और आनन्द को पिया होगा, वह परम आनन्द से भर गई होगी और तब उसे काट दिया गया। वह बिल्ली जरा भी भयभीत नहीं थी, उसने इस खेल का आनन्द अवश्य लिया होगा। वह जैसे एक शल्यक्रिया का कृत्य था। बिल्ली का अवश्य ही जो नया जन्म हुआ होगा, उसमें उसकी आत्मा अधिक उच्च स्थिति में होगी, लेकिन यह अंदर की छिपी कहानी है, जिसे साधारण नैतिकता से नहीं समझा जा सकता और नानसेन जैसे व्यक्ति साधारण नैतिक नियमों का पालन न कर अंदर के नियमों और कानून का अनुसरण करते हैं। साधारण नैतिकता सामान्य मनुष्यों के लिए ही होती है।

और तब शाम के समय एक दूसरा भिक्षु बाहर से आया, जो मठ में ही रहने वाला दूसरा शिष्य था। वह घटना के समय मठ में नहीं था। नानसेन ने उसे पूरी कहानी सुनाते हुए कहा-'' यही सब कुछ हुआ और मुझे बिल्ली को काटना ही पड़ा। मुझे दो टुकड़ों में उसे विभाजित करना पड़ा क्योंकि दूसरा और कोई रास्ता ही नहीं था.. .यह बेवकूफ लोग उस बिल्ली को बचा नहीं सके। वे उस एक शब्द का भी उच्चारण न कर सके, वे झेन के समान किसी विधि का प्रयोग करते हुए कोई कृत्य भी न कर सके। यह लोग अपने को झेन होना सिद्ध न कर सके। झेन के अलावा कुछ और उस बिल्ली को बचा ही न सकता था। ''

उस शिष्य ने पूरी कहानी सुनी। अपने जूते अपने सिर के ऊपर रखे और वहां से चल दिया। नानसेन ने उसे बुलाकर उससे कहा-'' यदि तुम यहां रहे होते तो बिल्ली बच गई होती। ''

यह व्यक्ति ही ठीक था। उसने किया क्या? यह किस तरह का आचरण था? उसने अपने जूते उतारे, उन्हें अपने सिर पर रखा और वहां से चल दिया। उसने बिना कुछ कहे हुए बहुत कुछ कह दिया। पहली चीज तो यह कि उसने पूरी कहानी सुनकर कोई टिप्पणी नहीं की। बन्दर खामोश रहा। उसके मन में कोई भी व्यर्थ के विचार नहीं चल रहे थे। उसने सोचकर कोई उत्तर देने का प्रयास ही नहीं किया, उसने सिर्फ कृत्य किया। वह कृत्य मन से नहीं आया था, वह कृत्य उसके पूरे अस्तित्व से प्रकट हुआ था। उसने किया क्या? उसने अपने जूते अपने सिर पर रख लिए। बिल्कूल ही असंगत कार्य, लेकिन ऐसा करते हुए उसने जैसे कह दिया-मन या सिर जूतों की अपेक्षा अधिक मूल्यवान नहीं है। जूते, जो सबसे तुच्छ चीज हैं, उसने उन्हें अपने सिर पर रख लिया। इस कृत्य के द्वारा उसने जैसे कह दिया-' मन कोई चीज है ही नहीं, बल्कि जूते ही कुछ हैं। मन मूल्यहीन है और सोच-विचार से कुछ सहायता मिलती ही नहीं। मन को वहीं फेंक देना चाहिए जहां जूते रखे जाते हैं। यहां तक कि जूते अधिक कीमती हैं, मन की अपेक्षा वह अधिक सम्मान देने योग्य हैं। ''

अपने कृत्य के द्वारा उसने यही सब कुछ कहा और वहां से चला गया।

नानसेन ने कहा-'' यदि आज सुबह तुम यहां रहे होते तो तुमने बिल्ली को बचा लिया होता।''

यहां एक ऐसा व्यक्ति था जो मन पर विश्वास करता ही न था, जिसका शब्दों द्वारा उत्तर देने में कोई विश्वास न था। यहां एक ऐसा व्यक्ति था, जो सहजता और स्वाभाविकता से कृत्य कर सकता था। जीवन केवल तभी बचाया 'जा सकता है यदि तुम स्वाभाविक रूप से कृत्य कर सको-न केवल बिल्ली के जीवन के लिए तुम अपने जीवन के लिए भी। अपने मन को जूतों की ओर फेंक दो। किसी भी तरह से इससे अधिक उसकी कीमत ही नहीं। जूते तुम्हें इतनी अधिक तकलीफ देते भी नहीं। कभी-कभी वे काटते जरूर हैं, लेकिन कभी-कभी ही और यदि वे ठीक नाप के हैं तो हमेशा ठीक ही रहते हैं।

लेकिन मन तुम्हें अनेकानेक जन्मों से काटता रहा है और वह कभी ठीक नाप का होता ही नहीं, उसका कद और आकार हमेशा गलत ही होता है। मन कभी सही आकार का होता ही नहीं। जूते हो सकते हैं ठीक नाप के, लेकिन मन का आकार हमेशा गलत ही होता है। वह हमेशा चुभता रहता है। मन का आकार गलत है ही। तुम एक अच्छा मन बना ही नहीं सकते। उसकी कोई सम्भावना है ही नहीं। तुम कोई सुन्दर कुरूपता नहीं बना सकते। तुम कोई स्वस्थ बीमारी नहीं बना सकते। ऐसा करना असम्भव है। मन हमेशा ही गलत होता है। वह निरन्तर काटता और चुभता ही रहता है। चाहे तुम सोच-विचार करो अथवा तुम प्रार्थना करो। यदि वहां मन है तो हर चीज गलत ही हो जाती है। मन ही वह भाग है जो हमेशा जीवन में गलत रास्ता निर्मित करता है। यही स्रोत है- भूलों, विकारग्रस्तता और पागलपन का। जीवन केवल तभी बचाया जा सकता है, जब तुम मन को गिरा दो।

इस शिष्य ने किया क्या? मन या खोपड़ी को गिराना तो कठिन है पर उससे आसान है सिर पर जूते रखना, लेकिन यह प्रतीकात्मक है। वह कह रहा है-' मैंने सिर या मन गिरा दिया है। मुझसे बेवकूफी भरे प्रश्न पूछो ही मत। ' और उसने कृत्य किया, यही चीज सही उत्तर था।

ध्यान कोई गहन विचार नहीं, वह एक कृत्य है-एक ऐसा कृत्य जो पूरे अस्तित्व से आए। पश्चिम में विशेष रूप से ईसाइयत ने एक झूठी छाप उत्पन्न की है कि ध्यान एक गहन विचार की भांति ही है, जो वास्तव में है नहीं। ईसाइयत के कारण ही पश्चिम बहुत सी चीजों से चूक गया है और उनमें से एक चीज है ध्यान! जो मनुष्य के अस्तित्व की एक दुर्लभ खिलावट है, लेकिन उन लोगों ने उसे गहन विचार-चिंतन के समतुल्य बना दिया है। गहन-चिंतन भी सोच-विचार ही है, जबकि ध्यान है निर्विचार होना। ध्यान या झेन के समतुल्य अंग्रेजी भाषा में कोई शब्द है ही नहीं, क्योंकि' मेडीटेशन ' का स्वयं का अर्थ है-विचार करना, किसी पर विचार एकाग्र करना। एकाग्र करने के लिए कोई वस्तु वहां होनी चाहिए। स्मरण रहे- ध्यान ही मूल शब्द है। ध्यान, बोधिधर्म के साथ ही यात्रा करता हुआ चीन गया और ध्यान ही चीनी भाषा में ' चान ' बन गया। चीन से ही यात्रा करता हुआ ध्यान जापान गया और जापानी भाषा में वह पहले ' झेन ' और फिर ' झेन ' बन गया, लेकिन मूल जड़ है ' ध्यान चान, झेन, झेन। अंग्रेजी में इसके समतुल्य कोई शब्द है ही नहीं। ' मेडीटेशन ' -शब्द का अर्थ है सोचना, नियमित रूप से सोचना। ' कनटेम्प्रेशन ' का अर्थ भी सोचना ही है। भले ही वह परमात्मा के बारे में गहन विचार या चिंतन हो, जबकि ध्यान या झेन है निर्विचार स्थिति। यह निर्विचार कृत्य है। विचार-विमर्श को समय की जरूरत होती है।

सुबह के समय भिक्षु बैठे हुए सोच रहे थे कि क्या किया जाए। वह सोचे और सोचे चले जा रहे थे और कुछ भी उपाय नहीं खोज पा रहे थे।

विचार को कभी ठीक उत्तर मिलेगा ही नहीं। बिल्ली को काटना ही पड़ा। जीवन मृत्यु बन गई क्योंकि विचार प्रक्रिया जहरीली है, वह मृत्यु की ओर ही ले जाती है, न कि जीवन की ओर। बिल्ली को काटना ही पड़ा। नानसेन कोई सहायता न कर सका-उन भिक्षुओं ने ही बिल्ली को मार डाला।

इस व्यक्ति, इस शिष्य ने जो शाम को लौटा था मठ में, जब इस कहानी को सुना, तो उसने कोई टीका टिप्पणी नहीं की, एक शब्द भी नहीं कहा। उसने अपने जूते, उतारे, उन्हें अपने सिर पर रखा और चला गया। उसने कृत्य किया-उसने अपने कृत्य द्वारा ही कुछ कहा, अपने मन के द्वारा नहीं। उसने शब्दों का प्रयोग न कर स्वयं का ही उपयोग किया। उसने प्रतीक्षा नहीं की, उसने गहन चिंतन नहीं किया, उसने उस उत्तर को खोजने की चेष्टा नहीं की कि कैसे बिल्ली को बचाना चाहिए।

यदि उस शाम तुम वहां हुए होते और तुमने यह कहानी सुनी होती तो तुमने निश्चित रूप से सोचना शुरू कर दिया होता: कैसे? और जब ' कैसे ' आता है तो मन आ जाता है। उस शिष्य ने बिना ' कैसे ' पर विचार किए केवल कुछ किया, कुछ ऐसा कृत्य किया, जो सहज और स्वाभाविक था और था बहुत प्रतीकात्मक-जूतों को अपने सिर पर रखकर उसने जैसे संकेत से कहा-यह सिर मूल्यहीन है।

यह सद्गुरु नानसेन लोगों से पूछा करता था-'' इस संसार में सबसे अधिक निर्मूल्य चीज कौन-सी है? वह शिष्यों से इस वाक्य पर ध्यान करने के लिए कहता था। सोचो, संसार में सबसे अधिक निर्मूल्य चीज क्या है? उसके भी सद्गुरु ने उसे ध्यान करने को यही ' कुआन ' दी थी। उसने ध्यान और बस ध्यान किया और तब एक दिन आकर उसने अपने सद्गुरु से कहा-यह सिर या यह खोपड़ी।

''खोपड़ी ''उसके सद्गुरु ने पूछा-''आखिर क्यों? ''

नानसेन ने कहा-'' सिर को काटकर बाजार में ले जाओ और उसे बेचने की कोशिश करो। कोई भी उसे खरीदेगा नहीं। ''

नानसेन के उस शिष्य ने यही किया। जूतों को अपने सिर पर रखकर उसने कहा-यह सिर निर्मूल्य है। तुम चाहे कितना ही सोच-विचार किए जाओ, इस सिर से प्रश्न पूछते ही जाओ, इसके पास उस प्रश्न का उत्तर है ही नहीं। जूते कैसे दे सकते हैं उत्तर? और वह चल भी दिया तब नानसेन ने उसे बुलाकर कहा-यदि तुम रहे होते वहां तो तुमने बिल्ली को बचा लिया होता। तुम इस सुबह थे कहां? तुम हुए होते तो बिल्ली जीवित उमंग से उछल रही होती, क्योंकि कुछ ऐसे ही निरर्थक कृत्य की जरूरत थी, जो सहज स्वाभाविक हो, तर्कपूर्ण नहीं, कोई अतर्क पूर्ण कृत्य ही आवश्यक था, क्योंकि कारण से अकारण कहीं अधिक गहरा होता है। यही कारण है कि यदि तुम बुद्धि प्रधान हो तो तुम प्रेम में डूब नहीं सकते, क्योंकि प्रेम अतर्क और निरर्थक है। सिर या बुद्धि कहे चले जाती है-'' यह व्यर्थ है। तुम्हें इससे मिलेगा क्या? इसमें कोई लाभ नहीं है। तुम इस कारण मुसीबत में पड़ सकते हो। जरा सोचो इस बारे में। '' सबसे महान पाश्चात्य दर्शनशास्त्र को एक व्यवस्था देने वाले इमेनुएल कांट के बारे में यह कहा जाता है कि एक लड़की ने उससे विवाह करने का प्रस्ताव किया। पहली बात तो यह, एक लड़की के लिए यह गलत है कि वह विवाह का प्रस्ताव करे, हमेशा लड़का ही प्रस्ताव करता है, लेकिन लड़की जरूर प्रतीक्षा और प्रतीक्षा ही करती रही होगी और कांट प्रस्ताव कर ही न सका, यह विचार उसके मन में कभी उठा हो नहीं। वह इतना अधिक दर्शनशास्त्र में उलझा था कि वह प्रेम में हो कैसे सकता था? उसके जीवन -की जडें खोपड़ी या बुद्धि में ही इतनी गहरे उतर गई थीं कि उसने जैसे हृदय के द्वार बंद कर दिए थे। इसलिए यह अनुभव करते हुए कि काफी समय व्यर्थ बरबाद हो गया, लड़की ने कांट के सामने विवाह का प्रस्ताव किया। कांट ने उत्तर दिया-'' मैं इस पर विचार करूंगा। ''

तुम प्रेम के बारे में कैसे सोच सकते हो? या तो वह होता है या नहीं होता। यह कोई हल किए जाने वाला प्रश्न नहीं है। यह तो एक स्थिति है जो प्रतिक्रिया व्यक्त करती है। या तो तुम्हारा हृदय ' हां ' कहता है अथवा ' न ' और बात खत्म हो जाती है। तुम इस पर विचार क्या करोगे? यह कोई व्यापारिक प्रस्ताव नहीं है, लेकिन कांट के लिए वह व्यापार करने जैसा ही प्रस्ताव था। बहुत अधिक बुद्धि प्रधान होने से हर चीज व्यापार जैसी ही हो जाती है। उसने उसके प्रस्ताव पर विचार किया और न केवल विचार किया, उसने लाइब्रेरी जाकर प्रेम और

विवाह के बारे में लिखी गई सभी पुस्तकों का अध्ययन किया, तब उसने अपनी नोटबुक में जो कुछ विवाह के पक्ष में था और जो कुछ उसके विपक्ष में था, सभी कुछ नोट किया। फिर उसने सभी पहलुओं पर एक-एक कर विचार किया, उसके पक्ष और विपक्ष में, आगे-पीछे की सभी बातों पर गौर करते हुए उसने विवाह के पक्ष में अपना निर्णय दिया, क्योंकि विवाह के विरोध की अपेक्षा उसके पक्ष में अधिक तर्क थे। इसलिए उसका निर्णय तर्कपूर्ण था।

तब उसने उस लड़की के घर जाकर उसका दरवाजा खटखटाया और उसके पिता ने कहा-'' उसकी तो शादी काफी पहले ही हो चुकी है और अब वह तीन बच्चों की मां है। काफी समय गुजर गया और तुम थोड़ी देर से आए। ''

पर मन को समय की जरूरत होती है। मन हमेशा ही देर लगाता है, क्योंकि समय लगेगा और वह स्थिति ही जाती रहेगी जब तुम दरवाजा खटखटाते हो तब जो लड़की सामने आती है, वह पहले ही से तीन बच्चों की मां होती है। और ऐसा ही हर क्षण घट रहा है स्मरण रहे, यदि कोई स्थिति वहां है, तो तुरन्त कुछ करो, सोचो मत, क्योंकि यदि तुम सोचते हो तो वह परिस्थिति तुम्हारी प्रतीक्षा नहीं करेगी। वह लड़की किसी और के पास चली जाएगी और जब तुम प्रत्युत्तर देने को तैयार होते हो, तब वहां उत्तर पाने को कुछ भी नहीं रहता। कांट तैयार था, लेकिन उसके मन ने समय लिया और परिस्थिति बदल गई।

जीवन एक प्रवाह है उसमें बातचीत की जैसे बाढ़ आई हुई है। वह रुका हुआ स्थिर नहीं है, अन्यथा मन ने उत्तर पा लिया होता। यदि लड़की वैसी ही बनी रहती.. .लेकिन उसकी उस बढ़ती जा रही थी, वह जीवन से चूके जा रही थी। वह प्रतीक्षा न कर सकी, उसे आगे बढ़ जाना पड़ा, निर्णय लेना ही पड़ा।

जीवन स्थिर नहीं है। यदि जीवन स्थिर ही होता, तब ध्यान करने की कोई आवश्यकता होती ही नहीं। मन से ही हो जाता सब। तब तुम सोच सकते थे और कई जन्मों के बाद भी तुम जब भी दरवाजा खटखटाते, लड़की तुम्हें प्रतीक्षा करती हुई मिलती, लेकिन जीवन एक बाढ़ग्रस्त नदी की भांति तेजी से गतिशील है। प्रति क्षण सब कुछ बदले जा रहा है और नया होता जा रहा है। यदि तुम एक क्षण से भी चूक गए तो हमेशा के लिए चूक गए।

यह शिष्य एक क्षण के लिए भी नहीं चूका। उसने कहानी सुनी, अपने जूते उतारे, उन्हें अपने सिर पर रखा और आगे बढ़ गया। यदि उसने एक क्षण भी सोचने में लगाया होता तो नानसेन ने उसे डंडे से पीटा होता, क्योंकि वह बिल्ली अब वहां थी ही नहीं, नानसेन ने इस शिष्य को भी काट दिया होता, लेकिन वह कृत्य में उतर गया। बिना मन के स्वत : उपजा कृत्य सभी सम्भव सुंदर चीजों में से एक है, लेकिन तुम डरे हुए हो क्योंकि तुम सोचते हो कि यदि तुमने बिना मन की सहायता के कोई भी कार्य किया तो वह गलत भी हो सकता है। यह भय वहां है इसीलिए मन उसका शोषण करता है वह कहता है-पहले विचार करो और तभी कुछ करो। लेकिन तुम जीवन की रेलगाड़ी से चूके जा रहे हो। इस भय को छोड़ो, अन्यथा तुम कभी ध्यानी न हो सकोगे। कृत्य करो। प्रारम्भ में तुम करते हुए बहुत कांपोगे क्योंकि अभी तक तुम हमेशा सोच विचार कर ही सब कुछ करते रहे हो।

यह ठीक उस आदमी की तरह है, जो कई वर्षों तक जेल की अंधेरी कोठरी में रहता रहा हो। उसकी आखें अंधेरे में रहने की अभ्यस्त हो जाती हैं। यदि उसे कोठरी के बाहर लाओ तो वह तुरन्त अपनी आखें खोलने में समर्थ नहीं हो पएगा। उसके लिए सूर्य का प्रकाश सहन कर पाना बहुत कठिन होगा। उसका पूरा शरीर कांपने लगेगा और कहेगा-'' मुझे वापस मेरी कोठरी में ले चलो। ''

ऐसा ही तुम्हारे साथ और प्रत्येक के साथ हुआ है। हम सभी लोग जन्म-जन्म से मन की ही. अंधेरी कोठरी में रहे हैं .और हम उसके अंधेरे, उसकी बदसूरती और उसकी व्यर्थता के अभ्यस्त हो गए हैं। जब तुम बिना मन के कुछ भी करते हो तुम्हारा पूरा अस्तित्व कांपने लगता है। मन कहता है-' तुम एक खतरनाक मार्ग पर चल रहे

हो। सावधान हो जाओ। पहले विचार करो और तब कोई काम करो। ' लेकिन यदि तुम पहले सोचो ने और तब उसके बाद कुछ करोगे, तो करना हमेशा ही मृत होगा, बासी जैसा होगा। जो भी कृत्य विचार से जमेगा, वह सच्चा और प्रामाणिक नहीं होगा। तब तुम न तो प्रेम कर सकते हो और न ध्यान, तब तुम. न तो जी सकते हो और न मर सकते हो। तुम एक छाया पुरुष या प्रेम की भांति एक प्रक्षेपित व्यक्तित्व की तरह जीते हो। प्रेम तुम्हारे हृदय के द्वार पर दस्तक देता है और तुम कहते हो-प्रतीक्षा करो, मैं इस बारे में सोचूंगा। जीवन तुम्हारे द्वारों को खटखटाता है और तुम कहते हो-प्रतीक्षा करो, मैं इस बारे में विचार करूंगा।

यह शिष्य गहरे ध्यान में जरूर उतरा होगा। उसने कुछ किया, वह सहजता से कृत्य में उतर गया। वह ही बचा सकता था बिल्ली को। इसका अर्थ है कि उसने उसे पहले ही बचा लिया था-उसने पहले ही वह सब कुछ बचा लिया था, जो जीवन्त था। कहानी के बारे में सोचो ही मत, अन्यथा मुझे बिल्ली को फिर से काटना होगा। तुम उसे बचा सकते हो, अन्यथा बिल्ली को फिर से काटना पड़ेगा और तुम ही उसके जिम्मेदार होगे। इसलिए सहज स्वाभाविक बनो और जो भी कृत्य होता हो, उसे होने दो। लेकिन यह कहानी तुम्हारी कोई सहायता नही करेगी। अपने जूते उतार कर उन्हें अपने सिर पर रखने की कोशिश मत करो। उससे कुछ भी मिलने का नहीं। इससे उस शिष्य को तो मदद मिली लेकिन तुम्हें न मिलेगी। यदि तुम अपने जूते उतार कर अपने सिर पर रखते हुए आगे बढ़ गए तो बिल्ली को फिर भी काटना पड़ेगा, क्योंकि यह कृत्य नकली होगा, मन से ही उत्पन्न होगा। तुम यह कहानी जानते हो। मन तुम्हें सच्चाई नहीं दे सकता। तुम जो कुछ भी करो, पर कभी भी अनुकरण मत करो।

मैंने सुना है कि चीन के नगर में एक बहुत बड़ा रेस्तरां था। बहुत समृद्ध, बहुत सुंदर और शहर का सबसे महंगा रेस्तरां और उसी रेस्तरां के निकट एक गरीब चीनी रहता था। वह रेस्तरां में तो नहीं जा सकता था क्योंकि वह बहुत महंगा था, लेकिन वह उसके भोजन की गंध, मधुर मीठी महक-को प्राय: सशब्द और नासा पुटों से अंदर खींचा करता था। जब वह दोपहर या रात भोजन करने बैठता था तो अपनी कुर्सी को अपने घर के बाहर उस रेस्तरां के अधिक-से-अधिक निकट रखकर बैठता था, जहां से वह वहां के भोजन की मीठी मधुर और मादक गंध को अपने अंदर अपने नासापुटों से खींच सके। वह उस रेस्तरां से बाहर आती भोजन की गंध का पूरा आनन्द लेता था। उसकी एक छोटी-सी लाउन्डरी थी।

लेकिन एक दिन वह आश्चर्यचकित रह गया। उसके पास उस रेस्तरां का मालिक आया और उसके पास उसे देने को भोजन की गंध का बिल था। वह गरीब आदमी घर के अंदर भागकर गया और अपनी एक छोटी-सी संदूकची के साथ लौटा। उस संदूकची में रखे सिक्कों को उस रेस्तरां मालिक के कानों के निकट वह खनखनाता और बजाता हुआ बोला-" मैं आपको आपके रेस्तरां के भोजन की गंध का पैसा, अपने सिक्कों की खनखनाने की आवाज से चुका रहा हूं। "

मन तो बस गंध और ध्वनि- भर है। इसमें असली कुछ भी नहीं है। तुम जो कुछ भी करते हो, मन केवल उसकी गंध और ध्वनि- भर है और उसमें प्रामाणिक कुछ भी नहीं। वही पूरी कृत्रिमता और झूठ का स्रोत है।

इसलिए तुमने यह कहानी तो सुन ली-लेकिन अब इसका अनुकरण करने की कोशिश मत करना। अब तुम इसे आसानी से कर सकते हो। अब रहस्य तुमने जान लिया। तुम अपने जूते अपने सिर पर रखकर चलते हुए यहां से जा सकते हो, लेकिन बिल्ली को फिर भी काटना पड़ेगा। यह कृत्य उसे बचा न सकेगा और न उससे कुछ भी मदद मिलेगी। कृत्य को सहज स्वाभाविक होना चाहिए। मन को एक ओर रखकर ही कुछ करना होगा। ऐसा करने पर ही तुम जान पाओगे कि बिल्ली कभी काटी ही नहीं गई क्योंकि बिल्ली कभी मर ही नहीं सकती। मन को एक ओर रखकर ही तुम अपनी शाश्वतता को जान पाओगे और उसी क्षण तुम बिल्ली के भी शाश्वत होने का रहस्य जान पाओगे। मन मृत्युधर्मा है, तुम नहीं, तुम अमर हो। मन की ही मृत्यु होती है। उसी की प्रतीक्षा करो। तुम नहीं मरते। तुम तो शाश्वत हो। मन को एक ओर अलग रखकर तुम हंसोगे और कहोगे यह नानसेन ने एक चालाकी भरा खेल खेला, बिल्ली को मारा ही नहीं जा सकता था। यही है वह जिसे कृष्ण अर्जुन से कहे जाते हैं-तुम फिक्र करो ही मत। इन सभी सगे-संबंधियों को काट फेंको, क्योंकि कोई भी मारा ही नहीं जा सकता। गीता

बहुत खतरनाक है। पृथ्वी पर कहीं भी ऐसी खतरनाक दूसरी धार्मिक पुस्तक है ही नहीं, इसलिए कोई भी उसका अनुसरण नहीं करता। लोग उसे रटते हैं, लेकिन कोई भी उसका अनुसरण नहीं करता। वह बहुत खतरनाक है, फिर भी जो लोग उसे बहुत प्रेम करते हैं, उसका बहुत आदर करते हैं, कभी यह सुनते ही नहीं कि वह क्या कह रही है। महात्मा गांधी जैसा व्यक्ति भी जो गीता को अपनी मां कहता था, उसे कभी सुनता नहीं। महात्मा गांधी उसे सुन भी कैसे सकते हैं? वह तो अहिंसा में विश्वास रखते हैं और कृष्ण कहते हैं-" इन लोगों को काटकर फेंक दो। किसी चीज का अस्तित्व रहता ही नहीं। यह सभी कुछ सपने जैसा है और मैं तुमसे कहता हूं कि कोई भी मरता ही नहीं, इसलिए इस बारे में फिक्र करो ही मत। "

इस पर गांधीजी कैसे विश्वास कर सकते हैं? इसलिए उन्होंने एक चाल खेली- मन इसी तरह से चाल बाजियां दिखाता है। उन्होंने कहा-" गीता तो एक नीति-कथा है, यह तो अलंकारिक है, उसे अक्षरश: मत लो। लड़ाई कोई असली लड़ाई थोड़े ही है। कौरव और पाण्डव ये योद्धों के दो वर्ग ठीक एक कहानी है। कौरव बुराई का और पाण्डव अच्छाई का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। यह युद्ध अच्छाई और बुराई के बीच, परमात्मा और शैतान के बीच हो रहा है, यह कोई असली लड़ाई थोड़े ही है। " लेकिन यह गांधीजी के मन की ही चालबाजी भरी व्याख्या है।

वहां नानसेन की इस कहानी के बौद्ध व्याख्याकार भी हैं। वे कहते हैं-यह तो ठीक एक नीति कथा है। वहां कोई असली बिल्ली थी ही नहीं और उसे कभी काटा ही नहीं गया, लेकिन मैं तुमसे कहता हूं कि ऐसा ही हुआ। बिल्ली भी उतनी असली थी जितना वास्तविक नानसेन था, और बिल्ली केदो टुकड़े भी किए गए। ऐसा नानसेन ही कर सकता था। नानसेन कृष्ण जैसा ही था, वह जानता था-यहां कुछ भी नष्ट नहीं होता।

अंग्रेजी में यह शब्द desteruction (डेस्ट्क्यान-बरबादी) बहुत सुंदर और अर्थपूर्ण है। इस शब्द desteruction का अर्थ होता है- de-desteruction-कुछ भी नष्ट होता ही नहीं। केवल ढांचा या आकृति बदलती है और नया रूप प्रकट होता है। पुराना शरीर या ढांचा मरता है और नया शरीर या आकृति का जन्म होता है। डेस्टूक्यान का अर्थ (de-desteruction) पुनर्निर्माण होना चाहिए। केवल रूप बदलता है। जो बिल्ली यहां बैठी हुई है, यह सम्भव है कि कहीं और जन्म ले रही हो। जब तुम घर लौटो और शीशे में अपना चेहरा देखो तो तुम बिल्ली भी हो सकते हो और तुम्हें यहां फिर लौटकर आना है। कुछ करो, अन्यथा मैं तुम्हें फिर काट दूंगा। स्मरण रहे- अब कोई भी तुम्हें बचा नहीं सकता। उस समय तो भिक्षु तुम्हें बचा भी सकते थे। इस समय तुम स्वयं एक भिक्षु हो, इसलिए तुम्हारे सिवा तुम्हें कोई और नहीं बचा सकता।

स्व:स्फूर्त तुरन्त अंदर स्वाभाविकता से उत्पन्न होने वाला कृत्य ही तुम्हारा जीवन बचा सकता है। केवल वही तुम्हें बचा सकता है, उसके अतिरिक्त कोई बचाने वाला है ही नहीं वहां।

क्या अन्य कोई चीज और?

करे ओशो! टैन कमांडमैट्र्स दस पवित्र आदेशों के स्थान पर

जिनके साथ मैं बड़ा हुआ था, अब मैंने स्वयं के लिए नए नियमों को

निश्चित किया है, सजग बनना, धैर्य रखना, सहज स्वाभाविक होना

और स्वयं को स्वीकार करना।

सभी प्रश्न मन के ही प्रश्न हैं। अमन से कोई प्रश्न आता ही नहीं और सभी उत्तर अमन के ही उत्तर हैं। इसलिए प्रश्नों और उत्तरों का कभी मिलन नहीं होता। तुम एक प्रश्न पूछते हो और मैं तुम्हें उत्तर देता हूं। वे कभी मिलते नहीं, वे मिल भी नहीं सकते, क्योंकि तुम्हारे प्रश्न मन की पटरी पर दौड़ते हैं और मेरे उत्तर अमन की पटरी पर। वे दोनों एक दूसरे के समानान्तर दौड़ सकते हैं, लेकिन वे कभी मिलते नहीं। या तो मुझे अपना अमन छोड़ देना चाहिए तब वहां वे मिल सकते हैं अथवा तुम्हें अपना मन गिरा देना चाहिए तब भी मिलना हो सकता है। स्मरण रहे, मैं अपने अमन को गिराने नहीं जा रहा हूं उसे गिराया ही नहीं जा सकता, क्योंकि तुम

कैसे उस चीज को गिरा सकते हो, जो कोई वस्तु है ही नहीं। तुम एक वस्तु को तो गिरा सकते हो, लेकिन जो वस्तु है ही नहीं, जो ' कुछ नहीं ' है, उसे तुम कैसे गिरा सकते हो? इसलिए तुम्हें ही अपना मन गिराना होगा। तभी उत्तर सुने और समझे जा सकेंगे। वे तभी तुम्हारे अंदर उतरेंगे।

और मन है नए प्रश्नों, नई उलझनों और नई पहेलियों का गहरा स्रोत। इसीलिए तुम दस पवित्र आदेशों को बदल सकते हो-तुम दस नए नियम बना सकते हो। उससे काम चलने का नहीं, क्योंकि यदि वे मन के द्वारा ही निर्मित किए गए हैं, तो कुछ भी नहीं बदलने का। अब वे दस दैवी आदेश बहुत अधिक पुराने हो गए हैं। समय से बाहर हो चुके हैं। वे अतीत की भाषा में कहे गए थे। उस समय वह भाषा संगत थी, लेकिन अब वे संगत प्रतीत नहीं होते। तुम उन्हें बदल सकते हो। तुम नए नियम बना सकते हो, लेकिन ये नए नियम, यदि इन्हें मन के ही साथ रखा गया तो किसी काम के नहीं होंगे। तुम्हारा मन विचार कर सकता है, उन्हें अपने साथ रख सकता है और वे सुंदर भी लग सकते हैं, लेकिन वे नकली ही होंगे। तुम ' तथाता ' और ' सर्व स्वीकार ' का नियम बना सकते हो, लेकिन यदि वे मन के द्वारा ही रखे गए तो वे अर्थहीन होंगे। क्यों? क्योंकि मन अपने को पूर्ण तथाता में बने रहने की कभी अनुमति दे ही नहीं सकता। वह बहाना बना सकता है, लेकिन वह वास्तव में अपने को तथाता में जाने की अनुमति नहीं देगा। मन स्वीकार कर ही नहीं सकता क्योंकि अस्वीकार करने में ही मन जीवित रहता है, इसीलिए मन हमेशा ' हां ' कहने के स्थान पर ' न ' कहना पसन्द करता है।

जब भी तुम ' न ' कहते हो, तुम्हें अहंकार का अनुभव होता है और जब भी तुम ' हां ' कहते हो, तुम्हें अहंकार का अनुभव नहीं होता। यही कारण है कि लोग हां कहने के स्थान पर ' न ' कहे जाते हैं। वे हां केवल तभी कहते हैं जब ऐसा कहना पूरी तरह आवश्यक हो जाता है, अन्यथा वे न ही कहते हैं।

जब भी किसी चीज के बारे में तुमसे पूछा जाता है तो तुम्हारे मन में जो पहली चीज उठती है वह ' न ' ही है-क्योंकि जब तुम अस्वीकार करते हो, ' तुम ' होते हो, और जब तुम स्वीकार करते हो तो तुम्हारा ' तुम ' वहां नहीं होता। हां कहने से अमन उत्पन्न होगा इसलिए जो एक आस्तिक है वह ' हां ' कहने वाला है, और जो नास्तिक है, वह है-न कहने वाला है-वह ' न ' कहता है। जब तुम कहते हो कि वहां कोई परमात्मा नहीं है, तब तुम्हारे अहंकार को बहुत अधिक ऊर्जा का अनुभव होता है, तब तुम्हारा ' तुम ' पुष्ट होता है।

नीत्शे ने कहा है, " यदि परमात्मा है तो मैं नहीं बना रहना चाहता और यदि ' मैं ' हूं है तो मैं परमात्मा को बने रहने की अनुमति नहीं दे सकता, क्योंकि दोनों साथ-साथ नहीं रह सकते। " और वह ठीक कहता है। तुम और परमात्मा दोनों एक साथ कैसे अस्तित्व में हो सकते हो? यदि तुम हो वहां तो तुम ही परमात्मा हो। परमात्मा वहां हो ही नहीं सकता। यदि ' वह ' है तो तुम कैसे अस्तित्व में बने रह सकते हो। अंतिम नकार मन से ही आती है-" कोई परमात्मा है ही नहीं। " मन उसे अस्वीकार करता है, वह स्वीकार कर ही नहीं सकता।

इसलिए तुम उसके बारे में विचार कर सकते हो, तुम उसे बदल सकते हो, तुम दस पुराने पवित्र नियमों को बदलकर दस नए नियम बना सकते हो, लेकिन यदि वे मन ही से जन्मे हैं तो वे व्यर्थ हैं। यदि वे मन से नहीं उपजे हैं तो उनकी जरूरत क्या है? यदि अमन घट जाता है और तुम उसे महसूस करते हो, फिर नियमों की जरूरत क्या है? नियम तो मन के लिए होते हैं। वे मन से ही आते हैं और मन के ही लिए होते हैं। मन के लिए ही नियम जरूरी हैं क्योंकि मन बिना नियमों के रह ही नहीं सकता। यह सबसे अधिक आधार भूत चीजों में से एक है। नियमों का अस्तित्व झूठ या नकली के लिए ही होता है, वास्तविक सत्य के लिए नहीं। वास्तविक या असली चीज तो बिना नियमों के ही अस्तित्व में है, लेकिन झूठी या नकली चीज तो उनके बिना रह ही नहीं सकती, उसे कोई अवलम्बन चाहिए सहायता चाहिए नियमों का समर्थन चाहिए।

तुम ताश का खेल खेलते हो। क्या तुम बिना नियमों के ताश खेल सकते हो? उसकी कोई सम्भावना हो ही नहीं सकती। यदि तुम कहो-मैं अपने नियमों का अनुसरण करूंगा और तुम अपने नियमों का अनुसरण करो

और आओ हम लोग मिलकर ताश खेलें तो वहां खेल होगा ही नहीं। हमको नियमों का अनुसरण करना ही होगा और हम दोनों यह भली- भांति जानते हैं कि नियम तो बस नियम हैं, उनकी वास्तविकता कुछ भी नहीं। हम लोग उन पर सहमत हो गए हैं और इसीलिए वे अस्तित्व में हैं। कोई भी खेल आगे जारी रह ही नहीं सकता, यदि नियमों का अनुसरण न किया जाए लेकिन बिना नियमों के जीवन सहज रूप से चलता रहेगा। यह वृक्ष किन नियमों का पालन कर रहे हैं? सूरज किस नियम का अनुसरण करता है? आकाश किन नियमों को मानता है? मनुष्य का मन ऐसा है कि वह सोचता है कि वे सभी नियमों का अनुसरण करते हुए ही, नियमानुसार परिभ्रमण कर रहे हैं। सूरज घूम रहा है, वह एक नियम का अनुसरण कर रहा है, इसलिए कोई नियमों का नियंता या शासक होना चाहिए-वह मान लो परमात्मा है जो हर चीज का नियंत्रण कर रहा है। परमात्मा जैसे सर्वोच्च प्रबन्धक है वह हर एक के पीछे लगा जैसे जासूसी करता रहता है कि कौन उसके नियमों का अनुसरण कर रहा है और कौन अनुसरण नहीं कर रहा है।

यह सब कुछ मन की ही सृष्टि और कल्पना है। जीवन बिना नियमों के ही अस्तित्व में है, जबकि बिना नियमों के खेलों को नहीं खेला जा सकता। इसलिए सच्चा धर्म हमेशा बिना नियमों के होता है, केवल नकली धर्म को ही नियमों की जरूरत होती है क्योंकि नकली धर्म एक खेल है।

मैंने सुना है कि एक युवा -स्त्री अपने छोटे पुत्र के साथ एक नाई की दुकान पर गई। उसका लड़का सिपाही के कपड़े पहने सिपाही जैसा ही खतरनाक लग रहा था और उसके हाथ में छ: गोलियों को एक साथ चलाने वाली एक खिलौना पिस्तौल भी थी। वह लड़का तुरन्त उछल कर कुर्सी पर चढ़ गया और उसने आवाज निकाली- ' बांग-बांग। ' और उस स्त्री ने नाई से कहा-'' मै आधा घंटे के लिए अपनै लड़के को तुम्हारे पास छोड़े जा रही हूं जिससे मैं कुछ शॉपिंग या खरीददारी कर लूं। ''

वह नाई बहुत बेचैन होकर बोला-'' यदि आपके यह साहबजादे ज्यादा धमा- चौकड़ी मचाएं तो मुझे क्या करना होगा? '.... और वे हजरत कुर्सी पर सिपाही की तरह छ: गोलियां दागने वाले पिस्तौल को लिए मुस्तैद खड़े खतरनाक दिखाई दे रहे थे।

उस युवा स्त्री ने कहा-'' यदि वह अधिक शोर करे तो तुम्हें बस मुर्दा बनकर थोड़ी देर के लिए जमीन पर लेट जाना है। यदि वह कहता है-बांग, बांग, तुम मुर्दा बनकर गिर जाओ। इस नियम का अनुसरण करना-तब वह शांत रहेगा और शोर नहीं करेगा। इसलिए तुम्हें बस चार-छ: बार कुछ देर के लिए मुर्दा बन गिर जाना होगा और तब वह खुश हो जाएगा और फिर कोई मुसीबत नहीं होगी।''

सभी दैवी या पवित्र कहे जाने वाले नियम भी ' बांग बांग ' की तरह हैं। बस मुर्दा बनकर गिर जाओ। वास्तविक जीवन के लिए किन्हीं नियमों की कोई जरूरत नहीं। तुम बिना नियमों के उसके साथ बहो, तुम बिना नियमों के उसके साथ बने रही। तुम बस जियो। नियमों का अनुसरण करने की जरूरत क्या? तुम्हारे अस्तित्व से, तुम्हारे होने से हर चीज स्वत: होगी। यदि तुम बिना किसी नियम का अनुसरण किए वहां बस जी रहे हो तो जिन्हें तुम चीजों का घटना कहते हो, वे स्वत: होंगी। तब आएगा स्वीकार भाव, तभी आएगा तथाता और तभी मन विसर्जित हो जाएगा। इसलिए सजगता, स्वीकार भाव को नियम नहीं बनाया जा सकता। वे समग्रता, सहजता और स्वाभाविकता से जीवन जीते हुए उसके सहज परिणाम हैं। वे स्वयं प्रकट होते हैं। यदि कोई उनका अनुसरण करता है और उसे नियम बना लेता है कि उसे हर चीज और हर नियम का पालन करना ही है तो उनको मानना नकली है क्योंकि उनको स्वीकार करते हुए उसने उन्हें पहले ही अस्वीकार कर दिया था। यदि तुम्हें किसी चीज को केवल इसीलिए स्वीकार करना है क्योंकि वह दैवी आदेश है तो तुमने उसे पहले ही अस्वीकार कर दिया है। तुम्हारा मन कहता है-उसे स्वीकार करो। क्यों स्वीकार करो? उसने स्वीकार करने से पूर्व ही अस्वीकार कर दिया उसे? और कह दिया- अस्वीकार। तब स्वीकार से पहले अस्वीकार आया। लेकिन यदि वहां अस्वीकार न होता तो तुम उसे स्वीकार करने के प्रति सजग कैसे होते? तुम बस सहजता से उसे स्वीकार करोगे और उसके साथ बहने लगोगे।

नदी के ही समान बन जाओ। आसामान में तैरते हुए एक सफेद बादल बन जाओ और हवा तुम्हें जहां ले जाना चाहे, ले जाने दो। कभी भी, किसी भी नियम का अनुसरण ही मत करो। मेरे कहने का यही तात्पर्य है। जब मैं कहता हूं एक संन्यासी बनो, बस जीयो, तुम्हारे गेरुवा वस्त्र, तुम्हारी माला-ये सभी नियम हैं। यह एक खेल हैं। ये वह सब नहीं हैं जिसे मैं वास्तविक संन्यास कहता हूं लेकिन तुम सभी खेलों के इतने अधिक अभ्यस्त हो चुके हो कि इससे पूर्व मैं तुम्हें नियमविहीन जीवन जीने के लिए पथ प्रशस्त करूं, इसी क्षाणिक अवधि में तुम्हें नियमों की जरूरत होगी। नियमों और खेलों के इस संसार से, खेल विहीन और नियमविहीन संसार की ओर गतिशील होने के लिए, एक पुल पार करना है। तुम्हारे गेरुवे वस्त्र, तुम्हारी माला ठीक इसी अंतरिम अवधि के लिए पुल पार करने की अवधि के लिए ही हैं। तुम तुरन्त ही नियमों को छोड़ नहीं सकते इसलिए मैं तुम्हें नए नियम देता हूं।

लेकिन तुम पूरी तरह सजग बने रहो कि तुम्हारे वस्त्र तुम्हारा संन्यास नहीं है। तुम्हारी माला तुम्हारा संन्यास नहीं है तुम्हारा नया नाम तुम्हारा संन्यास नहीं है। संन्यास तो तब होगा, जब वहां कोई नाम न होगा, तुम अनाम हो जाओगे। तब वहां कोई नियम भी नहीं होंगे। जब तुम इतने साधारण बन जाओगे कि तुम्हें पहचाना भी न जा सकेगा, केवल तभी...।

लेकिन यह मत सोचो कि अभी तो सब ठीक ठाक है इसलिए न संन्यास लेने की कोई आवश्यकता है और न गेरुवे वस्त्र पहनने की। यह फिर एक चालबाजी होगी। तुम्हें इससे होकर गुजरना है-तुम इसे दरगुजर नहीं कर सकते और यदि तुम इससे गुजरे बिना आगे बढ़ने की कोशिश करोगे तो तुम दूसरे किनारे पर कभी पहुंचन सकोगे। पहले हैं संसार के नियम, तब आते हैं संन्यास के नियम और तभी नियम विहीन होने की स्थिति आती है। किन्हीं तथा कथित दैवी आदेशों की कोई जरूरत नहीं। पुराने आदेशों को बदलो मत-वे जहां हैं, वहां वे ठीक हैं। तुम सहज साधारण बनो, अनुसरण करो और अपने अस्तित्व के साथ ही बहो।

आज के लिए इतना बहुत है।

दसवां प्रवचन

सदगुरु का मौन

कथा: –

बुद्ध को एक दिन अपने प्रवचन के द्वारा एक विशिष्ट सन्देश देना था और चारों ओर मीलों दूर से हजारों अनुयायी आए हुए थे) जब बुद्ध पधारे तो वे अपने हाथ में एक फूल लिए हुए थे। कुछ समय बीत गया लेकिन बुद्ध ने कुछ कहा नहीं वह बस फूल की ही ओर देखते रहे। पूरा समूह बेचैन होने लगा, लेकिन महाकाश्यप बहुत देर तक अपने को रोक न सका, हंस पड़ा। बुद्ध ने हाथ से इशारा कर उसे अपने पास बुलाया। उसे वह फूल सौंपा और सभी भिक्षुओं के समूह से कहा- " मैंने जो कुछ अनुभव किया, उस सत्य और सिखावन को जितना शब्द के द्वारा दिया जाना सम्भव था, वह सब कुछ तुम्हें दे दिया लेकिन इस फूल के साथ, इस सिखावन की कुंजी मैंने आज महाकाश्यप करे सौंप दी।"

न केवल बुद्ध बल्कि जीसस, महावीर और लाओत्से जैसे सद्गुरुओं के सिखावनों की कुंजी, शाब्दिक अभिव्यक्ति के द्वारा नहीं दी जा सकती। वह कुंजी केवल मन के द्वारा नहीं दी जा सकती। उस बारे में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। जितना अधिक तुम कहोगे, उसका सौंपना उतना ही अधिक कठिन होता जाता है, क्योंकि एक बुद्ध और तुम इतने अधिक भिन्न आयामों में रहते हो, न केवल भिन्न वरन् पूरी तरह से विरोधी आयामों में रहते हो कि बुद्ध जो कुछ भी कहता है, उसे गलत ही समझा जाएगा। मैंने सुना है कि एक शाम तीन महिलाएं जिन्हें कुछ ऊंचा या कम सुनाई देता था, एक सड़क पर मिलीं। उस दिन हवा बहुत तेज चल रही थी, इसलिए एक स्त्री ने कहा-" बयार तेज है न?"

दूसरी ने कहा-" बुधवार? नहीं, आज तो थर्सडे है। "

और तीसरी ने कहा-" क्या कहा थर्सटी हो तुम प्यास मुझे भी लग रही है। चलो, सभी रेस्तरां चलकर कुछ ठंडा पिएं। "

जब एक बुद्ध तुमसे कुछ कहता है तो ऐसा ही कुछ तुम्हारे साथ भी होता है। वह कहता है-" बयार बह रही है। " तुम समझते और कहते हो-" बुधवार नहीं आज तो थर्स डे है। " तुम्हारा भौतिक कान तो ठीक है पर तुम आध्यात्मिक श्रवण से चूके जा रहे हो। एक बुद्ध केवल दूसरे बुद्ध से तो बातचीत कर सकता है, यही समस्या है। लेकिन दूसरे बुद्ध से बात करने की वहां कोई जरूरत ही नहीं। बुद्ध को तो उन लोगों से करनी होती है, जो अभी बोध को उपलब्ध नहीं हुए हैं। उन्हीं के साथ बातचीत करने और प्रतिसंवेदित करने की जरूरत होती है, लेकिन तब उसे प्रतिसंवेदित करना असम्भव हो जाता है।

ऐसा कहा जाता है कि एक बार सूफी फकीर फरीद बनारस के निकट होकर गुजर रहे थे, जहां कबीर रहते थे। फरीद के शिष्यों ने कहा-" यदि आप कबीर से भेंट करें तो आप दोनों का मिलना हम सभी के लिए अद्भुत रोमांचकारी, आनन्दमय और आशीर्वाद स्वरूप होगा।"

ऐसा ही कबीर और उनके शिष्यों के मध्य भी हुआ। जब उन्होंने सुना कि फरीद उधर से गुजर रहे हैं इसलिए उन्होंने कबीर से कहा-" यदि आप फरीद साहब से कुछ दिन आश्रम में रुकने का आग्रह करें तो हम सभी के लिए यह बहुत अच्छा होगा। "

फरीद के शिष्यों ने कहा-'' आप दोनों के मध्य हुए वार्तालाप को सुनने का हमें महान अवसर मिलेगा। हम लोग वह सब कुछ सुनने को बहुत आतुर हैं कि बुद्धत्व को उपलब्ध हुए दो संत एक दूसरे से क्या कहते हैं। ''

अपने शिष्यों की बात सुनकर फरीद हंसा और उसने कहा-'' हम दोनों मिलेंगे तो जरूर, लेकिन मैं नहीं सोचता कि वहां कोई बातचीत भी होगी, लेकिन अच्छा है। तुम लोग खुद देखना, क्या होता है? ''

कबीर ने अपने शिष्यों से कहा-'' फरीद से जाकर कहो कि वह यहां पधारें और विश्राम करें, लेकिन जो भी पहले बोलेगा वह यह सिद्ध करेगा कि वह बोध को उपलब्ध नहीं है। ''

फरीद आए कबीर ने उनका स्वागत किया। वे दोनों हंसे। उन्होंने एक दूसरे का आलिंगन किया और मौन बैठे रहे। फरीद वहां दो दिन रुके और वे कबीर के साथ कई घंटे साथ बैठे रहे। दोनों के ही शिष्य बहुत बेचैनी से प्रतीक्षा कर रहे थे कि दोनों के मध्य कुछ बातचीत हो। कोई कुछ तो कहे, लेकिन कोई एक शब्द तक न बोला। तीसरे दिन फरीद जब चलने लगे तो कबीर ने उन्हें विदा किया। वे दोनों फिर हंसे। एक दूसरे से आलिंगनबद्ध हुए और फिर अलग हो गए।.

विदा होने के क्षण फरीद के शिष्यों ने उन्हें चारों ओर से घेर कर कहा-'' सब कुछ व्यर्थ रहा। समय ही बरबाद हुआ। हम लोगों को आशा थी कि आप दोनों के मिलने पर कुछ अभूतपूर्व घटेगा। पर कुछ भी तो नहीं हुआ। आप अचानक वहां इतने गुंगे क्यों बन गए। आप हम लोगों से तो बहुत-सी बातें करते हैं। ''

फरीद ने उत्तर दिया-'' वह सभी जो मैं जानता हूं वह भी जानते हैं। कुछ भी कहने को रहा ही नहीं। मैंने उनकी आंखों में झांका और वह वहीं दिखाई दिए जहां मैं हूं। जो कुछ उन्होंने देखा, वही सब कुछ मैंने भी देखा। जो कुछ उन्होंने महसूस किया, मैंने भी वैसा ही महसूस किया। अब वहां कहने को कुछ था ही नहीं। ''

दो अज्ञानी व्यक्ति एक-दूसरे के साथ बातचीत कर सकते हैं। वे बहुत अधिक बातें करते हैं'। वे बातें करने के सिवा और कुछ करते ही नहीं। दो बुद्ध आपस में कोई बात कर ही नहीं सकते, क्योंकि वे एक जैसा ही जानते हैं। कहने को कुछ है ही नहीं। केवल बुद्ध और बिना बोध को उपलब्ध व्यक्ति के मध्य ही अर्थपूर्ण संवाद हो सकता है, क्योंकि एक जानता है और दूसरा अभी अज्ञानी है। मैं कहता हूं-एक अर्थपूर्ण संवाद। मैं यह नहीं कह रहा हूं कि इस संवाद से सत्य सम्प्रेषित किया जा सकता है, लेकिन कुछ इशारों कुछ संकेतों और कुछ भावा भिव्यक्तियों द्वारा कुछ प्रकट किया जा सकता है, जिससे दूसरा छलांग लगाने को तैयार हो सकता है। सत्य तो सम्प्रेषित नहीं किया जा सकता, लेकिन प्यास दी जा सकती है। कोई भी शिक्षण चाहे वह कितना भी कीमती क्यों न हो, शब्दों के द्वारा वह कुंजी नहीं दे सकता। बुद्ध बहुत बोलते रहे, उन जैसा व्यक्ति खोज पाना कठिन है जो इतना अधिक बोला हो। उन सभी शास्त्रों का, जो उपलब्ध हैं और जो बुद्ध के नाम पर हैं, अध्ययन करते हुए विद्वानों का कहना है कि यह असम्भव जैसा लगता है, क्योंकि बोध को उपलब्ध होने के बाद वे चालीस वर्ष और जीवित रहे और पूरे बिहार में एक गांव से दूसरे गांव की ओर यात्रा करते हुए वह बोलते ही रहे। वह बिहार- भर में इतना घूमे, .रहे और बिहरे कि प्रांत का नाम विहार, बुद्ध के बिहरने से ही पड़ा। बिहार का अर्थ है-बुद्ध का यात्रा-पथ। पूरा प्रांत ही बिहार कहा जाता है क्योंकि उसी की सीमा में बुद्ध भ्रमण करते रहे-बिहरते रहे। वे निरन्तर घूमते ही रहे, केवल बरसात में वे विश्राम करते थे। काफी समय तो चलने में ही बरबाद हो जाता था और तब उन्हें विश्राम करते हुए सोना भी होता था। इसीलिए विद्वान बचे समय की गणना करते हुए कहते हैं-यह असम्भव जैसा लगता

इतना अधिक चलना, सोना अपने दैनिक कार्यों को पूरा करना- और बचे समय में इतने अधिक ग्रंथ, वह इतना अधिक कैसे बोले होंगे? यदि वह चालीस वर्षों तक निरन्तर बिना एक क्षण का भी अंतराल किए बोले होंगे, तभी इतना सब कुछ सम्भव है। वे निरन्तर इतना अधिक जरूर बोले होंगे, फिर भी वे कहते हैं कि शब्दों के द्वारा कुंजी नहीं सौंपी जा सकती।

यह कहानी, सर्वाधिक महत्वपूर्ण कहानियों में से एक है, क्योंकि इसी कहानी से झेन की परम्परा का शुभारम्भ होता है। झेन का पहला सद्गुरु महाकाश्यप ही है, वह झेन का मूल है और यह कथा ही वह स्रोत है, जहां से पूरी झेन की परम्परा की शुरुआत हुई। एक ऐसी सुंदर और जीवन्त परम्परा, जिसके जोड़ की पृथ्वी में अन्य कोई परम्परा है ही नहीं।

इस कहानी को समझने का प्रयास करें।

एक सुबह बुद्ध प्रवचन देने पधारे और सदा की भांति काफी बड़ी संख्या में लोग वहां एकत्रित थे। वे सभी उन्हें सुनने की आतुरता से प्रतीक्षा कर रहे थे, लेकिन एरक चीज असाधारण थी, वे आज अपने हाथ में एक फूल लिए हुए थे। इससे पूर्व वह कभी भी अपने हाथ में कुछ भी लेकर न आए थे। लोगों ने सोचा-शायद किसी ने उन्हें वह फूल भेंट किया होगा।

बुद्ध आए वे वृक्ष के नीचे बैठ गए। समूह का समूह और वहां एकत्रित हजारों लोग प्रतीक्षा करने लगे किवे कुछ बोलें, लेकिन प्रतीक्षा लम्बी होती गई। उन्होंने लोगों की ओर निहारा तक नहीं, वे केवल फूल को ही देखते रहे। मिनट गुजरे और फिर घंटे और सभी लोग बेचैन होने लगे।

यह कहा जाता है कि महाकाश्यप अपने को रोक न सका। वह जोरों से खिल-खिला कर हंस पड़ा। बुद्ध ने उसे अपने पास बुलाया, उसे फूल दिया और तब एकत्रित समुदाय से कहा-'' शब्दों के द्वारा जो कुछ भी कहा जा सकता था, मैं तुमसे कह चुका हूं और जो कुछ शब्दों द्वारा नहीं कहा जा सकता, मैं उसे महाकाश्यप को देता हूं। शब्दों द्वारा सत्य की कुंजी नहीं दी जा सकती, वह उगज मैं महाकाश्चप को सौंप रहा हूं। '' यह. है वह-जिसे झेन सदगुरु बिना शब्दों और शास्त्रों के कुंजी का हस्तांतरण कहते हैं-जो शास्त्रों के पार, शब्दों के पार और मन के भी पार है। उन्होंने वह फूल महाकाश्यप को दे दिया। कोई कुछ भी समझ ही न सका कि आखिर हुआ क्या? न तो महाकाश्यप ने और न कभी बुद्ध ने इस पर फिर से कुछ कहा। जैसे पूरा अध्याय ही समाप्त हो गया। तभी से चीन, तिब्बत, थाइलैंड, बर्मा, जापान और श्रीलंका में या जहां कहीं भी बौद्ध हैं, वे पच्चीस सदियों से यही प्रश्न पूछते आ रहे हैं-'' महाकाश्यप को क्या दिया गया? वह कुंजी है क्या? ''

यह पूरी कहानी ही बहुत रहस्यमय बन जाती है। बुद्ध कभी कुछ छिपाते ही न थे, बस यही अकेली ऐसी घटना है.. .बुद्ध बहुत विचारशील व्यक्तित्व के हैं। उनकी बातचीत में गहरी समझ है। वे उन्मादी चमत्कार या आनन्द उत्पन्न नहीं करते। वह तर्कपूर्ण ढंग से विचार करते हैं और उनके प्रमाण तथा तर्क पूर्ण हैं-तुम उनमें कोई छिद्र या कमीन खोज पाओगे। केवल-यही अकेली ऐसी घटना है, जहां उनका व्यवहार अतर्क पूर्ण है, जहा उन्होंने कुछ ऐसा किया है, जो रहस्यमय है। लेकिन वह बिलकुल भी रहस्यमय नहीं है। तुम उन जैसा दूसरा सद्गुरु न खोज सकोगे, जो इतना कम रहस्यमय हो।

जीसस बहुत रहस्यमय है, लाओत्से तो पूरी तरह से रहस्यमय ही है। बुद्ध बहुत स्पष्ट व पारदर्शी हैं। उनके चारों ओर किसी रहस्य या धुंधले-से भी धुएं को रहने की अनुमति ही नहीं है। उनकी ज्योति चमकदार और स्पष्ट है। वह पूरी तरह धुम्ररहित और पारदर्शी है। यही अकेली ऐसी चीज है जिससे वे रहस्यमय लगते हैं, इसीलिए कई बौद्ध शास्त्रों ने इस वृत्तांत का कभी कोई उल्लेख ही नहीं किया। उन्होंने बस इसे यूं छोड़ दिया जैसे यह कभी हुआ ही नहीं। ऐसा लगता है जैसे किसी की बुद्धि ने इसका आविष्कार किया हो। बुद्ध के जीवन और उनके व्यवहार से इसका तालमेल ही नहीं बैठता।

लेकिन झेन के लिए यही मूल स्रोत है। महाकाश्यप इस कुंजी को प्राप्त करने वाला पहला सौभाग्यशाली बना। तब भारत में इसके छ: और उत्तराधिकारी बने। बोधिधर्म इस कुंजी को पाने वाला छठवां था और तब उसने पूरे भारत में गहन खोज की पर वह महाकाश्यप जैसा क्षमतावान कोई भी व्यक्ति न पा सका, जो मौन को समझ सके। ठीक ऐसे ही व्यक्ति की खोज में उसे भारत छोड़ना पड़ा, जिससे कहीं और वह ऐसा व्यक्ति खोजकर उसे कुंजी हस्तांतरित कर सके, अन्यथा वह कुंजी उसी के साथ खो जाती।

बोधिधर्म के साथ ही चीन में सही अर्थों में बौद्ध धर्म का प्रवेश हुआ। चीन में बोधिधर्म ऐसे ही व्यक्ति की खोज में आया था, जो मौन को समझ सके, जिससे अमन में हृदय की बात हृदय तक पहुंच जाए जिसने बुद्धि

और अहंकार को व्यर्थ जानकर गिरा दिया हो और जिसे वह कुंजी को हस्तान्तरित कर सके। बिना सिर वाला (बुद्धिमान होकर भी जिसने व्यर्थ जान बुद्धि और अहंकार को गिरा दिया हो) व्यक्ति भारत में खोज पाना कठिन था, क्योंकि भारत में तब पंडित, विद्वान और बड़े-से-बड़े सिर वाले लोग ही थे। एक पंडित या विद्वान धीरे-धीरे हृदय के बारे में हर चीज भूलता जाता है और केवल सिर ही रह जाता है। उसका पूरा शरीर सिकुड़कर जैसे विलुप्त हो जाता है। यह सम्प्रेषण शब्दों के पार केवल हृदय से हृदय तक ही हो पाना सम्भव है। इसलिए चीन में भी बोधिधर्म नौ वर्षों तक खोजता रहा और तभी वह एक ऐसा व्यक्ति पा सका। नौ वर्षों तक बोधिधर्म चीन में लोगों की ओर मुंह न कर दीवार की ओर मुंह कर बैठा रहा। यदि तुम उसे सुनने के लिए उसके निकट गए होते तो उसका मुंह दीवार की ओर, और अपनी ओर तुम उसकी पीठ पाते। लोग उससे पूछा करते थे-'' आप इस विशिष्ट ढंग से क्यों बैठते हैं? हम लोग आपको सुनने के लिए हैं। '' तो बोधिधर्म उत्तर देता-'' मैं उस व्यक्ति की प्रतीक्षा कर रहा हूं जो मुझे सुन सके। मैं तुम लोगों की ओर नहीं देखूंगा, मैं अपना समय नष्ट नहीं करूंगा, मैं केवल उसी व्यक्ति की ओर देखूंगा तो तुझे (मेरे मौन को) सुन सके। ''

तब एक व्यक्ति आया, वह बोधिधर्म के पीछे जाकर खड़ा हो गया और अपना दाहिना हाथ काटकर बोधिधर्म की ओर फेंकते हुए उसने कहा-'' कृपया मेरी ओर मुड़कर देखिए अन्यथा मैं अपना सिर काटने जा रहा हूं। ''

बोधिधर्म ने तुरन्त उसकी ओर मुड़कर कहा-'' ठीक! तो तुम आ ही गए। यह कुंजी लो और मुझे इस कार्य से मुक्त करो। ''

वह कुंजी जो बुद्ध द्वारा महाकाश्यप को सौंपी गई थी, बोधिधर्म ने इस व्यक्ति को हस्तान्तरित कर दी। एक चीनी सातवां सद्गुरु बना और अब तक यह यात्रा चल रही है। कुंजी अभी भी किसी के पास है जो उसे संभाले हुए हैं, नदी अभी भी सूखी नहीं है।

मेरे लिए यदि बुद्ध के सभी शास्त्र नष्ट भी हो जाए फिर भी कुछ खोएगा नहीं। केवल यह वृत्तान्त नहीं खोना चाहिए। यही सर्वाधिक कीमती है और बौद्ध विद्वानों ने बुद्ध की जीवनगाथा में इसी वृत्तान्त को छोड़ दिया है। वे कहते हैं-यह असंगत है, यह वृत्तान्तबुद्ध के व्यक्तित्व से मेल नहीं खाता। '' लेकिन मैं तुमसे कहता हूं-'' बुद्ध ने अन्य जो कुछ भी किया, वह बस साधारण था, उसे कोई भी कर सकता था, लेकिन यह असाधारण है, यह अद्वितीय और अनूठा है और इसे केवल बुद्ध ही कर सकते थे। ''

उस सुबह हुआ क्या? अब हम उसके अंदर गहराई में उतरना शुरू करें। बुद्ध आए बैठे और उस फूल की ओर देखना शुरू कर दिया। उन्होंने अन्य लोगों की ओर देखा ही नहीं। वह फूल ही जैसे दीवार बन गया। यही सब कुछ तो बोधिधर्म ने किया १; वह दीवार की ओर ही देखता रहा, उसने अन्य लोगों की ओर देखा ही नहीं- उसने अपनी दृष्टि को व्यर्थ खर्च नहीं किया। कोरी दीवार ही जैसे फूल बन गई भीड़ वहा- जैसे रही ही नहीं। वह क्या कर रहे थे? जब बुद्ध किसी भी वस्तु की ओर देखते हैं, उनकी चेतना का गुण उसमें हस्तांतरित हो जाता है। एक फूल संसार की सभी वस्तुओं में एक अकेला ऐसा है, जिसमें सबसे अधिक ग्राहकता या ग्राह्य-शक्ति है। इसीलिए हिन्दू और बौद्ध फूलों के साथ ही सदगुरु से भेंट करने जाते हैं और उन्हें उनके चरणों में या मंदिर में चढ़ाते हैं क्योंकि फूल ही तुम्हारी चेतना का थोड़ा-सा भाग साथ ले जा सकता है।

फूल बहुत ही ग्राह्य वस्तु है और यदि पश्चिम में हुई नई खोजों के प्रति तुम सजग हो तो तुम इसे समझ सकोगे। अब वे कहते हैं कि पौधे मनुष्यों से भी कहीं अधिक संवेदनशील हैं। एक फूल पौधे का हृदय होता है जिसमें पौधे का सम्पूर्ण अस्तित्व समा जाता है। रूस में इस संबंध में काफी शोध हुई है, साथ ही अमेरिका और इंग्लैंड में भी पौधों की संवेदनशीलता के बारे में कुछ अविश्वसनीय बातों का पता चला है।

एक वैज्ञानिक पौधों पर यही कार्य कर रहा था कि वे कैसा अनुभव करते हैं वे पास आने वाली किसी वस्तु या व्यक्ति का अनुभव करते हैं या नहीं, उनके अंदर भाव उठते हैं या नहीं? वह पौधे के साथ इलेक्ट्रोड लगाए हुए यह खोज रहा था कि उसके आंतरिक अस्तित्व में कोई गतिशीलता, संवेदना या भावना होती है या नहीं। उसने सोचा, यदि मैं इस पौधे को काट दूं यदि मैं इसकी एकशाखा को खींच कर अलग कर दूं अथवा उसे जमीन

से उखाड़ दूं तो क्या होगा? अचानक जो सुई ग्राफ बता रही थी, उसने एक छलांग भरी। उसने उस पौधे के साथ किया कुछ भी नहीं था, केवल सोचा ही था, " यदि मैं इस पौधे को काट दूं.. "कि वह पौधा मृत्यु के भय से कांप उठा और उससे लगी सुई ने छलांग भरते हुए पौधे की कम्पनों को रिकार्ड किया। यहां तक कि वह वैज्ञानिक भी डट गया क्योंकि उसने पौधे के साथ कुछ भी नहीं किया था-केवल उसके विचार को पौधे ने ग्रहण कर लिया। पौधे मन के विचारों और भावों को भी पकड़ने की क्षमता रखते हैं।

तब उसने और भी आगे, लम्बी दूरी पर पौधों को रखकर काम शुरू किया। जिस पौधे को उसने उगने में पानी और प्रेम देकर उसकी सहायता की थी, उस पौधे को उसने अपने से एक हजार मील दूर हटा दिया। तब उसने एक हजार मील दूर पौधे के- विरुद्ध विचार किया और उतनी दूर भी पौधा व्याकुल हो उठा। इसलिए वैज्ञानिक रूप से अब पौधों के भाव किस तरह प्रभावित हो जाते हैं, इसे ग्राफ पर रिकार्ड किया जा चुका है। केवल इतना ही नहीं, बल्कियदि तुम एक पौधे या वृक्ष को काटने के सम्बन्ध में विचार करो तो उसके आस-पास के सभी पौधे और वृक्ष व्याकुल हो उठते हैं क्योंकि उन्हें याद रहता है कि यह व्यक्ति अच्छा नहीं है। जब भी भी यह -व्यक्ति उद्यान में प्रवेश करता है, उद्यान के सभी पौधे -यह महसूस करते हैं जैसे एक दुष्ट व्यक्ति आ गया हो।

अब थोड़े से वैज्ञानिक यह सोचने लगे हैं कि पौधों का प्रयोग दूर-संचार (टेलीपैथिक प्रणाली के रूप में किया जा सकता है क्योंकि वे मनुष्य के मस्तिष्क से- भी कहीं अधिक संवेदनशील होते हैं और कुछ वैज्ञानिकों का विचार है कि एक ग्रह के सँदेश ग्रहण करने के लिए भी पौधों का प्रयोग किया जा सकता है क्योंकि हमारे अन्य यंत्र और उपकरण अभी इतने परिष्कृत नहीं हैं।

पूरब में हमेशा से ही यही जाना जाता रहा है कि फूल में सर्वाधिक ग्राह्यता है। जब बुद्ध ने फूल की ओर देखा और निरन्तर उस फूल को देखते ही रहे, तो उनके 'अंदर का कुछ फूल को हस्तान्तरित हो गया। जैसे बुद्ध ही फूल में प्रवेश कर गए। उनके अस्तित्वगत गुण, सजगता, चेतना शांति, परमानन्द और उनके अंदर होने वाला नृत्य, फूल को -स्पर्श करने लगा। बुद्ध द्वारा बिना किसी कामना, सहजता, सरलता और अपनत्व से फूल को देखे जाने से, उस फूल का आंतरिक अस्तित्व जरूर नृत्य करने लगा होगा। वह उस फूल को अपना कुछ हस्तांतरित करने के लिए ही देख रहे थे – यह चीज समझ लेने जैसी है। केवल वह और फूल ही एक लम्बी अवधि तक आमने- सामने रहे और जैसे पूरा संसार तिरोहित हो गया। केवल बुद्ध और फूल ही वहां थे। वह फूल बुद्ध के अस्तित्व में प्रवेश कर गया और बुद्ध फूल के अस्तित्व में प्रविष्ट हो गए।

जब वह फूल महाकाश्यप को दिया गया, तब वह मात्र एक फूल नहीं था। अब वह बुद्धत्व का स्वाद और सुवास लिए हुए था। उसके साथ अब बुद्ध के अस्तित्व के आंतरिक गुण भी थे। वह फूल महाकाश्यप को ही क्यों दिया गया? वहां अन्य महान विद्वान साधक और बुद्ध के निकटतम दस अंतरंग शिष्य भी थे। इस घटना के बाद महाकाश्यप को भी इन्हीं दस के समूहमें शामिल कियागया, अन्यथा उनके प्रमुखतम और निकटतम शिष्यों में वह सम्मिलित ही न किया जाता।

महाकाश्यप के सम्बन्ध में अधिक जानकारी नहीं मिलती। वहां सारिपुत्र के समान अद्‌भुत मेधावी और विद्वान शिष्य भी थे-सारिपुत्र की प्रतिभा जैसा ज्ञानी खोजना कठिन था। यौनाल्यायन भी महान विद्वान था। चारों वेद उसे जबानी याद थे और उस समय तक जौ कुछ भी शास्त्रों में लिखा गया था, वह उसका पूर्ण ज्ञाता था। वह महान तार्किक था और उसके हजारों शिष्य थे। वहां ऐसे दूसरे महत्वपूर्ण लोग भी थे। आनन्द था वहां, बुद्ध का चचेरा भाई, जो निरन्तर चालीस वर्ष तक बुद्ध के साथ -छाया की भांति रहा, लेकिन नहीं, कोई अन्य जो अब तक अज्ञात था, वह महाकाश्यप अचानक सर्वाधिक महत्वपूर्ण बन गया। पूरा परिदृश्य ही बदल -गया। जब भी बुद्ध प्रवचन करते थे, सारिपुत्र ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण व्यक्ति होता था क्योंकि अन्य लोगों की अपेक्षा वह शब्दों को अधिक गहराई से समझ सकता थाऔर जब -बुद्ध तर्क देते थे तो मौदगल्यान सबसे अधिक महत्वपूर्ण व्यक्ति होताथा। महाकाश्यप के बारे में किसी ने कभी सोचा भी न था। वह समूह के बीच ही रहता था भिक्षुओं के समूह का ही एक भाग था।

लेकिन जब बुद्ध मौन ही रहे तो पूरा गेस्टाल्ट (परिदृश्य) ही बदल गया। अब मौदगल्यायन और सारिपुत्र महत्वपूर्ण न रहे। वे अस्तित्व में रहे ही नहीं, जैसे वे वहां थे ही नहीं। वे बस समूह का एक भाग बन गए। एक नया व्यक्ति महाकाश्यप सबसे अधिक-महत्वपूर्ण बन गया। एक नए आयाम का द्वार खुला। प्रत्येक व्याकुल था, सोच रहा था-' बुद्ध बोलते क्यों नहीं? वह आज मौन क्यों हैं? आखिर क्या होने जा रहा है'? यह मौन कब होगा समाप्त? वे बेचैन होकर असुविधा का अनुभव करने लगे।' लेकिन महाकाश्यप न तो चिंतित था और न व्याकुल। वास्तव में पहली बार ही वह बुद्ध के साथ इतना अधिक विश्रामपूर्ण था। बुद्ध के साथ पहली बार ही उसे अपने घर अर्थात शाश्वत केन्द्र पर होने का अनुभव हो रहा था। जब बुद्ध बोलते थे, वह बेचैन तो तब .हो सकता था, वह' तब सोचता होगा-' यह व्यर्थ की बातें क्यों? वे क्यों बोले जा रहे हैं? शब्दों के द्वारा न तो उसे सम्प्रेषित किया जा सकता है, न कुछ समझाया जा सकता है, फिर दीवार से सिर टकराने की यह कवायद क्यों चल रही है। लोग तो बहरे हैं। सुनकर भी वे उसे समझ नहीं सकते... 'जब बुद्ध बोलते थे, वह जरूर व्याकुल होता होगा और अब पहली बार वह अपने को शाश्वत केन्द्र पर पा रहा था। वह ही समझ सका था कि मौन क्या होता है?

वहां हजारों लोग बैठे थे और प्रत्येक व्यक्ति बेचैन था। वह भीड़ की बेवकूफी को देखकर अपने को रोक न सका। जब बुद्ध बोल रहे होते थे, वे सभी तभी शांत रहते थे और अब वे अशांत थे क्योंकि बुद्ध शांत और मौन थे। जब कुछ हस्तांतरित किया जा सकता था, वे अपने को बंद किए बैठे थे और जब कुछ भी हस्तान्तरित नहीं हो सकता था तो वे उसकी प्रतीक्षा करते थे। अब मौन के द्वारा बुद्ध कुछ ऐसा दे सकते थे जो शाश्वत हो, लेकिन वे उसे नहीं समझ सकते थे इसीलिए वह अपने को रोक न सका और जोर से खिलखिलाकर हंस पड़ा। वह हंसा उस पूरी परिस्थिति और पूरी मूर्खता पर।

हम लोगों को बुद्ध की जरूरत इसीलिए होती है, जिससे वे उपदेश दें, क्योंकि केवल हम शब्दों को समझते हैं। यही मूर्खता है। तुम्हें बुद्ध के साथ मौन होना सीखना चाहिए क्योंकि केवल तभी वह तुम्हारे अन्दर प्रवेश कर सकता है। शब्दों के द्वारा तो वह तुम्हारे दरवाजे को केवल खटखटा सकता है लेकिन कभी उसमें प्रवेश नहीं कर सकता।

मौन के द्वारा ही वह तुम्हारे अंदर प्रवेश कर सकता है और जब तब वह तुम्हारे अंदर प्रवेश नहीं करता, कुछ भी नहीं होगा। उसका प्रवेश तुम्हारे संसार में एक नया तत्व लाएगा। उसका तुम्हारे हृदय में प्रवेश तुम्हें एक धड़कन और नया स्पन्दन देगा, तुम्हारे जीवन को एक नया प्रवाह देगा-लेकिन यह होगा तभी जब वह प्रवेश करे। महाकाश्यप मनुष्य की मूढ़ता पर हंसा। वे सभी लगे बेचैन और व्याकुल होकर सोच रहे थे-' कब बुद्ध अपना मौन तोड़कर खड़े होंगे जिससे हम लोग अपने- अपने घर जा सकें। ' वह हंसा।

यह हास्य महाकाश्यप से प्रारम्भ हुआ और तब से झेन परम्परा में निरन्तर चला आ रहा है। वहां और कोई दूसरी परम्परा नहीं है, जो हंसा सके क्योंकि हंसना, इतना अधार्मिक और उथला दिखाई देता है। तुम कभी सोच भी नहीं सकते कि जीसस कभी हंसे होंगे। तुम महावीर के हंसने की बाबत भी कभी नहीं सोच सकते। यह कल्पना करना तक कठिन है कि महावीर कभी खुलकर हंसे होंगे या जीसस ने कभी छत फाड़ ठहाका लगाया होगा। नहीं, हंसने की मनाही थी। उदासी ही किसी तरह धर्म का पर्याय बन गई।

एक प्रसिद्ध जर्मन विचारक काउन्ट कैसरलिंक ने लिखा है कि स्वास्थ्य अधार्मिक है और बीमार बने रहना ही धार्मिकता है, क्योंकि एक बीमार व्यक्ति ही उदास और कामना रहित होता है वह इसी कारण कामनारहित नहीं होता, बल्कि अपनी निर्बलता के कारण ही उसमें कामना नहीं उठती। एक स्वस्थ व्यक्ति हंसेगा, आनन्द मनाना चाहेगा, प्रसन्न रहेगा-वह उदास रह ही नहीं सकता इसलिए धार्मिक लोगों ने कई तरह से तुम्हें रुग्ण रखने की तरकीबें निकालने की कोशिशें की हैं-तुम उपवास करो, अपने शरीर को सताओ, दमन करो। इससे तुम स्वयं अपने को उदास, आत्मघाती बना लोगे और अपने को सलीब पर लटका पाओगे। तुम कैसे हंस सकते हो? हंसी तो तभी आती है जब तुम स्वस्थ हो। जब तुम्हारे अन्दर ऊर्जा अतिरेक से बह रही हो। यही कारण है कि बच्चे खुलकर हंसते हैं और उनकी हंसी समग्र अस्तित्व से आती है। हस हंसी में उनका पूरा शरीर लिप्त होता है-

जब वे हंसते हैं तो तुम देख सकते हो कि उनके पैरों के तलुवे तक हंस रहे हैं। उनके पूरे शरीर का हर कोण और शरीर का रोया- रोया हंस रहा है और तरंगित हो रहा है। उनके अंदर जैसे स्वास्थ्य लबालब भरा हुआ है, वह इतना अधिक गरिमापूर्ण है कि उसके साथ जैसे प्रत्येक वस्तु प्रवाहित हो रही

एक उदास बच्चे का अर्थ है-एक रुग्ण बच्चा और एक हंसते हुए वृद्ध व्यक्ति का अर्थ है कि वह अभी भी युवा है। उसे मृत्यु भी का नहीं बना सकती। उसे कुछ भी बूढ़ा नहीं बना सकता। उसके अन्दर अभी तक ऊर्जा न केवल प्रवाहित हो रही है, वरन् वह अतिरेक से बह रही है। उसमें जैसे बाढ़ आई हुई है। हास्य ऊर्जा की बाढ़ ही

झेन मठों में वे हंसते हैं, हंसते ही रहते हैं और हंसे ही चले जाते हैं। केवल झेन में ही हास्य एक प्रार्थना बन गया है क्योंकि उसे महाकाश्यप ने प्रारम्भ किया था। पच्चीस सदियों पूर्व, ठीक इसी तरह की एक सुबह महाकाश्यप ने एक नई, बिलकुल ही नई धारा का प्रवर्तन किया, जो तब से पूर्व धार्मिकचित्त के लिए अनजानी और अपरिचित थी। वह हंसा। वह हंसा, वहां सभी लोगों की मूर्खता पर और बुद्ध ने भी उसे गलत नहीं माना, जबकि इसके विपरीत उन्होंने उसे अपने पास बुलाया, उसे फूल दिया और पूरे समुदाय से कुछ कहा। जब भिक्षुओं के समुदाय ने उसकी हंसी सुनी होगी तो उन्होंने यह जरूर सोचा होगा-' यह व्यक्ति तो पागल हो गया है। यह व्यक्ति तो बुद्ध के प्रति असम्मान प्रकट कर रहा है, क्योंकि एक बुद्ध के सामने तुम कैसे हंस सकते हो? जब एक बुद्ध शांत और मौन बैठा हो, तुम कैसे हंस सकते हो? यह व्यक्ति सम्मान दे ही नहीं रहा है। मन कहेगा यह तो अपमान कर रहा है बुद्ध का। ' मन के अपने अलग नियम हैं, लेकिन हृदय उन्हें नहीं जानता, हृदय के अपने अलग नियम हैं, लेकिन मन ने उनके बारे में कभी सुना ही नहीं। हृदय हंस भी सकता है और सम्मान भी प्रकट कर सकता है, लेकिन मन हंस नहीं सकता। वह केवल उदास हो सकता है और तब वह सम्मान प्रकट कर सकता है, लेकिन यह किस तरह का सम्मान है जो हंसा नहीं सकता? महाकाश्यप के हास्य से एक नई प्रवृत्ति, एक नई धारा का प्रवेश हुआ और आगे आने वाली सदियों तक यह हास्य की प्रवृत्ति जारी रही। केवल झेन सद्गुरु और झेन शिष्य ही हंसते हैं।

विश्व- भर में, सभी धर्म रुग्ण हो गए हैं क्योंकि उनमें उदासी का तत्व सबसे अधिक प्रमुख बन गया है और सभी मंदिर और गिरजाघर, कब्रगाह जैसे दिखाई देते हैं, उनमें उत्सव नहीं दिखाई देता उनमें समारोह और आनन्द का तत्व जैसे है ही नहीं। यदि तुम किसी चर्च में प्रवेशकरो तो तुम वहां क्या देखते हो जीवन नहीं, केवल वहां मृत्यु का साम्राज्य है-जीसस छूस पर लटके हुए पूरी उदासी का वातावरण उत्पन्न कर रहे है। क्या तुम एक गिरजेघर में हंस सकते हो? क्या वहां नृत्य कर सकते हो? क्या वहां उत्सव उमंग के गीत गा सकते हो? गीत वहां गाए जाते हैं-लेकिन उदासी के और लोग लम्बे चेहरे बनाए बैठे रहते हैं। कोई आश्चर्य की बात नहीं कि लोग चर्च जाना ही नहीं चाहते, बस एक सामाजिक कर्त्तव्य निभाने- भर को वे वहां जाते हैं। इसमें कोई आश्चर्य नहीं कि कोई भी चर्च की ओर आकर्षित नहीं है-वहां जाना एक औपचारिकता है। धर्म रविवार का एककार्यक्रम' बन गया है और एक घंटे के लिए तुम उदास होना बर्दाश्त कर लेते हो।

महाकाश्यप बुद्ध के सामने हंसा और तब से झेन भिक्षु संन्यासी और सद्गुरु ऐसी चीजें करते आ रहे हैं, जिनकी तथा कथित धार्मिक चित के लोग कल्पना ही नहीं कर सकते। यदि तुमने कभी भी कोई झेन की पुस्तक देखी हैतो तुम उसमें झेन सदगुरु द्वारा चित्रित चित्र देखोगे। कोई भी पेंटिंग वास्तविक चेहरा चित्रित नहीं करती। यदि तुम बोधिधर्म या महाकाश्यप का चित्र देखो तो वे उनके वास्तविक चित्र नहीं है, बल्कि उनको ओर देखते हुए तुम्हारे अन्दर. हंसने जैसा अनुभव होगा। उनकी मुखमुद्रा में प्रसन्नता ने; साथ .कुछ न कुछ हास्यास्पद जैसा कुछ जरूर होगा।

तुम बोधिधर्म की पेंटिंग की ओर देखो। उसे अवश्य ही बहुत सुन्दर व्यक्तियों में से एक होना चाहिए। इससे अन्यथा कुछ और होना सम्भव ही नहीं है, क्योकि जब भी कोई व्यक्ति बुद्धत्व को प्राप्त होता है, उस पर सुंदरता उतरती है, वह सुंदरता सभी के पार कहीं अज्ञात से उतरती है। उसके सम्पूर्ण अस्तित्व से शक्तिपात होता है, लेकिन बोधिधर्म की पेंटिंग को देखो, उसमें वह भयानक और खतरनाक दिखाई देता है। वह इतना

खतरनाक दिखाई देता है कि- यदि तुम उसे रात में देखो तो डर जाओ। उसे देखकर तुम जीवन में कभी फिर से सोने में समर्थ न हो सकोगे। वह इतना खतरनाक दिखाई देता है, जैसे मानो वह तुम्हें मारने आ रहा हो। ऐसे बेतुके और हास्यास्पद चित्र इसलिए बनाए जाते हैं जिससे सद्गुरु को देखकर शिष्य हंस सकें। वह चित्र एक कार्टून की भांति दिखाई देता है।

सभी झेन सद्गुरुओं को बेतुकेपन और हास्यास्पद रूप में चित्रित किया गया है। शिष्य उन्हें देखकर खुश होते हैं, लेकिन वे चित्र अपने साथ यह गुणवत्ता लेकर चलते हैं कि बोधिधर्म खतरनाक हैं और यदि तुम उसके पास जाओ तो वह तुम्हें जान से मार देगा कि तुम उससे छुटकारा न पा सकोगे वह तुम्हारा निरन्तर पीछा करेगा और हर सुबह तुम्हारे सामने आकर खड़ा हो जाएगा। तुम जहां भी जाओगे उसी को पाओगे और जब तक वह तुम्हें मार नहीं देता, वह तुम्हें छोड़ेगा नहीं। यही चीज सभी झेन सद्गुरुओं के चित्रों में और यहां तक कि बुद्ध के चित्र में भी चित्रित की गई है।

यदि तुम बुद्ध की चीनी या जापानी पेंटिंग्स देखो तो वे भारतीय बुद्ध जैसी नहीं हैं। उन्होंने उन्हें पूरी तरह बदल दिया है। यदि तुम बुद्ध की भारतीय पेंटिंग्स देखो तो उनके शरीर के सभी अंग ठीक अनुपात में, जैसा कि वह होना चाहिए चित्रित किए गए है। वे एक राजकुमार थे, तब एक बुद्ध, बहुत ही सुंदर, सुदर्शन, पूर्ण और आनुपातिक होना चाहिए लेकिन यदि तुम बुद्ध की कोई जापानी पेण्टिंग देखो, उन्होंने पूरी शक्ल ही बदल दी है, न तो उनमें स्पष्टता है और न प्रामाणिकता ही। उन्होंने एकबडा पेट या तोंद चित्रित की है। बुद्ध का पेट बड़ा था ही नहीं। पर जापानी पेटिंग्ज तथा शास्त्रों में उनका पेट काफी बड़ा और फूला हुआ चित्रित किया गया है, क्योंकि जो व्यक्ति हंसता है उसके पेट का बड़ा और फूला होना जरूरी है। हंसते–हंसते पेट फूल जाए या उसमें दर्द होने लगे। यह तुम छोटे पेट के साथ कैसे कर सकते हो? तुम छोटे पेट के साथ उनुक्त ठहाके लगा ही नहीं सकते। वे बुद्ध के साथ मजाक या हंसी-ठिठोली कर रहे हैं और उन्होंने बुद्ध के बारे में ऐसी-ऐसी बातें कही हैं- जिन्हें कोई गहन प्रेम में ही कह सकता है अन्यथा वह अपमानजनक लगता है।

झेन सद्गुरु बांके अपने पीछे हमेशा बुद्ध की एक पेन्टिग टांगे रखता था और अपने शिष्यों से बातचीत करते हुए उसकी ओर संकेत कर वह कहा करता था-''जरा उन महाशय की ओर देखो-वे जब भी तुम्हें कहीं मिल जाएं तो तुरन्त उन्हें मार देना उन्हें कोई अवसर देना ही नहीं। ध्यान करते समय वे उसमें बाधा डालने आ सकते हैं। जब भी तुम ध्यान में उनका चेहरा देखो, उन्हें तुरन्त वहीं का वहीं मार डालना, अन्यथा वे तुम्हारा पीछा करेंगे। ''

और वह यह भी कहा करता था-'' इन महाशय की ओर जरा ध्यान से देखो। यदि तुम इनका नाम दोहराओगे-क्योंकि बौद्ध मन-ही-मन दोहराते रहते हैं-नमो बुद्धाय, नमो: बुद्धाय-'' यदि तुम इनका नाम दोहराओगे, तब जाकर कुल्ला कर अपना मुंह साफ कर लेना। '' यह अपमान जनक बात है। यह बुद्ध का नाम है .और यह व्यक्ति कहता है-'' यदि तुम इनका नाम दोहराओगे तो पहला काम करना कि मुंह साफ कर कुल्ला कर लेना, क्योंकि तुम्हारा मुंह गंदा हो जाएगा। ''

और वह ठीक ही कहता है-क्योंकि शब्द तो शब्द हैं, अब इह चाहे बुद्ध का नाम हो या नहीं, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता। जब भी कोई शब्द तुम्हारे मन से होकर गुजरता है, वह गंदा हो जाता है। उसे धो लो। बुद्ध के नाम को भी धोकर अलग कर दो। और वह व्यक्ति, हमेशा अपने पीछे बुद्ध की पेन्टिंग रखते हुए प्रत्येक सुबह झुक कर उन्हें प्रणाम करता है। इसलिए उसके शिष्य पूछते थे-'' आप क्या कर रहे हैं यह? आप हम लोगों से तो कहते हैं-इस व्यक्ति को मार डालो, उसे अपने रास्ते में खड़े होने की भी अनुमति मत दो और आप कहते हैं- इनका नाम भी मत लो, मत जपो इनका नाम, यदिमुंह में नाम आ भी जाए तो जाकर अपना मुंह साफ कर लो। अब आप इन्हें झुककर प्रणाम कर रहे हैं। ''

और बांके कहता था-'' यह सब कुछ मुझे इन्हीं महाशय ने ही सिखाया है, इसलिए मुझे इनके प्रति सम्मान तो प्रकट करना ही है। ''

महाकाश्यप खिलखिलाकर हंस पड़ा और उसकी यह हंसी अपने साथ कई आयाम लिए हुए है। पहले तो वह मूर्खतापूर्ण सारी स्थिति है। एक बुद्ध मौन है और कोई भी उसे समझ नहीं पा रहा है प्रत्येक अपेक्षा कर रहा है कि वे बोलें। अपने जीवन- भर बुद्ध कहते रहे कि सत्य की अभिव्यक्ति शब्दों द्वारा नहीं की जा सकती, लेकिन फिर भी हर कोई अपेक्षा कर रहा है कि वे बोलें।

दूसरा आयाम है-वह बुद्ध पर भी हंसा, उनके द्वारा वह नाटकीय स्थिति उत्पन्न करने पर कि वह अपने हाथ में एक फूल लिए उसे देखे जा रहे हैं, इतनी अधिक व्याकुलता उत्पन्न कर रहे हैं और वहां बैठे प्रत्येक व्यक्ति को बेचैन बना रहे हैं। वह बुद्ध की इस नाटकीय भावाभिव्यक्ति पर भी हंसा।

इसका तीसरा आयाम है-वह स्वयं अपने आप पर भी हंसा। वह अब तक उसे समझ क्यों न सका? पूरी चीज इतनी अधिक सरल और सहज है और जिस दिन तुम इसे समझोगे-तुम हंसोगे क्योंकि इसमें समझने जैसा कुछ है ही नहीं, वहां हल करने को कोई पहेली है ही नहीं। हर चीज सदा से ही बहुत सरल और स्पष्ट है। तुम इसे चूकते क्यों रहे?

बुद्ध के मौन बैठने के साथ ही, वृक्षों पर गीत गाते पक्षी और पेड़ों से गुजरती हुई हवा और हर कोई व्याकुल हो उठा। महाकाश्यप समझ गया। वह क्या समझा? उसने समझा कि वहां समझने जैसा कुछ है ही नहीं, यहां कहने जैसा कुछ है ही नहीं और यहाँ स्पष्ट करने जैसा भी कुछ नहीं है। पूरी स्थिति है सरल और पारदर्शी। कुछ भी नहीं छिपा है उसमें। वहां खोजने की भी कोई जरूरत नहीं क्योंकिवह जो कुछ भी है, अभी और यहीं है, वह तुम्हारे ही अन्दर है।

वह स्वयं अपने आप पर ही हंसा, अपने कई जन्मों में किए जाते व्यर्थ के प्रयासों पर हंसा, केवल इस मौन को समझने के लिए इतना अधिक सोचने की मूर्खता पर हंसा।

बुद्ध ने उसे अपने पास बुलाया, उसे वह फूल दिया और कहा-'' मैं तुम्हें यह कुंजी सौंप रहा हूं। '' यह कुंजी कौन-सी है? मौन और उत्सुक्त हास्य ही वह कुंजी है-मौन स्वयं के अन्दर और हास्य बाहर। जब मौन के द्वारा हास्य सहज रूप से आता है तो वह इस संसार का न होकर दिव्य होता है। जब हंसी सोच विचार से आती है तो वह कुरूप होती है जब वह इस साधारण कीचड़- भरे संसार से आती है, तब वह ब्रह्मांडीय हास्य नहीं होता। तब तुम किसी और पर हंस रहे होते हो किसी और की कीमत पर, तब वह हास्य कुरूप और आक्रामक होता है। जब हास्य मौन से आता है तो तुम किसी और की कीमत पर नहीं हंस रहे होते हो। तुम केवल इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को परिहास मानकर हंस रहे होते हो। वह वास्तव में एक हास-परिहासमय चुटकुला होता है। यही कारण है कि मैं चुटकुले सुनाए चले जाता हूं.. क्योंकि इनमें शास्त्रों से भी कहीं अधिक सारगर्भित चीज है। यह हास परिहासमय इसलिए है, क्योंकि अपने अन्दर तुम प्रत्येक चीज लिए हुए हो और तुम उसे प्रत्येकस्थान में खोज रहे हो। इसके अलावा दूसरा अन्य कौन-सा मजाक हो सकता है? तुम सम्राट हो और सड़कके एक भिखारी की भांति अभिनय कर रहे हो, न केवल अभिनय कर रहे हो, न केवल दूसरों को धोखा दे रहे हो, बल्कि स्वयं अपने आपको भी धोखा दे रहे हो कि तुम एक भिखारी हो। तुम्हारे पास ही समस्त ज्ञान का स्रोत है और तुम प्रश्न पूछ रहे हो, तुम्हारे पास जानने वाला आत्मतत्व है और तुम सोचते हो कि तुम अज्ञानी हो। तुम्हारे अन्दर ही वह शाश्वत चेतना है और तुम मृत्यु और रोगों से भयभीत हो। यह सब कुछ वास्तव में एक मजाक है और यदि महाकाश्यप हंसा तो उसने ठीक ही किया।

लेकिन बुद्ध के अतिरिक्त इसे कोई भी न समझ सका। उन्होंने उसके हास्य को स्वीकार किया और तुरन्त अनुभव किया कि महाकाश्यप बोध को उपलब्ध हो गया। उस हंसी की गुणात्मकता उच्च आध्यात्मिक शक्ति से ओतप्रोत थी। वह उस स्थिति का पूरा परिहास भली- भांति समझ गए। वहां इसके अतिरिक्त और कुछ था ही नहीं। पूरी चीज कुछ ऐसी थी जैसे परमात्मा ही तुमसे लुका-छिपी का खेल, खेल रहा हो। दूसरों ने सोचा महाकाश्यप एक मूर्ख है, जो बुद्ध के सामने हंस रहा है, लेकिन बुद्ध ने सोचा कि वह व्यक्ति ही केवल प्रज्ञावान है। मूर्खों में हमेशा से एक सूक्ष्म प्रज्ञा होती है और प्रज्ञावान ही मूर्खों की भांति अभिनय करते हैं।

पुराने समय में सभी बड़े सम्राट हमेशा अपने दरबार में एक विदूषक रखते थे। उनके पास बहुत से बुद्धिमान व्यक्ति, सलाहकार, मंत्री और प्रधानमंत्री होते थे, पर साथ में एक मसखरा या विदूषक भी होता था। विश्व- भर में सभी बुद्धिमान और होशियार सम्राटों के पास, चाहे पूरब हो या पश्चिम, एक दरबारी मूर्ख मसखरा जरूर होता था। क्यों क्योंकि वहां कभी ऐसीचीजें भी होती थीं जिन्हें तथा कथित बुद्धिमान समझने में सफल नहीं होते थे और वह मूर्ख व्यक्ति ही समझ सकता था, क्योंकि वे तथाकथित बुद्धिमान लोग इतने मूर्ख होते थे कि उनकी चालाकी और बेईमानी उनके मन-मस्तिष्क को कुंद कर देती है।

एक बेवकूफ व्यक्ति सरल होता है, इसलिए एक बेवकूफ व्यक्ति की ही आवश्यकता होती है, क्योंकि कई बार कथित बुद्धिमान लोग कुछ नहीं कह पाते, क्योंकि वे सम्राट से डरते हैं। एक बेवकूफ व्यक्ति कन्नी किसी से भी नहीं डरता। वह बोलेगा जरूर, परिणाम चाहे कुछ भी हो। वही व्यक्ति मूर्ख होता है जो कभी परिणाम के बारे में सोचता ही नहीं।

कृष्ण भी अर्जुन से कुछ ऐसा ही कह रहे हैं-'' मूर्ख ही बन जाओ। परिणाम या फल के बारे में सोचो ही मत। केवल कर्म करो। ''

मूर्ख व्यक्ति इसी तरह से काम करते हैं, बिना यह सोचे हुए कि उनके करने से क्या होगा, क्या परिणाम निकलेगा। एक चालाक व्यक्ति हमेशा परिणाम के बारे में पहले सोच-विचार करता है और तभी कृत्य में उतरता है। विचार पहले करता है और कृत्य बाद में। एक मूर्ख व्यक्ति पहले करता है-, पहले कभी सोचता ही नहीं।

जब भी कोई व्यक्ति सर्वोच्च सत्ता का अनुभव करता है, वह तुम्हारे बुद्धिमान व्यक्तियों की तरह नहीं होता, वह हो भी नहीं सकता। वह तुम्हारे मूर्ख लोगों जैसा हो सकता है, लेकिन वह तुम्हारे बुद्धिमानों जैसा हो ही नहीं सकता। जब संत फ्रांसिस बोध को उपलब्ध हुए वे अपने को ' परमात्मा का मूर्ख ' कहकर पुकारा करते थे। पोप बुद्धिमान व्यक्ति था। जब संत फ्रांसिस उससे भेंट करने आए तो पोप ने भी सोचा कि यह व्यक्ति पागल हो गया है। वे बुद्धिमान, चालाक और हिसाबी–किताबी व्यक्ति थे, अन्यथा वह पोप बन ही कैसे सकते थे?

पोप बनने के लिए एक व्यक्ति को काफी राजनीति से गुजरना पड़ता है। पोप बनने के लिए संतत्व आवश्यक नहीं है, चतुराई की जरूरत है, चालाकी की जरूरत है, कूटनीति की जरूरत है प्रतियोगी आक्रामकता की जरूरत है, जिससे औरों को मुकाबले में एक तरफ अलग कर तुम अपना रास्ता बलपूर्वक बना सको और दूसरों का प्रयोग सीढ़ियों की तरह करते हुए उन्हें दूर फेंक सको। यह राजनीति है... क्योंकि पोप राजनीतिक सत्ता का भी प्रमुख होता है। धर्म दूसरे नम्बर पर है या कुछ भी नहीं है। वह एक धर्मशास्त्री हो सकता है, पर धार्मिक नहीं होता, क्योंकि एक धार्मिक व्यक्ति प्रतियोगिता कैसे कर सकता है? एक धार्मिक व्यक्ति पद के लिए लड़ते हुए आक्रामक कैसे हो सकता है? ऐसे लोग केवल राजनीतिज्ञ होते हैं।

संत फ्रांसिस पोप से भेंट करने आए और पोप ने सोचा कि यह व्यक्ति तो मूर्ख है, लेकिन वृक्षों, पक्षियों और मछलियों ने कुछ दूसरी तरह से सोचा। जब संत फ्रांसिस नदी पर गया तो मछलियां पानी में उत्सव मनाती उछलने लगीं कि संत फ्रांसिस आया है। हजारों लोग इस घटना के साक्षी बने। लाखों मछलियां एक साथ उछलीं और मछलियों के एक साथ उछलने से नदी और उसका पानी दिखाई देना बंद हो गया। संत फ्रांसिस आए हैं मछलियां इसीलिए आनन्दित थीं।

और वह जहां कहीं भी जाता था, पक्षी उड़ते हुए उसका अनुसरण करते थे। वे आते थे और उसके शरीर, गोद या सिर पर बैठ जाते थे। वे इस मूर्ख को, पोप की अपेक्षा अधिक समझते थे। यहां तक कि वृक्ष भी जो सूखकर मरने ही वाले थे, वे भी संत फ्रांसिस के निकट आते ही हरे होकर फूल उठते थे। ये वृक्ष भली- भांति समझते थे कि यह मूर्ख कोई साधारण मूर्ख न होकर-' परमात्मा का मूर्ख ' है।

जब महाकाश्यप हंसा, वह परमात्मा का मूर्ख था और बुद्ध इसे तुरन्त समझ गए क्योंकि वह कोई पोप नहीं थे। बाद के बौद्ध पुजारी और विद्वाना उसे न समझ सके, इसलिए उसके पूरे वृत्तान्त का उन्होंने अपने शास्त्रों में उल्लेख ही न किया।

मैं एक बार नव-बौद्धों के एक समुदाय के बीच चर्चा-परिचर्चा कर रहा था इसलिए मैंने उन लोगों को यह वृत्तान्त बताया।

वहां के बौद्ध पुजारी ने बाद में मेरे पास आकर कहा-'' आपने यह वृत्तान्त कहां से लिया है क्योंकि शास्त्रों में तो इसका कहीं उल्लेख ही नहीं है, यह झूठा है। आप जैसे व्यक्ति को ऐसी बात नहीं कहनी चाहिए जो किसी भी बौद्ध शास्त्र में न लिखी हो, क्योंकि लोग आपकी बात का विश्वास करते हैं। ''

मैंने उससे कहा-'' तुम अपने शास्त्र मेरे सामने लाओ, मैं उनमें यह वृत्तान्त जोड़ते हुए अपने हस्ताक्षर कर दूंगा और लिख दूंगा कि यह वृत्तान्त मैं जोड़ रहा हूं क्योंकि ऐसा वास्तव में हुआ और मैं वहां उसका साक्षी था। ''

वह पुजारी मेरी ओर देखने लगा। उसने यह निश्चित रूप से सोचा होगा- ''यह व्यक्ति पागल हो गया है। इससे बात करना ही फिजूल है। ''

मैंने उस पुजारी से कहा-'' मेरे पास कोई शक्ति तो नहीं है, पर मेरे पास आदेश देने का अधिकार है... ''शक्ति तो राजनीतिज्ञों के पास होती है, लेकिन धार्मिक व्यक्ति के पास अधिकार होता है। शक्ति दूसरों पर निर्भर होती है-वे उसे तुम्हें देते हैं- लेकिन अधिकार स्वयं अपने अन्दर से आता है इसलिए मैंने उससे कहा-'' मैं उसका साक्षी था। मैं तुम्हें अपने हस्ताक्षर करते हुए इस बात को तुम्हें लिखकर दे सकता हूं कि मैं इसका. साक्षी था। ऐसा ही हुआ था। तुम किसी तरह शास्त्रों में इसका उल्लेख करना भूल गए लेकिन इसमें मेरा कोई कुसूर नहीं है। मैं इसके लिए जिम्मेदार नहीं हूं। यदि तुम अपने शास्त्रों में इसका उल्लेख करना भूल गए। ''

इससे पूर्व वह व्यक्ति, वह पुजारी प्राय: मेरे पास आता रहता था, लेकिन अब उसने आना बन्द कर दिया और वह फिर कभी नहीं आया। एक मृत शास्त्र, एक पुजारी के लिए एक जीवित व्यक्ति की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण हैं। मैं भले ही यह कहूं कि मैं उसका साक्षी हूं फिर भी मेरा विश्वास नहीं किया जा सकता। बौद्धों के शास्त्रों में इस वृत्तान्त का उल्लेख ही नहीं किया, क्योंकि बुद्ध के सामने हंसना एक अधार्मिक कृत्य है जिसे एक महान धर्म के मूल स्रोत में सम्मिलित करना ठीक नहीं है। यह कोई अच्छा उदाहरण नहीं है कि बुद्ध के सामने एक व्यक्ति हंसे और यह भी अच्छा उदाहरण नहीं है कि बुद्ध, सारिपुत्र, आनन्द, मौदगल्यायन और दूसरे अति महत्वपूर्ण लोगों को छोड्कर ऐसे व्यक्ति को कुंजी सौंप दें।

और अंतत: यह वही लोग थे-सारिपुत्र, आनन्द और मौदगल्यायन-जिन्होंने बुद्ध के वचनों को स्मृति के आधार पर लिखकर शास्त्र रचे। महाकाश्यप से कभी इस बारे में कुछ पूछा ही नहीं गया। तो यदि उससे पूछा भी गया होता तो भी वह उत्तर देता ही नहीं, लेकिन महाकाश्यप से तोकभी सलाह भी नहीं ली गई कि वह कुछ लिखने जा रहे हैं।

जब बुद्ध ने शरीर छोड़ दिया तो सभी भिक्षु एकत्रित हुए और उन्होंने वह सब कुछ लिपिबद्ध करना प्रारम्भ कर दिया, जो कुछ बुद्ध के निकट घटा था। किसी ने महाकाश्यप से पूछा ही नहीं। इस व्यक्ति की पूरे संघ ने अवश्य उपेक्षा की होगी। पूरा भिक्षु-समुदारय उससे अवश्य ही ईर्ष्या का अनुभव करता होगा। एक ऐसे व्यक्ति को कुंजी सौंप दइाई गई थी जो अज्ञात था, जो कोई महान विद्वान या ज्ञानी न था। उसे पहले से कोई भी न जानता था और अचानक उस सुबह वह सबसे अधिक महत्वपूर्ण व्यक्ति बन गया था- अपनी इस असाधारण हंसी और मौन के कारण।

एक तरह से वे लोग ठीक भी थे, क्योंकि तुम मौन को कैसे लिपिबद्ध कर सकते हो? तुम शब्दों को लिपिबद्ध कर सकते हो, तुम उसे लिपिबद्ध कर सकते हो, जो तुमने घटते हुए देखा, तुम उसे कैसे लिपिबद्ध कर सकते हो जो घटता हुआ दिखाई ही नहीं दिया? वे बस यही जानते थे कि फूल महाकाश्यप को दिया गया और उसके सिवाय और कुछ भी नहीं।

लेकिन वह फूल तो बस एक वाहक का खोल था। वह अपने साथ बुद्ध के आंतरिक अस्तित्व की छुअन और बुद्धत्व की सुवास लिए हुए था, जो आंखों से नहीं देखी जी सकती और न लिपिबद्ध की जा सकती थी। पूरी-की-पूरी घटना ऐसे लगती थी जैसे वह कभी घटी ही नहीं अथवा घटी तो केवल एक सपने में।

जो लिपिबद्ध करने वाले लोग थे, वे शब्दों के जानकार थे, वे मौखिक संवादों, चर्चा-परिचर्चा, बातचीत और तर्कों में बहुत कुशल थे, लेकिन महाकाश्प के बारे में उस घटना के बाद कभी कुछ सुना ही नहीं गया। बस केवल एक ही बात उसके बारे में ज्ञात है, जो उन लोगों के लिए इतनी छोटी-सी बता थी कि उसका शास्त्रों में वे उल्लेख करना भूल गए। तब से महाकाश्यप मौन ही रहा और मीन में ही वह अंतर्सरिता प्रवाहित होती रही। वह कुंजी मौन में ही दूसरों को दी जाती रही और वह कुंजी आज भी जीवन्त है, जो अब भी बंद द्वारों को खोलती है।

यह दो ही भाग हैं इसके। पहला है- आंतरिक मौन, जो इतना गहना है कि तुम्हारे अस्तित्व या होने में उसकी कोई तरंग भी नहीं है। तुम हो, लेकिन वहां तरंगें नहीं हैं। तुम बिना लहरों का जैसे एक गहरा तालाब हो, जिसमें कोई तरंग उठती ही नहीं। तुम्हारा पूरा अस्तित्व स्थिर और मौन है। तुम्हारे अंदर केन्द्र पर गहन मौन है और परिधि पर उत्सव, आनन्द और हंसी है। केवल मौन ही हंस सकता है क्योंकि केवल मौन ही इस ब्रह्माण्डीय हास-परिहास को समझ सकता है।

इसलिए तुम्हारा जीवन एक महत्वपूर्ण उत्सव बन जाता है। तुम्हारे सम्बन्ध त्यौहार मनाने की तरह बन जाते हैं। तुम जो कुछ भी करते हो, प्रत्येक क्षण एक त्यौहार ही होता है।

तुम भोजन करते हो, तुम्हारा भोजन करना एक उत्सव बन जाता है। तुम बात चीत करते हो तो बात करना एक उत्सव बन जाता है। तुम खान करते हो तो सान करना एक उत्सव बन जाता है एक -दूसरे से सम्बन्ध भी उत्सवमय हो जाते हैं। तुम्हारा बाहरी जीवन एक त्यौहार बन जाता है जिसमें कोई उदासी होती ही नहीं। गहन मौन के साथ उदासी रह कैसे सकती है? लेकिन साधारणतय: तुम अन्यथा सोचते हो तुम सोचते हो कि यदि तुम मौन रहोगे तो उदास हो जाओगे। सामान्य रूप से तुम सोचते हो कि यदि तुम मौन रहते हो तो उदासी से कैसे बच सकते हो? मैं तुमसे कहता हूं जिस मौन में उदासी विद्यमान है, वह सच्चा और वास्तविक मौन है ही नहीं। कुछ-न-कुछ कहीं गलत हो गया है। तुम मार्ग भूल गए हो, तुम पगडंडी छोड़ भटक गए हो। केवल आनन्द उत्सव ही इस बात का प्रमाण है कि तुम्हें वास्तविक मौन घटित हुआ है। एक असली और नकली मौन के मध्य अंतर क्या है? एक नकली मौन हमेशा बलपूर्वक प्रयास के द्वारा प्राप्त किया जाता है। वह सहज और स्वाभाविक नहीं होता, वह स्वत: घटता नहीं। तुमने उसे स्वयं होने के लिएविवश किया है। तुम शांत बैठे हुए हो, पर तुम्हारे अंदर बहुत कुछ कौलाहल है। तुमने उसे दबा दिया है और तब तुम हंस नहीं सकते, तुम उदास बने रहोगे, क्योंकि हंसना खतरनाक होगा। यदि तुम हंसोगे तो मौन खो दोगे क्योंकि खिल खिलाकर हंसते हए तुम उसे दबा नहीं सकते। खिल खिलाकर हंसना दमन के विरुद्ध है। यदि तुम उसे दबाना चाहते हो तो तुम्हें हंसना चाहिए यदि तुम हंसते हो तो हर चीज बाहर आ जाएगी। जो सच्चा और वास्तविक है, वह बाहर जा जाएगा और जो नकली है, वह खो जाएगा।

इसलिए जब कभी तुम किसी संत को उदास देखो तो भली- भांति जानना कि उसका मौन नकली है। वह न हंस सकता है और न आनन्दित हो सकता है क्योंकि वह भयभीत है। यदि वह हंसता है तो हर चीज टूट-फूट जाएगी, उसका दमन बाहर आ जाएगा और तब वह पुन: उसे दबाने में समर्थ न हो सकेगा। छोटे बच्चों को देखो। जब तुम्हारे घर में मेहमान आते हैं, तुम बच्चों से कहते हो-' हंसी मत '-वे क्या करते हैं? वे अपना मुंह बंद कर अपनी सांस दबा लेते हैं, क्योंकि यदि वे अपनी सांस को दबाएंगे नहीं तो हंसी बाहर निकल पड़ेगी। तब कठिन होगा। वे किसी ओर देखते ही नहीं, क्योंकि यदि वे किसी वस्तु या व्यक्ति की ओर देखेंगे तो वे भूल जाएंगे। इसलिए वे अपनी औखें मूंद लेते हैं या लगभग बंद कर लेते हैं और अपनी सांस रोक लेते हैं। यदि तुम अपनी सांस को दबाते हो तो सांस गहराई में नहीं जा सकती। हंसी के लिए गहरी सांस की आवश्यकता होती है यदि तुम हंसते हो तो गहरी सांस छोड़ोगे। यही कारण है कि कोई भी गहरी सांस न लेकर उथली सांस लेता है क्योंकि अपने बचपन में और उसके बाद काफी कुछ दमन किया है, इसलिए तुम गहरी सांस नहीं ले सकते। यदि तुम गहरी सांस लेते हो तो तुम भयभीत हो उठते हो। सांस के द्वारा तुमने कामवासना का दमन किया है। सांस के द्वारा तुमने हंसी दबाई है और अपने क्रोध का दमन भी उथली सांस लेते हुए किया है। सांस ही दबाने या मुक्त

करने की प्रणाली है इसलिए मेरा सारा जोर अराजक सांस पर है, क्योंकि यदि तुम अराजक रूप से गहरी सांस लेते या छोड़ते हो तब हंसी, अट्टहास और दर्द भरी चीखें सभी कुछ बाहर निकलेंगी और तुम अपना सारा दमन बाहर फेंक दोगे।

इन्हें किसी अन्य तरीके से बाहर नहीँ फेंका जा सकता क्योंकि सांस के द्वारा ही तुमने इनका दमन किया है।

किसी भी चीज को दबाने की कोशिश करो, तुम करोगे क्या? तुम गहरी सांस नहीं लोगे, तुम उथली सांस लोगे, तुम फेफड़ों के ऊपर के भाग से ही सांस लोगे। तुम सांस के द्वारा गहरे नहीं जाओगे क्योंकि गहराई में दमन भरा है। पेट में ही तुमने हर चीज दबा रखी है इसलिए जब तुम असली हंसी हंसते हो तो पेट में कम्पन होते है, और इसीलिए बुद्ध की पेन्टिंग में उनके पेट को बड़ा चित्रित गया है। पेट है परम विश्रामपूर्ण स्थान और पेट को ही हमने दमन की टंकी बना रखा है।

यदि तुम किसी संत को उदास देखो तो वहां मात्र उदासी ही होगी, लेकिन वहां संतत्व न होगा। उसने किसी तरह अपने को शांत बना लिया है, लेकिन प्रत्येक क्षण वह भयभीत रहता है। कोई भी चीज उसे व्याकुल कर सकती है।

किसी भी चीज से कोई भी बाधा नहीं पड़ती, यदि वास्तविक मौन घटित हुआ है। तब प्रत्येक चीज उसे विकसित करने में सहायता करती है। यदि तुम वास्तव में शांत हो गए हो तो तुम बाजार में भी बैठ सकते हो और बाजार का शोर भी तुम्हें अशांत नहीं कर सकता। वस्तुत: तुम बाजार के शोर को मौन निर्मित करने के लिए कच्चे माल की तरह लेते हो और वह शोर ही तुम्हारे अंदर मौन को घना बना देता है। वास्तव मौन को महसूस करने के लिए बाजार का शोर मौन की पृष्ठभूमि बन जाता है और उसकी तुलना में मौन और सघन हो जाता है। तुम बाजार के शोर के विरुद्ध, आंतरिक मीन के बुलबुलों का उठना महसूस कर सकते हो।

हिमालय जाने की कोई जरूरत ही नहीं है और यदि तुम वहां जाते हो तो क्या देखोगे? हिमालय की शांति के विरुद्ध तुम अपने मन में उठती व्यथ की बकवास और शोर सुनोगे। तब तुम अधिक शोर का अनुभव करोगे क्योंकि उसके विरुद्ध पृष्ठभूमि में मौन और शांति है। जब मौन पृष्ठभूमि है तो तुम अपने मन के अंदर का शोर ही सुनोगे '। यदि तुम्हें सच्चा मौन घटा है और तुम निर्भय हो तो इसे वापस नहीं लिया जा सकता। कोई भी उसमें विघ्र नहीं डाल सकता। जब मैं कहता हूं-' कुछ भी नहीं, तो मेरा तात्पर्य कुछ नहीं ही से है। कोई भी चीज उसमें बाधा नहीं डाल सकती और यदि कोई चीज ऐसा करती है तो तुम्हारा मौन बलपूर्वक विकसित किया गया, प्रयास से लाया गया मौन है। तुमने किसी तरह उसकी व्यवस्था कर ली है, लेकिन व्यवस्था करके लाया गया मौन, मौन है ही नहीं, वह ठीक एक व्यवस्था किए गए प्रेम जैसा है। ' यह संसार इतना अधिक पागल है और माता-पिता, शिक्षक और नीतिवादी और भी अधिक पागल हैं जो बच्चों को प्रेम करना सिखाते हैं। माताएं अपने बच्चों से कहती हैं-" मैं तुम्हारी मां हूं मुझे प्रेम करो। " जैसे बच्चा प्रेम करने के लिए कुछ कर सकता है। बच्चा क्या कर सकता है? पति अपनी पत्नियों से कहे चले जाते हैं-" मैं तुम्हारा पति हूं मुझे प्रेम करो " जैसे प्रेम करना एक कर्त्तव्य है, जैसे प्रेम कुछ ऐसा है जिसे किया जा सकता है। कुछ भी नहीं किया जा सकता। केवल एक चीज की जा सकती है-तुम बहाना बना सकते हो।

और एक बार तुमने सीख लिया कि प्रेम करने का बहाना कैसे किया जाता है तो तुम चूक गए। तुम्हारा पूरा जीवन ही गलत हो जाएगा। तब तुम बहाने ही बनाते रहोगे कि तुम प्रेम करते हो। तब तुम मुस्कराओगे और बहाना बना रहे होगे, तब तुम हंसोगे और वह भी हंसने का एक बहाना ही होगा। तब हर चीज नकली ही होती है। तब तुम शांत मौन बैठने का भी बहाना बनाओगे तब तुम ध्यान करोगे और ध्यान में होने का बहाना बनाओगे। बहाना बनाना तब तुम्हारी एक जीवन-शैली बन जाता है।

बहाना मत. बनाओ। जो वास्तविकता है, उसे प्रकट होने दो। यदि तुम प्रतीक्षा करते हुए धैर्यवान बने रहे तो जब सारे बहाने विदा हो जाएंगे तुम्हें वहां प्रतीक्षा करता सत्य मिलेगा जिसमें कभी भी विस्फोट हो सकता है। बहानों को गिराने के लिए ही रेचन है। दूसरों की ओर देखो ही मत कि वे करा कह रहे हैं क्योंकि इसी कारण तुम बहाने बनाते रहे और अब भी बहाने बना रहे हो।

तुम प्रेम नहीं कर सकते-या तो वह वहां है नहीं है, लेकिन मां कहती है- क्योंकि मैं तुम्हारी मां हूं.. और पिता कहता है-क्योंकि मैं तुम्हारा पिता हूं और शिक्षक कहता है-मैं तुम्हारा गुरु हूं इसलिए मुझे प्रेम करो, जैसे प्रेम एक तर्कपूर्ण चीज है। मैं तुम्हारी मां हूं इसलिए मुझे प्रेम करो-बच्चा आखिर करेगा क्या? तुम बच्चे के लिए ऐसी समस्याएं उत्पन्न कर रहे हो कि वह कल्पना तक न कर सके कि उसे क्या केरना चाहिए। वह बहाने बना सकता है। वह कह सकता है-'' हां, मैं तुम्हें प्रेम करता हूं। '' और एक बार बच्चा कर्तव्य मानकर यदि अपनी मां को प्रेम करता है तो वह किसी भी स्त्री से प्रेम करने में अक्षम हो जाएगा। तब पत्नी आएगी और तुम कर्त्तव्य निभाओगे, तब बच्चा आएगा और प्रेम करना उसका कर्त्तव्य होगा। तब जीवन- भर तुम कर्त्तव्य निभाते रहोगे। वह एक उत्सव नहीं बन सकता-तुम हंस नहीं सकते, तुम आनन्दित नहीं हो सकते। वह एक बोझा सा होगा जिसे तुम ढोते जाओगे। ऐसा ही तुम्हारे साथ हुआ है। यह एक दुर्भाग्य है, लेकिन यदि तुम इसे समझते हो तो तुम इसे छोड़ सकते हो।

यही है वह कुंजी-जिसके अन्दर का भाग है मौन और कुंजी के बाहर का भाग है उत्सव, आनन्द और हास्य। हर दिन त्यौहार मनाते रहो और मौन बने रहो। अपने चारों ओर अधिक-से- अधिक संभावना उत्पन्न करो। अंदर बलपूर्वक शांत और मौन होने का प्रयास मत करो, बस अधिक-से- अधिक सभावनाएं उत्पन्न करो अपने चारों ओर, जिससे तुम्हारा आंतरिक मौन पुष्पित हो सके। अधिक-से अधिक-हम यही कर सकते हैं। हम मिट्टी में बीज तो दबा सकते हैं लेकिन हम उसे अंकुरित होने या पौधा बन उगने के लिए विवश नहीं कर सकते। हम स्थिति तो उत्पन्न कर सकते है, हम उसकीं सुरक्षा कर सकते हैं हम जमीन में खाद लगा सकते हैं, हम उसे पानी से सींच सकते हैं, हम देख सकते हैं कि सूरज की किरणें उस तक पहुंच रही हैं या नहीं अथवा उसे कितनी धूप की जरूरत है, अधिक या कम। हम खतरों को टाल सकते हैं और प्रार्थनपूर्ण चित्तवृत्ति के साथ प्रतीक्षा कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त हम और कुछ भी नहीं कर सकते। केवल हम स्थिति निर्मित कर सकते हैं।

जब मैं तुमसे ध्यान करने के लिए कहता हूं तो उससे मेरा यही तात्पर्य होता है। ध्यान करना बस एक स्थिति निर्मित करना भी है, उसके परिणामस्वरूप मौन नहीं आने वाला। नहीं, ध्यान बस भूमि को तैयार करना है, उसके आस-पास की भूमि को भुरभुरा बनाने जैसा है। बीज वहां हमेशा से पहले ही पड़ा हुआ है। तुम्हें उसमें बीज रखने की कोई जरूरत नहीं बीज तो तुम हमेशा साथ लेकर ही आते हो। वह बीज है परमात्मा या आत्मा का-वह बीज तुम स्वयं हो। केवल स्थिति निर्मित करो और बीज जीवन्त हो उठेगा। उसमें अंकुर फूटेंगे और पौधे का जन्म होगा और तुम विकसित होना शुरू हो जाओगे।

ध्यान तुम्हें मौन तक नहीं ले जाता, ध्यान तो केवल स्थिति निर्मित करता है जिसमें मौन घटता है। यही मानदण्ड होना चाहिए कि जब कभी भा मौन घटे, तुम्हारे जीवन में हास्य आएगा ही। एक महत्वपूर्ण उत्सव तुम्हारे चारों ओर घटने लगेगा। न तो तुम उदास रहोगे और न तुम निराश बने रहोगे और न तुम संसार से भागोगे। तुम इसी संसार में यहीं रहोगे, लेकिन पूरी चीज को तुम एक खेल की तरह लोगे, तुम एक सुंदर खेल की तरह पूरी चीज का मजा लोगे। पूरा जीवन एक बड़ा नाटक बन जाएगा और उस बारे में लम्बी गम्भीरता नहीं रहने वाली क्योंकि गम्भीर रहना एक बीमारी है।

बुद्ध महाकाश्यप के बारे में जरूरत जानते रहे होंगे। जब वे मौन बने फूल की ओर देख रहे थे तो वे जरूर जानते होंगे कि प्रत्येक व्यक्ति बेचैन और उद्विग्न है, सिवाय एक व्यक्ति महाकाश्यप के जो जरा भी परेशान नहीं हैं। महाकाश्यप के तरिक मौन का बुद्ध ने अवश्य ही अनुभव किया होगा, लेकिन उन्होंने उसे तब नहीं बुलाया। जब वे खिल खिलाकर हंसे, तभी उन्हें बुद्ध ने पास बुलाकर वह पुष्प दिया। क्यों? मौन तो उस घटना का आधा भाग था। महाकाश्यप यदि मौन ही बने रहते और हंसते नहीं तो वह चूक गए होते। तब उन्हें वह कुंजी न दी गई होती। तब वह आधा ही विकसित हुआ होता, वह विकसित पल्लवित पुष्पित वृक्ष न बनता, उसमें फूल न लगे होते। वृक्ष तो वहां था, लेकिन अभी उसमें पुष्प न खिले थे। बुद्ध प्रतीक्षा करते रहे। अब मैं तुम्हें बताऊंगा किबुद्ध इतनी देर तक प्रतीक्षा क्यों करते रहे, क्यों उन्होंने एक-दो या तीन घंटे तक प्रतीक्षा की। महाकाश्यप मौन था,

लेकिन वह हंसी को अपने ही अंदर रखने की कोशिश कर रहा था, वह हंसी को नियंत्रित करने का प्रयास कररहा था। वह न हंसने की इसलिए कोशिश कर रहा था क्योंकि वह अशिष्टता होती, क्या सोचेंगे बुद्ध? क्या दूसरे लोग सोचेंगे? लेकिन तब, कहानी कहती है-वह उस हंसी को अपने तक सीमित न रख सका। मौन बहुत अधिक सघन हो गया, उसे हास्य के रूप में बाहर आना ही था। जब हंसी बाढ़ बन गई तो उसने सारे तटबंध तोड़ दिए। वह उसे रोक न सका। जब मौन बहुत अधिक सघन हो जाता है तो वह उम्युका हास्य बन जाता है। वह जैसे बाढ़ से उफनने लगता है और सभी दिशाओं में अतिरेक से बहना शुरू हो जाता है। वह हंसा, वह जरूर ही पागल कर देने वाला उनुक्त हास्य रहा होगा और उस हास्य में महाकाश्यप बचा ही न होगा। मौन ही हंस रहा था और मौन की खिलावट ही हास्य थी।

तब तुरन्त ही बुद्ध ने उसे अपने पास बुलाकर कहा-'' महाकाश्यप! यह फूल लो, यही है कुंजी। जो कुछ शब्दों द्वारा दिया जा सकता था, मैंने वह सब कुछ दूसरों को पहले ही दे दिया है, लेकिन तुझे मैं वह दे रहा हूं जो शब्दों द्वारा नहीं दिया जा सकता। वह सन्देश शब्दों के पार है और वही सबसे अधिक सारभूत है, जिसे मैं तुझे दे रहा हूं। ''

बुद्ध कुछ घंटों तक प्रतीक्षा करते रहे जिससे महाकाश्यप का मौन इतना सघन हो जाए कि उसमें बाढ़ आ जाए और वह उफन कर अतिरेक से बहने लगे, वह उत्सुक्त हास्य बन जाए।

तुम्हारा बुद्धत्व केवल तभी पूर्ण है, जब मौन एक उत्सव आनन्द बन जाए। इसीलिए मेरा जोर है कि ध्यान करने के बाद तुम्हें उत्सव मनाना चाहिए। मौन रहने के बाद तुम्हें उसका मजा लेना ही चाहिए। तुम्हें अहोभाव प्रकट करने के लिए नाचना चाहिए। सम्पूर्ण अस्तित्व के प्रति जिसने तुम्हें यह अवसर दिया कि तुम यहां हो, जिससे तुम ध्यान कर सकते हो, जिससे तुम मौन में जा सकते हो और जिससे तुम हंस सकते हो। तुम्हें उसके प्रति कृतज्ञता और अहोभाव प्रकट करना ही चाहिए।

क्या कुछ और?

प्रश्न: करे ओशो? बुद्ध के आस-पास कई लोगो को बुद्धत्व घटा
लेकिन फिर भी उन्होने इस एक बोध को प्राप्त व्यक्ति के प्रति कुछ
विशिष्ट करुणा का अनुभव किया।
क्या बुद्धत्व घटने में भी कुछ चीजें भिन्न होती है

हां! बुद्ध के चारों ओर कई लोगों को बुद्धत्व घटा, लेकिन कुंजी केवल उसी को सौंपी जा सकती थी, जो स्वयं अपने में एक सद्गुरु होने की योग्यता रखता हो, क्योंकि वह कुंजी आगे ही और- और लोगों को सौंपी जाती थी। उसे जीवित बनाए रखना था। वह महाकाश्यप के रखने के लिए कोई कोश बनने नहीं जा रहा था वह एक महान उत्तर दायित्व था जो किसी और को सौंपा जाना था।

वहां बुद्धत्व को प्राप्त दूसरे व्यक्ति भी थे, लेकिन उन्हें कुंजी नहीं सौंपी जा सकती थी वह कुंजी उन्हीं के साथ खो सकती थी। वास्तव में बुद्ध तो ठीक व्यक्ति को ही चुना, क्योंकि वह कुंजी आज भी जीवित है। महाकाश्यप ने ठीक ही किया। वह ऐसा दूसरा व्यक्ति खोज सका जो कुंजी किसी और को हस्तांतरित कर सके। प्रश्न है सही व्यक्ति को खोजने का। केवल बुद्धत्व घटना ही काफी नहीं है क्योंकि सभी बोध को उपलब्ध-व्यक्ति सद्गुरु नहीं होते-उनमें भेद करना ही होता है।

जैनियों ने इसकी विशिष्टताओं का सुंदर विभाजन किया है। उनके यहां दो तरह के बुद्ध होते हैं। बोध को प्राप्त एक तरह के व्यक्तियों को ' केवली ' कहा जाता है जो अपने अकेलेपन में ही पूर्गता को प्राप्त हो जाता है। वह पूर्ण निर्दोष और विकसित हो जाता है, लेकिन वह शिक्षक नहीं बन सकता। वह यह पूर्णता किसी अन्य को नहीं दे सकता। वह एक सद्गुरु नहीं होता, वह मार्ग निर्देशन नहीं कर सकता। वह स्वयं तो सर्वोच्च शिखर पर पहुंच जाता है लेकिन जो कुछ उसने जाना है, वह किसी और को हस्तांतरित नहीं कर सकता।

दूसरी तरह के बुद्धों को तीर्थंकर कहा जाता है, जो दूसरों के लिए वाहन बन सकता है। वह बुद्धत्व को प्राप्त होने के साथ एक सद्गुरु भी होता है। जो शब्दों के द्वारा उसे सम्प्रेषित करने की विशिष्ट कला जानता है

और उसे मौन के द्वारा भी प्रति संवेदित कर सकता है। वही सन्देश दे सकता है और दूसरे भी उसके द्वारा बोध को प्राप्त हो सकते हैं।

बुद्ध ने कहा-'' जो कुछ शब्दों के द्वारा कहा जा सकता था, मैंने तुम लोगों को बता दिया। जो शब्दों के द्वारा नहीं दिया जा सकता, वह मैं महाकाश्यप को देता हूं। ''महाकाश्यप मौन का सद्गुरु था। अपने मौन के द्वारा ही वह सिखा सके और अपने कार्य को आगे बढ़ाते रहे। यह इतना सारभूत और आवश्यक नहीं था, यह परिधि पर था, लेकिन यह भी जरूरी था क्योंकि बुद्ध के वचनों को लिपिबद्ध किया जाना था। जो बुद्ध ने कहा और किया उसे लिपिबद्ध कर एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को स्थानांतरित करना भी आवश्यक था। यह आवश्यक था, लेकिन यह कार्य परिधि पर था। उनके परम विद्वान-मौगल्यायन, आनंद और सारिपुत्र हर चीज लिपिबद्ध कर सकते थे। वह एक अमूल्य कोष था क्योंकि बुद्ध का होना दुर्लभ घटना है। सभी का लिपिबद्ध किया जाना जरूरी था। एक भी शब्द नहीं छूटना चाहिए था, क्योंकि कौन जाने, वही एक शब्द किसी एक के लिए बुद्धत्व का स्रोत बन जाए लेकिन साथ ही मौन की सम्पदा को भी आगे ले जाना था इसीलिए दो परम्पराएं वहां विद्यमान थीं- शास्त्रों और शब्दों की परम्परा और मौन की परम्परा। बहुत से लोग बुद्धत्व को प्राप्त हुए और जिस क्षण वे बोध को प्राप्त हुएक् वे इतने शांत और मौन हो गए वे अपने आप में इतने अधिक संतुष्ट हो गए कि उनके अंदर दूसरों की सहायता करने की कामना भी जाग्रत नहीं हुई।

लेकिन जैन परम्परा कहती है कि तीर्थंकर वह व्यक्ति है जिसने कुछ कर्मों का संचय किया है-यह अजीब बात है-चूंकि उसने कुछ कर्मों का संचय किया है इसलिए दूसरों को संदेश सम्प्रेपित करते हुए ही उसे इस कर्म को पूरा करना है। अ कोई बहुत अच्छी चीज नहीं है, कर्म का होना अच्छी चीज नहीं है। अपने पूर्व जन्म में उसने सद्गुरु होने के लिए कुछ कर्मों का संचय किया था। यह कोई अच्छी चीज नहीं है, क्योंकि उसे कुछ तो करना ही है, कोई चीज पूरी की जानी है और उसे उसको करना ही चाहिए तभी उसके कर्म पूरे होंगे और तभी वह मुक्त हो सकेगा।

दूसरों की सहायता करने की कामना, फिर भी एक कामना ही है। दूसरों के प्रति करुणा में भी ऊर्जा दूसरों की ओर गतिशील हो रही है। सभी कामनाएं तो मिट गई, लेकिन दूसरों को सहायता करने की एक कामना बनी रही। यह भी एक कामना ही है और जब तक यह कामना भी न मिट जाए इस व्यक्ति को जन्म लेने फिर वापस आना पड़ेगा।

इसलिए एक सदगुरु वह होता है, जो बुद्धत्व को प्राप्त तो हो ही गया, लेकिन एक कामना शेष'रही, यह. कामना, बुद्धत्व के घटने में बाधा नहीं बनती-दूसरों की सहायता से बुद्धत्व घटने में ही सहायता मिलती है-लेकिन तुम फिर भी शरीर से तादात्म्य जोड़े रहते हो। सभी स्रोतों से करना हो जाता है, केवल एक सोता बहता रहता है.. .केवल एक सेतु बना रहता है।

वहां बुद्धत्व को प्राप्त और भी व्यक्ति थे, लेकिन उन्हें कुंजी न दी जा सकती थी। वह महाकाश्यप को ही दी जानी थी क्योंकि उसके अन्दर दूसरों की सहायता करने की कामना थी-' अपने पूर्व जन्मों के कर्मों के कारण। वह एक तीर्थंकर बन सकता था, वह एक कुशल और पूर्ण सद्गुरु बन सकता था और उन्होंने ठीक ही किया। बुद्ध का चुनाव पूरी तरह ठीक था-क्योंकि वहां बुद्ध का एक अन्य शिष्य भी था, जिसे भी वह कुंजी सौंपी जा सकती थी। उसका नाम सुभूति था। वह भी महाकाश्यप की भांति मौन था, उससे भी कहीं अधिक मौन। तुम्हारे लिए यह समझना कठिन होगा कि मौन भी अधिक कैसे हो सकता है, पूर्णता और पूर्ण कैसे हो सकती है? ऐसा होना सम्भव है, लेकिन यह साधारण गणित के पार है। तुम पूर्ण हो सकते हो, लेकिन फिर भी तुम उससे भी कहीं अधिक पूर्ण बन सकते हो क्योंकि पूर्णता का भी विकास होता है और वह विकसित होते हुए अनन्त हो जाती है।

बुद्ध के आस-पास जितने भी लोग थे उनमें सुभूति सबसे अधिकमीन तथा शांत व्यक्ति था। महाकाश्यप से भी कहीं अधिक मौन, लेकिन अत्यधिक मौन होने के कारण कुंजी उसे नहीं सौंपी जा सकती थी। पहली बात तो यह कि वह हंसता ही नहीं.. .इसे अभिव्यक्त करना बहुत कठिन होगा, तुम अब एक अत्यंत जटिल घटनाक्रम में प्रवेश कर रहे हो। कुंजी उसे नहीं सौंपी जा सकती थी क्योंकि वह हंस नहीं सकता था। वह जैसे वहां उपस्थित

था ही नहीं। वह इतना अधिक शांत और मौन था कि वह हंसने के लिए जैसे वहां था ही नहीं, हास्य को अपने तक रखने या न रखने के लिए भी' वह वहां जैसे था ही नहीं। यदि बुद्ध उसे बुलाते हुए कहते, 'सुभूति मेरे पास आओ ' तो भी वह उनके निकट न गया होता। बुद्ध को ही उसके पास जाना होता।

सुभूति के सम्बन्ध में यह कहा जाता है कि एक दिन वह एक वृक्ष के नीचे बैठा हुआ था। जब अचानक बिना फूलों के मौसम के उस वृक्ष से फूल झरने लगे इसलिए उसने अपनी आंखें खोलीं। आखिर मामला क्या है? वृक्ष में कलियां भी नहीं आई थीं और न उसके पुष्पित होने का वह मौसम ही था, तब अचानक कहां से लाखों पुष्प झरने लगे? उसने देखा कि वृक्ष के ऊपर आकाश में चारों ओर से बहुत से देवता उस पर पुष्पों की वर्षा कर रहे थे। उसने देवताओं से यह भी नहीं पूछा कि आप लोग ऐसा क्यों कर रहे हैं और उसने अपनी आंखें पुन: बंद कर लीं।

तब उन देवताओं ने कहा-'' सुभूति हम लोग आपको धन्यवाद देने और अहोभाव प्रकट करने के लिए ही आए हैं कि आपने शून्यता पर इतना सुन्दर प्रवचन दिया। '' –

और सुभूति ने कहा-'' लेकिन मैंने तो एक शब्द भी नहीं कहा, फिर आप लोग मुझे शून्यता पर दिए प्रवचन के लिए धन्यवाद क्यों दे रहे हैं? ''

देवताओं ने कहा-'' न आपने कुछ कहा और न हम लोगों ने कुछ सुना- और शून्यता पर यही परिपूर्ण प्रवचन है। ''

वह इतना अधिक खाली और शून्य हो गया था कि पूरे ब्रह्माण्ड ने उस शून्यता का अनुभव किया और देवताओं को उस पर पुष्प बरसाने आना पड़ा।

सुभूति वहां उपस्थित था, लेकिन वह इतना अधिक खाली और मौन था कि वह होते हुए भी वहां था ही नहीं। उसे इससे भी कोई लेना-देना नहीं था कि बुद्ध फूल लिए हुए मौन बैठे हैं। एक तरह से महाकाश्यप वहां था-पर दूसरों की भांति नहीं। उसने बुद्ध की ओर देखा, उसने उस मौन और शून्यता का अनुभव किया, उसने शब्दों की व्यर्थता का भी अनुभव किया, लेकिन वहां अकेला वही ऐसा था, जो यह अनुभव कर रहा था।

सुभूति भी वहां कहीं जरूर बैठा होगा, लेकिन उसके अंदर ऐसा कोई विचार उठा ही नहीं कि बुद्ध आज मौन क्यों बैठे हुए हैं और वह फूल की ओर क्यों देखे जा रहे हैं, तब वहां हास्य को अपने तक सीमित रखने का भी कोई प्रयास न था और वहां कोई विस्फोट भी नहीं हुआ। सुभूति वहां था, जैसे पूरी तरह अनुपस्थित होते हुए। वह हंसा भी नहीं और यदि बुद्ध उसे बुलाते भी तो भी वह जाता नहीं, बुद्ध को ही उसके पास जाना होता और कोई भी नहीं जानता-यदि कुंजी उसे दी भी जाती तो वह उसे फेंक भी सकता था। वह ऐसा व्यक्ति नहीं था जो तीर्थंकर जैसा हो, वह ऐसा व्यक्ति नहीं था जो एक सद्गुरु अथवा शिक्षक बने। उसके पास कोई संचित कर्म नहीं थे। वह परिपूर्ण और निर्दोष था। जब भी कोई व्यक्ति इतना परिपूर्ण हो जाता है, वह अनुपयोगी बन जाता है। स्मरण रहे, यदि कोई व्यक्ति परिपूर्ण है तो वह अनुपयोगी है, क्योंकि तुम किसी भी कार्य के लिए उसका कोई उपयोग नहीं कर सकते।

महाकाश्यप इतना पूर्ण नहीं था, उसमें कुछ कमी थी। उसका उपयोग किया जा सकता था और उसी कमी के अंतराल में उस कुंजी को रखा जा सकता था। वह कुंजी महाकाश्यप को सौंप दी गई क्योंकि उस पर भरोसा किया जा सकता था कि वह उसे किसी अन्य को सौंप देगा। सुभूति पर भरोसा नहीं किया जा सकता था। जब पूर्णता, बेशर्त और स्वतंत्र हो जाती है तो मात्र शून्यता रह जाती है। वह व्यक्ति फिर जैसे संसार में होता ही नहीं। तुम उस पर फूलों की वर्षा कर सकते हो, लेकिन तुम उसका उपयोग नहीं कर सकते। यही कारण था कि वहां यद्यपि बुद्धत्व को उपलब्ध कई व्यक्ति थे, लेकिन केवल एक महाकाश्यप ही विशिष्ट था और उसी को चुना गया। वही एक ऐसा व्यक्ति था जिसका इस महान उत्तरदायित्व के लिए प्रयोग किया जा सकता था। यह बहुत अजीब बात है। मैं इसी वजह से कहता हूं कि इसमें साधारण गणित सहायक न होगा-क्योंकि तुम सोचोगे कि कुंजी तो सबसे अधिक पूर्ण और निर्दोष व्यक्ति को ही सौंपी जानी चाहिए थी, लेकिन परिपूर्ण व्यक्ति तो भूल ही

जाएगा कि उसने कुंजी कहां रखी है। कुंजी उसी व्यक्ति को दी जानी चाहिए जो लगभग पूर्ण हो। ठीक उस कगार पर हो जहां से वह शून्यता में खो जाए और अपने खो जाने या विलुप्त होने से पूर्व कुंजी किसी अन्य को सौंप जाए।

कुंजी, अज्ञानी व्यक्ति को नहीं दी जा सकती और सबसे अधिक परिपूर्ण व्यक्ति को भी वह नहीं सौंपी जा सकेती। ऐसे किसी व्यक्ति को खोजना होता है, जो ठीक सीमा रेखा पर खड़ा हो, जो इस अज्ञान के संसार से गुजरता हुआ ' जानने ' या शुद्ध ज्ञान के संसार में प्रवेश करने की सीमा पर खड़ा हो। सीमा रेखा को पार करने से पूर्व, उस समय का प्रयोग उस कुंजी को सौंपने के लिए किया जा सकता है। उत्तराधिकारी को खोजना बहुत कठिन कार्य है क्योंकि परिपूर्ण व्यक्ति अनुपयोगी होता है।

मैं तुम्हें एक घटना के बारे बताना चाहूंगा जो ठीक हाल ही में घटी है। रामकृष्ण परमहंस कई शिष्यों पर काम कर रहे थे। कई लोग बोध को प्राप्त हुए लेकिन उनके बारे में कोई भी नहीं जानता। लोग केवल विवेकानन्द के बारे में ही जानते हैं, जो बोध को प्राप्त नहीं हुए। कुंजी विवेकानन्द को सौंपी गई, जो सबसे अधिक पूर्ण न थे और वे केवल इसलिए पूर्ण नहीं हुए थे, क्योंकि रामकृष्ण ने उन्हें पूर्ण होने की अनुमति नहीं दी ही नहीं। जब रामकृष्ण ने यह अनुभव किया कि वे परिपूर्ण समाधि में प्रवेश करने जा रहे हैं तो उन्होंने उन्हें अपने पास बुलाकर कहा-'' रुको! अब समाधि में तुम्हारे प्रवेश करने की कुंजी मैं अपने ही पास रखूंगा और तुम्हारी मृत्यु के तीन दिन पहले ही यह कुंजी तुम्हें वापस मिलेगी। '' और केवल अपनी मृत्यु के तीन दिनों पूर्व ही विवेकानन्द ने परमानन्द का पहला स्वाद चखा, इससे पूर्व नहीं।

विवेकानन्द ने रोना और चीखना शुरू कर दिया और रामकृष्ण से कहा- '' आप मेरे प्रति इतने निर्दयी क्यों हैं? ''

रामकृष्ण ने उत्तर दिया-'' तुम्हारे द्वारा कुछ कराया जाना है। तुम्हें पश्चिम जाकर पूरे विश्व के सभी लोगों को मेरा संदेश देना होगा, अन्यथा वह खो जाएगा। '' वहां अन्य दूसरे लोग भी थे, लेकिन वे पहले ही से अपने अन्दर मग्न थे और उन्हें बाहर जाने के लिए नहीं बुलाया जा सकता था। उन्हें पश्चिम और शेष संसार में बाहर जाने की कोई दिलचस्पी ही नहीं थी। वे कह सकते थे-यह सब कुछ व्यर्थ की बात है '-वे ठीक रामकृष्ण जैसे ही थे। ' वे ही स्वयं क्यों नहीं चले जाते बाहर? 'वे स्वयं पहले ही से अन्दर थे और किसी ऐसे व्यक्ति का प्रयोग किया जाना था, जो बाहर सीमा रेखा पर खड़ा हो। जो लोग बाहर काफी दूर खडे हैं, उनका भी प्रयोग नहीं किया जा सकता है, जो लोग लगभग अन्दर हैं, ठीक प्रवेश द्वार के निकट खड़े हैं, उनको ही प्रयुक्त किया जा सकता है और द्वार में प्रवेश करने से पूर्व उन्हें भी कुंजी किसी और को सौंप देनी चाहिए।

महाकाश्यप द्वार के ठीक निकट ही खड़ा था, एकदम ताजा 'और जीवन्त, जो मौन के अनन्त द्वार में प्रवेश कर रहा था। मौन ही जिसके लिए उत्सव बनने जा रहा था और जिसके अन्दर दूसरों की सहायता करने की कामना थी। उस कामना का ही उपयोग किया गया, लेकिन सुभूति के लिए यह सब कुछ असम्भव था। वह स्वयं बुद्ध की ही भांति था, परिपूर्ण निर्दोष और स्वतंत्र, लेकिन जब भी कोई ऐसा बुद्ध के ही समान होता है, वह उपयोगी नहीं होता। वह स्वयं को ही वह रहस्य की कुंजी दे सकता है इसलिए उसे कुंजी सौंपने की कोई जरूरत है ही नहीं। उसने कभी अपना कोई शिष्य भी नहीं बनाया। सुभूति परिपूर्ण शून्यता में जीया और देवताओं को उस पर कई बार फूल बरसाने पड़े। उसने न कभी कोई शिष्य बनाया, न किसी से कभी कुछ कहा। प्रत्येक चीज अपने में इतनी अधिक परिपूर्ण थी, फिर फिक्र क्यों की जाए? किसी से भी कुछ क्यों कहा जाए?

एक सद्गुरु अपने पिछले कर्मों के अनुसार अपना कार्य सम्पन्न कर रहा है। उन्हें पूरा करते हुए उसे अपना वायदा पूरा निभाना है, और जब मुझे अपना उत्तराधिकारी खोजना होगा तो वहां बहुत से लोग होंगे, जिनमें सुभूति जैसे भी होंगे ,लेकिन कुंजी उन्हें नहीं सौंपी जा सकती। उनमें बहुत से सारिपुत्र की भांति भी होंगे, जो मौन में प्रवेश करता हुआ उत्सव आनन्द मना रहा हो, उसे ठीक दरवाजे पर ही पकड़ना होगा। यही कारण है...।

आज के लिए इतना बहुत है।

ग्यारहवां प्रवचन

सजग, शांत और संतुलित बने रहो

कथा: –

भिक्षु जुईगन अपना प्रत्येक दिन स्वयं अपने आप मैं जोर-जोर से-

यह कहते हुए ही शुरू करता था- "मास्टर! क्या तुम हो वहां?"

और वह स्वयं ही उसका उत्तर भी देता था- " जी हां श्रीमान? मैं हूं। "

तब वाह कहता- " अच्छा यही है- सजग, शांत और संतुलित बने रहो।"

और वह लौट कर जवाब देता—"जी श्रीमान? मैं यही करूंगा "

तब वह कहता- "और अब देखो वे कहीं तुझे बेवकूक न बना दें।"

और वह ही उसका उत्तर देता- "अरे नहीं श्रीमान? मैं नहीं बगूंगा

मैं हरगिज नहीं बनूंगा?

ध्यान टुकड़ों में करने वाली चीज नहीं हो सकती, वह एक सतत प्रयास होना चाहिए। प्रत्येक को हर क्षण सचेत, सजग और ध्यानपूर्ण होना चाहिए। लेकिन मन एक चालबाजी करता है, तुम सुबह ध्यान करते हो और तब उसे उठाकर बगल में रख देते हो अथवा तुम मंदिर जाकर प्रार्थना करते हो और तब भूल जाते हो। तब तुम पूरी तरह बिना ध्यान इस संसार में वापस लौटते हरे, लगभग अचेत से जैसे तुम सम्मोहित निद्रा में चल रहे हो।

इस टुकड़े-टुकड़े प्रयास से अधिक कुछ होने का नहीं। तुम एक घंटे के लिए ध्यानपूर्ण कैसे हो सकते हो, जब तुम दिन के तेईस घंटे बिना ध्यान के रहते हो? यह असम्भव है। अचानक एक घंटे के लिए ध्यानपूर्ण हो जाना सम्भव नहीं है। तुम अपने आपको सिर्फ धोखा दे सकते हो।

चेतना एक सतत प्रवाह है। यह एक नदी की भांति है, जो निरन्तर बह रही है। यदि तुम दिन- भर के लिए उसके प्रत्येक क्षण ध्यानपूर्ण रहे? हो... और जब तुम दिन- भर ध्यान पूर्ण रहे हो, खिलावट तभी हो सकती है। इससे पहले कुछ होने का नहीं। यह झेन वृत्तान्त यों तो व्यर्थ जैसा दिखाई देता है, लेकिन है बहुत अर्थपूर्ण। एक झेन सद्गुरु जो अपने को भिक्षु ही कहा करता था, स्वयं अपने आपको ही पुकारता रहता था-यही है वह जिसे ध्यान कहते हैं, स्वयं को पुकारना-वह अपना नाम लेकर स्वयं को बुलाया करता था। वह कहा करता था-" जुईगन क्या तुम वहां हो? "

वह स्वयं ही उत्तर देता था-"जी हां श्रीमान! मैं यही हूं। "

यह एक प्रयास ही नहीं, शिखर प्रयास है सजग रहने का। तुम इसका प्रयोग कर सकते हो। यह बहुत सहायक होगा ध्यान में। अचानक सड़क पर चलते हुए तुम स्वयं को पुकार सकते हो-" क्या तुम हो वहां? "अचानक विचार-प्रक्रिया थम जाएगी, क्योंकि तुम्हें उत्तर भी देना है-"जी हां श्रीमान! मैं यही हूं। "

जैसे ही विचार प्रक्रिया रुकती है, यह तुम्हें केन्द्र बिंदु पर ले आती है और तुम सजग और ध्यानपूर्ण हो जाते हो।

स्वयं अपने को पुकारना एक विधि है। तुम सोने जा रहे हो, तुमने रात में जलने वाला प्रकाश बुझा दिया है, अचानक तुम पुकारते हो-" क्या तुम हो वहां? "

और उस अंधेरे में ही सजगता आ जाती है। तुम अन्दर एक लपट बनकर उत्तर देते हो-" हां! मैं यहीं हूं। "

और तब वह भिक्षु कहा करता था-सजग, शांत और संतुलित हो जाओ, ईमानदार बनो, प्रामाणिक बनो, कोई खेल मत खेलो। वह स्वयं को पुकारते हुए कहता था-" शांत और संतुलित हो जाओ। "और वह जवाब देता-"जी हां! जितना भी किया जा सकता है, वह हर सम्भव प्रयास करूंगा।"

हमारा पूरा जीवन बेवकूफ बने हुए चारों ओर घूमते रहना ही है।

तुम इसे कर सकते हो क्योंकि तुम इसके प्रति सजग नहीं हो कि तुम कैसे अपना समय बरबाद करते हो, कैसे अपनी ऊर्जा व्यर्थ खोते हो और अंत में कैसे बिना सजग हुए अपना पूरा जीवन बरबाद कर देते हो। सब कुछ नीचे नाली में व्यर्थ बह जाता है। हर चीज बरबाद होकर नीचे नाली में बही जा रही है। केवल जब मौत तुम्हारे द्वार पर दस्तक देती है, तुम तभी सजग और सचेत हो सकते हो। तब तुम सोचते हो-' मैं अभी तक क्या करता रहा? मैंने अभी तक जीवन के साथ क्या किया? मैंने एक महान अवसर खो दिया। मैं बेवकूफ बना चारों ओर घूमता आखिर करता क्या रहा? 'तुम शांत और संतुलित नहीं थे। तुम जो कुछ कर रहे थे उसके परिणाम को तुम कभी देखते नहीं रहे।

जीवन यूं ही बस बिता देने के लिए नहीं है, वह अपने ही अन्दर कहीं गहराई में पहुंचने के लिए है। जीवन केवल सतह पर नहीं है, वह परिधि भी नहीं है-वह है केन्द्र तुम अभी तक अपने केन्द्र पर नहीं पहुंचे हो। सजग और संतुलित हो जाओ।

काफी समय पहले ही व्यर्थ बीत चुका है। सचेत हो जाओ और देखो, तुम क्या कर रहे हो? क्या कर रहे हो तुम, क्या धन की तलाश? जो अंतिम रूप से व्यर्थ सिद्ध होगी। यह फिर एक तरह का खेल है, धन खेल। तुम्हारे पास दूसरे से कहीं अधिक है-तुम्हें अच्छा लगता है, दूसरों के पास तुमसे अधिक है तुम्हें बुरा लगता है। यह एक खेल है, लेकिन आखिर इसका अर्थ क्या है? तुम इससे क्या प्राप्त करते हो? संसार- भर में जितना भी धन है, यदि वह सभी तुम्हारे पास आ भी जाए तो भी मृत्यु के क्षण तुम भिखारी होकर ही मरोगे इसलिए संसार- भर का धन भी तुम्हें धनी नहीं बना सकता। कोई भी खेल तुम्हें कभी भी धनी नहीं बना सकता। सजग, शांत और संतुलित हो जाओ।

कोई शक्ति और प्रतिष्ठा के पीछे भाग रहा है, कोई कामवासना के पीछे पागल है और कोई किसी और के पीछे पड़ा है। यह सभी खेल हैं। जब तक तुम अपने अस्तित्व के केन्द्र पर न पहुंच जाओ, यह सभी खेल ही हैं। खेलों का अस्तित्व बाहर केवल परिधि पर है और बाहरी सतह ही वास्तविकता नहीं है। सतह पर तो केवल लहरें हैं और लहरें तुम्हें हवा में उछाल कर किनारे पर पटक देगी और अपने आप में स्थिर नहीं हो सकोगे तुम।

यही वजह है-उसे आवाज देनी होती है-" सचेत और शांत बने रहो। " वह कह रहा है-" काफी हो चुका। यह खेल खेलना बंद करो। तुम बहुत खेल चुके। अब और अधिक बेवकूफ मत बनो। इस जीवन का उपयोग करो, अपने को मजबूती से स्थिर करने में। इस जीवन का उपयोग करो अपनी जड़ें जमाने में और इसका उपयोग करो, एक अवसर की तरह जिससे परमात्मा तक पहुंच सको। "

तुम ठीक मंदिर के बाहर बैठे हुए हो, तुम सिर्फ सीढ़ियों पर बैठे हुए खेल खेले जा रहे हो. और परमात्मा ठीक तुम्हारे पीछे बैठा तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है। जब तक दरवाजा न खुले, उसे खटखटाते ही रहो, लेकिन तुम्हें इन खेलों से वक्त मिलता ही नहीं।

'सजग, शांत और संतुलित हो जाओ। '(Sober Up) का अर्थ है यह याद करना कि तुम क्या कर रहे हो और उसे क्यों कर रहे हो ए लेकिन यदि तुम खेल मैं सफल हो भी जाओ तो तुम पहुंचोगे कहां? यही विरोधाभास है कि जब व्यक्ति इन बेवकूफी– भरे खेलों में सफल होता है कि पहली बार ही वह सजग होता है कि पूरी चीज कितनी व्यर्थ और बकवास है। केवल वे ही लोग जो कभी सफल नहीं हुए यह खेल खेले चले जाते हैं। पूछो किसी सिकन्दर से, पूछो नेपोलियन से- आखिर उन्होंने प्राप्त क्या किया सिकन्दर के बारे में यह कहा जाता है कि जब वह मरने जा रहा था तो उसने अपने दरबारियों से कहा-" जब तुम अपने दोनों हाथों से पकड़

कर मेरे जनाजे को सड़कों पर लेकर चलो तो मेरे दोनों हाथ शैया बाहर लटका देना और उन्हें कफन से ढकना मत।"

यह दुर्लभ बात थी। किसी के भी जनाने को इस तरह नहीं ले जाया जाता। दरबारी उसकी बात समझ ही न सके, इसलिए उन्होंने पूछा-" आखिर आपके कहने का मतलब क्या है? यह सामान्य तरीका तो है नहीं। पूरे शरीर को कपड़े से ढक दिया जाता है। आप ऐसा क्यों चाहते हैं कि आपके दोनों हाथ शैया से बाहर लटके रहें? " सिकन्दर ने उत्तर दिया-" इससे लोगों को यह बताना चाहता हूं कि मैं खाली हाथों मरा हूं। हर आदमी इसे जरूर देखे, जिससे फिर कभी कोई सिकन्दर बनने की कोशिश न करे। मैंने बहुत कुछ प्राप्त किया, फिर भी कुछ भी प्राप्त नहीं किया। मेरा साम्राज्य बहुत विशाल है, लेकिन फिर भी एक गरीब हूं मैं। "

तुम भले ही एक सम्राट हो, लेकिन तुम एक भिखारी की तरह ही मरते हो और तब पूरी चीज एक सपने जैसी लगती है। ठीक वैसे ही जैसे सवेरे सपना टूट जाता है और सम्राट होने जैसे सभी सुख गायब हो जाते हैं। सारा साम्राज्य विलुप्त हो जाता है इसलिए मृत्यु एक बोध है जागने का। मृत्यु होने पर जो कुछ बचता है, वही वास्तविक सत्य है और जो कुछ विलुप्त हो गया, वह एक सपना था यही इसकी कसौटी है और जब भिक्षु स्वयं को हो पुकार कर कहता है-" सजग शांत संतुलित हो जाओ " तो उसका अर्थ है-मृत्यु को याद रखो और बेवकूफ बने इधर-उधर घूमो मत। तुम इस तरह जिए चले जाते हो, जैसे तुम्हें कभी मरना नहीं है और हमेशा ही बने रहना है।

तुम्हारा मन कहता है-मृत्यु तो हमेशा दूसरे की होती है, कभी भी मेरी नहीं। वह मेरे साथ नहीं, वह तो हमेशा दूसरों के साथ घटने वाली एक घटना है। यदि तुम कभी किसी मरते हुए व्यक्ति को देखते हो, तुम यह कभी नहीं सोचते-उसके स्थान पर मैं मर रहा हूं। उसका मरना तो एक संकेत है। ऐसा ही मेरे साथ भी तो होने जा रहा यदि तुम यह देख सको कि तुम भी मरने जा रहे हो तो क्या तुम इतनी गम्भीरता से इन खेलों को खेलने में समर्थ हो सकोगे, क्या तुम ' कुछ नहीं ' के लिए अपने पूरे जीवन को दांव पर लगा सकोगे?

वह भिक्षु सुबह उठते ही ठीक ही आवाज देता है-" शांत और समझ दारबनो। " जब भी तुम उस खेल को फिर से खेलना शुरू करते हो- अपनी पत्नी के साथ, दुकान, बाजार या राजनीति में- अपनी आंखें बंद कर लो। अपने आपको पुकारो और कहो-"सजग, शांत और संतुलित हो जाओ। " और वह भिक्षु उसका उत्तर भी दिया करता था-" जी हां श्रीमान! जितना भी कर सकता हूं मैं हर सम्भव प्रयास करूंगा। " दूसरी चीज जो वह सुबह याद किया करता था- और सुबह ही क्यों? सुबह,. दिन- भर के कार्यों को एक सांचे में ' सैट ' कर देती है और सुबह जो पहला ख्याल, आता है, वही द्वार बन जाता है इसीलिए सभी धर्म कम-से-कम दो प्रार्थनाओं पर जोर देते हैं। यदि तुम दिन- भर प्रार्थनापूर्ण बन सको तो बहुत अच्छा है, लेकिन यदि ऐसा न कर सको तो कम-से-कम दो प्रार्थनाएं-एक सुबह और दूसरी रात में।

सुबह उठते ही जब तुम ताजगी से भरे हो और नींद विदा होकर जब चेतना का उदय हो रहा होता, पहला ख्याल, प्रार्थना, ध्यान और सम्यक स्मृति तुम्हारे दिन- भर के क्रिया कलाप के ढांचे को ' सैट ' कर देते हैं। वे द्वार बन जाएंगे क्योंकि सभी चीजें एक शृंखला में घूमती हैं। यदि सुबह तुम्हारी क्रोध से शुरू हुई है तौ पूरे दिन तुम अधिक-से- अधिक क्रोध में बने रहोगे। पहला क्रोध ही ' चेन ' निर्मित करता है और दूसरा क्रोध आसानी से उसका अनुकरण करता है तीसरा स्वचालित बन जाता है और तब उसकी गिरफ्त में होते हो तुम। तब तुम्हारे चारों ओर जो. कुछ -होता है, वह ही क्रोध उत्पन्न करता है। सुबह प्रार्थनापूर्ण होने से या सजग बने रहने से, अपने आपको पुकारने से या सावधान बने रहने से दिन- भर का ढांचा निश्चित हो जाता है।

रात में भी जब तुम सोने जाते हो, तुम्हारा आखिरी विचार ही पूरी नींद का ढांचा बन जाता है। यदि अंतिम विचार ध्यानपूर्ण है तो पूरी नींद ध्यानपूर्ण होगी। यदि आखिरी विचार सेक्स का है तो पूरी नींद कामुक सपनों से अस्त-व्यस्त होगी। यदि अंतिम विचार धन का है तो सारी रात तुम बाजार में खरीदते-बेचते रहोगे।

कोई विचार आकस्मिक रूप से नहीं होता। वह एक शृंखला निर्मित करता है तब चीजें ठीक उसी तरह उसका अनुसरण करती हैं।

इसलिए कम-से- कम दो बार प्रार्थना करो। मुसलमान कम-से-कम पांच बार नमाज पढ़ते हैं। यह सुन्दर है, क्योंकि यदि एक व्यक्ति दिन में पांच बार प्रार्थना करता है तो वह लगभग एक निरन्तर बनी रहने वाली भावदशा बन जाती है। अब सुबह आ गई, अब दोपहर, अब शाम और अब रात आ गई है.. .वहां अंतराल है लेकिन दो प्रार्थनाएं इतनी निकट नहीं हैं कि वे एक दूसरे से जुड़ जाएं। जरा देखो मुसलमानों को नमाज पढ़ते हुए वे लोग प्रार्थना करते हुए सबसे सुन्दर मनुष्य लगते हैं। हिन्दू इतने अधिक प्रार्थनापूर्ण नहीं हैं। वे सुबह करेंगे प्रार्थना, लेकिन एक मुसलमान को पांच बार प्रार्थना करनी होती है, केवल तभी वह मुसलमान है। यह एक साधारण नियम है और पांच बार निरन्तर याद करने से ' उसे याद करना ' एक ढांचे को निश्चित कर देता हैं। वह एक आंतरिक प्रवाह बन जाता है। तुम्हें बार-बार उस तक आना होता है। दो प्रार्थनाओं के मध्य क्रोध करना कठिन है, दो प्रार्थनाओं के मध्य लोभ में गिरकर लालची बनना कठिन है और दो प्रार्थनाओं के बीच बहुत कठिन होगा आक्रामक और हिंसक होना।

आधारभूत चीज यह है कि जो भी ऐसा करता है तो उससे एक निरन्तरता बनी रहती है और फिर पांच प्रार्थनाओं की भी जरूरत नहीं रह जाती, लेकिन फिर भी अंतराल तो आएंगे ही और तुम इतने बेईमान हो कि तुम इन अंतरालों को गलत चीजों से भर सकते हो और तब तुम्हारी प्रार्थनाएं उनसे प्रभावित हो जाएंगी। तब वह एक सच्ची प्रार्थना होगी ही नहीं, बल्कि अंदर गहराई में एक गलत धारा बहती रहेगी। सुबह-सुबह यह भिक्षु स्वयं को आवाज देकर पुकारा करता था, क्योंकि बौद्ध प्रार्थना में नहीं, ध्यान करने में विश्वास करते हैं। यह विशेषता और भेद समझ लेने जैसा है। मैं स्वयं भी प्रार्थना पर विश्वास नहीं करता और मेरा जोर भी ध्यान पर है। यहां दो तरह के धार्मिक लोग हैं, पहली तरह के लोग प्रार्थना करने वाले और दूसरी टाइप के लोग ध्यान करने वाले। बौद्ध कहते हैं-प्रार्थना करने की जरूरत ही नहीं है, लेकिन बरन सजग और सचेत बने रहना है क्योंकि सजगता ही तुम्हें प्रार्थना पूर्ण चित्तवृत्ति देती है। वहां परमात्मा की भी, प्रार्थना करने की कोई जरूरत नहीं है। जब तक तुम परमात्मा को जानते ही नहीं, तब तुम उसकी प्रार्थना कर कैसे सकते हो? तुम्हारी प्रार्थना अंधेरे में टटोलने जैसी हैं तुम परमात्मा को जानते ही नहीं। यदि तुमने उसे जान लिया है तो फिर प्रार्थना करने की कोई जरूरत है ही नहीं। इसलिए तुम्हारी प्रार्थना अंधेरे मैं टटोलने जैसी है। तुम उसे सम्बोधित कर रहे हो जिसे तुम जानते ही नहीं, इसलिए तुम उसे सम्बोधित करोगे कैसे? तुम्हारा सम्बोधन कैसे प्रामाणिक और सच्चा हो सकता है, वह कैसे तुम्हारे हृदय से निकल सकता है? वह मात्र एक विश्वास है और उसकी गहराई में एक सन्देह छिपा है। अपनी गहराई में तुम निश्चित नहीं हो कि परमात्मा का अस्तित्व है भी अथवा नहीं, अपनी गहराई में तुम निश्चित नहीं कि यह प्रार्थना आत्मप्रलाप है अथवा संवाद? क्या वास्तव में वहां कोई है, जो उसे सुन रहा है और उसका उत्तर देगा अथवा तुम अकेले ही स्वयं ही से बात किए जा रहे हो। यह अनिश्चितता पूरी चीज को बरबाद कर देती है।

बुद्ध ने ध्यान पर जोर दिया। वे कहते हैं-वहां दूसरे की कोई जरूरत नहीं है, क्योंकि तुम भली- भांति जानते हो कि तुम अकेले हो। कम-से-कम यह तो निश्चित है कि तुम हो। अपने जीवन को किसी ऐसी चीज का आधार दो, जो पूरी तरह निश्चित हो... क्योंकि तुम उस चीज को जीवन का आधार कैसे बना सकते हो, जो अनिश्चितता है, संदेहपूर्ण है, जिसका अस्तित्व केवल विश्वास में है, जानने में नहीं? लेकिन जीवन में निश्चित क्या है? केवल एक ही चीज निश्चित है और वह तुम हो। इसके अतिरिक्त हर चीज अनिश्चित है।

मैं यहां तुमसे बात कर रहा हूं तुम यहां नहीं भी हो सकते हो, यह ठीक एक सपना भी हो सकता है। तुम मुझे यहां सुन रहे हो, मैं यहां नहीं भी हो सकता हूं यह भी एक सपना हो सकता है... क्योंकि कई बार तुमने सपनों में मुझे सुना है और जब स्वप्न शुरू होता है तो वह वास्तविक दिखाई देता है। तुम उनमें भेद कैसे कर सकते हो कि उनमें यह सपना है अथवा नहीं? तुम कैसे एक सपने और वास्तविकता में भेद कर सकते हो? इसका कोई उपाय है ही नहीं। दूसरे के बारे में तुम कभी निश्चित हो ही नहीं सकते। तुम केवल अपने बारे में ही

निश्चित हो सकते हो और केवल यही सुनिश्चित हो सकता है कि तुम हो। क्यों? क्योंकि स्वयं पर ही संदेह करने के लिए तुम्हें तो वहां होना ही होगा।

आधुनिक पाश्चात्य दर्शनशास्त्र के पिता डेस्काट्र्स ने संदेह से ही प्रारम्भ किया है। वह प्रत्येक वस्तु पर सन्देह करता है, क्योंकि वह किसी ऐसी चीज की खोज में है जिस पर कोई भी सन्देह न किया जा सके। केवल वही वास्तविक और प्रामाणिक जीवन का आधार बन सकता है, लेकिन फिर उस पर भी सन्देह किया जा सकता है। वह जिस पर विश्वास करना पड़े, वह सच्चा आधार नहीं बन सकता। यह नींव ही खिसक रही है और तुम रेत पर मकान बना रहे हो इसलिए उसने प्रत्येक चीज पर सन्देह किया। परमात्मा पर तो आसानी से सन्देह किया जा सकता है। संसार पर भी सन्देह किया जा सकता है। वह एक सपना भी हो सकता है और दूसरों पर भी- उसने प्रत्येक वस्तु पर सन्देह किया। तभी अचानक वह सजग हुआ और स्वयं पर सन्देह न कर सका क्योंकि यह विरोधाभास होता। यदि तुम कहते हो कि मैं स्वयं पर ही सन्देह करता हूं तो इसका अर्थ है कि तुमको यह विश्वास करना पड़ेगा कि वहां तुम हो, जो संदेह कर रहे हो। तुम कह सकते हो कि तुम्हारे होने के बारे में भी तुम्हें धोखा दिया जा सकता है, लेकिन वहां कोई तो होना ही चाहिए जो तुम्हें धोखा दे रहा है। स्वयं होने पर संदेह नहीं किया -जा सकता।

इसीलिए महावीर ने परमात्मा पर विश्वास नहीं किया, उन्होंने केवल आत्मा पर विश्वास किया, क्योंकि केवल आत्मा का होना निश्चित है। तुम सुनिश्चित होने पर ही विकसित हो सकते हैं, अनिश्चित होने की दशा में तुम्हारा विकास नहीं हो सकता। जहां सुनिश्चितता होती है, वहीं विश्वास होता है और जहां अनिश्चितता होती है, वहां विश्वास तो हो सकता है, लेकिन विश्वास हमेशा सन्देह को छिपाता है।

मेरे पास ऐसे बहुत से लोग आते हैं, जो आस्तिक हैं। वे परमात्मा में विश्वास करते हैं, लेकिन उनका विश्वास बस उथला है। उन्हें हल्का-सा धक्का दो, थोड़ा-सा धकेलो या हिलाओ-वे भयभीत होकर सन्देह करने लगते हैं। किस तरह के धर्म की सम्भावना है। यदि तुम इतने अधिक संदेहशील हो, कोई चीज ऐसी आवश्यक है, जिस पर संदेह न किया जा सके।

महावीर और बुद्ध दोनों ने ध्यान पर जोर दिया। उन्होंने प्रार्थना समाप्त कर दी और कहा-'' तुम प्रार्थना कैसे कर सकते हो? तुम परमात्मा को जानते तक नहीं, इसलिए तुम वास्तव में उस पर विश्वास नहीं कर सकते। '' तुम एक विश्वास के साथ बल प्रयोग नहीं कर सकते, जब कि विवशता से किया गया विश्वास एक झूठ विश्वास है। तुम तर्क के द्वारा अपने को समझा सकते हो, लेकिन इससे कोई सहायता नहीं मिलेगी, क्योंकि तुम्हारे तर्क, तुम्हारे अपराध हमेशा तुम्हारे हैं और मन डोलता रहता है इसलिए बुद्ध और महावीर दोनों ने ध्यान करने पर बल दिया।

ध्यान करना पूरी तरह से एक भिन्न विधि है। इसमें विश्वास करने की कोई जरूरत नहीं और न जरूरत है दूसरे तक जाने की। तुम वहां अकेले ही हो, लेकिन तुम्हें अपने को जगाए रखना है और यही वह भिक्षु कर रहा था। वह राम या अल्लाह का नाम नहीं पुकार रहा है। वह अपना ही नाम लेकर स्वयं को पुकार रहा है। केवल अपने आपको, क्योंकि दूसरे के बारे में कुछ भी निश्चित नहीं। वह अपना पूरा नाम लेकर पुकार रहा है-'' क्या तुम हो वहां? ''और वह किसी परमात्मा के उत्तर की प्रतीक्षा नहीं करता। वह स्वयं ही उत्तर देता है-'' हां श्रीमान! मैं यहां हूं। ''

यह बौद्धों का व्यवहार या तरीका है कि यहां तुम अकेले हो, यदि तुम सोए हुए हो तो तुम स्वयं को ही पुकारते हुए स्वयं ही उसका उत्तर दो। यह एक आत्म-संवाद है। किसी परमात्मा की प्रतीक्षा मत करो वह उत्तर देगा, वहां उत्तर देने को कोई दूसरा है ही नहीं। तुम्हारे प्रश्न खाली आकाश में सो जाएंगे, तुम्हारी प्रार्थनाएं नहीं सुनी जाएंगी-वहां उन्हें सुनने को कोई दूसरा है ही नहीं इसलिए यह भिक्षु बेवकूफ लगता है, लेकिन वास्तव में,

वे सभी लोग जो प्रार्थना कर रहे हैं, इस भिक्षु से भी कहीं अधिक बेवकूफ हो सकते हैं। यह भिक्षु एक अधिक निश्चित चीज कर रहा है, स्वयं को पुकारते हुए स्वयं ही उत्तर दे रहा है।

तुम अपने को सजग बना सकते हो। मैं कहता हूं तुम्हारा नाम ही एक मंत्र है। मत पुकारो राम को, मत पुकारो अल्लाह को, अपना ही नाम लेकर स्वयं को पुकारो। दिन में कई बाद, जब तुम्हें नींद जैसी लगे, जब कभी तुम्हें अनुभव हो कि कोई भी खेल तुम पर हावी हो रहा है और तुम उसमें हार रहे हो, स्वयं को आवाज दो-" क्या तुम हो वहां? और स्वयं उसका उत्तर दो। किसी और के द्वारा उत्तर देने की प्रतीक्षा मत करो, वहां कोई है ही नहीं उत्तर देने के लिए। "

उत्तर दो-" हां श्रीमान! मैं हूं यहां। " और उत्तर जबानी ही न हो, उस उत्तर को महसूसो-" हां, में यहां हूं। " और वहां रहो पूर्ण सजग। इसी सजगता में चलते हुए विचार रुक जाते हैं। इसी सजगता में मन विसर्जित हो जाता है, भले ही क्षण- भर के लिए। जब मन नहीं होता, तभी वहां ध्यान होता है, जब मन रुक गया है, ध्यान अस्तित्व में आ गया है।

स्मरण रहे, ध्यान कुछ ऐसी चीज नहीं जिसे मन के द्वारा करना है, वह मन की अनुपस्थिति है। जब मन विदा हो जाता है, ध्यान घटता है। यह कोई चीज ऐसी नहीं है, जो मन के बाहर हो, यह तो कुछ ऐसी चीज है जो मन के पार है, और जब तुम सजग होते हो, मन नहीं होता इसलिए सार स्वरूप हम कह सकते हैं कि सोई दशा ही तुम्हारा मन है, तुम्हारी असजगता तुम्हारा मन्त्र है, सोते हुए चलकर सभी कार्य करने वाला तुम्हारा ही मन है, तुम यों चलते हो जैसे तुमने शराब पी लो हो, तुम नहीं जानते कि तुम कौन हो। यह भी नहीं जानते कि तुम्हें कहां जाना है और तुम्हें यह भी पता नहीं कि तुम क्यों जा रहे हो वहां।

और तीसरी चीज जो वह भिक्षु कह रहा है, उसे भी याद रखना-दूसरों के द्वारा बेवकूफ मत बनो। दूसरे तुम्हें निरन्तर बेवकूफ बना रहे हैं। केवल इतना ही नहीं कि तुम अपने को बेवकूफ बना रहे हो, दूसरे भी तुम्हें बेवकूफ बना रहे हैं। दूसरे तुम्हें किस तरह बेवकूफ बना रहे हैं? पूरे समाज, पूरी सभ्यता और संस्कृति इन सभी की सामूहिक साजिश है। यही कारण है कि कोई भी समाज विद्रोही लोगों से राजी नहीं होता, प्रत्येक समाज चाहता है- आज्ञापालन., सुनिश्चितता। कोई भी समाज विद्रोही विचारों की अभिव्यक्ति की इजाजात नहीं देता। क्यों? क्योंकि विद्रोही विचार लोगों को सचेत करते हैं कि यह पूरी चीज एक खेल है और जब लोग सचेत बनकर इस पूरे खेल को समझ जाते हैं तो वे खतरनाक बन जाते हैं। वे समाज के पार जाना शुरू कर देते हैं।

समाज का अस्तित्व लोगों के सम्मोहित दशा में रहने में ही है सम्मोहन दशा उत्पन्न करने के लिए भीड़ उसका एक भाग है। जब तुम्हारा जन्म हुआ, तब न तो तुम हिन्दू थे, न मुसलमान या पारसी, हो भी नहीं सकते थे, क्योंकि चेतना किसी वर्ग से संबंधित नहीं है। वह तो अखण्ड है। वह किसी खण्ड की हो भी नहीं सकती। एक बच्चा तो निर्दोष है, हिन्दू बौद्ध या जैन इन सभी धर्मों की बकवास से मुक्त। बच्चा तो एक निर्मल दर्पण की भांति होता है, लेकिन समाज बच्चे पर तुरन्त काम करना शुरू कर देता है, उसे एक ढांचा दिया जाने लगता है। बच्चा जन्म से ही स्वतंत्र होता है, लेकिन तुरन्त समाज उसकी स्वतंत्रता को मिटाने में जुट जाता है और उसे एक सांचे में डालना शुरू कर देता है।

यदि तुमने हिन्दू परिवार में जन्म लिया है तो तुम्हारे माता-पिता तुम्हें सिखाना शुरू कर देंगे कि तुम एक हिन्दू हो। अब वे एक सम्मोहित दशा उत्पन्न कर रहे हैं। कोई भी हिन्दू नहीं है-लेकिन यह बच्चा निर्दोष है, उसे बेवकूफ बनाया जा सकता है। बच्चा सरल है, अब वह -दिए .ढांचे पर विश्वास करेगा कि वह हिन्दू है-न केवल हिन्दू है, वरन् ब्राहाण है, न केवल ब्राहाण, वरन् कान्यकुब्ज है। वर्ग के अन्दर वर्ग, ठीक चीनी संदूकों की तरह, सन्दूकों के अंदर सन्दूक। जितना वह सिकुड़ता जाता है, वह उतना ही अधिक कैदी बनता जाता है। संदूक छोटा और छोटा होता जाता है। जब उसका जन्म हुआ तब वह आकाश जैसा था। तब वह हिन्दू बना- आकाश का एक

छोटा-सा भाग, तब वह ब्राह्मण बना, एक छोटा बक्सा। यह चलता ही चला जाता है। समाज उसे छोटे बक्सों में रहने के लिए विवश करता है और तब उसे कान्यकुब्ज ब्राह्मण बन के रहना होगा। अपने पूरे जीवन वह इसी बक्से में रहेगा और वह इस बक्से को लिए हुए ही चारों ओर घूमेगा। यह बक्सा एक कब की तरह है। उसे इन सभी बक्सों से बाहर आना जरूरी है, केवल तभी वह जान सकेगा कि वास्तविक चेतना है क्या?

तब समाज उसे सामान्य विचार और धारणाएं देता है, तब समाज उसे सिद्धान्त, तत्व ज्ञान, व्यवस्था, रीति-रिवाज और धर्म देता है। तब वह कभी भी कोई चीज सीधे देखने में समर्थ न हो सकेगा उसकी व्याख्या करने को हमेशा समाज वहां रहेगा। जब तुम कहते हो, कोई चीज अच्छी है तो तुम उसके प्रति सजग नहीं हो। क्या तुम हो वहां और उसे स्वतंत्र रूप से देख रहे हो? क्या यह तुम्हारा अनुभव है कि वह चीज अच्छी है अथवा केवल समाज की व्याख्या है? कोई चीज खराब है, क्या तुमने उसके अंदर झांककर देखा और तब इस निर्णय पर पहुंचे कि वह खराब है अथवा तुम्हें समाज द्वारा यह सिखाया गया कि वह चीज खराब है।

जरा देखें! एक हिन्दू गाय के गोबर को देखकर सोचता है कि वह संसार की शुद्धतम और पवित्रतम चीज है। संसार में अन्य कोई भी गाय के गोबर को शुद्ध और पवित्र चीज नहीं मानता। गाय का गोबर मात्र मल है-लेकिन एक हिन्दू उसे संसार की शुद्धतम चीज के रूप में मानता है। वह उसे प्रसन्नता से खायेगा। वह खाता है। संसार- भर में कोई भी यह विश्वास नहीं कर सकता कि अस्सी करोड़ हिन्दू इस तरह बेवकूफ बनाए जा सकते हैं, लेकिन वे बेवकूफ हैं। जब एक हिन्दू बच्चे को दीक्षा (जनेऊ) दी जाती है, उसे पंचामृत पीने को दिया जाता है जो पांच खास चीजों का मिश्रण है। इन पांच चीजों में गाय का गोबर भी एक है और गाय का मूत्र दूसरा है। यह कठिन है-कोई इस पर विश्वास नहीं कर सकता कि यह ठीक है, लेकिन उनकी अपनी धारणाएं। अपनी धारणाओं को अलग रखकर जरा इसे प्रत्यक्ष रूप से देखें, लेकिन कोई भी धर्म या समाज तुम्हें सीधे प्रत्यक्ष देखने की इजाजत नहीं देता। वह हमेशा आकर उसकी व्याख्या करता है और तुम उससे बेवकूफ बन जाते हो।

यह भिक्षु हर सुबह पुकारते हुए कहा करता था-'' दूसरों के द्वारा बेवकूफ मत बनना। '' और वह उसका उत्तर भी देता था-'' जी श्रीमान! मैं दूसरों के द्वारा बेवकूफ नहीं बनूंगा। ''

यह हमेशा याद रखना है, क्योंकि तुम्हारे चारों ओर घिरे दूसरे लोग बहुत सूक्ष्म शिष्टाचार और रीतियों से तुम्हें बेवकूफ बना रहे हैं। अब तो दूसरे लोग इतने अधिक शक्तिशाली हैं, जितने पहले कभी न थे। विज्ञापनों के द्वारा, रेडियो, समाचारपत्रों और दूरदर्शन के द्वारा दूसरे लोग तुम्हें नियंत्रित कर रहे हैं।

अमेरिका में पूरा बाजार इसी बात पर निर्भर है कि तुम कैसे ग्राहक को बेवकूफ बना सकते हो, तुम कैसे दूसरों के मनों में विचार उत्पन्न कर सकते हो? अब अमेरिका में दो कारों का गैरेज और दो कारें एक जरूरी चीज हैं। वे तुम्हें चाहिए ही-यदि तुम प्रसन्न रहना चाहते हो तो तुम्हें दो कारें चाहिए ही। यह कोई नहीं पूछता-यदि तुम एक कार से खुश नहीं हो, तो दो कारों से कैसे खुश हो सकते हो? यदि एककार से तुम पचास प्रतिशत खुश हो तो दो कारों से सौ प्रतिशत प्रसन्नता कैसे मिल सकती है? इसका अर्थ यह भी है कि तुम एक कार पाकर अप्रसन्न हो तो दो कारों से तुम्हारी अप्रसन्नता दुगुनी हो जाएगी। गणित सीधा साफ है, लेकिन पूरा समाज विज्ञापन, प्रचार और दूसरों के द्वारा नियंत्रित होकर जी रहा है। जैसे प्रसन्नता भी कोई बाजारू चीज बन गई है, जिसे तुम जाओ बाजार और खरीद लाओ। प्रसन्नता कैसे खरीदी जा सकती है? वह कोई पदार्थ नहीं है, वह कोई वस्तु नहीं है। वह जीने की गुणात्मकता है और सजग जीवन का सहज परिणाम है। किसी भी तरीके से तुम उसे खरीद नहीं सकते।

जरा अमरीकन अखबारों पर एक नजर डालो उन्हें पढ़कर लगेगा जैसे तुम चूके जा रहे हो प्रसन्नता से और वह धन के द्वारा सहज ही खरीदी जा सकती है। वे तुम्हारे अन्दर यह अहसास उत्पन्न करते हैं कि तुम किसी चीज से चूक रहे हो., तब वे उसके लिए काम करना शुरू करते हैं, तब तुम धन कमाओ और फिर उसे खरीदो। तुम्हें अनुभव होता है कि तुम ठगे गए लेकिन यह अनुभव बहुत गहरा नहीं जाता क्योंकि इस ठगे जाने के अनुभव से पहले ही कुछ और नई चीजें नए-नए प्रलोभन मन में प्रविष्ट हो जाते हैं और वे अब तुम्हें आगे की ओर खींचने लगते हैं।

तुम्हारा एक फ्लैट हिल स्टेशन पर होना चाहिए या तुम्हारे पास गर्मियों के लिए एक नया आश्रयस्थल होना बहुत जरूरी है अथवा तुम्हारे पास समुद्र में सैर करने के लिए अपना एक याट (बड़ी मोटर बोट) होना चाहिए-कोई-न-कोई हमेशा वहां प्राप्त करने के लिए विज्ञापनों में होता ही है। वे तुम्हें आश्वस्त करते हैं कि केवल उन्हें पाकर ही तुम खुश हो सकोगे। वे तुम्हें तुम्हारी मृत्यु होने तक अपनी ओर खींचते ही रहेंगे। जब तक तुम मर ही न जाओ, यह विज्ञापन और प्रचार तुम्हें अपनी ओर आकर्षित करता ही रहेगा।

यह भिक्षु बिलकुल ठीक कहता है। यह तुम्हारी सजगता का एक भाग बन जाना चाहिए कि तुम्हें दूसरों के द्वारा बेवकूफ नहीं बनना है। तुम्हारा शोषण करने के लिए पूरा समाज मौजूद है, जो दूसरों का शोषण ही करता है। यहां हर कोई शोषण कर रहा है और यह शोषण केवल बाजार में ही न होकर, मंदिरों, चर्चों, सिनेगॉग और सभी पूजागृहों में है.. .क्योंकि पुरोहित भी एक व्यापारी है, और पोप तो सर्वश्रेष्ठ व्यापारी है। तुम्हें शांति की जरूरत है और तुम पूछते हो-हमें शांति कैसे मिले? इसलिए यहां ऐसे बहुत से लोग हैं जो कहते हैं-'' हमारे पास आओ हम तुम्हें शांति देंगे। '' तुम आध्यात्मिक आनन्द चाहते हो और वहां ऐसे लोग हैं, जो तुम्हें आध्यात्मिक आनन्द भी बेचने को पहले से तैयार बैठे हैं।

यदि महर्षि महेशयोगी जैसे लोग पश्चिम में सफल हैं, लेकिन वे पूरब में सफल नहीं हो सकते। भारत में कोई उन्हें सुनता ही नहीं और न कोई उनकी चिंता करता है। लेकिन अमेरिका में हर तरह की बकवास सुनी जाती है। एकबार तुम प्रचार का ठीक रास्ता पकड़ लो। एक बार तुम ठीक से प्रचार करने वाले लोगों की सेवाएं प्राप्त कर लो, तब कोई समस्या रहती है नहीं। महर्षि महेश योगी यों बात करते हैं जैसे तरिक-शांति भी तुरन्त खरीदी जा सकती है, जैसे केवल सप्ताह- भर में केवल पन्द्रह मिनट बैठकर तुम ध्यान प्राप्त कर सकते हो और एक मंत्र दोहराते रहने से तुम हमेशा- हमेशा शांत रहोगे। अमरीकी चित्त जो विज्ञापनों से विषाक्त हो रहा है, तुरन्त ही एक भीड़ उसकी ओर आकर्षित हो जाती है। भीड़ में लोग बदलते रहते हैं, लेकिन रहती है हमेशा भीड़ ही और ऐसा लगता है जैसे चीजें घट रही हैं। यहां तक कि मंदिर और गिरजाघर भी दुकानें बन गए हैं।

ध्यान न तो खरीदा जा सकता है और न कोई तुम्हें ध्यान दे सकता है। तुम्हें ही उस तक पहुंचना होगा। वह ऐसी कोई चीज नहीं जो तुम्हारे बाहर है। वह तुम्हारे ही अन्दर है, वह एक विकास है और विकास सजगता से होता है। सुबह, दोपहर, शाम या जब कभी तुम मूर्च्छा का अनुभव करो, अपने को नाम लेकर पुकारो। न केवल पुकारों, उसका उत्तर जोर से कहते हुए दो। दूसरों से डरी मत। तुम दूसरों से काफी डरे हुए हो उन्होने तुम्हें भय के द्वारा पहले -ही से मार दिया है। भयभीत मत हो। बाजार तक में भी, अपना नाम लेकर पुकारो-'' तीर्थ! क्या तुम यहां हो? '' और जवाब दो- '' हां श्रीमान, मैं यहां हूं। ''

लोगों को हंसने दो। उनके द्वारा बेवकूफ मत बनो। केवल एक ही चीज पाने जैसी है और वह है-सजगता न सम्मान और न दूसरों से आदर। क्योंकि यह भी उन लोगों की एक चाल है, वे सम्मान देकर तुम्हें आज्ञाकारी बनाते हैं। वे कहते हैं-हम तुम्हारा सम्मान करेंगे, तुम झुको और आज्ञाकारी बनो। वहां ' तुम ' रहो ही मत, बस समाज का किसी के साथ अनुसरण करो और उसके लिए समाज तुम्हें सम्मानित करेगा।

यह एक आपसी समझौता है। तुम जितने अधिक मृत हो, समाज तुम्हारा उतनाही अधिक सम्मान करता है। तुम जितने अधिक जीवन्त हो, समाज तुम्हारे लिए उतनी ही अधिक मुसीबतें खड़ी करेगा।

जीसस को कुस पर क्यों लटकाया गया क्योंकि वे एक जीवन्त मनुष्य थे। उन्होंने बचपन में अपने को जरूर पुकारते हुए कहा होगा-'' जीसस! दूसरों के द्वारा बेवकूफ मत बनो। '' और वह बेवकूफ नहीं बने इसलिए दूसरों को उन्हें सूली पर चढ़ाना ही पड़ा क्योंकि वे उनके खेल के भाग नहीं बने। सुकरात को जहर देकर मार दिया गया, मंसूर का कत्ल किया गया। ये सभी वे लोग थे जो समाज की कैद से भाग निकले और कुछ भी कहकर कैदखाने में वापस आने के लिए तुम उन लोगों को राजी न कर सके। वे कैदखाने में वापस लौटेंगे नहीं क्योंकि उन्होंने मुक्त आकाश में स्वतंत्रता का स्वाद पाया, उसे जाना और महसूस किया।

स्मरण रहे-सजग और होशपूर्ण बने रहो। यदि तुम सजग बने रहे, यदि तुम्हारे कृत्य अधिक-से-अधिक होशपूर्ण होते गए फिर तुम जो भी करोगे, सोए-सोए न कर सकोगे। समाज का पूरा प्रयास यही है कि तुम्हें स्वचालित एक यंत्र जैसा बना दिया जाए जो बटन दबाते ही यांत्रिक कुशलता से ठीक-ठीक काम करने लगे।

जब तुम कार चलाना सीखते हो, तुम सजग होते हो, लेकिन कुशल नहीं, क्यों? सजगता ऊर्जा लेती है और वह ऊर्जा तुम्हें बहुत-सी चीजों के प्रति सजग होने में लगानी होती है-जैसे, गेयर, स्टेयरिंग ह्वील, ब्रेक, एक्सीलेटर, क्लच आदि। बहुत- सी अन्य चीजों के प्रति सजग होने के कारण तुम ड्राइविंग में उतने कुशल नहीं हो सकते और तुम अधिक तेज नहीं जा सकते, लेकिन धीमे- धीमे जब तुम ज्यों-ज्यों कुशल होते जाते हो, फिर तुम्हें सजग होने की जरूरत नहीं होती। फिर तुम कोई गीत गुनगुनाते हुए और मन-ही-मन किसी पहेली को सुलझाते हुए ड़ाइव करते हो और कार अपने आप चलती रहती है। शरीर स्वचालित हो जाता है। तुम जितने अधिक यांत्रिक और स्वचालित बन जाते हो, तुम उतने ही अधिक योग्य हो जाते हो।

समाज कुशलता चाहता है इसलिए तुम्हें अधिक-से- अधिक स्वचालित बनाता है। हर चीज तुमसे अपने आप होने लगे। समाज तुम्हारी सजगता की फिक्र नहीं करता, क्योंकि वह समाज के लिए एक समस्या बन जाएगा। तुमसे अधिक योग्य या कुशल बनने को कहा जाता है, अधिक-से- अधिक-उपजाऊ, जो अधिक-से-अधिक उत्पादन करे। मशीनें तुम्हारी अपेक्षा और तेजी से उत्पादन करती हैं। समाज तुम्हें मनुष्य बने रहना नहीं देखना चाहता, उसे जरूरत है तुम यांत्रिक बन जाओ इसलिए वे तुम्हें कम सजग और अधिक कुशल बनाते हैं। यह स्वचालित है। यही वह तरीका है जिससे समाज तुम्हें बेवकूफ बनाता है। तुम कुशल तो बन जाते हो, लेकिन अपनी आत्मा खो देते हो।

यदि तुम मुझे समझ सकते हो तो मेरी ध्यान विधियों का पूरा प्रयास ही तुम्हें स्वचालित बनने से रोकते हुए तुम्हें फिर से सजग बनाना है। तुम्हें फिर मशीन से मनुष्य बनाना है। शुरू-शुरू में तुम कम कुशल होगे, लेकिन इसकी कोई फिक्र नहीं लेना है। शुरू-शुरू में हर चीज एक गड़बड़झाला लगती है, क्योंकि हर चीज को इस तरह बिठाया गया है कि वह बिना सक्रिय बुद्धि के स्वयँ चालू हो जाए। शुरू में तुम कोई भी -काम कुशलता से करने में सक्षम नहीं होते। तुम्हें कठिनाई का अनुभव होगा, क्योंकि तुम अब तक अपनी अचेतन योग्यता के साथ समायोजन कर तैयार हुए हो। होशपूर्वक कुशल बनने में एक लम्बे प्रयास की जरूरत होगी, लेकिन धीरे-धीरे तुम सजग और कुशल साथ-साथ होते जाओगे।

वहां भविष्य में किसी प्रामाणिक मनुष्य-समाज की यदि कोई सम्भावना है तो उसकी आधारभूत पहली चीज होगी कि वे बच्चों को स्वचालित न बनने दें। भले ही उन्हें कुशल और योग्य बनाने में थोड़ा समय अधिक लगे लेकिन उन्हें योग्य बनाना है सजगता के साथ। उन्हें मशीन या यंत्र मत बनाना। इसमें समय अधिक लगेगा, क्योंकि दो चीजें साथ-साथ सीखनी हैं-योग्यता और सजगता। एक वास्तविक प्रामाणिक मनुष्य-समाज तुम्हें सजगता देगा, लेकिन योग्यता कम, यह योग्यता धीरे- धीरे आएगी। तब जब तुम सजग होगे तुम सजगता के साथ योग्य होने में भी समर्थ हो सकोगे।

ध्यान है-स्वचालित बनने की प्रक्रिया से उल्टी विधि। तब तुम एकनई सजगता से काम शुरू कर सकोगे-कुशलता रहे शरीर में और चेतना सजग बनी रहे। तुम एक यंत्र की भांति बनना ही मत, एक मनुष्य ही बने रहना। यदि तुम एक मशीन बन गए तो तुम्हें अपनी मनुष्यता खोनी होगी।

यह भिक्षु स्वचालित न बनने का ही काम कर रहा है। तड़के सुबह ही वह स्वयं को ही पुकारता है-" सजग बने रहो। " वह कहता है-" अपने को बेवकूफ मत बनाओ। " वह साथ में यह भी कहता है-" दूसरों के द्वारा बेवकूफ मत बनी। " समझ की यह तीन पर्तें हैं जिन्हें प्राप्त करना है।

मैंने सुना है, एकबार ऐसा हुआ किएक युवा जो बहुत सम्पन्न और धनी परिवार का था, एकझेन सद्गुरु के पास आया। वह हर चीज जान चुका था, अपनी हर कामना की तुष्टि कर चुका था और उसके पास काफी धन था, इसलिए उसकी कोई समस्या थी ही नहीं, लेकिन तब वह हर चीज से ऊब गया-वह ऊब गया सेक्स से, स्त्री

से, वह बुरी तरह ऊब गया शराब पीने से भी। तब वह झेन सद्गुरु के पास आकर बोला- " अब मैं इस संसार से ही' ऊब गया हूं। क्या कोई ऐसा रास्ता है जिससे में रूपान्तरित हो सकूं? क्या कोई ऐसा रास्ता है जिससे मैं स्वयं को जान सकूं कि मैं हूं कौन? " फिर उस युवा ने कहा-" इससे पूर्व कि आप कुछ कहें, मैं अपने बारे में आपको कुछ और भी बताना चाहता हूं। मैं कोई भी निर्णय नहीँ ले पाता किसी भी चीज में और न किसी चीज को लम्बी अवधि तक निरन्तर कर सकता हूं इसलिए यदि आप मुझे कोई विधि देते हैं अथवा मुझसे ध्यान करने के लिए कहते हैं तो मैं उसे कुछ दिनों तक कर सकता हूं और फिर मैं उससे पीछा छुड़ाकर भाग जाऊंगा। यह भली- भांति जानते हुए भी कि इस संसार में है कुछ भी नहीं, वहां दुःख और मृत्यु मेरी प्रतीक्षा कर रहे हैं। लेकिन यह मेरा मन कुछ इसी तरह का है कि मैं कोई भी चीज निरन्तर जारी नहीं रख सकता। मैं संकल्पपूर्वक कुछ कर ही नहीं सकता, इसलिए मेरे लिए कोई चीज या विधि चुनने से पूर्व कृपया इसका स्मरण रखें। "

सद्गुरुने कहा-" यदि तुम दृढतापूर्वक कुछ भी निरन्तर नहीं कर सकते, फिर तो यह बहुत कठिन होगा, क्योंकि अतीत में तुमने जो कुछ किया है, उसे अनकिया करने के लिए एक लम्बे प्रयास की आवश्यकता होगी। तुम्हें पीछे लौटकर फिर से यात्रा शुरू करनी होगी, निष्क्रमण विधि की जरूरत होगी तुम्हें। तुम्हें पीछे लौटकर उस क्षण को जीना होगा जब तुम्हारा जन्म हुआ था। जब तुम नए और ताजे थे। वही ताजगी, वही निर्दोषता तुम्हें फिर से प्राप्त करनी होगी। आगे के लिए नहीं, बल्कि पीछे जाकर तुम्हें अपना बचपन एक बार फिर जीना होगा, लेकिन यदि तुम कहते हो कि तुम दृढ़ता पूर्वक इसे निरंतर जारी नहीं रख सकते और तुम पीछा छुड़ाकर भाग जाओगे तो फिर यह सब कुछ करना कठिन होगा। लेकिन -मैं तुमसे एक प्रश्न पूछना चाहता हूं-क्या तुम्हारी गहरी दिलचस्पी किसी ऐसी चीज में रही है कि तुम उसमें पूरी तरह डूब जाओ? "

उस युवा मनुष्य ने सोचा और फिर कहा-" हां! केवल शतरंज में, यदि कोई खेल है तो मैं शतरंज में ही सबसे अधिक दिलचस्पी लेता हूं। मैं इसी खेल से प्रेम करता हूं और केवल यही एक चीज ऐसी है जो मुझे बचाए हुए है। हर दूसरी चीज तो आकर चली गई, केवल शतरंज ही मैं अब भी साथ रखता हू और इसी के साथ किसी तरह अपना समय गुजारता हूं। "

सद्गुरु ने कहा-" तब कुछ चीज की जा सकती है। तुम जरा प्रतीक्षा करो। " उन्होंने एक शिष्य को बुलाकर कहा-" तुम अपने साथ फलां भिक्षु को लेकर यहां आओ, जो इस मठ -में बारह वर्षों से ध्यान कर रहा है और उससे कहना कि वह अपने साथ शतरंज लेकर आए। "

शतरंज लाई गई। वह भिक्षु आया। वह थोड़ा बहुत शतरंज खेलना जानता था, लेकिन बारह वर्षों से वह अपनी कोठरी में ध्यान ही कर रहा था। वह शतरंज को ही नहीं, बाहर के पूरे संसार और यहां तक कि प्रत्येक चीज को भूल चुका था।

सद्गुरु ने उससे कहा-" मेरी बात ध्यान से सुनो। तुम इस युवा के साथ अब यह खतरनाक खेल खेलने जा रहे हो। यदि तुम इस युवा से हार गए तो यहां जो तलवार मेरे पास रखी है, उससे मैं तुम्हारा सिर काट दूंगा, क्योंकि मैं यह नहीं चाहूंगा कि एक ध्यानी भिक्षु जो यहां बारह वर्षों से ध्यान कर रहा है, वह एक साधारण युवक से हार जाए लेकिन मैं तुमसे यह वायदा करता हूं कि यदि तुम मेरे हाथ से मारे गए तो तुम सर्वोच्च स्वर्ग पहुंचोगे इसलिए तुम्हे परेशान होने की कोई जरूरत नहीं। "

वह युवा मनुष्य भी यह सुनकर बेचैन हो उठा और तब सदगुरू उसकी ओर घूमकर बोला- " देखो, तुम कहते हो कि तुम शतरंज खेलते हुए इसमें डूब जाते हो, इसलिए अब तुम्हें इस खेल में पूरी तरह डूब जाना होगा-क्योंकि यह जीवन और मृत्यु का प्रश्न है। यदि तुम हार गए तो मैं तुम्हारा सिर काट दूंगा और याद रहे मैं तुम्हारे लिए स्वर्ग का वायदा नहीं कर सकता। यह भिक्षु तो ठीक है-वह तो किसी तरह वहां चला जाएगा, लेकिन मैं तुम्हारे लिए स्वर्ग का वायदा नहीं कर सकता। यदि तुम मरते हो तो तुम्हारे लिए सीधा नर्क है, तुम सातवें नर्क में ही जाओगे। "

एक क्षण के लिए उस युवक ने पीछा छुड़ाकर भाग जाने की बात सोची। यह एक खतरनाक खेल होने जा रहा था और वह यहां इसके लिए आया भी न था। लेकिन तब उसे यह असम्मानजनक लगा, आखिर वह एक समुराई योद्धा का पुत्र था और केवल आसन्न मृत्यु की वजह से भाग जाना उसके रक्त में नहीं था, इसलिए उसने कहा-'' फिर ठीक है। ''

बाजी शुरू हुई। वह युवा मनुष्य पहले तो तेज हवा में एक पत्ते की तरह तेजी से काँपने लगा। उसका पूरा शरीर कांप रहा था। उसे पसीने आ रहे थे। सिर से लेकर पांव तक वह ठंडे पसीने से नहा गया। वह जीवन और मृत्यु का प्रश्न था। उसकी विचार प्रक्रिया रुक गई क्योंकि जब भी ऐसी आपातकालीन संकट की घड़ी होती है तुम सोचना गंवारा नहीं कर सकते। सोच-विचार तो फुरसत में होता है। जब कोई भी समस्या न हो, तुम सोच सकते हो, लेकिन जब वास्तव में कोई समस्या आती है तो सोच-विचार स्वत: रुक जाता है क्योंकि मन समय चाहता है, लेकिन जब आपात संकट की घड़ी होती है तो वहां समय होता ही नहीं। तुम्हें कुछ काम तुरन्त करना होता है। प्रत्येक क्षण मृत्यु निकट आ रही थी। उस भिक्षु ने जब खेलना शुरू किया तो उसे निर्द्वंद्व और शांत देखकर उस युवक ने सोचा, आज मौत तो निश्चित है। लेकिन जब धीरे- धीरे उसके विचार तिरोहित होते गए फिर वह पूरी तरह उस क्षण में ही डूब गया। जब विचार ही जाते रहे तो वह यह भी भूल गया कि मृत्यु उसकी प्रतीक्षा कर रही

है-क्योंकि मृत्यु भी तो एक विचार है। वह मृत्यु के बारे में ही भूल गया, वह अपने जीवन के बारे में भी भूल गया, वह बस खेल का एक भाग बनकर रह गया और उसमें पूरी तरह डूब गया।

जैसे-जैसे मन पूरी तरह विसर्जित हुआ, उसने बहुत सुंदर खेलना शुरू कर दिया। वह इस तरह से आज तक कभी न खेरना था। शुरू में वह भिक्षु जीत रहा था, लेकिन कुछ ही मिनटों में जब वह युवा खेल में पूरी तरह गया तो उसने कुछ चालें बहुत लाजवाब चली और उस भिक्षु के कुछ मोहरे पिट गए। उसके लिए केवल वर्तमान में उस क्षण का ही अस्तित्व रह गया। तब उसके लिए कोई समस्या रही ही नहीं। शरीर बिलकुल ठीक हो गया, कांपना रुक गया। पसीना भाप बनकर उड़ गया। वह एक भाररहित हल्के पंख जैसा हो गया। पसीने ने भी उसकी सहायता की-वह भारहीन बन गया, उसके पूरे शरीर को यों लग रहा था कि जैसे वह उड़ सकता है। उसका मन तो वहां रहा ही नहीं। उसका बोध पूरी तरह स्पष्ट और पारदर्शी हो गया और अब वह आगे चलने वाली पांच चालों को भली- भांति देख सकता था। वह इतनी सुंदर और कलात्मक शतरंज आज तक न खेला था। भिक्षु का खेल अब बिगड़ना शुरू हो गया था और कुछ मिनटों में ही वह हारने ही वाला था। उस युवा की जीत जैसे निश्चित थी। तभी अचानक जब उसकी दृष्टि निर्मल और पारदर्शी हुई, जब बोध गहरा और गूढ़ हुआ, उसने उस भिक्षु की ओर देखा, जो बिल्कुल निर्दोष था। बारह वर्षों के ध्यान और कष्टसाध्य जीवन बिताते हुए वह एक पुष्प की भांति खिला हुआ, पूरी तरह शुद्ध और पवित्र हो गया था। न कोई कामना, न कोई विचार, न कोई लक्ष्य और न जीवित रहने के लिए कोई कारण उसके पास रह गया था। जितना निर्दोष होना सम्भव है, अच्छे के वह उतना ही भोला लग रहा था, यहां तक कि एक छोटे बच्चे से भी अधिक निर्दोष। उसका सुन्दर चेहरा, उसकी पारदर्शी आकाश जैसी नीली आंखें. .उन्हें देखकर उस युवा के चित्त में उसके प्रति अपार करुणा का अनुभव होना शुरू हो गया.. .देर-सवेर उसका सिर धड़ से अलग कर दिया जाएगा। जिस क्षण उसने इस करुणा का अनुभव किया, उसके लिए अज्ञात द्वार खुल गए और कोई पूरी तरह अनजानी चीज उसके हृदय में प्लावित होने लगी। वह जैसे परमानन्द में डूब गया। उसके आंतरिक अस्तित्व की खिलावट से जैसे चारों ओर पुष्प बरसने लगे। वह इतने अधिक परमानन्द का अनुभव कर रहा था जिसे उसने आज तक न जाना था और उस पर जैसे चारों ओर से आशीर्वाद बरस रहे थे।

तब उसने जान-बूझकर गलत चालें चलना शुरू कर दीं, क्योंकि उसके मन में यह विचार आया, ' यदि मैं मरा तो कुछ भी बरबाद न होगा, मेरे जीवन का मूल्य ही क्या है, लेकिन यदि यह भिक्षु मरा तो कोई बहुत ही सुन्दर चीज नष्ट हो जाएगी, जबकि मेरे लिए मेरा अस्तित्व निरर्थक है।'

उसने होशपूर्वक उस भिक्षु को जिताने के लिए गलत चालें चलनी शुरू कर दीं। इसी क्षण सद्गुरु ने मेज पर बिछी शतरंज को उलट दिया और हंसना शुरू कर दिया। उसने कहा-'' यहां कोई भी हारने नहीं जा रहा है। तुम दोनों ही जीत गए। '' यह भिक्षु तो पहले ही से स्वर्ग में था, वह वहां पहुंच ही गया था, उसका सिर काटने की कोई जरूरत थी ही नहीं। उसके लिए उस समय भी परेशानी की कोई बात न थी, जब सद्गुरु ने कहा था-'' बाजी हारने पर तेरा सिर काट दिया जाएगा। '' उसके मन में तब भी कोई विचार उठा ही न था-उसके लिए चुनाव करने का कोई प्रश्न ही न था-यदि सद्गुरु कहता है-ऐसा होने जा रहा है तो ठीक है। उसने अपने पूरे हृदय से ' हां ' कहा था। इसी वजह से शतरंज खेलते हुए न तो वह कांपा, और न उसके पसीने छूटे। वह बस शतरंज खेल रहा था, मृत्यु उसके लिए कोई समस्या न थी। सद्गुरु ने उस युवा से कहा-'' तुम जीत गए और तुम्हारी विजय इस भिक्षु से भी अधिक महान है। अब मैं तुम्हें दीक्षा दूंगा। तुम यहां रह सकते हो और शीघ्र ही तुम बुद्धत्व को प्राप्त हो जाओगे। ''

दोनों आधारभूत चीजें घट गईं, ध्यान और करुणा। बुद्ध ने कहा-दो ही चीजें सारभूत हैं-प्रज्ञा और करुणा।

उस युवा ने कहा-'' कृपया मुझे स्पष्ट करें। मुझे कुछ तो घटा है जिसके बारे में मैं कुछ भी नहीं जानता। मैं अब बदल गया हूं। मैं अब वह मनुष्य नहीं रहा, जो आपके पास कुछ घंटों पहले. आया था। वह आदमी अब मर चुका है। कुछ चीज घटी है- आपने तो चमत्कार कर दिया। ''

सद्गुरु ने कहा.-''क्योंकि मृत्यु इतनी आसन्न थी कि तुम कुछ भी सोच न सके। विचार-प्रक्रिया रुक गई। मृत्यु इतनी निकट थी कि सोच–विचार करना सम्भव था ही नहीं। मृत्यु इतनी अधिक पास थी कि तुममें और मृत्यु के बीच कोई अंतराल न रहा, जबकि विचारों को गतिशील होने के. लिए स्थान और समय की जरूरत होती है, वहां कोई स्थान बचा ही न था इसीलिए सोच-विचार रुक गया और स्वाभाविक रूप से ध्यान घटित हो गया, लेकिन यह काफी न था, क्योंकि इस तरह का ध्यान आपात संकट की घड़ी के कारण घटता है, जो शीघ्र ही खो जाता है। जब वह घड़ी गुजर जाती है, ध्यान खो जाता है। इसलिए उस क्षण मैं शतरंज के बोर्ड को उलट न सका, मैं उसके लिए प्रतीक्षा करता रहा। ''

यदि वास्तव में ध्यान घटता है, उसका कोई भी कारण हो, करुणा उसका अनुसरण करती है। करुणा, खिलावट है ध्यान की। यदि करुणा नहीं आ रही तो तुम्हारा ध्यान कहीं गलत है, वह तुम्हें घटा ही नहीं।

तब मैंने तुम्हारे चेहरे की ओर देखा। तुम परमानन्द से भरे हुए थे और तुम्हारे नेत्र बुद्ध के नेत्रों की तरह हो गए थे। तुमने उस भिक्षु की ओर देखा और तुमने महसूस करते हुए सोचा-' इस भिक्षु के जीवन की अपेक्षा, अच्छा होगा यदि मैं ही अपने को बलिदान कर दूं क्योंकि अपने जीवन से तुम्हें भिक्षु का जीवन अधिक मूल्यवान लगा। '

यही करुणा है-जब तुमसे अधिक मूल्यवान दूसरा हो जाता है। जब तुम दूसरे के लिए अपने को बलिदान कर सकते हो-यही प्रेम है। जब तुम साध्य बन जाते हो और दूसरे का प्रयोग जब एक साधन की तरह किया जाता है, तब वह वासना होती है। वासना सदा निर्दयी होती है और प्रेम हमेशा करुणामय।

तब मैंने तुम्हारी आंखों में उदय होती हुई करुणा देखी और तुमने स्वयं हार जाने के लिए गलत चालें चलना शुरू कर दीं, जिससे यह भिक्षु बच जाए और तुम मार दिए जाओ। उसी क्षण मुझे शतरंज के बोर्ड को उलट देना पड़ा। तुम जीत गए। अब तुम यहां रह सकते हो। मैंने तुम्हें ध्यान और करुणा दोनों सिखा दीं। अब तुम इसी लीक का अनुसरण करो, ताकि वे तुममें सहज रूप से घटने लगें-वे परिस्थितिजन्य न हो, किसी आपात संकट की घड़ी पर आश्रित न हों, बल्कि वे तुम्हारे अस्तित्व का एक गुण हों। ''

अपने हृदय में अपने साथ इस कहानी का बोध सदा साथ लिए चलो। इसे अपने हृदय की धड़कन बना लो। तुम्हारी जड़ें ध्यान में हों तो तुम्हें करुणा के पंख मिलेंगे ही। इसी वजह से मैं कहता हूं कि मैं तुम्हें दो चीजें देना चाहता हूं। इस पृथ्वी में जमाने के लिए जड़ें और स्वर्ग के लिए पंख। ध्यान यह पृथ्वी है, वह यहां और अभी

है और इसी क्षण तुम उसमें अपनी जड़ें फैला सकते हो। इसे करना ही है। एक बार जब वहां जड़ें जम जाएंगी, तुम्हारे पंख जितनी अधिक ऊंचाई तक ले जाना सम्भव होगा, तुम्हें आकाश में ले जाएंगे। करुणा ही वह आकाश है और ध्यान ही वह पृथ्वी है। जब ध्यान तथा करुणा दोनों मिल जाते हैं, एक नए बुद्ध का जन्म जोता है।

ध्यान में गहरे और गहरे उतरते जाओ, जिससे तुम करुणा के आकाश में अधिक- से- अधिक ऊंचाइयों तक जा सको। वृक्ष की जड़ें जितनी गहराई में जाती हैं, वह उतनी ही ऊंचाई के शिखर तक जाता है। तुम वृक्ष को देख सकते हो, तुम उसकी जड़ों को नहीं देख सकते, लेकिन वे हमेशा इसी अनुपात में होती हैं। यदि वृक्ष आकाश तक पहुंच रहा हो तो जड़ें भी पृथ्वी के अंत में पाताल तक पहुंच रही हैं। अनुपात वही है। जितने गहरे तुम ध्यान में जाओगे, वही गहराई करुणा में भी उपलब्ध होगी। इसलिए माप दण्ड है-करुणा। यदि तुम सोचते हो कि तुम ध्यान कर रहे हो और वहां कोई करुणा-नहीं है, तब तुम स्वयं को धोखा दे रहे हो और वहां कोई करुणा नहीं है, तब तुम स्वयं को धोखा दे रहे हो। करुणा घटना ही चाहिए क्योंकि वही वृक्ष की खिलावट है। ध्यान करुणा की ओर ठीक एक साधन है और करुणा यही लक्ष्य का साध्य है।

अपने को अधिक-से- अधिक सजग बनाओ। अपना ही नाम लेकर स्वयं को आवाज दो और अधिक सजगता उत्पन्न करते हुए उसका उत्तर भी दो। जब वास्तव में तुम सजग बन -जाओगे, तुम्हें एक नई ऊर्जा के ऊर्ध्वगमन का अनुभव .होगा। तुममें करुणा घटेगी।

-करुणा के साथ परमानन्द बरसता है।

-करुणा के साथ आशीर्वाद बरसते हैं।

-करुणा के साथ दृढ़ विश्वास आता है।

क्या कुछ और...?

प्रश्न : प्यारे ओशो! शिविर प्रारम्भ होने पर आपने कहा था-

"तुम लोग मेरे कार्य के विकास की एक नई स्थिति की ओर गतिशील
हो रहे हो हम लोगों ने ध्यान में इसका अनुभव कि यार लेकिन सबसे
अधिक महत्वपूर्ण तो यह है कि जैसा आपने हम लोगों से कहा था,
वह तरीका ही बदल दिया आपने
एक समय आपने उदाहरण के लिए हम लोगों से कहा था- तुम
कभी मुझे बुद्धत्व को प्राप्त एक सदगुरू की भांति स्वीकार मन करो
और अब आप ऐसा करने को कहते है
क्या आप हमें अपने कार्य के इस नए आयाम के बारे में बताने की कृपा करेंगे "

मैं केवल उन चीजों के सम्बन्ध में ही बात कर सकता हूं जिन्हें तुम सुनने और समझने में समर्थ हो। यह तुम पर ही निर्भर करता है। यदि तुम एक शिष्य बन गए हो तो मैं बहुत सरलता से कह सकता हूं कि मैं एक सद्गुरु हूं लेकिन यदि तुम शिष्य नहीं हो तो तुमसे यह कहना कि मैं एक सद्गुरु हूं केवल व्यर्थ ही होगा।

यदि कोई ऐसा व्यक्ति आता है जिसमें मेरे लिए केवल कौतूहल ही है तो मैं उससे यह बात नहीं कहूंगा, क्योंकि वैसा कहना जरूरी न होगा। वह उसे समझेगा ही नहीं, वस्तुत : वह उसे गलत समझेगा। जब तुम लेने के लिए तैयार हो, केवल त भी मैं तुम्हें दे सकता हूं। अब जब तुम तैयार हो तो मैं बहुत-सी उन बातों को कह सकता हूं जो आकस्मिक रूप से आने वाले दर्शनार्थियों से नहीं कही जा सकतीं। उनमें उत्सुकता है लेकिन वह उथली है, वे कुछ भी ग्रहण करने के लिए नहीं आए हैं। उनकी बुद्धि बच्चे की तरह क्रियाशील है वे बस हर चीज के बारे में जानना चाहते हैं और -वे उसे अपने अंदर गहराई में नहीं ले जाना चाहते।

अब मैं तुमसे बहुत- सी चीजों पर बात कर सकता हूं क्योंकि मैं जानता -हूं कि तुम उसे गलत नहीं समझोगे। यदि तुम नहीं भी समझते हो तो इतना तो निश्चित है. तुम उसे गलत नहीं समझोगे। यह तुम लोगों को विकसित करने की एक नई स्थिति है जो पहले ही से प्रारम्भ हो चुकी है। मैं उन्हीं लोगों के साथ कार्य कर रहा हूं जो सजग संतुलित और समझदार हैं जो बेवकूफ बने नहीं घूम रहे हैं। मैं उन्हीं लोगों पर कार्य कर रहा हूं

जो वास्तव में उस बिंदु पर आ गए हैं जहां वे रूपान्तरण चाहते हैं-जो वास्तव में ईमानदार और प्रामाणिक खोजी हैं और वह सब कुछ करने को तैयार हैं जो मैं उनसे कहता हूं। उन लोगों के लिए में कह सकता हूं-मैं बुद्धत्व को प्राप्त हूं। उन लोगों से मैं कह सकता हूं- ' मैं सद्गुरु हूं। '

उनसे मैं कह सकता हूं- ' मेरे पास आओ और मुझे पीयो, तुम्हारी प्यास हमेशा- हमेशा के लिए बुझ जाएगी। '

यह प्रत्येक से नहीं कहा जा सकता। यह उससे नहीं कहा जा सकता जो बस इधर से केवल गुजर रहा हो या तुम्हें सड़क पर मिल जाता हो। तुम जितने अधिक तैयार होते जाओगे मैं तुममें उतना ही अधिक अपने को उड़ेल सकता हूं। इससे पहले वहां तुम्हारे पात्र तो थे, लेकिन वे औंधे रखे हुए थे। यदि मैंने उनमें उड़ेला भी होता तो वह व्यर्थ बरबादी ही होती। अब तुममें से बहुत से इस स्थिति में हैं जहां तुम्हारे पात्र औंधे न रखे होकर सीधे रखे हैं। अब मैं उनमें उड़ेल सकता हूं अब मैं यह विश्वास कर सकता हूं कि तुम उन्हें खजाने की तरह सहेज कर रखोगे तुम उसे छिपाओगे, तुम उसे केवल उन्हीं लोगों के साथ बांटोगे जो ईमानदार हैं जो खोजी हैं। बहुत से अन्य रहस्य भी इसके बाद अनावृत्त किए जाते है लेकिन जैसे-जैसे तुम अधिक तैयार होते जाओगे वे इनका अनुसरण करेंगे।

तुम्हारे विकसित होने का एक नया दौर शुरू हो चुका है। अब मैं भीड़ या समूह पर कार्य नहीं करूंगा और मैं उन सभी को छोड़ता जाऊंगा जो अन्य- अन्य कारणों से मुझे चारों ओर से घेरे हुए हैं और जो आध्यात्मिक विकास के लिए आए ही नहीं हैं। वहां कई तरह के लोग हैं और वे स्वयं इसके प्रति सजग नहीं हैं कि वे क्यों मेरे आस-पास मंडरा रहे हैं-लेकिन मैं जानता हूं। मैं उन्हें अलग हटाता जाऊंगा और अब केवल थोड़े-से लोग ही मुझे स्वीकार्य होंगे। यदि मैं तुम्हें अपने पास से हटा दूंगा तो तुम इसे जानने में समर्थ न हो सकोगे कि मैंने ही तुम्हें हटाया है बल्कि तुम यही सोचोगे कि तुमने ही मुझे छोड़ दिया। अज्ञानी मन हमेशा इसी तरह से अपने को आश्वस्त करता है।

अब मैं केवल थोड़े से चुने लोगों पर ही काम करूंगा और तुम जैसे-जैसे तैयार होते जाओगे बहुत से रहस्य तुम्हें दिए जा सकते हैं और मैं उन पर आसानी से बातचीत करने मैं समर्थ हो सकूंगा। तब मैं सच, केवल सच बोल सकता हूँ और तब मुझे झूठ बोलने की जरूरत नहीं होगी। मैं वह नहीं कहूंगा जो तुम सुनना चाहते हो। नहीं, में वही कहूंगा जो वास्तव में मुझे तुमसे कहना चाहिए। अब भविष्य की प्रतीक्षा मत करो, क्योंकि भविष्य के बारे में कोई भी नहीं जानता। यही है वह क्षण, जब तुम अपने को अधिक-से- अधिक खोल सकते हो, जिससे तुम मुझे ग्रहण कर सको।

मैं तुम्हें एक वृत्तान्त बताना चाहता हूं। यह घटना योरोप के समृद्धतम और सबसे अधिक हरनी परिवार के एक प्रमुख बैरेन रोप्सचाइल्ड के साथ घटी। एक दिन वह अपने उद्यान में खड़ा हुआ था और एक व्यक्ति जो भिखारी और फेरीवाले की तरह दिखाई देता था, उसके पास आया और उससे एक लॉटरी टिकट खरीदने का आग्रह करते हुए बोला-" कृपया आगे बढ़िए और इस संयोग का लाभ उठाइए। "

बैरेन उससे पीछा छुड़ाना चाहता था। उसने कहा-" मैं -इस लॉटरी टिकट का करूंगा क्या? मेरे पास पहले से काफी धन है और मुझे इसकी जरूरत नहीं है। " उस भिखारी ने कहा- " काफी किसी के भी पास नहीं है। एक अवसर लीजिए। कौन जानता है- आप जीत ही जाएं। "

इसलिए उस बकवास से छुटकारा पाने के लिए उसने एक टिकट खरीद लिया। अगली सुबह उसी व्यक्ति ने दरवाजा खटखटाते हुए कहा-" देखिए! आप दस लाख डालर जीत गए। "

बैरेन बहुत खुश हुआ। आभार व्यक्ति करने के लिए उसने कहा-" मैं सोचता हूं तुम्हें इसका पुरस्कार मिलना चाहिए। "

तब बैरेन ने सोचकर कहा-"मैं तुम्हें पच्चीस हजार डालर ठीक अभी इसी क्षण दे सकता हूं अथवा तुम्हें आजीवन दस हजार डालर प्रति वर्ष दे सकता हूं। तुम इन दोनों में किसे चुनना चाहोगे?"

वह व्यक्ति तीस-पैंतीस वर्ष से अधिक आयु का न था। उसका स्वास्थ्य भी ठीक था और उसके कम-से-कम तीस चालीस वर्ष या उससे भी अधिक जीने की सम्भावना थी। चालीस वर्ष तक दस हजार डालर प्रति वर्ष के

हिसाब से चार सौ हजार डालर होते हैं और अभी केवल पच्चीस हजार डालर। उस भिखारी ने केवल एक क्षण सोचकर कहा-" आप कृपया मुझे अभी पच्चीस हजार डालर ही दे दीजिए। "

यह सुनकर बैरेन भी उलझन में पड़ गया। उसने कहा-" तुम फिर से विचार करो। तुम क्या कर रहे हो? मैं कहता हूं तुम अपने जीवन- भर दस हजार डालर प्रति वर्ष पाते रहोगे। "

उस व्यक्ति ने कहा-" मैं ठीक अभी पच्चीस हजार डालर का ही विकल्प चुनना चाहूंगा क्योंकि रोप्सचाइल्ड के पास जैसा भाग्य है, उसे देखते हुए यदि मैं दूसरा विकल्प चुनता तो मैं छः महीने से अधिक जीवित न रह सकूंगा। आप कृपया मुझे अभी दे दीजिए। अगला क्षण तो अनिश्चित है। कृपया समय नष्ट मत कीजिए। "

यही मैं तुमसे कहना चाहता हूं। अभी इसी क्षण मैं यहां उपलब्ध हूं। भविष्य की प्रतीक्षा मत करें, क्योंकि कौन जानता है.. अपना हृदय खोलें, अधिक-से- अधिक ग्राह्यता उत्पन्न करें और मेरे साथ लयबद्ध हो जाएं। हर चीज सम्भव है। इसी क्षण मैं तुम्हें पूरे रहस्य की कुंजी दे सकता हूं।

तुम्हें विकसित करने का यह नया दौर शुरू हो चुका है। अब इसके लिए तैयार हो जाए क्योंकि यह प्रश्न मुझसे संबंधित न होकर तुमसे ही संबंधित है। तुम उतना ही प्राप्त कर सकते हो जितनी तुम्हारी क्षमता और सीमा है। यदि तुम पूरी तरह खुले हुए हो तो वह असीमित है। पूरा सागर ही तुम्हारी बूंद में गिरने के लिए तैयार है, लेकिन बूंद भयभीत है। वह अपने को बचाने की कोशिश कर रही है।

अभी तक जितने महान रहस्यदर्शी जन्मे हैं, उनमें से एक कबीर ने दो बातें कहीं हैं। उन्होंने कहा है-" प्रारम्भ में जब मैं परमात्मा को खोज रहा था, मैं यह सोचता था कि मेरे जीवन के पानी की बूंद परमात्मा के सागर में गिरकर खो जाए लेकिन जब वास्तव में ऐसा घटा तो वह बिलकुल अन्यथा अनुभव था-सागर ही मेरी छोटी-सी बूंद पर गिर पड़ा। "

हमेशा अन्यथा ही घटता है। तुम परमात्मा से मिलने नहीं जा रहे हो, परमात्मा ही तुमसे मिलने आ रहा है। तुम उसे कैसे खोज सकते हो? तुम उसके बारे में उसका अता-पता ठिकाना कुछ भी तो नहीं जानते। वह निरन्तर तुम्हारी ही खोज में है और तुम जब भी तैयार होगे, सागर तुममें गिर पड़ेगा।

ध्यान तुम्हें तैयार बनाएगा, करुणा तुम्हें विकसित करते हुए निर्दोष बनाएगी। इसलिए अपने साथ इन दो मंत्रों प्रज्ञा (ध्यान) और करुणा को साथ लिए हुए चलो। इन दोनों को ही अपना लक्ष्य बना लो। तुम्हारा पूरा जीवन इन्हीं के इर्द-गिर्द घूमता रहे और बहुत शीघ्र तुम इनके साथ लयबद्ध हो जाओगे। तब मैं अपने को तुममें उड़ेल सकता हूं।

क्या कोई बात और?

प्रश्न : प्यारे ओशो! आपने कहा- ध्यान खिलावट है और हम
लोगों के लिए इस पुष्प की सुवास ही कृतज्ञता और अहोभाव हैं क्या
वहां कोई चीज ऐसी भी है? जिसे हम आपके लिए कर सकते है

हां! ध्यान, करुणा और अहोभाव जब भी तुम ध्यानपूर्ण होते हो, जब भी तुम करुणा से भरे होते हो, तुम परम आनन्द का अनुभव करते हो और तब कृतज्ञता और अहोभाव का जन्म होता है। किसी एक विशेष व्यक्ति के लिए नहीं बस अहोभाव होता है। वह मेरे प्रति, जीसस या जरथुस्त के प्रति या बुद्ध के प्रति नहीं है, वह बस अहोभाव है। तुम कृतज्ञता का इसलिए अनुभव करते हो क्योंकि इस क्षण तुम यहां हो, इसी क्षण अपनी जीवन्तता के साथ ध्यानपूर्ण होने में समर्थ हो और साथ-ही- साथ करुणावान भी हो रहे हो। तुम इसीलिए कृतज्ञता का अनुभव कर रहे हो। यह कृतज्ञता और अहोभाव किसी एक के प्रति न होकर अखण्ड अस्तित्व के प्रति है।

यदि तुम मेरे प्रति कृतज्ञता का अनुभव करते हो तो यह मन की ही कृतज्ञता है। यदि तुम ध्यान करोगे और यदि करुणा का फूल खिलेगा तो तुम्हें अनुभव होगा कि यह कृतज्ञता और अहोभाव मेरे प्रति न होकर मात्र कृतज्ञता है। तब यह किसी के भी प्रति नहीं होती-तुम बस सभी के प्रति अहोभाव से भरे होते हो। जब तुम सभी

के प्रति कृतज्ञता का अनुभव करते हो, तब वास्तव में वह कृतज्ञता मेरे ही प्रति होती है, जैसे पहले कभी नहीं हुई। तब वह एक चुनाव होता है। तुम मुझे चुनते हो। तब तुम्हारे लिए सद्गुरु ही दिशा-निर्देशक बन जाता है, पूरा अस्तित्व नहीं।

हर कहीं यही सब कुछ हो रहा है। शिष्य गुरु के साथ तालमेल बैठा लेते हैं और गुरु उन्हें जमने में सहायता करता है। यह ठीक नहीं है। यह यही व्यवस्था है।

जब वास्तव में तुम्हारी खिलावट होती है, तब तुम्हारी खुशबू किसी एक के लिए नहीं होती जब वास्तविक खिलावट होती है तो उसकी सुवास सभी दिशाओं में फैल जाती है। वह सुवास सभी ओर चतुर्दिक छा जाती है और जो भी उसके निकट से होकर गुजरता है, वह उस सुवास से भर जाता है और तुम्हारी सुवास को अपने-साथ लिए चलता है। यदि उधर से कोई भी नहीं गुजरता तो उस शांत अकेले पथ पर तुम्हारी सुवास आगे फैलती ही जाती है, पर वह किसी विशेष नाम पते वाले व्यक्ति के लिए नहीं होती। सदा स्मरण रहे, मन का संदेश हमेशा किसी व्यक्ति को सम्बोधित होता है। अस्तित्व कभी किसी विशेष व्यक्ति की ओर उम्मुख न होकर सभी के लिए होता है। मन हमेशा किसी वस्तु या व्यक्ति की ओर गतिशील होता है, अस्तित्व सभी ओर गतिशील होता है। उसका परिभ्रमण बिना किसी लक्ष्य के है। लक्ष्य होता है, गति प्रदान करने वाले साधन के कारण। तुम किसी वस्तु की ओर गतिशील होते हो क्योंकि वहां कामना है। जब वहां कोई कामना ही नहीं होती तो तुम कैसे किसी वस्तु या व्यक्ति की ओर जाओगे? वहां गति तो होती है, पर कोई उद्देश्य नहीं होता। तब तुम सभी दिशाओं में परिभ्रमण करते हो, तब तुम अतिरेक से बहते हो। तब तुम्हारा सद्गुरु हर कहीं सर्वज्ञ होता है तब मैं भी हर जगह हूं। और केवल जब तुम इस बिंदु तक आते हो तुम सद्गुरु से भी मुक्त हो जाते हो, तब तुम सभी सम्बन्धों से मुक्त होते हो, तुम सभी की उपस्थिति से और सभी बन्धनों से मुक्त हो जाते हो। यदि कोई सद्गुरु तुम्हें स्वयं से अलग और स्वतंत्र नहीं कर सकता तो वह सद्गुरु है ही नहीं।

इसलिए तुम्हें मेरे लिए कुछ भी करने की जरूरत नहीं। तुम अपने ही लिए कुछ करो। मेरे लिए इतना ही करो- ध्यान और करुणा। जब सुवास आएगी, मन के विचारों द्वारा नहीं.. .ठीक अभी तुम अनुभव करते हुए सोच रहे हो, हमें क्या करना चाहिए? सद्गुरु को कैसे कुछ अर्पित करना चाहिए-उसने हमारे लिए इतना कुछ किया है, अब हमें उसके लिए क्या करना चाहिए....तब यह मन ही है, जो लेने और देने की भाषा में सोच रहा है। नहीं, इस मन से कुछ भी मदद न मिलेगी। तुम मेरे लिए बस एक ही चीज कर सकते हो, अपने इस मन को गिरा दो, अपने अस्तित्व को खिलने दो, तब तुम महक उठोगे। तब सभी दिशाएं और सभी आयाम और पूरा अस्तित्व आनन्दित होगा। तुम परमानंद से भर उठोगे और तब तुम्हारा अहोभाव संकुचित न होगा। वह किसी बिंदु की ओर न होकर, वह हर कहीं सर्वत्र परिभ्रमण करेगा। केवल तभी तुम प्रार्थना को उपलब्ध होगे। यह अहोभाव ही प्रार्थना है।

जब तुम किसी मंदिर में जाकर प्रार्थना करते हो, वह प्रार्थना नहीं होती। जब करुणा के बाद अहोभाव उत्पन्न होता है तो पूरा अस्तित्व ही एक मंदिर बन जाता है। तुम जिसको भी स्पर्श करते हो, वह प्रार्थना ही हो जाता है, तुम जो भी करते हो वह प्रार्थना पूर्ण बन जाता है। तुम अन्यथा नहीं हो सकते। गहराई तक तुम्हारी जड़ें जमी हैं, तुम ध्यान में स्थिर हो गए हो और तुम्हारे ही अंतर की गहराई से करुणा प्रवाहित हो रही है, फिर तुम अन्यथा हो ही नहीं सकते। तुम प्रार्थना बन जाते हो। तुम ही अहोभाव बन जाते हो।

लेकिन स्मरण रहे, मन हमेशा किसी-न-किसी ओर उत्सुख है। उसके पास एकलव्य होता है, उसे प्राप्त करने की कामना होती है। अस्तित्व न किसी ओर उन्मुख होता है, न उसका कोई लक्ष्य होता है और न उसे कुछ प्राप्त करना होता है। अपने होने का साम्राज्य उसने पहले ही से प्राप्त कर लिया है, सम्राट पहले ही से सिंहासन पर विराजमान है। तुम गतिशील होते हो क्योंकि गतिशीलता ही जीवन है, लेकिन किसी लक्ष्य की ओर गतिशील नहीं होना है और जब कोई लक्ष्य नहीं होता, तब कोई तनाव भी नहीं होता। तब वह गतिशीलता सुन्दर और अनुग्रहपूर्ण होती है।

आज बस इतना ही…!

(समाप्त)